नारी आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में महिला उपन्यासकारों की भूमिका

Nari Andolan Ke Pariprekshya Mein Mahila Upanyaskaron Ki Bhoomika

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा
की
पीएच.डी. (हिन्दी) की उपाधि हेतु प्रस्तुत
शोध–प्रबन्ध
कला संकाय

शोधार्थी
अनीता मीना

शोध – पर्यवेक्षक

डॉ. प्रदीप कुमार मीना
सह–आचार्य

हिन्दी विभाग
राजकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सवाईमाधोपुर

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
वर्ष 2019

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि प्रस्तुत शोध प्रबन्ध **"नारी आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में महिला उपन्या**सकारों की भूमिका" मेरे निर्देशन मे पूर्ण किया है। मैं इस शोध प्रबंध को कोटा विश्वविद्यालय की पीएच.डी. उपाधि प्रदान करने हेतु प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान करता हूँ।

1. शोधार्थी ने विश्वविद्यालय के नियमानुसार कोर्स वर्क पूर्ण किया है।
2. शोधार्थी ने 200 दिन के आवासीय आवश्यकता नियम को पूरा किया है।
3. शोधार्थी ने विश्वविद्यालय के नियमानुसार समय–समय पर अपने कार्य का प्रगति प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है।
4. शोधार्थी ने विभाग व संस्था प्रधान के समक्ष अपना शोध कार्य प्रस्तुत किया है।
5. शोधार्थी के बताई गई शोध–पत्रिका में शोध पत्र का प्रकाशन हुआ है।

मैं इस शोध–प्रबन्ध को कोटा विश्वविद्यालय, कोटा की पीएच.डी. (हिन्दी) उपाधि प्रदत्त किये जाने हेतु मूल्यांकनार्थ प्रस्तुत करने की अनुशंसा करता हूँ।

शोध पर्यवेक्षक

सवाई माधोपुर
दिनांक

डॉ. प्रदीप कुमार मीना
सहआचार्य, हिन्दी विभाग
राजकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
सवाई माधोपुर, (राज.)

ANTI - PLAGIARISM CERTIFICATE

It is certified that PhD Thesis Titled **"NARI ANDOLAN KE PARIPREKSHYA MEIN MAHILA UPANYASKARON KI BHOOMIKA"** (Comperative Study) by ANITA MEENA has been examined by us with the following anti-plagiarism tools. We undertake the follows:

- Thesis has significant new work/knowledge as compared already published or are under consideration to be published elsewhere. No sentence, equation, diagram, table, paragraph or section has been copied verbatim from previous work unless it is placed under quotation marks and duly referenced
- The work presented is original and own work of the another (i.e. there is no plagiarism). No ideas, processes, result or words of others have been presented as author's own work.
- There is no fabricaton of data or results which have been complied and analyzed.
- There is no flasification by mainpulation research materials, equipment or processes, or changing or omitting data or results such that the research is not accurately represented in the research record.
- The thesis has been checked using plagiarism checker plagirismchecker.com and found within limits as per HEC plagiarism Policy and instructions issued from time to time.

(Anita Meena)
Research Scholar

Place : Bharatpur

Date :

(Dr. Pradeep Kumar Meena)
Research Supervisor

Place : Sawaimadhoupur

Date -

शोध – सार

प्रथम अध्याय : नारी आन्दोलन की परम्परा

नारी आन्दोलन की परम्परा विषयान्तर्गत नारी जीवन में उत्पन्न घटित घटनाओं की क्रमवार अध्ययन विषय प्रवेश रूप में नारी आन्दोलन की पश्चिमी परम्परा व नारी आन्दोलन की भारतीय परम्परा, स्त्री अस्मिता की अवधारणा, स्त्री स्वातन्त्र्य और सामाजिक जीवन मूल्यों की भूमिका का विस्तृत अध्ययन एवं विभिन्न आलोचकों के विचारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत शोध प्रबंध में किया गया है।

द्वितीय अध्याय : नारी आन्दोलन और चर्चित पुस्तकें

नारी आन्दोलन और चर्चित पुस्तकें जिनका सम्बन्ध नारी मुक्ति आन्दोलन व स्त्री विमर्श से सम्बन्ध रहा है। उनका सम्यक् अध्ययन प्रस्तुत किया है। जॉन स्टुअर्ट मिल–द सबजेक्ट ऑफ विमेन (स्त्री की पराधीनता), जर्मेन ग्रीयर–द फीमेल यूनक (विद्रोही स्त्री) मधु–बी जोशी, सीमोन द बोउवार–द सेकेंड सेक्स (स्त्री उपेक्षिता) प्रभा खेतान, रेखा कस्तवार–स्त्री चिन्तन की चुनौतियाँ, नासिरा शर्मा–औरत के लिए औरत, मृणाल पाण्डे–परिधि पर स्त्री, मृदुला गर्ग–चुकते नहीं सवाल, राज किशोर–स्त्री के लिए जगह, आशा रानी व्होरा–नारी शोषण आईने और आयाम, ज्योति सिंह–मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता का प्रश्न, शफिका दस्तगीर मुलाणी–ममता कालिया के लघु उपन्यासों में नारी विमर्श, जगदीश्वर चतुर्वेदी–स्त्रीवादी साहित्य विमर्श आदि कृतियों का विश्लेषाण्त्मक अध्ययन प्रस्तुत है।

अन्य कृतियाँ (संक्षिप्त, सूत्रात्मक, संश्लिष्ट एवं सार्थक विवेचन)

मृणाल पाण्डे–देह की राजनीति से देश की राजनीति तक, बंदगलियों के विरुद्ध, अरविन्द जैन–औरत होने की सजा, औरत अस्तित्व और अस्मिता, न्याय क्षेत्रे अन्याय क्षेत्रे, तसलीमा नसरीन–औरत के हक में, राजकिशोर–अश्लीलता का हमला, सरला माहेश्वरी–नारी प्रश्न, अनामिका– स्त्रीत्व का मानचित्र, क्षमा शर्मा– स्त्री का समय, दिव्या जैन– हौवा की बेटी, सुधीर पचौरी– स्त्री देह विमर्श, राजेन्द्र यादव– आदमी की निगाह में औरत, सुमन कृष्ण कांत– इक्कीसवीं सदी की ओर, इलीना सेन– संघर्ष के बीच संघर्ष के बीज, नीलम कुलश्रेष्ठ– जीवन की तनी डोर पे ये स्त्रियाँ, राधा कुमार– स्त्री संघर्ष का इतिहास, स्त्रीवादी विमर्श– समाज और साहित्य, विभा देवसरे– स्वागत है बेटी,

मनीषा कुलश्रेष्ठ– हम सभ्य औरतें, प्रभा खेतान– उपनिवेश में स्त्री, अंत में समाहार के रूप में प्रस्तुत किया है।

अध्याय तृतीय : प्रमुख महिला उपन्यासकार एवं उनकी चर्चित कृतियाँ

प्रमुख महिला उपन्यासकार एवं उनकी चर्चित कृतियों का सम्यक् विवेचन एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन निम्नानुसार है–

उषा प्रियंवदा– रुकोगी नहीं राधिका, पचपन खम्भे लाल दीवारें, कांता भारती– रेत की मछली, कृष्णा सोबती– मित्रो मरजानी, सूरजमुखी अंधेरे के, कृष्णा अग्निहोत्री– बात एक औरत की, टेसू की कहानियाँ, मन्नू भंडारी– आपका बंटी, महाभोज, एक कहानी यह भी, ममता कालिया– बेघर, दौड़, प्रभा खेतान– छिन्नमस्ता, गीतांजलि श्री– माई, क्षमा शर्मा– परछाई, अन्नपूर्णा, चित्रा मुद्गल– आवां, मृदुला गर्ग, चित्तकोबरा, अनित्य, मैं और मैं, कठगुलाब, मैत्रेयी पुष्पा– चाक, अन्य उपन्यास – बेतवा बहती रही इदन्नमम्, अल्मा कबूतरी, झूला नट, निरूपमा सेवती– पतझड़ की आवाजें, मणिका मोहिनी– पारो ने कहा था, शिवानी– चौदह फेरे, अंत में समाहार रूप में प्रस्तुत किया है।

अध्याय चतुर्थ : नारी आन्दोलन से सम्बन्धित उपन्यासों में सुखात्मक–दुखात्मक संवेदना

नारी आन्दोलन से सम्बन्धित उपन्यासों में सुखात्मक–दुखात्मक संवेदना के विभिन्न स्वरूपों की व्याख्यात्मक चर्चा प्रस्तुत शोध प्रबंध में प्रस्तुत की गई है।

पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित

अपना खुदा एक औरत–नूर जहीर, केशरमाँ– ज्योत्स्ना मिलन, साथ चलते हुए– जय श्रीराय, ओब्जेक्शन मी लार्ड– निर्मला भुराड़िया, उर्मिला का दिया– सतीश बिरथरे, खानाबदोश ख्वाहिशें– जयंती रंगनाथन, चाक– मैत्रेयी पुष्पा, शाल्मली– नासिरा शर्मा, क्योंकि औरत ने प्यार किया– जेबारशीद, सही नाप के जूते– लता शर्मा, अन्हियारे तलछट में चमका– अल्पना मिश्र, फरिश्ते निकले– मैत्रेयी पुष्पा, पोस्टबाक्स नं. 203 नाला सोपारा–चित्रा मुद्गल आदि महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में विस्तृत संवेदनाऐं लिए हुए हैं।

राजनैतिक जीवन से सम्बन्धित

दुक्खम–सुक्खम– ममता कालिया, कल्चर वल्चर– ममता कालिया, अनित्य– मृदुला गर्ग, एक कहानी यह भी– मन्नू भंडारी आदि ने राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं पर पर्याप्त लिखा है।

धार्मिक जीवन से सम्बन्धित

नीलकंठी ब्रज– इन्दिरा गोस्वामी, अमावस की रात– उषा यादव, अंत में प्रमुख लेखिकाओं एवं उनके उपन्यासों का विस्तृत विवेचन समाहार रूप में प्रस्तुत किया है।

अध्याय पंचम : महिला उपन्यासकारों के कथा साहित्य में स्त्री मुक्ति के लिए संघर्ष

महिला उपन्यासकारों के कथा साहित्य में स्त्री मुक्ति के लिए संघर्ष विषय पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया है। प्रमुख महिला कथाकार एवं कहानी कृतित्व (स्त्री मुक्ति के संदर्भ में) महाश्वेता देवी– पचास कहानियां, मालती जोशी– मन ना भये दसबीस, अमृता प्रीतम– सात सौ बीस कदम, सूर्यबाला– गौरा गुणवंती, रोहिणी अग्रवाल– आओ माँ हम परी हो जाऐं, मृदुला गर्ग– सम्पूर्ण कहानियां, जय श्रीराय– तुम्हें छू लूं जरा, मनीषा कुलश्रेष्ठ– कठपुतलियाँ गन्धर्व गाथा, गीताजंलि श्री– यहाँ हाथी रहते थे, चित्रा मुद्गल– बयान, सुधा ओम ढींगरा– सच कुछ और था, इन्दिरा गोस्वामी– लाल नदी, तुलसी देवी तिवारी– सदर बाजार, मुक्ता– सीढ़ियों का बाजार, नीलाक्षी सिंह– परिंदों का इंतजार सा कुछ, अल्पना मिश्र– भीतर का वक्त आदि कृतियों के माध्यम से नारी संवेदना यथार्थ की पहचान स्त्री की अस्मिता की लड़ाई के नये रूप में प्रस्तुत किया है।

स्त्री की छवि में होता बदलाव

महिला उपन्यासकार संतोष श्रीवास्तव– बहते ग्लेशियर, उर्मिला शिरीष– शहर में अकेली लड़की, दीप्ति कुलश्रेष्ठ– परिणति, क्षमा शर्मा– इक्कीसवीं सदी का लड़का, आदि में स्त्री जीवन की विषम परिस्थितियाँ की सिंहावलोकन प्रस्तुत किया है।

आर्थिक मुक्ति के लिए संघर्ष

कहानियाँ :

चित्रा मुद्गल– आँगन की चिड़ियाँ, सूर्यबाला– सप्ताहांत का ब्रैकफास्ट, कुसुम अंसल– दास्ताने कबूतर, सुषमा मुनीन्द्र– न मौका है न दस्तूर, ज्योत्स्ना मिलन– कुसमा धर्मराज

सामाजिक रुढ़ियों के लिए संघर्ष

कहानियाँ :

आशा पांडेय– चबूतरे का सच, कृष्ण आशू– बेटियां, महाश्वेता देवी– कृष्ण हादशी, मंजुला राणा– जय घोष, ज्योत्स्ना मिलन– कुसमा धर्मराज, सुषमा मुनीन्द्र कभी

खुद पे कभी हालात पे रोना आया आदि की कहानियों में स्त्री विमर्श व संवेदना की अभिव्यक्ति स्पष्ट परिलक्षित है।

सांस्कृतिक क्षेत्र में मुक्ति के लिए संघर्ष विषय पर समकालीन उपन्यासकारों की कहानियाँ

मृदुला श्रीवास्तव– काश पंडोरी न होती, राजी सेठ– किसे कहते हैं विदेश, मधु कांकरिया– सुनो वत्स सुनो, जल कुंभी

शैक्षिक क्षेत्र में पर्दापण एवं अधुनातन वैचारिक संघर्षों की व्यथा–कथा को महिला उपन्यासकारों ने विविध घटनाओं के उदाहरणों द्वारा प्रस्तुत किया है।

कहानियाँ

मधु कांकरिया– सुनो वत्स सुनो, जल कुंभी, राजी सेठ– किसे कहते हैं विदेश। इस प्रकार महिला उपन्यासकारों की कहानियां एवं उनमें व्याप्त संघर्ष को समाहार के रूप में प्रस्तुत किया है।

अध्याय षष्ठ : महिला उपन्यासकारों के उपन्यास में भाषा एवं शिल्प संरचना का विश्लेषण परिदृश्य

महिला उपन्यासकारों के उपन्यास में भाषा एवं शिल्प संरचना के विश्लेषण परिदृश्य को प्रस्तुत किया है। मनोविश्लेषणात्मक, व्यंग्यात्मक, विवेचनात्मक – विचारात्मक, प्रतिकात्मक, भावात्मक, आलोचनात्मक आदि के रूप में प्रस्तुत किया है। अंत में प्रस्तुत शोध प्रबंध में शब्द भण्डार को विशाल रूप देने के लिए तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी एवं आंचलिक शब्दावली का प्रयोग सर्वत्र स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है तथा समकालीन महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में प्रयुक्त शब्दावली के विविध आयामों का विस्तृत अध्ययन किया गया है। महिला उपन्यासकारों द्वारा उनके उपन्यासों में समकालीन परिवेश में प्रयुक्त प्रतीक, संकेत, चित्र एवं ध्वनिमूलक बिम्बों का चित्रण देखा गया है। जो पात्रों के माध्यम से भाषा की रोचकता को नवीन आग्रह प्रस्तुत करते हुए दिखाई देते हैं। अंत में समाहार के रूप में समग्र महिला उपन्यासकारों के उपन्यास में वर्णित भाषा एवं शिल्प का विहंगम योग देखने को मिला है।

अध्याय सप्तम : उपसंहार

अंत में प्रस्तुत शोध प्रबंध का उपसंहार समाहार रूप में समग्र अध्यायों का संक्षिप्तिकरण करके प्रस्तुत करने का विनम्र प्रयास किया है।

घोषणा शोधार्थी

मैं अनीता मीना (शोधार्थी हिन्दी विभाग) यह घोषणा करती हूँ कि मेरा शोध प्रबन्ध **"नारी आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में महिला उपन्यासकारों की भूमिका"** जो मेरे द्वारा प्रस्तुत किया गया है, यह मेरा अपना शोधकार्य है। मैंने यह शोध कार्य डॉ. प्रदीप कुमार मीना सह. आचार्य, राजकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सवाई माधोपुर, हिन्दी विभाग (शोध केन्द्र) के निर्देशन में पूर्ण किया है। यह मेरा मौलिक कार्य है जिसमें मैंने अपने भावों, विचारों को अपने शब्दो में प्रस्तुत किया है और जहाँ दूसरों के विचारों और शब्दों का प्रयोाग किया गया है वे मेरे द्वारा मान्य स्रोतों से लिए गये हैं। अपरिहार्य स्थिति में ली गई ऐसी हर सामग्री का यथा स्थान सन्दर्भ एवं आभार व्यक्त कर दिया है जो कार्य इस शोध प्रबन्ध में प्रस्तुत किया गया है।

मैं यह भी घोषणा करती हूँ कि मैंने विश्वविद्यालय के सभी अकाद्मिक नियमों का निष्ठा एवं ईमानदारी से पालन किया है तथा किसी तथ्य को गलत प्रस्तुत नहीं किया है। अगर मेरे द्वारा किसी भी नियम का उल्लंघन किया गया हो तो मेरे खिलाफ कार्यवाही की जा सकती है। मेरे शोध प्रबन्ध/उपाधि को अमान्य किया जा सकता है यदि मैंने किसी स्रोत से बिना उसका नाम दर्शाये या आवश्यकता को बिना अनुमति के लिया हो।

दिनांक

अनीता मीना
(शोधार्थी)

प्रमाणित किया जाता है कि शोधार्थी अनीता मीना RS/1079/2013 द्वारा दी गयी उपर्युक्त सूचनाएँ मेरी जानकारी के अनुसार सही है।

दिनांक

पर्यवेक्षक

डॉ. प्रदीप कुमार मीना
सह आचार्य, हिन्दी विभाग,
राजकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
सवाई माधोपुर, राजस्थान

प्राक्कथन

पश्चिम के नारी आन्दोलन से तत्कालीन स्त्री लेखन पर गहरा प्रभाव पड़ा है। नारी चिन्तन की भाव भूमि और भारतीय जीवन मूल्यों की रक्षा करते नारी अस्मिता का बोध स्त्री, विमर्श वादी लेखन से कराने में महिला उपन्यासकारों की महती भूमिका रही है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के माध्यम से नारी उपन्यासकारों ने अपने लेखन के माध्यम से सामाजिक सम्बन्धों में तनाव विघटन संघर्ष परिवर्तन एवं विमर्श के क्षेत्र में उल्लेखनीय काम किया है तथा नारी आन्दोलनों का प्रभाव रेखांकित करते हुए स्त्री के पथ में सुरक्षात्मक एवं सम्मानजनक वातावरण बनाया, उसे विवेचित एवं विश्लेषित, मूल्यांकित करने का विनम्र एवं मौलिक प्रयास किया गया है।

प्रथम अध्याय ''नारी आन्दोलन की परम्परा'' को केन्द्र में रखकर प्रस्तुत किया गया है। जिसमें नारी आन्दोलन की पश्चिमी परम्परा को पृष्ठभूमि के रूप में मानते हुए भारतीय परम्परा का विकासात्मक विश्लेषण किया गया। साथ ही स्त्री अस्मिता की अवधारणा एवं स्त्री स्वातन्त्र्य और सामाजिक भूमिका को परखने का प्रयास भी किया गया है।

अध्याय द्वितीय ''नारी आन्दोलन और चर्चित पुस्तकें'' पर आधारित है। इस अध्याय में पाश्चात्य लेखिकाओं की भूमिका को अनुदित पुस्तकों के माध्यम से आधारभूत सामग्री के रूप में प्रयुक्त करते हुए भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्त्री विमर्श की अवधारणा, स्वरूप, सिद्धान्त एवं मुख्य बिन्दुओं के रूप में एक संक्षिप्त संश्लिष्ट परन्तु तथ्यात्मक विवेचना की गयी है। इसमें लगभग 12 कृतियों की विशद् विवेचना एवं लगभग 17 कृतियों की संक्षिप्त, सूत्रात्मक, संश्लिष्ट एवं तथ्यपरक निष्कर्षात्मक सार्थक रूप में विवेचन कर अवलोकन प्रस्तुत किया गया है।

अध्याय तृतीय ''प्रमुख महिला उपन्यासकार एवं उनकी चर्चित कृतियाँ'' शीर्षक से प्रस्तुत है। इस अध्याय में समकालीन महिला लेखिकाओं के लगभग 15 रचनाकारों के पच्चीस से अधिक उन उपन्यासों का विश्लेषण किया गया है जो अपने समय की बहुचर्चित एवं स्त्री विमर्श की दृष्टि से आलोचनात्मक रूप में महत्वपूर्ण रही है उषा प्रियंवदा, कृष्णा सोबती, चित्रा मुद्‌गल, मैत्रेयी पुष्पा, मृदुला गर्ग, ममता कालिया, इत्यादि ख्यातनाम रचनाकार हैं, जिनके उपन्यासों को आधार बनाया गया है।

अध्याय चतुर्थ में ''नारी आन्दोलन से सम्बन्धित उपन्यासों में दुखात्मक–सुखात्मक संवेदना'' शीर्षक रख कर अनुभूतिजन्य दृष्टिकोण अपनाते हुए पारिवारिक, राजनैतिक एवं धार्मिक जीवन से सम्बन्धित लगभग 19 (137472) उपन्यासकारों की प्रतिनिधि कृतियों में सुखात्मक एवं दुखात्मक संवेदना का अध्ययन शोध परक दृष्टि से करने का विनम्र एवं मौलिक प्रयास किया गया है।

अध्याय पंचम ''महिला उपन्यासकारों के कथा साहित्य में स्त्री मुक्ति के लिए संघर्ष'' शीर्षक है। इस अध्याय में प्रमुख महिला उपन्यासकारों के चर्चित एवं आलोचनात्मक दृष्टि से स्त्री मुक्ति के सन्दर्भ में लगभग 17 महिला कहानी लेखिकाओं के कहानी संग्रहों का चयन किया तथा उनकी कहानियों का विस्तृत अध्ययन करते हुए स्त्री मुक्ति के संदर्भ को विशेष रूप से विश्लेषित किया गया है। यहाँ पर नमूने के तौर पर स्त्री की छवि में होने वाले बदलाव को कहानियों के माध्यम से प्रस्तुत कर परिवर्तन के आयामों को प्रकाश में भी लाया गया है। महिला कहानीकारों ने आर्थिक मुक्ति के लिए संघर्ष, सामाजिक रूढ़ियों के विरूद्ध संघर्ष, सांस्कृतिक क्षेत्र में मुक्ति के लिए संघर्ष एवं शैक्षिक क्षेत्र में पदार्पण एवं अधुनातन वैचारिक संघर्ष को ध्यान में रखकर कहानियों के काव्यवस्तु, कथा विन्यास, पात्र, चरित्र–चित्रण, संवाद योजना को कहानी तत्त्वों की मीमांसात्मक वस्तुस्थिति का गहन अध्ययन ध्येय रखा गया है।

अध्याय षष्ठ्म–''महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में भाषा, शिल्प, संरचना एवं शैली का विश्लेषणपरक मूल्यांकन'' पर केन्द्रित है।

अंत में सम्पूर्ण शोध प्रबंध का सारांश रूप में प्रस्तुत कर नारी जीवन से जुड़ी विभिन्न समस्याओं एवं उनके समाधान की चर्चा की गई है, जो कि समकालीन परिवेश में व्याप्त पितृसत्ता एवं पुरुषसत्ता के दबाव तले दबी नारी की कुण्ठा, घुटन एवं त्रासदी को महिला लेखकाओं ने अपनी कृतियों के माध्यम से यथार्थ से साक्षात्कार करवाने का अनुठा एवं नव्य प्रयोग किया है। यह प्रयोग आज की नारी की वस्तुस्थिति एवं उस पर होने वाले अत्याचारों का साक्षात्कार करवाता है। मनोविश्लेषणात्मक व्यंग्यात्मक, विवेचनात्मक, विचारात्मक, प्रतीकात्मक, भावात्मक एवं आलोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है। साथ ही आलोच्य विषयवस्तु का शब्द भण्डार तत्सम, तद्भव, देशज एवं विदेशी तथा आंचलिक शब्दावली के प्रयोग पर समग्र ध्यान केन्द्रित किया गया है। समाहारात्मक रूप में प्रतीकात्मकता, सांकेतिकता, चित्रात्मकता, ध्वन्यात्मकता के उस पक्ष को भी उभारा गया है, जो कहानी में सरलता, सरसता, प्रभवोत्पादकता एवं सौन्दर्यबोध की वृद्धि कर कहानी को ग्राह्यता के साथ–साथ हृदयग्राही बनाने में सहायक होते हैं। अध्याय सप्तम में ''नारी

आन्दोलन में महिला उपन्यासकरों का मूल्यांकन'' शीर्षक से प्रस्तुत है। इस अध्याय को शोध कार्य का समाहार स्वरूप प्रदान करने का दृष्टिकोण अपनाया गया है। इसमें नारी आन्दोलन की दशा तथा दिशा पर विकासात्मक, सर्वेक्षणात्मक आंकलन करते हुए परिवर्तन, परिवर्द्धन की सम्भावनाओं पर प्रकाश डाला गया है। इस दिशा में अनुभूत कठिनाइयों, समस्याओं व समाधान की दिशा में रचनात्मक कदम की तलाश की गयी एवं भविष्योन्मुखी स्वरूप की संरचनात्मक एवं संभावित स्थिति का आंकलन समक्ष रखा गया है।

प्रत्येक कार्य की अपनी सीमाएं होती है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करते समय शोधार्थी की भी कतिपय सीमाएं रही हैं। कृतियों की उपलब्धता, केन्द्रीय साहित्य अकादमी की प्रमुख पत्रिका–समकालीन भारतीय साहित्य एवं शीर्षस्थ प्रकाशक, राजकमल, राजपाल, लोक भारतीय, राधा कृष्ण सामयिक इत्यादि प्रमुख रहे। जो भी सामग्री उपलब्ध हो सकी उसी के आधार पर शोध परक निष्कर्ष, प्रदेय को रेखांकित किया जा सका, जो हिन्दी साहित्य के आलोचना क्षेत्र में महत्वपूर्ण एवं उपादेय है।

मैं अपने अनुसंधान काल में अनेक बार हतोत्साहित हुई किंतु निराशा के उन क्षणों में मुझे विश्वास, धैर्य और सम्बल प्रदान करने वाले अपने पति आर.पी. मीना (उप प्रधानाचार्य शिक्षा निदेशालय, दिल्ली) के पूर्ण सहयोग के लिये सप्रेम आभार प्रकट करती हूँ। मैं अपने पार्वती – परमेश्वर पूजनीय स्वर्गीय माँ श्रीमती केली देवी व पिता श्री जगदीश प्रसाद मीना के प्रति प्रणाम कर अत्यन्त आभार व श्रद्धा व्यक्त करती हूँ, जिन्होनें मुझ पर अपना अगाध स्नेह, वात्सल्य व आशीष वर्षण कर मुझे अजस्र, अध्ययन की सुविधा व प्रेरणा प्रदान की। अपने तीनों भ्राताओं व भाभियों व दोनों बहनों के प्रति भी हार्दिक आभारी हूँ, जिन्होनें मुझे सदैव अपने अपार स्नेह की शीतल छाया प्रदान की। मैं अपने पूजनीय सास श्रीमती पाना देवी व श्वसुर श्री बजरंग लाल मीना व तीनों ननदों व दोनों देवर व देवरानियों के प्रति भी आभार प्रकट करती हूँ, साथ ही अपने दोनों बच्चों उत्कर्ष व हियांशी की भी तहेदिल से आभारी हूँ, जो इतने छोटे होते हुए भी शोधकार्य पूर्ण करने में मुझे सहयोग दिया।

मैंने शोधसामग्री के संकलनार्थ यथासंभव प्रयास किया। अनेक स्थानों यथा राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर, कोटा विश्वविद्यालय कोटा, जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय नई दिल्ली, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सवाई माधोपुर, राजकीय कन्या महाविद्यालय सवाई माधोपुर, रामेश्वरी देवी राजकीय कन्या महाविद्यालय, भरतपुर,

महारानी श्री जया महाविद्यालय भरतपुर के पुस्तकालय प्रभारियों व कर्मचारियों के प्रति भी अपना आभार व्यक्त करती हूँ।

आवश्यकतानुसार समय–समय पर मुझे दिशा निर्देश देने वाले अग्रजों व सतीर्थ्य सुहृदों डॉ. सीताराम लहरी सह आचार्य, डॉ. कविता आचार्य सह आचार्य, डॉ. शशिप्रभा सह आचार्य, डॉ. निशा गोयल सह आचार्य, श्री मानसिंह मीना सहायक आचार्य, डॉ. सरोज सहायक आचार्य, श्रीमती दीप्ति अग्रवाल सहायक आचार्य, श्रीमती सुमन गोयल सहायक आचार्य, डॉ. अशोक शास्त्री आदि का स्नेहिल मृदुल व्यवहार सदा स्मृतिपटल पर अंकित रहेगा।

महाविद्यालय परिवार का भी मैं हार्दिक अभिनन्दन करती हूँ। महाविद्यालय पुस्तकालय का भी मेरे शोधकार्य में योगदान उल्लेखनीय है। इसलिये पुस्तकालयाध्यक्ष तथा कर्मचारियों के प्रति धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को यथासंभव सम्यक् एवं शुद्धता पूर्वक करने की चेष्टा की है। मेरी अज्ञानता या भूलवश यदि कोई अशुद्धि हो तो विद्वज्जन भूल सुधार कर अध्ययन करने की चेष्टा करें। शोध प्रबन्ध के टंकण के लिये मैं खण्डेलवाल टाईपिंग इंस्टिट्यूट, महेश नगर, जयपुर के समस्त स्टाफ को भी धन्यवाद देती हूँ।

शोधार्थी

श्रीमती अनीता मीना

नारी आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में महिला उपन्यासकारों की भूमिका

अनुक्रमणिका
(Index)

क्र.स.	विवरण	पृष्ठ सं.
1.	मुख्यपृष्ठ	**I**
2.	प्रमाण पत्र	**II**
3.	एन्टी – प्लेग्रिज्म प्रमाण पत्र	**III**
4.	शोध सार	**IV-VII**
5.	घोषणा पत्र	**VIII**
6.	प्राक्कथन व आभार	**IX-XII**
7.	**प्रथम अध्याय –** नारी आन्दोलन की परम्परा	**1-24**
8.	**द्वितीय अध्याय –** नारी आन्दोलन और चर्चित पुस्तकें	**25-71**
9.	**तृतीय अध्याय –** प्रमुख महिला उपन्यासकार एवं उनकी चर्चित कृतियाँ	**72-141**
10.	**चतुर्थ अध्याय–** नारी आन्दोलन से सम्बन्धित उपन्यासों में सुखात्मक–दुखात्मक संवेदना	**142-181**
11.	**पंचम अध्याय –** महिला उपन्यासकारों के कथा साहित्य में स्त्री मुक्ति के लिए संघर्ष	**182-245**

12.	**षष्ठम अध्याय–** महिला उपन्यासकारों के उपन्यास में भाषा एवं शिल्प संरचना का विश्लेषण परिदृश्य	**246-267**
13.	**सप्तम अध्याय–** उपसंहार	**268-274**
14.	**शोध सारांश**	**275-285**
15.	**संदर्भ ग्रन्थ सूची**	**286-291**
16.	**प्रकाशित शोध पत्र**	**292-315**

प्रथम अध्याय

नारी आन्दोलन की परम्परा

1. विषय प्रवेश
2. नारी आन्दोलन की पश्चिमी परम्परा
3. नारी आन्दोलन की भारतीय परम्परा
4. स्त्री अस्मिता की अवधारणा
5. स्त्री स्वातन्त्र्य और सामाजिक भूमिका
6. समाहार

प्रथम अध्याय

नारी आन्दोलन की परम्परा

1.1 विषय प्रवेश

1947 में सीमोन द बोउवार ने ''द सेकेंड सेक्स'' पर अपना कार्य प्रारम्भ किया। उन्होंने –

1 औरत की नियति क्या है ?

2 वह गुलाम क्यों है ?

3 किसने ये बेड़ियाँ कुलांचे मारती हिरणी के पैरों में पहनाई ?

इत्यादि सवाल उठाए। यह पुस्तक 1949 में प्रकाशित हुई जिससे – आधी दुनिया की गुलामी, अमीर–गरीब हर जाति की महिला को जकड़ी हुई अनुभव किया गया।[1] यह नारी आन्दोलन का वर्तमान परिप्रेक्ष्य उजागर करने में समर्थ घटना क्रम था। सीमोन को फ्रांस की स्त्री मुक्ति आन्दोलन की अगुवा माना गया क्योंकि वह नित नए मुद्दों पर बोल रही थी।[2] 1970 तक वह नारी मुक्ति आंदोलन के प्रति एक – समाज सुधारक का दृष्टिकोण रखती थी किन्तु 1971 में ''मेनीफेस्टो ऑफ 373'' के प्रकाशन के साथ ही स्त्री की स्थिति में आमूल–चूल परिवर्तन चाहती थी। फ्रांस की अनेक महत्वपूर्ण महिलाओं ने गैर कानूनी गर्भपात को स्वीकार किया।[3] यह बात स्वीकार की जाने लगी कि –

1. समाजवाद से स्त्री की समस्या हल नहीं हो सकती।
2. पुरूष बड़ा चालाक होता है और सत्ता के मद में स्त्री का दमन किए बिना नहीं रह सकता।
3. आधी दुनिया को, सारे वादों, जातियों और राष्ट्रों का अतिक्रमण कर, एक अधीनस्थ जाति की तरह लम्बी लड़ाई लड़नी पडेगी।[4] 1973 में सीमोन ने ''ल

---

1 बोउवार सीमोन द–स्त्री उपेक्षिता–डॉ. प्रभा खेतान, हिन्द पॉकेट बुक्स, 2002, 1251–ISBN-81–7073–039–2, पृ.सं. 10

2 वही, पृ.12

3 बोउवार सीमोन द–स्त्री उपेक्षिता–डॉ. प्रभा खेतान, हिन्द पॉकेट बुक्स, 2002, 1251–ISBN-81–7073–039–2, पृ. 12

4 वही, पृ. 13

तो मोदार्न'' पत्रिका में नारी समर्थक कॉलम लिखकर[1] नारी आन्दोलन को बल प्रदान किया। स्त्री मुक्ति का विचार मार्क्सवादी दार्शनिकता के कारण उभरा। सीमोन ने स्त्री की स्थिति पर बिना किसी पूर्वाग्रह के विश्लेषण किया। ''स्त्री कहीं झुंड बनाकर नहीं रहती। वह पूरी मानवता का आधा हिस्सा होते हुए भी पूरी एक जाति नहीं।''

गुलाम अपनी गुलामी से परिचित है और एक काला आदमी अपने रंग से, पर स्त्री घरों, अलग–अलग वर्गों और भिन्न–भिन्न जातियों में बिखरी हुई है। उसमें क्रांति की चेतना नहीं, क्योंकि अपनी स्थिति के लिए वह स्वयं जिम्मेदार है।

वह पुरूष की सह अपराधिनी है। अतः समाजवाद की स्थापना मात्र से स्त्री मुक्त नहीं हो जाएगी। समाजवाद भी पुरूषों की सर्वोपरिता की ही विजय बन जाएगा।''[2] सीमोन ने गम्भीरता से स्त्री स्वातंत्र्य तंत्रता को लेकर विचार प्रकट करते हुए स्पष्ट किया कि यह दुनिया पुरूषों ने बनाई है, स्त्री को पूछकर नहीं बनाई। वह सदियों से ठगी गई है। स्त्री की स्थिति अधीनता की है। यह सोचना पड़ेगा कि आज की दुनिया में औरत का सही स्थान और स्वरूप क्या है ? मानव जाति में औरत का पृथक अस्तित्व एक तथ्य है, वह मानवता का आधा हिस्सा है।

युक्तिवाद तथा नामवाद के दर्शन को स्वीकार करने वालों में डोरोथी पारकर के अनुसार, ''मैं उन किताबों को स्वीकार नहीं कर सकती, जो औरत को औरत की तरह पेश करती है। नारी विरोधी लोगों के अनुसार ''स्त्री पुरूष नहीं हो सकती।'' जबकि पौरूषीय उपलब्धियों व सम्मान का दावा करने वाली स्त्रियां पुरूष जैसी होना चाहती है। वे पुरूष की नकल करती है। निसन्देह ''मैं एक औरत हूँ।'' आधार वाक्य के ऊपर सारे विचार–विमर्श निर्भर करते हैं। अरस्तू ने औरत को स्वायत्त नहीं माना, पुरूष के लिए भोग की वस्तु कहा है। इतिहास में हमेशा से स्त्री पुरूष के अधीनस्थ रही है। उनमें सामूहिकता की भावना का अभाव रहा है। औरत पुरूष को खत्म कर देने की कल्पना नहीं कर सकती। स्त्री–पुरूष के सेक्स का विभेदीकरण करके कब तक भेद की रेखा खींचकर समाज में दरार पैदा की जाती रहेगी ? अब उसकी जरूरत गुलामी से मुक्ति में है। वह अपने माध्यम से अपनी जरूरतों को पूरी करने की क्षमता उजागर करे, अपने महत्व के प्रति काफी हद तक सचेत बनें, पुरूष के बराबर महत्ता स्थापित करें। औरत की स्थिति विश्लेषण मांगती है।

---

1 वही, पृ. 13

2 बोउवार सीमोन द–स्त्री उपेक्षिता–डॉ. प्रभा खेतान, हिन्द पॉकेट बुक्स, 2002, 1251–ISBN-81–7073–039–2, पृ.19

पुरूष वर्ग से यह भी अपेक्षा रखी जा सकती है कि वह औरत की रक्षा का सहयोगी बने, उन्हें सुविधाऐं प्रदान करें, मानवीय मूल्यों से वंचित न रखे। पुरूष द्वारा उसे अन्यथा प्रदान करने के कारण ही वह सह अपराधिनी हो गई है। समग्रतः औरत के हित में बदलाव चिंतन धारा महत्वपूर्ण है। 18वीं सदी में जॉन स्टुअर्ट मिल तथा दिदेरो जैसे गणतांत्रिक पुरूषों ने औरत को वस्तुस्थिति के संदर्भ में देखना शुरू किया। इसका प्रभाव यह पड़ा कि–

1. औरत को पुरूष की तरह ही मानव प्राणी माना जाने लगा।
2. औरत के लिए असाधारण निष्पक्षता का वातावरण बना।
3. औरत की स्वाधीनता के दावे को आर्थिक आधार मिला व उसे उत्पादक श्रम के क्षेत्र में प्रवेश मिला। दूसरी तरफ नकारात्मक प्रभाव के रूप में–

1. विरोधी खेमें अधिक आक्रामक हो गए।
2. औरत की स्वतन्त्र सत्ता और स्वाधीनता पुरूषों की आँख की किरकिरी बन गई। मजदूर वर्ग ने भी औरत की स्वाधीनता पर बंधन लगाना शुरू कर दिया।
3. पुरूष औरत को अपना एक खतरनाक प्रतियोगी समझने लगा।
4. सारे सुधारवादी और समतावादी आदर्श औरत को हीनता की स्थिति में डालने के लिए एकजूट होने लगे।[1]

जो पुरूष औरत का अधिक अपमान करता है, वह मानसिक रूप से स्वयं अपमानित होने की आशंका से ग्रस्त रहता है। लेकिन युग बदला है नारी स्वातन्त्र की चेतना के कारण अब–पुरूष खुले रूप में न तो औरतों का अपमान करते हैं न ही उन्हें हीन रूप में विश्लेषित करते हैं। परिवार के केन्द्र में – औरत से प्रेम, माँ, पत्नी, पुत्री के रूप में सम्मान की धारणाएं बलवती हुई है। जो स्त्री विमर्श की धारा का महत्वपूर्ण पथ है।

1.2 1.1 नारी आन्दोलन की पश्चिमी परम्परा

नारी आन्दोलन की पृष्ठभूमि में पाश्चात्य पीठिका का अहम स्थान रहा है। **संत पाल** के शब्दों में–''पुरूष औरत के लिए नहीं बना है, औरत बनी है पुरूष के लिए।" **टर्टयूलियन** लिखते है कि "औरत तुम शैतान का दरवाजा हो। जहाँ शैतान सीधा आक्रमण करने से हिचकिचाता है, वहाँ औरत का सहारा लेकर पुरुष को मिट्टी में मिला देता है।'' **संत एम्ब्रोस** के शब्द है–''आदम को पाप के रास्ते पर हौवा ले जाती है न कि हौवा को आदम'' **संत थॉमस** के निर्णायक शब्द है– ''यह औरत की नियति है कि वह

---

1 वही, पृ. 27

पुरूष की अधीनता में रहे, इसे परिवर्तित नहीं किया जा सकता।''[1] यह विचार स्त्री की स्वतंत्रता के लिए प्रारम्भ है। **जस्टीनियन** के संविधान में – स्त्री को पत्नी, माँ का दर्जा देकर संतान पर अधिकार, पति के मरने पर नैतिक अभिभावक माना गया था किन्तु औरत के अधिकार घटते गए।

एंगेल्स के अनुसार– ''प्रेम औपचारिक समाज के घेरे से बाहर मिला। इसका दूसरा नाम था– व्यभिचार है।''[2] यूरोप में सेक्स क्रांति के पश्चात् पाश्चात्य नारी को एक ठोस भावनात्मक व्यक्तित्व प्रदान किया है। परन्तु जब उदार समाज की नारी अवैध बच्चे को जन्म देती है, मर्द समाज उस बच्चे का उत्तरदायित्व अपने कंधों पर नहीं लेता तो फिर नारी मुक्ति से अभिप्राय क्या है ? क्या नारी मुक्ति–मर्द का मुकाबला करना, मर्दाना व्यवहार और आचार की नकल, स्वयं का दायरा बढ़ाना, आवश्यकता को देखकर अपनी बेड़ियों को तोड़ना है ?[3]

सीमोन द बोउवार ने समाज की उच्छृंखलता का जो चित्र अमेरिका के प्रसिद्ध चित्रकार राबर्ट नायर ने बनाया था, उस पर से परदा उठाया है। नारी के बदन पर मर्दाना हाथ–

''माथे पर पिता का
सीने पर प्रेमी का
पेट पर बेटे का''।

जाँघ पर पति का होता है जो पुरूष सत्ता का प्रतीक है। यह चित्र भले ही नारी की संवेदना, भावना, विचार का स्वामी किसी को नहीं बताता, न उसकी इच्छा का कोई इशारा करता फिर भी नारी को उपभोग की वस्तु तो बताता है।[4] **शोवाल्टर** ने– ''लिटरेचर ऑफ देयर आन ब्रिटिश वूमेन नोवलिस्ट्स फ्राम ब्रोते टु लीसिंग'' (197) में सामाजिक चेतना को रेखांकित किया है।[5] लेखिकाओं ने मूल्यों, परम्परा, अनुभवों के आधार पर एकता निर्मित होने को स्वीकारा गया है। **बुर्विनिया वुल्फ**– पहली लेखिका हैं जिन्होंने– ''वूमेन एण्ड फिक्शन'' (1926) में सबसे पहले स्त्री की भाषा की समस्याओं पर

---

1 वही, पृ. 62
2 वही, पृ. 63
3 शर्मा–नासिरा– औरत के लिए औरत –सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011, 300/– ISBN–81, 7138–042.05 पृ.125
4 वही, पृ. 125–126
5 स्त्रीवादी साहित्य विमर्श–चतुर्वेदी–जगदीश चन्द्र, अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 110002, 2018, RS 995 ISBN 978–81–7975–405–4 पृ.249

प्रकाश डाला। लेखिकाओं का वाक्य गठन एक तरह से नया पुरूषों की तुलना में ज्यादा खुला। भाषा को पुरूषों की भाषा से अलग बताया।[1]

स्त्री स्वतन्त्रता की परम्परा का एक पहलू– स्त्री लेखन की भाषा है जिस पर मोनिका विटींग ने ''दि प्वाइंटण्यू: यूनिवर्सल और पर्टीकुलर'' (1983), डी केमरून–''फेमिनिज्म एण्ड लिंग्विस्टिक'' (1985), रोबिन लेफॉक– लैंग्वेज एण्ड वूमेन्स प्लेस (1975), डाली स्पेंडर– मैन मेउ लैंग्वेज (1980) में लिखा स्त्रियों की भाषा स्वतन्त्र होती है, वे मर्दों से भिन्न बोलती है। स्त्री–पुरूष भाषा का फर्क शक्ति के आधार पर होता है।

स्त्री की भाषा में ज्यादा झिझक, धारा प्रवाह का अभाव, तार्किकता कम, कम से कम स्वग्राही होती है। वे पुरूषों की तुलना में ज्यादा खामोश, कम से कम दखलंदाजी करने वाली, इशारों की भाषा बोलने वाली, पुरूषों से ज्यादा क्रियाओं का प्रयोग करने वाली, बातचीत में प्रतिस्पर्द्धा के बजाय सहयोग की रणनीति पर जोर देती है।[2]

यह कमजोरी स्वतंत्रता में बाधक बनती है जिसे बदला जाना जरूरी है। कतिपय विद्वानों ने नारी मुक्ति आन्दोलन की सूत्रधार ''मेरी वाल स्टोन क्राफ्ट'' को कहा है, जिसने 18वीं शताब्दी में इंग्लैण्ड में नारी आन्दोलन का सूत्रपात किया। 1844 में फ्रांस की फ्लोरा ट्रिस्टन ने नारीवादी संगठन की स्थापना की। इग्लैण्ड की कैरोलीन नार्टन ने महिलाओं को पुरूष के समान अधिकार दिए जाने की मांग को लेकर आन्दोलन शुरू किया।[3] इसी प्रकार जॉन स्टुअर्ट मिल ने इंग्लैण्ड अपनी पुस्तक ''द सब्जेक्ट ऑफ विमेन (स्त्री की पराधीनता) में नारी मुक्ति और उसके मताधिकारों के लिए आवाज उठाई''[4] अनेक पश्चिमी नारी लेखिकाओं ने पुरूष द्वारा मनोवैज्ञानिक दबाव बनाकर स्त्री को वासना की पूर्ति का साधन मात्र समझने के विरूद्ध आवाज उठाई है उनमें बेट्टी फ्राइडन का "द फेमिनिन मिस्टिक", केट मिलेट का "सेक्सुअल पालिटिक्स, जर्मेन ग्रीयर का "फीमेल यूनक" आदि में पुरूष समाज के प्रति उग्र विद्रोह के रूप में मुक्त काम और समलैंगिकता का समर्थन किया गया है।

नारी आन्दोलन के कारण ''सोसायटी फोर कटिंग अप मैन'' जैसी संस्थाओं का जन्म हुआ। नारी आन्दोलन की एक शाखा ने तो महिलाओं को केवल लड़कियां ही पैदा

---

1 वही, पृ. 269
2 वही, पृ. 270
3 सिंह, डॉ. ज्योति, मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता का प्रश्न, हिन्दी साहित्य निकेतन बिजनौर (उ. 9), 2008, 3001, ISBN 978–81–89790–51.6 पृ, 25
4 वही, पृ. 25

करने या जीवित रखने की सलाह दे डाली। मानव शास्त्री डॉ. मारगीर मीड ने स्त्रियों की मांगों के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हुए उन्हें संयम बरतने की सलाह दी।[1]

नारी मुक्ति आन्दोलन अब– ''बैक टु विमेनहुड'' के रूप में जोर पकड़ता जा रहा है। पश्चिम में नारी आन्दोलन से वहाँ पर अधिकारों की लड़ाई तो जीत ली किन्तु पुरूषों की मानसिकता में परिवर्तन अभी शेष है। पुरूष द्वारा नारी प्रताड़ना, हत्या, हिंसा, बलात्कार की घटनाएं थमी नहीं है।

पश्चिम के दाम्पत्य सम्बन्धों की अस्थिरता उसे चयन की स्वतन्त्रता तो देती है किन्तु देह के जाल से वह मुक्त नहीं हो सकी है। वहाँ पर तलाक, स्वच्छंद यौन सम्बन्ध, विवाह पूर्व गर्भधारण के मामले भी देखने में आते हैं। जॉन स्टुअर्ट तथा स्टेनडाल ने माना है कि ''किसी भी क्षेत्र में स्त्री को कभी कोई सुविधा मिली ही नहीं। इसीलिए आज स्त्रियां नई स्थिति की मांग कर रही है।''[2] नारी आन्दोलन को प्रभावी और असरदार बनाने में कतिपय लेखकों का योगदान रहा है जिन्होंने नारी आन्दोलन को सोचने, झकझोरने का कार्य किया है। मांदेलान नीत्शे से प्रभावित है जो औरत को रात्रि, अव्यवस्था, उपद्रव बताते है। वे लिखते हैं –

1. स्त्री न कुछ देख–सोच सकती है, न उसमें मनीषा है। न वह वस्तु को समझती है न प्यार करती है। उसकी रहस्यमयता एक जाल है, एक भ्रम है।
2. वह पुरूष को कुछ नहीं दे सकती। माँ पुरूष की सबसे बड़ी दुश्मन होती है। माँ का दोष है कि वह अपनी संतान को अपने गर्भ के अंधेरे में कैद रखना चाहती है। माँ तो हमेशा यही चाहती है कि वह उड़ते पंछी के पंख बांध दे। वह मांस पिंड बस उसका होकर रहे और उसके जीवन के खालीपन को भरे।
3. प्रिया सांप का प्रतीक है जो पुरूष को सदा–सदा के लिए वासना में लपेटे रखती है। स्त्री के कारण पुरूष ईश्वर का साकार अनुभव नहीं कर पाता।
4. स्त्री परजीवी है। वह आश्रय के लिए सारी ताकत सोख लेना चाहती है।[3]

डी.एच. लारेंस के अनुसार स्त्री न मनोरंजन का साधन है, न पुरूष की वासना का शिकार। वह पुरूष का दूसरा ध्रुव है। उसका अस्तित्व पुरूष का अनिवार्य पूरक है। स्त्री सम्भोग की क्रिया बिना किसी अनुबंध और संयोजन के बिना किसी आत्म समर्पण के, एक दूसरे की चरम तृप्ति का अपूर्ण अनुभव करती है।

---

1 वही, पृ. 27
2 खेतान प्रभा, स्त्री उपक्षिता, पृ. 70
3 वही, पृ. 111

दोनों का सम्बन्ध संतुलित पारस्परिकता पर आधारित है।[1] क्लांदे के अनुसार –औरत पाप होते हुए भी अंत में भलाई की ओर अग्रसर हो जाती है। जगत् की संगति में औरत का भी स्थान है। लुसिफर की नजरों में औरत में एक ऐसा विचित्र आवेग है जो क्षणों की व्यर्थता को शाश्वतता में बांध देता है।[2]

क्लांदे औरत को पुरूष के भीतर का दुश्मन बताते हुए स्पष्ट करते हैं कि यह हमारी जिदंगी को नाटकीयता का तत्व प्रदान करती है। आत्मा पर यदि यह क्रूर आघात न किया होता तो पुरूष सोता रहता। स्त्री का प्रेम हमारे छोटे से जीवन में अकारण उथल–पुथल मचा देता है। बहुधा औरत छलनामयी सिद्ध होती है।[3]

ब्रेतों के अनुसार– स्त्री पुरूष के जीवन में मुक्ति में सहायक तत्व है, वह पुरूष को संसार में फंसे हुए जीव की गहरी तंद्रा से जगाती है। स्त्री का प्यार पुरूष को मायावी बन्धनों में बांधता है, उसकी वासना की आग को भड़काता है। स्त्री पुरूष का हाथ पकड़ कर मुक्ति के द्वार पर ले जाती है। स्त्री वह रहस्यमयी पहेली है जो नित्य नयी पहेलियां पैदा करती रहती है। वह अनुपम और अद्वितीय है। वह स्वयं कविता है। स्त्री की मुक्ति प्रेम में निहित है। **ब्रेतों** के अनुसार– ''अब वह समय आ गया है कि स्त्री अपने आदर्शों को पुरूष पर आरोपित करें, क्योंकि आज पुरूष अपना सर्वस्व खो चुका है। स्त्री ही पुरूष को उसका वास्तविक रूप प्रदान कर सकती है। उसे अपनी सही भूमिका समझनी होगी। उसे अपने को नर्क से निष्कासित करना होगा जिसमें पुरूष ने उसे कैद कर रखा है।

ब्रेतों का स्त्री के लिए विमर्श

1. आज स्त्री असंतुलित व असंगत है। इसका कारण पुरूष का अत्याचार है। स्त्री इससे उबर सकती है।
2. उसमें आंतरिक ताकत है, उसकी जड़ें गहरी है। वह जीवन स्त्रोत में आत्मा तक धसी हुई है। अब समय आ गया है कि स्त्री विद्रोह करे।[4]

महान उपन्यासकार स्तांदाल– स्त्री को कामना की वस्तु मानकर उससे रागात्मक सम्बन्ध रखते हैं। वे दुःख पीड़ा से झुलसती स्त्री को जीवनदान देने तथा उसकी

---

1 वही, पृ. 112
2 वही, पृ. 114
3 वही, 114–115
4 वही, पृ. 116

कृतज्ञता प्यार पाने की कामना करते हैं। पुरूष जानबुझकर स्त्री को बौना रखता है। स्त्री को न देवी, न राक्षसी अपितु मानवी मानो।[1]

इन सारे लेखकों की दृष्टि से स्त्री की आदर्श भूमिका अन्या होकर पुरूष को उसके वास्तविक स्वरूप से परिचित कराने में हैं। आंदोलन वहशीपन में, लारेस सेक्स प्रतीक, क्लांदे प्रभु के पास पहुंचने वाली आत्मजा, ब्रेतों प्रकृति, स्तांदाल प्रेमिका के रूप में दर्शाते हैं।[2] सभी विचार स्त्री आन्दोलनों में सहायक सिद्ध होते हैं। स्त्री की उपयोगिता पुरूषों के लिए है। पुरुष को स्त्री को एक चेतन प्राणी मानना पड़ेगा। प्रेम की बाजी पुरूष की नियति में सहायक है।

इस प्रकार नारी आन्दोलन की पश्चिमी अवधारणा ने स्त्री को बलवती गरिमामय एवं प्रधान की भूमिका में सृजन करने हेतु सकारात्मक वातावरण प्रदान किया है।

1.3 नारी आन्दोलन की भारतीय परम्परा

भारतीय परम्परा में वैदिक सूत्रों के आधार पर पुत्र के समान स्तर के सम्बन्ध में परस्पर विरोधी तथ्यों के कारण स्त्री को आन्दोलन की राह पकड़नी पड़ी है। ब्रह्मदारण्यक उपनिषद में – दुहिता में पांडित्य जयते कहकर आदर किया गया, बराह ग्रह्य सूत्र में सुन्दर कन्याओं की उत्पत्ति पर प्रसन्नता व्यक्त की गई है।[3] पुत्री के प्रति अभिभावकों के स्नेह की अभिव्यक्ति भी मिलती है।[4] तैतरीय संहिता में कन्या जन्म पर निष्क्रियता का उल्लेख मिलता है।

कन्या शब्द की उत्पत्ति ''कम्'' धातु से हुई, इसका अर्थ है, किसी भी पुरुष की इच्छा कर सकती है। वह स्वतन्त्र है। उस पर किसी का अधिकार नहीं है। इस कथन से नारी स्वतन्त्रता को रेखांकित किया गया है। वैदिक काल में स्त्रियों द्वारा ऋचाओं की रचना जैसे विद्वता पूर्ण कार्य लड़कियों को शिक्षा देने के परिणाम है। ऋग्वेद की रचना में 20 स्त्रियों का योगदान है।[5]

---

1 वही, पृ. 117

2 वहीं, पृ. 121

3 कस्तवार–रेखा, स्त्री चिन्तन की चुनौतियाँ राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, 2016, Rs. 495/- ISBN-978-81. 267-1193-2 पृ.53

4 ऋग्वेद IX, 1593, IX-97.10 यजुर्वेद 22.23, रामनाथ वेदालंकार, वैदिक नारी, समपर्ण शोध संस्थान, नई दिल्ली–1924, पृ.24–25

5 अल्तेकर–ए.एस. पोजीशन ऑफ वुमेन, पृ.सं. 164

उन्नीसवीं शताब्दी में भारतीय मानस पर यूरोप के स्वतन्त्रता, तार्किकता, मानवीयता के विचारों का सहवर्ती प्रभाव एक प्रकार से खुलापन सामने आया जिसके केन्द्र में स्त्री का विचार रहा।[1]

सामान्यतयाः स्त्री को पुरूष को पथभ्रष्ट करने का साधन माना गया। स्त्रियों की समस्याओं की जड़ में कुलीनवाद एवं यौन पवित्रता महत्वपूर्ण कारक थे।[2] कुलीन वाद ने बहु विवाह, बेमेल विवाह, बाल विवाह को प्रश्रय दिया। स्त्री के लिए विवाह की अनिवार्यता एवं कौमार्य का मिथक उसे घेरता चला गया। सम्पत्ति के उत्तराधिकार, भरण पोषण का दायित्व, यौन पवित्रता ने सती प्रथा की स्थितियाँ लादी जिनका अन्ततः विरोध करना पड़ा। स्त्री की वैचारिक स्वतन्त्रता में समाज सुधारकों के विचार साधक, सहयोगी बने, विवेकानन्द ने भारतीय अतीत की आधिभौतिक मातृछवि का महिमा मंडन किया विवेकानन्द के विचारों को पश्चिम का भारतीयकरण माना गया।[3] मधु किश्वर मानती है कि ''गांधी के कारण स्त्रियाँ उदासीनता त्यागकर सकारात्मक उद्देश्य की ध्वजवाहिका बन गई।[4] नारीवादी विचारकों के अनुसार ''गांधी ने स्त्रियों की राष्ट्रीय आन्दोलन में भागीदारी आन्दोलन को व्यापक आधार प्रदान करने के लिए सुनिश्चित की क्योंकि वे इस आन्दोलन से प्रत्येक वर्ग को जोड़ना चाहते थे।''[5]

महात्मा गाँधी ने स्त्रियों को आन्दोलन की राह दिखाई उनके अनुसार–

1. स्त्रियों का उपयोग, पुरूषों के जेल जाने के बाद स्थानापन्न के रूप में किया गया।
2. शीघ्र ही स्त्रियों ने कन्धे से कन्धा मिलाकर बराबरी से लड़ना प्रारम्भ किया।
3. स्वराज पाने में भारत की औरतों का हिस्सा आदमियों के बराबर ही है।
4. शान्ति पूर्ण संघर्ष में स्त्रियां कई मील आगे रही है।[6]

उन्होंने स्त्री में जाग्रति, चेतना के लिए, आत्म विश्वास के लिए, शिक्षा के महत्व को स्वीकारा तथा सार्वजनिक जीवन में भागीदारी के लिए पर्दाप्रथा को बाधक माना।[7] उनका विश्वास था ''सामाजिक परिवर्तन के लिए स्त्री को स्वयं उपक्रम करने होंगे।[8]

---

1 पन्निकर के.एम. कल्चर, आईडियोलोजी टेलेमोनी इन्टेलेक्युअल एण्ड सोशियल कानसियसंनस इन कोलोनियल इण्डिया– तुलिका, नई दिल्ली, 19945, पृ.सं.4
2 आप्टे प्रभा, भारतीय समाज में नारी, क्लासिक पब्लिशिंग, हाउस, जयपुर, 1996 पृ. 34–35
3 हिन्दुज्म थ्रू ऐजेज– पृ 160
4 किश्वर मधु, गांधी आन वीमेन, पृ. 9
5 कस्तवार रेखा–स्त्री चिन्तन की चुनौतियां, पृ. 73
6 यंग इण्डिया दिनांक 15.12.1920
7 वही, 3.12.1927
8 वही, 07.10.1926

जहाँ एक तरफ गांधीजी ने स्वदेशी आन्दोलन, नशाबन्दी, खादी आन्दोलन के माध्यम से स्त्रियों की भागीदारी के अवसर स्वतन्त्रता संग्राम में खोजे वहीं पर स्त्रियों का सार्वजनिक जीवन में प्रवेश सम्भव किया। स्त्री की परम्परागत छवि में बदलाव, आत्म संयम आत्म पीड़न की सराहना के कारण संभव हुआ।

स्वतन्त्रता संग्राम में भागीदार स्त्रियों ने निरन्तर संघर्ष करके चुनौतीपूर्ण भूमिकाओं का निर्वहन किया फिर भी पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण के कारण कई आन्दोलनकारी नेता जो उच्च पदस्थ थे, ने स्त्रियों की योग्यताओं पर शक किया, उन्हें निर्णायक भूमिकाओं से दूर रखा।[1] यह उपलब्धि इस रूप में रेखांकित योग्य है कि रूढ़िवादिता को स्त्रियों ने आन्दोलन के दौरान झटके से तोड़ दिया था जिसने आगे चलकर स्त्री अधिकारों के लिए आन्दोलन की राहें प्रशस्त की थी संघर्ष की जमीन बनी और स्त्रियों के लिए सार्वजनिक जीवन में प्रवेश के रास्ते खुलने लगे। भारत में स्त्री की स्थिति और गति का पुरुषों के समकक्ष न होना, शिक्षा से दूरी, सार्वजनिक जीवन में भागीदारी का अभाव, पुत्र की महत्ता, पत्नी और बच्चों पर पुरुष का एकाधिकार स्त्री की निम्नतर स्थितियों के लिए जिम्मेदार रहे हैं।[2]

स्त्री संघर्ष ने बार–बार आन्दोलनों की जमीन तैयार की है एवं स्त्री की स्थिति में बदलाव में मदद की है। स्त्रियों ने इन्हीं आन्दोलनों के मध्य अपने लिए जगह तलाश की है।[3] सरोजिनी नायडू का कथन – पालना झूलाने वाले हाथ ही विश्व पर शासन करते हैं[4] तथा मैडम कामा का कथन– जो हाथ पालना झूलाते हैं वही चरित्र निर्माण करते हैं।[5] बहुत लोकप्रिय हुए।

1920–21 के आसपास स्त्री–पुरुष की समानता पर चर्चा करते हुए, स्त्रियों की इच्छाओं, जरूरतों, क्षमताओं, पुरुषों से समानता के आधार पर समान अधिकारों के हक की वकालत की गई।[6] ''वीमेंस इंडियन एसोसिएशन ने 1921 में महिला श्रमिकों के प्रसूति अवकाश का प्रश्न उठाया जिसे एस.के. बोले द्वारा लेजिस्लेटिव कौंसिल द्वारा 1924 में

---

1 कन्स्ट्रिव प्रोगेस – इट्स मिनिंग एण्ड प्लेस, कलेक्टिव वर्क ऑफ महात्मा गाँधी खण्ड 75, पृ. 155, पुष्पा जोशी (पृ. 155) संपादक गांधी ऑफन वीमेन, पृ.323

2 कस्तवार रेखा, स्त्री चिन्तन की चुनौतियां, पृ.76

3 कुमार–राधा, स्त्री संघर्ष का इतिहास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–2002, पृ.210

4 नायडू सरोजिनी– स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स, मद्रास जी.ए. नेटसन, 1904, पृ. 18–20

5 कौर मन मोहन, रोल ऑफ वीमेन इन द फ्रीडम मूवमेंट 1850–1947, स्टार लिंग पब्लिकेशन, नई दिल्ली

6 कुमार राधा, स्त्री संघर्ष का इतिहास, वाणी प्रकाशन, 2002, पृ.142

विधेयक के रूप में रखा गया। कालान्तर में अन्य आन्दोलनों के माध्यम से कानूनी मान्यता मिली।[1]''

1930 में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन में श्रमिक महिलाओं की बेहतरी के लिए "श्रम प्रस्ताव" प्रस्तुत किया गया। 1973 में मुम्बई में मूल्यवृद्धि आन्दोलन उपभोक्ता सुरक्षा का स्त्रियों का व्यापक आन्दोलन बना। इस आन्दोलन से जयप्रकाश नारायण के आन्दोलन को बल मिला। उन्होंने–सामाजिक संरचना को, स्त्री को उत्तम दर्जे की भूमिका प्रदान करने के लिए दोषी माना एवं स्त्री शोषण से मुक्ति की युक्तियों को रेखांकित किया। आर्थिक निर्भरता एवं घर के निजी कामों में स्त्री की हीन स्थिति का महत्वपूर्ण कारण स्वीकार किया यही नहीं समानता व सहभागिता के अधिकार के लिए वातावरण बनाने की आवश्यकता पर जोर दिया।

दलित आन्दोलन एवं नारीवाद के मध्य सम्बन्ध स्थापित होने से दलित स्त्रियों द्वारा महिला समता सैनिक दल का गठन हुआ जिसने स्त्री की छवि को जुझारू रूप में विकसित करने पर बल दिया जिसकी समानता अमेरिका के ब्लैक मूवमेंट से की जा सकती है।[2] प्रगतिशील महिला संगठन एवं महिला समता सैनिक दलों ने महिलाओं के यौन उत्पीड़न का अपने घोषणा पत्र में उल्लेख किया– "पुरुषों ने केवल अपने यौन सुख के लिए स्त्रियों को आजादी तथा ज्ञान से वंचित रखते हुए उन्हें गुलाम बना रखा है।"

नारीवादी आन्दोलनों ने स्पष्ट किया कि –

(1) स्त्रियों को अलग से संगठित होना चाहिए।

(2) दलगत संगठनों में महिला समिति होनी चाहिए।

दहेज, हत्या एवं उत्पीड़न के विरोध में लगातार स्त्री वादी संगठन सक्रिय रहे हैं। दहेज हत्यारों के खिलाफ प्रदर्शन, रैलियों, धरना, सामाजिक दबाव, सामाजिक बहिष्कार, नुक्कड़ नाटक द्वारा जनमत तैयार किया गया व पारिवारिक मामला सार्वजनिक समस्या का रूप ले सका।

नारीवादी आन्दोलनों ने दहेज हत्या के साथ ही दहेज उत्पीड़न के खिलाफ भी आन्दोलन किए।[3] सूसन ब्राउन मिलर ने माना बलात्कार स्त्री पर पुरुष के आतंक को गहरा करता है।[4] पुरुष की सम्पत्ति मानी जाने वाली स्त्री के प्रति किया गया यह अपराध पुरुषों की आपसी रंजिश का प्रतिफलन है बलात्कार स्त्री के जीवन को खराब होने का

---

1 कस्तवार रेखा, स्त्री चिन्तन की चुनौतियाँ, पृ. 101
2 वहीं, पृ. 102
3 वहीं, पृ.103
4 मिलर सूसन ब्राउन, अगेंस्ट ऑवर विल मेन विमेन एण्ड रेप, 1975

अपराध बोध कराता है।[1] स्त्रीवादी आन्दोलनों के विस्तार की एक दिशा विकसित हुई है जिसके कारण–शिक्षा, पत्रकारिता, चिकित्सा के क्षेत्रों में स्त्रीवादी गतिविधियां विस्तृत हुई है।[2]

नारीवादी विषयों पर समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं में महिला विषयक कॉलम लिखकर, स्त्री विमर्श हेतु प्रयत्न किए गए हैं। विश्वविद्यालय स्तरों पर "सेन्टर फॉर वीमेन्स डवलपमेंट स्टडीज" खोले गए हैं। अब तो तीन तलाक, हलाला जैसे मुद्दों पर न्यायालय की राह पर मुस्लिम महिलाएं आन्दोलन करने लगी है। इस प्रकार – भारत में स्त्रीवादी आन्दोलन, स्त्री शोषण के खिलाफ एवं स्त्री अधिकारों के पथ में जमीन तैयार करने में सफल रहे हैं। स्त्री की छवि को–देह, श्रम, विवाह, अधिकार के धरातल पर बदलाव के साथ विवेचित किया जाने लगा है। स्त्री स्वयं इस परिवर्तित चेतना को लेकर जाग्रत है। भारत की स्त्री के लिए "चौके एवं शयन कक्ष–वधस्थल" के रूप में जड़मूल से समाप्त होना एक बड़ी चुनौती है।

1.4 नारी अस्मिता की अवधारणा

इस दुनिया में स्त्री का दर्जा हमेशा दोयम रहा है। दुनिया के सभी देशों की स्थिति ऐसी ही है।

दूसरे दर्जे की इस स्थिति ने उसे अपने अधिकारों की रक्षा करने हेतु प्रेरित किया है यही नारी अस्मिता, नारी विमर्श की अवधारणा अस्तित्व में आई जो वर्तमान युग का अत्यन्त महत्वपूर्ण विचारणीय प्रश्न है। अनादि काल से भेदभाव, शोषण की शिकार होती नारी ने आज स्वयं ही अपने प्रश्नों व समस्याओं को समाज से पूछना प्रारम्भ कर दिया है।

आज नारी अपना निर्णय स्वयं लेती है, जो नारी अपनी स्वतन्त्रता, मुक्ति के लिए छटपटाती थी आज संघर्ष, आन्दोलन की राह पकड़ कर पुरुष वर्ग से बराबर के अधिकारों की माँग करते हुए, अपनी सुरक्षा, आर्थिक स्वायत्तता के लिए स्वयं सक्रिय हुई। वह समाज में अपनी भूमिका, सक्रियता, भागीदारी एवं महत्ता के कारण आधी आबादी का नेतृत्व करने लगी है। यही नारी अस्मिता, स्वतंत्रता, विमर्श का वातावरण बनने के कारण प्रमुख मुद्दा बनकर आज के दौर में, हिन्दी साहित्य में उभरा है।

---

1 कस्तवार रेखा, स्त्री चिन्तन की चुनौतियां, पृ.103–105

2 वहीं, पृ.109

भारतीय संस्कृति में – ''यत्रनार्यस्तु पूज्यन्ते रमते तत्र देवता'' (जहाँ नारियों की पूजा होती है, वहाँ देवता निवास करते हैं) उक्ति प्रसिद्ध है, किन्तु वास्तविकता इससे अलग ही रही है। जो स्त्री पीड़ा सहते–सहते पथरा गई, कुचली गई, पद दलित हुई, यातना के शिकार होने की त्रासदी को झेलती रही अबला, हाय बेचारी, पैरों की जूती कहलाई, उसी की पूजा का विधान–सिर्फ छलावा, ढकोसला, आडंबर बनकर रह गया और पुरुष का छद्म हावी हो गया।

बोलने वाली स्त्री इस पुरुष प्रधान समाज के कभी गले नहीं उतरी, उसे देवी, पूज्या, आदरणीया कहकर उसके समस्त मानवीय अधिकारों से वंचित कर दिया गया। पुरुष प्रधान समाज द्वारा निर्मित व्यवस्थाएं, सुविधाएं उसके लिए परेशानियों, विवशताओं, बेड़ियों की जकड़न का कार्य करने लगी, काम का बोझ ढोने जिम्मेदारी ओढ़ने में तो नारी और सुख भोगने में पुरुष, सम्भोग का आनन्द लेने में पुरुष और पीड़ा सहने में स्त्री, सतीत्व, पवित्रता, समर्पण के नाम पर पुरुष की इच्छा शक्ति की शिकार होती स्त्री के अधिकार का प्रश्न–केवल नारी का नहीं, बल्कि समूची मानवता का प्रश्न है।[1] नारी अस्मिता के लिए नारीवाद को समझना होगा।

नारीवाद

नारी को पारम्परिक रूढ़ियों, मान्यताओं, अंधविश्वासों के शोषण से मुक्त कर, उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व को समाज में प्रतिष्ठित करना ही नारीवाद है।[2]

अस्मिता का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

अस्मिता शब्द संस्कृत के अस्मि+तल् टाप से बना है। यह अस्मि तत्व अस्तित्व होने का बोध ही अस्मिता है।[3] अंग्रेजी में आइडेंटिटी Identity शब्द मिलता है। यह शब्द वर्तमान समय में परम्परा से सर्वथा भिन्न– "पृथकसत्ता का भाव" के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।[4] यह अवधारणा पश्चिम से आई है। अहं–व्यक्ति निष्ठता में, मैं, मेरा आदि शब्दों को तिरस्कार की दृष्टि से देखा जाता है।

पुरुष प्रधान व्यवस्था के चक्रव्यूह ने नारी की स्थिति को दयनीय बना दिया तब नारी के पक्ष में अस्मिता के भाव से जुड़कर "नारी अस्मिता" शब्द प्रभाव व चलन में आया

---

1 वैचारिकी–संकलन–जुलाई 1997, पृ.51
2 सिंह ज्योति – मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता का प्रश्न, पृ.12
3 वहीं, पृ.12
4 वहीं, पृ.12

? नारी को जब पराश्रिता बनाकर उसे घुटनभरी जिन्दगी जीने को विवश किया गया तो वह सीमातिरेक होने पर विद्रोह के लिए विवश हो गई।

जिन स्त्रियों के नाम पर वैदिक काल गौरवान्वित हुआ उसका निर्वाह आगे नहीं हो सका। पति से अलग अस्तित्व उसका नहीं बन सका। पित्रसत्तात्मक व्यवस्था में पुत्र को वरियता प्रदान की गई। वह पुरुष की अनुगामिनी बनकर रह गई।[1]

ऐतरेय ब्राह्मण में कन्या अभिशाप है[2] कहा गया सूत्रों में नारी को होम–हवन की आज्ञा नहीं दी गई।[3] शतपथ ब्राह्मण नारी के दमन को स्वीकारता है। आधुनिक युग–स्त्री द्वारा अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए किए जाने वाले संघर्ष, आक्रोश, पीड़ा से उपजे आँसू की अभिव्यक्ति करता रहा है। सदियों से घुटघुट कर जीने वाली नारी को जब मुक्ति का मार्ग मिला तो वह मुक्ति के लिए क्यों नहीं छटपटाएगी।[4] पत्नी का अनु जाया (पत्नी पति के पश्चात्)[5] के अनुसार शास्त्र उसे जबरन खींच कर पीछे धकेलता है। यह समग्र व्यवस्था सोचने को विवश करती है कि –

- नारी का अस्तित्व क्या गर्भाधान करने भर के लिए है ?
- क्या कौख से अलग उसका कोई अस्तित्व नहीं है ?
- यदि वह पुत्र संतान को जन्म नहीं देती है तो क्या वह हेय और त्याज्य है ?
- क्या नारी अत्यन्त नीच और अधम है ?
- क्या नारी पुरुष पद के योग्य नहीं है ?
- पुरुष की अधीनता में उसकी नियति क्या दासी मात्र है ?

ये प्रश्न ही नारी अस्मिता का आधार है।

श्री विजय मोहन सिंह नारी के प्रश्न को पुरुष सम्बन्धी नैतिकता, कौमार्य, सतीत्व से जोड़ते है।[6] सीमोन द बोउवार में – "एक औरत को उसकी विलक्षणताएँ उसकी स्थिति में कैद कर देती हैं और उसकी अपनी प्रकृति की सीमा को मतिवादी ढंग से सीमाबद्ध कर देती है ?[7] स्त्री को

कार्येषु – मंत्री

---

1 वहीं, पृ.13
2 गर्ग मृदुला – चुकते नहीं सवाल, पृ.49
3 वहीं, पृ.65
4 वहीं, पृ.15
5 कस्तवार रेखा, स्त्री चिन्तन की चुनौतियाँ, पृ. 101
6 गर्ग मृदुला–चुकते नहीं सवाल, पृ.70 (कथा समय)
7 नारी संवाद – दिसम्बर – मार्च 2000, पृ.4

करणेषु — दासी

भोज्येषु — माता

शयनेषु — रंभा का कर्त्तव्य निभाने को कहा गया है।[1] स्वतन्त्रता के योग्य नारी को नहीं माना गया —

पिता रक्षति कौमार्य, भ्राता रक्षति यौवने।

रथति स्थविरेपुत्रा, न स्त्री स्वतंत्रमहर्ति।[2]

नारीवादी विचारक पूँजीवादी व्यवस्था में स्त्री को गुलाम बनाकर रखने की साजिश मानते हैं। सौन्दर्य और अर्थ का घटाटोप स्त्री के मानस पर आच्छादित किया जाता है। वह स्वतन्त्र चिन्तन तथा अस्मिता से दूर होती चली जाती है।

नारी के लिए काँटों भरा विषम मार्ग पुरुष समाज ने स्वयं तैयार किया है।[3] पुरुष नारी को शरीर मानकर भी उसके समूचे व्यक्तित्व से आक्रान्त ही रहा है।[4] मध्यकाल में शीलमंग पौरुष का प्रतीक माना जाता था।[5] यह भी कथन सामने आता है कि औरत की सबसे बड़ी दुश्मन औरत ही होती है।[6] इसीलिए सीमोन कहती है — "औरत पैदा नहीं होती बना दी जाती है।[7] 1829 व 1856 में नारी अस्मिता के पक्ष में दो महान उपलब्धियाँ मिली। 1829 — सती प्रथा कानून का अंत। 1856 — विधवा विवाह को कानूनी मान्यता मिली।

राजेन्द्र यादव का कथन — "औरत को सेक्स बताकर उसे उसकी जमीन दिखाई जा सकती है। जो चीज उसे शुद्र के समकक्ष रखती है वह देह! जो अपवित्र है। क्योंकि —अनिवार्य, अपरिहार्य और दुर्विवाद है।"[8] श्री यादव स्त्री शोषण को दलित शोषण से जोड़ते है। आज के युग में नारी के प्रति पुरुष की मानसिकता में परिवर्तन आया है।

- स्त्री ने कानूनी लड़ाई जीत ली।
- वह आत्म निर्भर हो गई।
- अर्थोपार्जन कर रही है किन्तु पुरुष उसकी स्वतंत्रता को स्वीकारना नहीं चाहता।[9]

---

1 सिंह ज्योति — मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता का प्रश्न, पृ.17
2 गर्ग मृदुला — चुकते नहीं सवाल, पृ.70
3 सिंह ज्योति—मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता का प्रश्न, पृ.19
4 वहीं, पृ.19
5 वहीं, पृ.20
6 वहीं, पृ.20
7 आजकल जुलाई 2001, पृ.15
8 वहीं, पृ.20
9 सिंह ज्योति— मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता का प्रश्न, पृ.22

भारतीय तथा पाश्चात्य विचारः

पश्चिम में स्त्रियों ने लगभग एक सदी की लम्बी अवधि तक अपनी लड़ाई पुरुषों से मुक्ति के रूप में लड़ी है किन्तु भारत में यह लड़ाई प्राचीन रूढ़ियों व विदेशी दासता के विरूद्ध लड़ी गई जिसमें स्त्री–पुरुष सहयोगी थे। आशारानी व्होरा के अनुसार – ''समाज सुधारकों ने ही पहल कर स्त्री की वर्तमान अधोमुखी दशा के बारे में सोचा और उसे इस स्थिति से बाहर निकलने के लिए प्रेरित किया।''

पश्चिम में स्त्री को विवाह चयन व उन्मुक्त प्रेम की स्वतन्त्रता है परन्तु वह मात्र भोग्या है। उसकी देह से खिलवाड़ ने उसे विद्रोह के लिए प्रेरित किया। इसी के फलस्वरूप नारी मुक्ति आन्दोलन ने जन्म लिया। वहाँ पर कामकाजी औरतों को (28 प्रतिशत) दफ्तर में ही सम्भोग हेतु विवश होना पड़ता है। यौन उत्पीड़न आम बात है। निःसन्देह – वर्तमान काल में नारी अस्मिता सम्बन्धी प्रश्नों की साहित्य में खुलकर अभिव्यक्ति हुई है।[1] स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् कथा साहित्य में –

(1) नारी शोषण

(2) शोषण की चेतना

(3) मुक्त होने का संघर्ष

तीन स्थितियों में दर्शाया गया है।[2] तथा नारी जीवन के दो पक्षों का विश्लेषण –

(1) सामाजिक, पारिवारिक आर्थिक स्थिति का विश्लेषण।

(2) पुरुषों के साथ सम्बन्धों का विश्लेषण हुआ।[3]

नारी अस्मिता में –

(1) नैतिकता की नवीन व्याख्या

(2) दाम्पत्य सम्बन्धों में व्यक्तिवाद

(3) नारी का राजनीति में प्रवेश जुड़े।[4] व नारी जीवन में यथार्थवादी स्थिति का अंकन, शोषण का स्वरूप सामने आया। पाश्चात्य प्रणाली का प्रभाव स्पष्ट रूप से स्वीकारा जाने लगा। मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, कृष्णा सोबती, दीप्ति खंडेलवाल, मृदुला गर्ग, मेत्रैयी पुष्पा इत्यादि ने क्रान्ति ला दी।

---

1 वहीं, पृ.30
2 वहीं, पृ.30
3 वहीं, पृ.31
4 वहीं, पृ.31

विमर्श

कतिपय लेखक – अस्मिता के स्थान पर विमर्श शब्द का प्रयोग करते हैं जिसका अर्थ

- विचार विनिमय, सोच विचार, परिचर्चा माना गया है।[1]

इस शब्द की अर्थवत्ता–उपेक्षा व दुर्दशा के कारणों का पता लगाना है।

सुधीर पचौरी–स्त्री विमर्श को उत्तर आधुनिकता की देन मानते हैं – "उत्तर आधुनिकता ने –

- उत्तर संरचनावाद, नव मार्क्सवाद, नव व्यवहारवाद, फेमिनिज्म (स्त्री वाद) को जन्म दिया।[2] विजय बहादुर सिंह सभी विमर्श पश्चिम प्रेरित मानते हैं[3] किन्तु भारतीय संदर्भों में –

प्रेमचन्द की स्त्री शोषण उत्पीड़न वाली कहानियां, शिवरानी, सुभद्रा कुमारी चौहान की कहानियां, महादेवी वर्मा की श्रृंखला की कड़ियाँ भी महत्वपूर्ण है।

स्त्री विमर्श का मूल स्वर –

प्रतिशोधात्मक नहीं है। वह स्त्री मुक्ति की कामना, बराबरी, सामाजिक न्याय, स्वत्व बोध एवं अस्मिता का स्वर है।[4]

सामाजिक दृष्टि से –

किसी एक विषय के इर्द गिर्द होती हुई बहस की व्याख्याओं, तात्पर्यों, मान्यताओं के निर्माण की प्रक्रिया। विमर्श हमें वस्तुस्थिति या परिस्थितियों को ज्यों का त्यों स्वीकारने के बजाय वैकल्पिक रास्तों की खोज करने के लिए प्रेरित करता है। विचार धारा का जन्म इसी खोज की प्रक्रिया से होता है।[5]

नारी विमर्श को –

नारीवाद के रूप में देखा जाता है। इससे नारी विषयक अनेक मुद्दे व चिंतन के सूत्र उभरे है। नारी को वे सारे अधिकार दिलवाने की चेष्टाएँ इसमें आती है जो पुरुषों

---

1 मुलाणी–शफिका दस्तगीर – ममता कालिया के लघु उपन्यासों में नारी विमर्श बोहरा पब्लिशर्स–इलाहाबाद, 2016, Rs.395/- ISBN-978-81, 7889-082-1, पृ.51

2 सुधीर पचौरी –उत्तर आधुनिक साहित्य विमर्श, पृ.13

3 सम्बोधन–सं. कमर मेवाड़ी अक्टूबर 2005, पृ.182

4 वहीं, पृ.52

5 वहीं, पृ.53

को सदियों से प्राप्त है लेकिन नारी को हमेशा उनसे वंचित रखा गया है। साथ ही स्त्री विमर्श–स्त्री को आघात, स्त्री–पुरुष टकराव को शोभित करना, स्त्रीवाद के प्रति अन्याय रोकना इत्यादि भावों से युक्त है।

इसमें साहित्य मुद्दों में निम्न प्रमुख है –

- नारी शोषण का विरोध।
- पुरुष सत्ता द्वारा उत्पन्न की गयी बाधाओं को दूर करने की कोशिश।
- नारी को निरंतर अपनी अस्मिता की पहचान बनाने के मार्ग पर संघर्षरत रखना।
- पुरुष सत्ता की ज्यादतियों के सामने विद्रोह की आवाज उठाना।
- अपने मादारूप से मुक्ति पाना।
- पुरुष के सामने समाज में सम्मानित स्थान प्राप्त करना, खुद के निर्णय खुद लेना।
- अपनी स्वतंत्रता की पहचान बनाकर एक मनुष्य के रूप में जीने का हक हासिल करना।[1]

स्त्री–पुरुष के सामाजिक सम्बन्ध जिस सिद्धान्त पर आधारित है वह है–

- कानूनी रूप से पुरुष का स्त्री पर वर्चस्व गलत है।
- नारी की स्थिति में सुधार लाने में बाधक है।
- यह स्त्री–पुरुष की समानता पर आधारित होना चाहिए।

यह सिद्धान्त न किसी एक को सत्ता की सुविधा प्रदान करता है और न दूसरे को असहाय बनाता है। संक्षेप में बौद्धिक, सामाजिक, राजनैतिक, वैज्ञानिक आदि महत्वपूर्ण स्तर पर विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा किसी सामाजिक एवं पारस्परिक विषय पर गहरी सूझ–बूझ एवं समझदारी के साथ सोच–विचार करना ही स्त्री विमर्श है।[2]

अशोक तिवारी के अनुसार – "हिंदी कथाकारों ने, अपनी रचनाओं में, नारी मुक्ति अवधारणा को ध्यान में रखते हुए, जो विचार व्यक्त किए हैं वे नारी विमर्श के अन्तर्गत आते हैं।"[3]

---

1 वहीं, पृ.53
2 शर्मा ऋचा – स्त्री विमर्श, पृ.22
3 तिवारी अशोक–प्रतियोगिता साहित्य सीरीज, पृ.717

ऋचा शर्मा के अनुसार – "हिंदी साहित्य की विविध विधाओं में उभरा स्त्री विमर्श, स्त्री की चुप्पी तोड़ने, उसे सशक्त बनाने, उसमें आत्म विश्वास भरने की सार्थक कोशिश है।"[1]

नमिता सिंह के अनुसार – "यशपाल के उपन्यास दिव्या की शैल – आने वाले समय की नारी के प्रतिनिधि के रूप में नारी विमर्श का समग्र पाठ बनकर मूल प्रश्नों को खड़ा करती है नारी स्वातन्त्र्य की आधुनिक उलझाव भरी व्याख्याओं के सामने मूल मन्तव्य को सही दिशा प्रदान करती है।[2]

औरत को निरन्तर अपनी अस्मिता की खोज में संघर्षरत रहना होगा, नारी देह स्वतन्त्र नहीं है, क्या यौन स्वतन्त्रता ही उसका स्वतन्त्र अस्तित्व है, उसकी समानता की परिभाषा क्या दैहिक समीकरणों तक सीमित है। इत्यादि पर गहन चिन्तन किया गया है।"[3]

"आशा श्रीवास्तव में महिला शोषण और मानवाधिकार में नारी के सामने निम्नानुसार संकट दर्शाए हैं।"[4]

- भाषा व अभिव्यक्ति का संकट।
- कमजोरियों, भोग्या के स्वरूप का संकट।
- व्यक्तित्व साधना में निरपेक्ष भाव का संकट–परिवार, पुरुष, कर्तव्य इत्यादि।

मृदुला गर्ग ने स्त्री विमर्श का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है – "हर व्यक्ति (स्त्री) को प्रस्तुत करके वह स्वयं निर्धारित करे कि उसकी मुक्ति किसमें है। दूसरा तय करेगा तो मुक्ति नहीं, चलन का निर्वाह भर होगा, जो परतंत्र होने की पर्याय है।"[5]

1.5 स्त्री स्वातन्त्र्य और सामाजिक अवधारणा

भारतीय समाज में स्त्री मुक्ति के प्रश्न को देह मुक्ति से बदल दिया है। सुधा अरोड़ा के अनुसार – "स्त्री विमर्श के सरोकारों ने स्त्री मुक्ति के सवाल को देह मुक्ति में

---

1 शर्मा ऋचा – स्त्री विमर्श (भूमिका)
2 सिंह नमिता – दिव्या, इतिहास, संस्कृति और नारी विमर्श, पृ.95–96
3 सिंह नमिता दिव्या इतिहास संस्कृति और नारी विमर्श– नवचेतना प्रकाशन, दिल्ली–110059, रूपए 130/– 2005, पृ.96, ISBN-81-89006, 4-2
4 श्रीवास्तव आशा–महिला शोषण और मानवाधिकार 2004, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली 110002, ISBN-81-88775-49-5 पृ.110
5 अक्सर जुलाई सितम्बर 2008, पृ.30

बदल दिया है।"[1] स्त्री के प्रति मानवीय नजरिया अभी तक नहीं बन पाया, समकालीन साहित्य के केन्द्र में स्त्री विमर्श है।

- स्त्री का विद्रोह व क्रान्तिकारी तेवर
- स्त्री को घर की चारदीवारी को छोड़कर संघर्षरत होना
- पुरुष सत्ता की नीवें तोड़ना, बदलना तथा अपने पक्ष में संवारना
- असमानता के परिदृश्य पर नियंत्रण कर बराबरी के स्तर तक लाना
- देह की आजादी में भी स्वयं की अस्मिता को सुरक्षित रखना इत्यादि मुद्दे शामिल है।

स्त्री विमर्श का जो मानचित्र साहित्यिक पत्र–पत्रिकाओं में उभारा है – वह वित्तीय पूंजी के दौर में, नए ढंग से उपनिवेश किए जा रहे मध्य वर्ग के बुद्धिजीवियों की उन मनोग्रंथियों के विकास से बना है जो समाज की हर स्त्री को "उन्मुक्त" आकाश देकर लगभग "पोर्नस्टार" बना देने के लिए आतुर है। **आज के दौर में –**

यह भ्रम पैदा किया जा रहा है कि व्यभिचार का निर्वाह सामाजिक संरचना में पितृसत्तात्मक ढाँचे में बारूद का काम करेगा? बिकनी और ब्रा की पताकाओं को लहराने से लेखिकाओं की बुद्धि का प्रक्षालन होगा। स्त्री को बाजार में सहमति लेकर वस्तु की तरह परोसा जा रहा है। लौलुपता, लंपटता, बौद्धिक शब्द जाल में नारी देह मंडी बनकर उलझती चली जा रही है। आज स्त्री दृष्टि – स्त्री पुरुष के यौन सम्बन्धों के ढांचे पर अवलम्बित है, जिनका समाधान ढूंढने में संकीर्णता बरती जा रही है। एक ऐसी नयी स्त्री को गढ़ा जा रहा है जो बाजार के लिए बेचैन है। विसंगति यह है कि –

महानगरीय सांस्कृतिक अभिजात, आवारा पूंजी से संचालित बाजार को स्त्री मुक्ति का पर्याय दर्शाया जा रहा है। स्त्री की यौनिकता को धंधे की सबसे कारगर कुंजी बनाता हुआ, मनोरंजन का करोड़ों का कारोबार, सेक्स–सर्वेक्षण, सदियों से संस्कारों के नाम पर परदे में बंद भारतीय समाज को सेक्स क्रान्ति की अवधारणाएं परोस रहा है। काम कुंठित स्त्री चिन्तक–विचार की मुद्रा में सेक्स मुक्ति को स्त्री मुक्ति का महामंत्र मानने लगे हैं। समाज निष्ठा, परिवार में आस्था व आपसी सम्बन्धों में जुड़ाव का सम्बन्ध ही स्त्री में इस्तेमाल किया जा रहा है। फिर भी – "समकालीन बेबाक स्त्री लेखन का प्रतिमान कुछ पत्रिकाएं बनी है।"[2]

---

1 अक्सर वहीं, पृ.31
2 वहीं, पृ.33

बाजार में खड़ी स्त्री, आज बाजार में खड़ी स्त्री क्या है ?

एक देह मात्र, सबसे बड़ी बिकाऊ कमोडिटी, बुद्धि का उपयोग करती स्त्री अपनी देह से पैसा कमाने की राह पर चल पड़ी है।

- औरत की देह का वह पूरी आजादी से बिकाऊपन के रूप में इस्तेमाल कर रही है।

परन्तु – छोटे–बड़े परदों पर अर्द्ध नग्न औरतों की जमात को, सामूहिक रूप से भौंडे प्रदर्शन करते हुए देखना – क्या मानसिक आघात पर प्रहार नहीं है ? यौन हिंसा, बलात्कार, हत्या की घटनाएं क्या संकेत करती है? मीडिया, विज्ञापन, फिल्म जिस प्रकार औरत की देह को परोस रहे हैं उसे देखकर – क्या हर सामाजिक व्यक्ति को अपनी नैतिक जिम्मेदारी के तहत उघाडू–दिखाऊ प्रवृति का विरोध करने के लिए खड़ा नहीं होना चाहिए?

क्या काम कुंठाओं को सार्वजनिक बनाकर भ्रम पैदा करने की स्थिति को रोका नहीं जाना चाहिए ? क्या स्त्री देह को सौंदर्य का प्रतीक और सम्मान का प्रतीक मानकर, यह भौंडा प्रदर्शन हमें विचलित नहीं कर रहा है ?

क्यों साहित्य स्त्री विमर्श देहविमर्श के इर्द–गिर्द सिमट कर रह गया है? हिन्दी साहित्य की यह बेहद दुखद स्थिति है कि स्त्रियों के वास्तविक मुद्दों से भटककर देह मुक्ति के गढ़े हुए मुद्दे की परिक्रमा में ऊर्जा का क्षरण हो रहा हैं।

सामाजिक समस्याएं

आज महिला रचनाकार अपनी सामाजिक समस्याओं पर लिख रही हैं–

- दहेज प्रताड़ना, भ्रूण हत्या, गर्भपात झेलती स्त्री, खेती–मजदूरी में पसीना बहाती स्त्री, घर परिवार की आड़ी–तिरछी जिम्मेदारियों को संभालती स्त्री। आर्थिक रूप से आत्म निर्भर होने के बावजूद पति की लंपटता, उपेक्षा, हिंसा इत्यादि प्रमुख समस्याएं है। आज की औरत को घर व बााहर दोनों ही जगह जूझना पड़ता है। स्त्री के अस्तित्व की लड़ाई जारी है। आज की आवश्यकता महिला सशक्तिकरण है। इस प्रकार "सामाजिक क्षेत्र की दृष्टि से स्त्री विमर्श–स्त्री जागरूकता का प्रयास करने की दृष्टि से एक कारगर औजार है।"[1]

---

1 वहीं, पृ.34

आज भी स्त्री समझौतों और दोहरे कार्यभार के बीच पिस रही ही। खेतों, मजदूरी, दफ्तरों में काम करने वाली औरतें अपनी तरह से अपनी लड़ाई लड़ रही है। कथा साहित्य में भी स्त्री चेतना ने अपनी उपस्थिति पूरी गहराई शिद्दत के साथ दर्ज कराई है।

स्त्री को जागरूक बनाने वाले विमर्श की आज भी जरूरत है।

क्या करें ?

आज के दौर में स्त्री विमर्श से क्या के ? के उत्तर में –

- स्त्री को समाज शास्त्र और बाजार के बीच देह शास्त्र के रूप में नहीं देखा जाए।
- मुक्ति के प्रश्नों को अधिक समग्रता से खोजा जाए।
- सोचना होगा हमें कौनसा समाज गढ़ना है क्योंकि आज बाजार की सबसे बड़ी शिकार औरत ही है। वही सबसे ज्यादा दमित है और अपमानित भी।

विवाह संस्था

विवाह संस्था आज भी निष्ठा, समर्पण और साहचर्य की प्रतीक है। बच्चों के भविष्य और मानसिक स्वास्थ्य व विकास के मद्देनजर कई शादियाँ विच्छेद हो जाती है। विवाह संस्था का बचा रहना –

(1) बच्चों के पक्ष में

(2) भविष्य की सुरक्षा का अहसास कराता है।

बच्चों के साथ सौतेले व्यवहार के कारण शिक्षक को "काउंसलर" की भूमिका निभानी पड़ती है।[1] भारत में संयुक्त परिवार के कारण बच्चे अपेक्षाकृत स्वस्थ व सुसंस्कृत मिलते हैं।[2] नारी विमर्श को बागी तेवर जड़ों से काटते हैं जबकि जरूरत जड़ों से जुड़ने की रहती हैं। शादियां समझौते पर टिकी होती है। नीना गुप्ता कहती है कि वह अगर समय पर शादी कर लेती तो एक बेहतर जिंदगी जीती।

आधुनिक भारतीय कथा साहित्य के माध्यम से नारी स्थिति पर विचार करते हुए सुधा अरोड़ा कहती है– मंजुल भगत का 'अनारो' निम्न वर्ग की औरत की जिजीविषा, संघर्ष व जागरूकता की कहानी है, मैत्रेयी पुष्पा के चाक, अल्मा कबूतरी इदन्नमम् तथा गुड़िया भीतर गुड़िया, झूला नट इत्यादि के माध्यम से औरत का सच्चा और दिल दहला

---

1 वहीं, पृ.35
2 वहीं, पृ.36

देने वाला रूप पूरी प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया है। नारी की कुचली हुई स्थिति का अंकन – चित्रा मुद्गल की भूख, कृष्णा अग्निहोत्री की टपरे वाली सूर्यबाला की सुमित्रा की बेटियों आदि में उतरी है। महाश्वेता देवी का सम्पूर्ण साहित्य – गरीबी की सीमा रेखा से नीचे जी रहे आदिवासियों और बन्धुआ मजदूरों के बीच रहते हुए लिखा गया है।

यह एक विचारणीय प्रश्न है कि – "क्या औरत का शोषण एक प्रामाणिक विषय बन सकता है ? जिसका जिक्र कहानियों में होता है ?" धीरू बेन पटेल की प्रयाग (गुजराती) और आशापूर्णा देवी की अनावृत (बंगाली) दोनों कहानियां जूझने को रेखांकित करती है। सास हमेशा बहू के विपक्ष में बेटे के साथ खड़ी रहती है। सास का खलनायक का दर्जा कहानियों में चित्रित किया जाना अभी बाकी है। समाज सेवी महिला संगठनों का स्वर बताता है कि – "आज की नारी बेहद जागरूक है। शिक्षा के क्षेत्र में नारी ऊँचाइयों को छू रही है। बाहर की दुनियाँ बहुत बड़ी है। वह पति के गलत आचरण पर उँगली क्यों नहीं उठा पाती।[1] शशि प्रभा शास्त्री ने नारी की नियति के लिए आधुनिकता को उत्तरदायी माना है। आर्थिक सवालों ने परिवार में विघटन को जन्म दिया। पद प्रतिष्ठा की ललक ने तिकड़मबाजी और भ्रष्टाचार को प्रारम्भ किया।[2] क्या सिर्फ–ऊँचे ओहदों पर कार्यरत महिलाएं अपने कार्यसेवों में बड़े–बड़े फैसलों में निर्णायक भूमिका अदा करती है ?[3] औरत को बड़ी दुनिया तक पहुँचने के लिए अपने घर की खिड़कियाँ खोलनी होगी। भारत की सभी भाषाओं में महिला रचनाकारों की एक बड़ी जमात औरत के सामाजिक सरोकारों के साथ उभरी हैं क्यों संयुक्त परिवार की औरत नीची आँखें किए हुए एक अधिकारहीन नारी का प्रतिरूप रही है ? इस पर कौन सोचेगा ?

1.6 समाहार

इस प्रकार आजादी के बाद उभरे साहित्य में नारी को केन्द्र में रखकर उसे नारी विमर्श के माध्यम से सशक्त बनाया गया है।

इसका विश्लेषण करने पर नारी शिक्षा, जागरूकता एवं आन्दोलन की राह पकड़कर संघर्ष वाला विद्रोही भाव प्रमुख कारक रहा है। अब स्त्री वादी विमर्श का श्री गणेश व आगाज हो गया है जो विघ्न हरण करने वाला ही नहीं मंगलदायक भी है।

---

1 अरोड़ा – सुधा – आधुनिक कथा साहित्य में नारी स्वरूप और प्रतिभा, पृ.12

2 शास्त्री–शशि प्रभा – आधुनिक कथा साहित्य में नारी स्वरूप व प्रतिभा, पृ.13 संपादन – डॉ. उमा शुक्ल, डॉ. माधुरी छेड़ा – अरविंद प्रकाशन, मुम्बई।

3 समकालीन हिन्दी कहानी में स्त्री की सामाजिक स्थिति सुधा अरोड़ा, पृ.51 सं. रामजी तिवारी – परिदृश्य प्रकाशन मुम्बई–400002

द्वितीय अध्याय

नारी आन्दोलन और चर्चित पुस्तकें

1. जान स्टुअर्ट मिल – द सबजेक्ट ऑफ विमेन (स्त्री की पराधीनता)
2. जर्मेन गीयर – द फीमेल यूनेक, मधु बी जोशी (विद्रोही स्त्री)
3. सीमोन द बोउवार – द सेकंड सेक्स (स्त्री उपेक्षिता) प्रभा खेतान
4. रेखा कस्तवार – स्त्री चिन्तन की चुनौतियां
5. नासिरा शर्मा – औरत के लिए औरत
6. मृणाल पाण्डे – परिधि पर स्त्री
7. मृणाल पाण्डे – चुकते नहीं सवाल
8. राज किशोर – स्त्री के लिए जगह
9. आशा रानी व्होरा – नारी शोषण आइने और आयाम
10. ज्योति सिंह – मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता का प्रश्न
11. शफिका दस्तगीर मुलाणी – ममता कालिया के लघु उपन्यासों में नारी विमर्श
12. जगदीश्वर चतुर्वेदी – स्त्रीवादी साहित्य विमर्श

- स्त्री विमर्श केन्द्रित अन्य कृतियों का प्रतिनिधि स्वरूप में संक्षिप्त, सूत्रात्मक, किन्तु संश्लिष्ट, सार्थक विवेचन
- समाहार

द्वितीय अध्याय

नारी आन्दोलन और चर्चित पुस्तकें

नारी आन्दोलन को गति प्रदान करने वाली चर्चित कृतियों में कतिपय कृतियों को रेखांकित करते हुए उनका संक्षिप्त किन्तु संश्लिष्ट वस्तु व मूल्य परक विवेचन विश्लेषण करने का विनम्र प्रयास किया गया है जो इस प्रकार है –

2.1 जॉन स्टुअर्ट मिल – द सबजेक्ट ऑफ विमेन स्त्री की पराधीनता –

जॉन स्टुअर्ट मिल ने (इंग्लैंड में – अपनी पुस्तक – द सब्जेक्ट ऑफ विमेन (स्त्री की पराधीनता) में नारी मुक्ति और उसके मताधिकारों के लिए आवाज उठाई। उन्होंने स्पष्ट किया कि – स्त्री–पुरुष का सम्बन्ध सामाजिक है। कानूनी रूप से स्त्री पर पुरुष का वर्चस्व गलत है। स्त्री की स्थिति में सुधार लाने में सबसे बड़ा बाधक है। स्त्री–पुरुष के सम्बन्ध पूर्ण समानता पर आधारित होने चाहिए न तो किसी एक को सत्ता प्रदान करे व दूसरे को असहाय बनाए। इस निबन्धात्मक कृति में पश्चिमी स्त्री की

1. कानूनी असमानता, दयनीय स्थिति की चर्चा की गई।
2. विवाह से जुड़ी विडम्बनाओं और उसके पश्चात् विषम परिस्थितियों पर प्रकाश डाला गया।
3. स्त्रियों की स्थिति दास से भी बदतर है।
4. बच्चों के सम्बन्ध में भी उसके अधिकार का औचित्य नहीं माना जाता, कानूनी तौर पर वे पति के बच्चे होते है। पति की मृत्यु के पश्चात् भी बच्चों पर उसे कानूनी हक से वंचित किया जाता है। जब तक कि पति अपनी वसीयत में न लिख दे।
5. उसे पराधीनता का चुनाव करने की स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए।

2.2 जर्मेन ग्रीयर – द फीमेल यूनक, मधु बी जोशी (विद्रोही स्त्री)–

जर्मेन ग्रीयर की पुस्तक द फीमेल यूनक का अनुवाद – विद्रोही स्त्री – मधु बी. जोशी, मधु बी. जोशी ने जर्मेन ग्रीयर की पुस्तक द फीमेल यूनक का अनुवाद विद्रोही स्त्री के रूप में प्रस्तुत किया।[1] जिसमें पुरुष के लिए नारीत्व अनुमान है और नारी के लिए अनुभव। स्त्री प्रश्न को लेकर स्त्री लेखन ने सजीव स्थितियाँ प्रस्तुत की है। स्त्री की

---

1 राजकमली प्रकाशन, 2001

पीड़ा को स्त्री ही अधिक व सही समझ सकती है एवं व्यक्त कर सकती है। यहाँ यह स्पष्ट हो जाता है कि जो ज्ञान पुरुष स्त्रियों से उनके बारे में हासिल करते हैं, भले ही वह उनकी संचित सम्भावनाओं के बारे में न होकर, सिर्फ उनके भूत और वर्तमान के बारे में हो, तब तक अधूरा और उथला रहेगा, जब तक कि स्त्रियाँ स्वयं सब कुछ नहीं बता देती जो उनके पास बताने के लिए है।"[1] स्त्री का आत्म संघर्ष अपनी निरन्तरता में प्रत्येक युग में रहा है। परम्परागत दृष्टि से स्त्री के प्रति व्यवस्था का रवैया निश्चित मानदंडों, आदर्शों के नियत व्यवहारों से संचालित होता है जिसमें स्त्री को तय कर दी गई भूमिका में निर्धारित आदर्श आचारण संहिता के अनुसार जीना है, जिसके निर्धारण का अधिकार शताब्दियों से पुरुष ने अपने पास रखा है।

समय के बदलते तापमान में, बदलते सामाजिक सन्दर्भों में अपनी अधीनस्थ की भूमिका, शोषण, असमानता से मुक्ति के प्रश्न एवं दोहरे मानदंडों के बीच स्त्री के लिए प्रश्न नहीं बदले है, इसीलिए स्त्री विद्रोही हुई है। स्त्री के समक्ष प्रस्तुत जटिलताएं मुक्ति के प्रयास, संघर्ष एवं पीड़ा की स्थितियों के साथ उभरे हैं।

विद्रोही स्त्री का सामाजिक सन्दर्भों में संघर्ष, उसकी भूमिका, तलाशे गए रास्तों के कारण जन्में प्रश्नों से टकराहट के साथ–साथ मुक्ति का प्रश्न मूल रूप से अस्वीकारे जाने के कारण उसे विद्रोहिणी बनने के लिए विवश करता है। स्त्री होना और मनुष्य होना अपवर्जक है।

स्त्री अस्मिता की लड़ाई, आधी दुनिया को मनुष्य का दर्जा दिलाने की लड़ाई है। उसके मनुष्यत्व को स्वीकारना आज मानवता का सबसे बड़ा मूल सवाल है। प्रश्न यह है कि –

(1) आज भी मनुष्य की अवधारणा में स्त्री को शामिल क्यों नहीं किया जाता है ?

(2) स्त्री को इससे अलगाने की कोशिशे क्यों नहीं खत्म हुई है ?

जब नोरा ने हेल्मर से पूछा था – तुम क्या मानते हो, मेरा सबसे पवित्र कर्तव्य क्या है ? के उत्तर में जब उसने कहा था – अपने पति और बच्चों के प्रति कर्त्तव्य, तो वह असहमत हुई और बोली– "मेरा एक और कर्त्तव्य है, मैं मानती हूँ सबसे पहले मैं मनुष्य हूँ। हर सूरत में वह बनने की मैं कोशिश करूंगी। इस प्रकार स्त्री के मन में विद्रोही विचारों का सूत्रपात होता रहा। स्त्री ने समझा कि जो कुछ किताबों में उसके बारे में लिखा है वह उससे सन्तुष्ट नहीं है। उसने खुद सोच विचार करने का निश्चय किया और समझने की कोशिश की। बना दी गई स्त्री से मुक्ति के रास्ते स्त्री की मुक्ति के

---

1 वहीं, पृ.15

रास्ते है। स्त्री मुक्ति का तात्पर्य पुरुष हो जाना या पुरुषोचित गुणों को स्वीकार करना कदापि नहीं है। स्त्री की अपनी प्राकृतिक विशेषताएं है। दोहरे सामाजिक मानदण्डों ने जो शर्मनाक स्थिति पैदा की है वे स्त्री को मात्र "स्त्रीत्व" के बंधन में बाँधते हैं। अतः स्त्री को स्त्री की खोल से बाहर आकर मनुष्यत्व की दिशा में अग्रसर होना है। स्त्री का व्यक्ति के रूप में प्रकाशित हो सकना, अपनी सम्पूर्णता में जी सकना, मनुष्य जाति के बचे रहने की शर्त है। जैविक भिन्नता स्त्री की स्थिति को पुरुष से भिन्न रखने में सहायक होती है लेकिन स्त्री को दोयम दर्जों में लाने के महत्वपूर्ण कारक–उसकी सामाजिक और आर्थिक हैसियत है। उसकी अधीनस्थ की भूमिका असमानता को जन्म देती है। शोषण के अवसरों को प्रचुर बनाती है। स्त्री एक ऐसी मादा में तब्दील हो जाती है जिसकी जिन्दगी रोटी, कपड़ा, मकान की उपलब्धता के अहसान तले सीमित हो जाती है। उसे हर तरह की जिल्लत झेलनी पड़ती है।

माँ, बहन, बेटी, पत्नी की भूमिकाओं में सीमित स्त्री अपनी स्वतन्त्र सत्ता के अवसर कम करती है। स्त्री विमर्श के कारण – जीवन के अनछुए, अनजाने पीड़ा जगत का उद्घाटन हुआ है। इसका उद्देश्य – साहित्य एवं जीवन में स्त्री के दोयम दर्जे की स्थिति पर आँसू बहाने और यथास्थिति बनाए रखने के स्थान पर, उन कारणों की खोज से है जो स्त्री की इस स्थिति के लिए जिम्मेदार है। आज विद्रोही स्त्री का संघर्ष स्त्री के प्रति होने वाले शोषण के खिलाफ संघर्ष है। स्त्री शोषण के सूत्र–बच्चों में बेटे–बेटी को अलग–अलग करने, गलत ढंग से सामाजिकरण से जोड़ने, प्रजनन व यौन शोषण में है। परावलम्बन स्त्री के शोषण को गहरा करते हैं। सामाजिक संरचना में बदलाव के बिना स्त्री के हिस्से में बेहतरी आना सम्भव नहीं है। पुरुष द्वारा स्त्री को अधीनता, अर्थ निर्भरता व दासत्व की भूमिकाएं दी है जिससे पुरुष बना है ताकतवार और स्त्री कमजोर। स्त्री का संघर्ष पुरुष सत्तात्मक व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष है।

पुरुषों की मानसिकता में परिवर्तन के लिए –

- पुरुष को बदलना होगा।
- पुरुष पर दबाव बनाना होगा।
- दोहरे मानदण्डों के खिलाफ आवाज बुलन्द करनी होगी।[1] क्योंकि स्वयं चेती हुई स्त्री के स्वाधिकार स्त्री विमर्श के सरोकार है।

---

1 वहीं, पृ.19

2.3 सीमोन द बोउवार की कृति – द सेकेण्ड सेक्स का रूपान्तर – स्त्री उपेक्षिता – प्रभा खेतान

सीमोन द बोउवार पेरिस में जन्मी जिसने 21 वर्ष की उम्र में दर्शन विषय में एम. ए. प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया। वह विवाह और वंश परम्परा के खिलाफ थी। विवाह उसकी दृष्टि में जर्जर ढहती हुई संस्था थी। उसने स्त्री की पारम्परिक भूमिकाओं की आलोचना की। 1947 में द सेकेण्ड सेक्स पर काम शुरू किया। 1948 में इसका कुछ अंश प्रकाशित हुआ तो अपने युग के बौद्धिक मसीहाओं ने स्त्री स्वतंत्रता पर लिखी जाने वाली पुस्तक में पूरी रूचि ली। 1949 में यह पुस्तक प्रकाशित हुई। वह फ्रांस की स्त्री मुक्ति आंदोलन की अगुआ थी तथा नारी मुक्ति आन्दोलन के प्रति समाज सुधारक का दृष्टिकोण रखती थी।

द सेकेण्ड सेक्स – पुस्तक में सिद्धान्त, तथ्य, लेखक – पाठक के बीच आत्मीय रिश्ता है। लेखिका जानती है –

- औरत होना किसे कहते है ?
- औरत की नियति व गहराई की स्थिति क्या है ?
- औरत की समाज में क्या भूमिकाएं हैं ?
- समाज में उसकी स्वतन्त्रता की स्थिति क्या है ?
- ऑफिस में बॉस को शरीर सौंपकर तरक्की पाने की यथास्थिति क्या है?
- क्यों अब स्त्री पर चरित्र पुरुष गढ़ कर थोप रहा है ? वह घुट–घुट कर क्यों मरती है ?
- स्त्री होने के सच के रूप में उसे क्या–क्या झेलना पड़ता है।
- उसके सामने स्वायत्तता आर्थिक आत्म निर्भरता व संघर्ष की चुनौतियाँ क्या–क्या है ?
- अलगाव में जीती स्त्रियों की आवाज की सामूहिक रूप में स्त्री क्या है? उसकी किन चुनौतियों का मुकाबला करना है ?

उसने–इस पुस्तक में –

1. आदर्शों को चुनौती
   औरतों की नियति

कृत्रिम मिथकों का पर्दाफाश किया है।[1] औरत की सही व ईमानदार तस्वीर प्रस्तुत की है।[2] लेखिका ने स्पष्ट करने की कोशिश की है कि – "स्त्री क्यों अन्या है तथा मानवीय सम्बन्धों में पारस्परिकता की आवश्यकता क्यों इतनी अधिक है ?[3] स्त्री की परिस्थिति तथा जैविक स्थिति की ऐतिहासिक विवेचना की गई है।[4] स्त्री स्वतंत्रता के आन्दोलन को वर्गीकृत करने की चेष्टा की गई है।[5] सीमोन का मुक्ति का संदेश आधी दुनिया के लिए है जो स्त्री कहलाती है।[6] उन्होंने स्त्री की अधीनता के कारणों की व्याख्याएें – जीव विज्ञान, मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र, जातीय इतिहास सभी दृष्टिकोणों से व्यापक रूप में की है।[7]

स्त्री की जैविक स्थिति :–

औरत – एक गर्भ है, अंडाशय है, ये शब्द उसे परिभाषित करने के लिए काफी है। पुरुष–औरत शब्द को अपमान जनक मानता है। अपनी पाशविक प्रवृति के प्रति लज्जित नहीं होता है। लेखिका ने स्त्री की जैविक स्थिति को विवेचित करते हुए उन परिस्थितियों और कारणों को स्पष्ट किया है जो उसे उपेक्षित रखते हैं –

- पुरुष यौन स्थिति को विशिष्टता प्रदान करता है।
- भ्रूण की उत्पत्ति मासिक स्त्राव व शुक्राणु के संयोग से होती है। प्रजनन स्त्री–पुरुष के संयोग से ही सम्भव है।
- संतान की रक्षा के लिए माँ की भूमिका अपरिहार्य है मादा संतति प्रजनन से लेकर भरण पोषण तक की पूरी प्रक्रिया के प्रति समर्पित होती है।
- नर के स्वभाव में अतिक्रमण की क्षमता होती है। माता की सेक्सुअलिटी तात्कालिक और प्रत्यक्ष होती है।
- पुरुष की इच्छा स्वायत्तता हासिल करने की अधिक होती है। औरत के शरीर में आतंरिक संघर्ष जारी रहता है।
- औरत के शरीर में अनेक प्रकार के मानसिक व शारीरिक विकार (14–18 की आयु के बीच) उत्पन्न होते हैं।

---

1 द सेकेण्ड सेक्स–प्रभा खेतान द्वारा अनुवाद–स्त्री उपेक्षिता, पृ.17
2 वहीं, पृ.18–19
3 वहीं, पृ.19
4 वहीं, पृ.19
5 वहीं, पृ.19
6 वहीं, पृ.19
7 वहीं, पृ.19

- बच्चों के पालन पोषण का काम थकाने वाला, बच्चे को दूध पिलाने में शक्ति का हरण, भ्रूण के रूप में औरत का अंश उसकी शक्ति को निचोड़ने वाला होता है।
- शरीर की सीमा से मुक्ति द्वारा औरत को एक अच्छे स्वास्थ्य संतुलन की प्राप्ति होती है।
- औरत का भावात्मक जीवन असंतुलित होता है वह अपने पर नियंत्रण नहीं रख पाती, चिड़चिड़ी हो जाती है।[1]

इस प्रकार – शारीरिक भिन्नता यह नहीं स्थापित करती कि औरत अन्या, गौण या यौन जनित सोपानीकरण में नीचे की सीढ़ी पर बैठी हुई है। जैविक परिस्थितियाँ औरत को अधीनस्थ की भूमिका स्वीकारने में बाध्य नहीं करती।[2]

मनोवैज्ञानिक पहलू

मनोवैज्ञानिक पहलू की दृष्टि से औरत की स्थिति इस प्रकार है –

औरत की सेक्सुअलिटी पुरुष के बराबर ही विकसित है। दोनों में काम प्रवृति प्रारम्भ में समान रहती है। पुरुष के संदर्भ में उसमें हीन भावना पैदा होती है। मातृत्व उसे नई प्रकार की स्वतंत्रता देता है। औरत की चेतना सामाजिक परिस्थितियों और समाज पर निर्भर करती है। लिंग की आराधना पितृसत्ता का प्रतीक है। वस्तु रूप में अन्या होना उसकी नियति है। उसकी ऊर्जस्विता निष्क्रिय नहीं होती है।[3]

ऐतिहासिक भौतिकवादी दृष्टिकोण :

- गर्भवती स्त्री की सुरक्षा और संतान कल्याण की व्यवस्था समाज और राजतंत्र पर निर्भर करती है। पितृसत्तात्मक परिवारों में औरत की स्थिति अधीनस्थ की थी। सत्ता के पद व भोग विलास में लीन रहने के कारण – वेश्या–व्यभिचार, बहु विवाह, सामाजिक दमन की शिकार औरतें हुई। औरत की समस्या भ्रम समता की न्यूनता से है। परन्तु उसकी उत्पादन व प्रजनन क्षमता दोनों महत्वपूर्ण है।[4]

औरत की स्थिति :

अपने प्रारम्भिक समय में यायावर स्त्री–पारस्परिक संबंध स्थापित कर रहती थी[5] उसको कठोर श्रम करना पड़ता था, घर परिवार का ज्यादा बोझ ढोना पड़ता था। मालिक गुलाम की स्थितियाँ बाद में उभरी। कृषि युग में स्त्री इतनी अधीनस्थ नहीं थी।

---

1 वहीं, पृ.31 से 36
2 वहीं, पृ.36
3 वहीं, पृ.38 से 44
4 वहीं, पृ.48–48
5 वहीं, पृ.40

बाद में यौन भेद उभरे। सामूहिक जीवन में व्यभिचार नहीं था ?[1] औरत घर में रहती बाग बगीचे रखवाली कपड़े बुनना, भोजन बनाने के काम भी करती थी।[2] मातृसत्तात्मक समाज था[3] पितृसत्तात्मक समाज का अवतरण औरत की सबसे बड़ी हार बनी।[4] जब पुरुष ने स्त्री को दैवीस्वरूप दिया तो उसमें श्रद्धा के भाव कम भय अधिक था।[5] मातृत्व की महानता को पुरुष ने अपदस्थ करना शुरू कर दिया[6] औरत अन्या की भूमिका निभाने व दास प्रथा के कारण पुरुष संतान उत्पन्न करने व स्त्री पोषण करने के लिए बाध्य होकर अधीनस्थ बनी।[7] पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्री हीन स्तर पर पहुँची। पुरुष ने स्त्री के सारे अधिकार छीन लिए।[8] जीवन की साझेदारी व समानता पुरुष ने समाप्त कर दी। स्त्री पुरुष की वस्तु हो गई। फिर भी बेटी के रूप में स्त्री पति का चुनाव कर सकती थी। नियोग प्रथा ने बहुपतित्व का रूप ले लिया।[9] सामंती समाज में स्त्री की दासता बढ़ी। ग्रीस ऐथेंस स्पार्टा में – बच्चे सामूहिक जिम्मेदारी होते थे। औरत किसी पुरुष से बंधी नहीं रहती थी। स्त्री की व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर कोई अंकुश नहीं था।[10]

रोमन सभ्यता में स्त्री को अभिभावक के संरक्षण में रहना पड़ता था।[11] ग्रीस की स्त्रियाँ –

- घर की स्वामिनी थी। गुलामों से काम कराती थी। संतान की देखरेख व शिक्षा व्यवस्था देखती थी। गृहस्वामिनी थी।
- पति के कामों में हाथ बँटाती थी। पुरुष की सहधर्मिणी थी गुलाम नहीं।[12] साम्राज्यवाद के दौर में राज्य सारी ताकत अपने में केन्द्रित रखना चाहता था। माना गया कि स्त्री यदि स्वाधीन रहेगी तो राज्य को खतरा रहेगा।[13] औरत के सारे कानूनी अधिकार छीन लिए गए।

सीमोन ने स्त्री को बचपन, युवती, समलिंगी, विवाहिता, मातृत्व, वेश्याएँ, कुलटाऐं, वृद्धा इत्यादि रूपों में चित्रित किया है एवं स्त्रियों की स्थितियों की विवेचनाएं की है। स्त्री

---

1 वहीं, पृ.52
2 वहीं, पृ.53
3 वहीं, पृ.54
4 वहीं, पृ.54
5 वहीं, पृ.56
6 वहीं, पृ.56
7 वहीं, पृ.57
8 वहीं, पृ.58–59
9 वहीं, पृ.59–60
10 वहीं, पृ.60
11 वहीं, पृ.60
12 वहीं, पृ.60
13 वहीं, पृ.61

अनेकों दौर से गुजरती हुई उपेक्षिता होती गई और अन्ततः आन्दोलन की राह पकड़ कर चेतना जाग्रत कर स्वयं के अधिकारों के प्रति सचेत हुई जिसमें स्त्री विमर्श की क्रान्तिकारी भूमिकाएं रही है स्त्री हर समय पीछे मुड़कर देखती है कि उसने कितना रास्ता तय किया है।[1] आधुनिक स्त्री आज साहित्य व कला में मुक्ति खोजती है।[2]

2.4 स्त्री चिन्तन की चुनौतियाँ–रेखा कस्तवार

रेखा कस्तवार ने इस पुस्तक[3] में स्त्री को केन्द्र में रखकर लिखे गए महिला और पुरुष रचनाकारों के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन किया है। लेखिका इस क्रम में ऐसी चुनौतियों से रूबरू हुई है जिनमें स्त्री–चिन्तन मुखरित हुआ है।

लेखिका ने –

- स्त्री से जुड़े मूलभूत सलावों को उठाया।
- पुरुष तथा महिला लेखकों के नजरिए के फर्क को रेखांकित किया ?
- विषय का गहरा विवेचन–विश्लेषण प्रस्तुत किया।
- निष्कर्षतः कहा है कि – स्त्री विमर्श का प्रमुख सरोकार, स्त्री का अपने पक्ष में खुद लड़ना, खुद खड़े होना है।
- जब तक यह लड़ाई अपने पक्ष में, खुद नहीं लड़ी जाएगी, स्त्री पक्ष प्रबल नहीं होगा।
- स्त्री विमर्श अवधारणात्मक परिवर्तन लाने में सफल होगा।

रेखा कस्तवार के समक्ष साहित्य के क्षेत्र में स्त्री विषयक कई बिन्दु उभरे –

- स्त्री सशक्तिकरण, स्त्री विमर्श, स्त्रीत्ववाद, स्त्रीत्ववाद की धाराएं, उपधाराऐं, पूर्व – पश्चिम की स्त्री, सशक्त, अबला, अच्छी–बुरी स्त्री, स्त्रीवादी चिन्तन, चिन्ता चुनौतियाँ, स्त्री के लिए निर्धारित मानदंड[4]

क्यों अपने लिए जगह बनाती स्त्री को परिवार भंजक माना गया ? स्त्री पैसा कमाए, गहने बनवाए–तुड़वाए, अपनी सम्पत्ति के बारे में सोचे तो खलनायिका। घर से

---

1 वहीं, पृ.368

2 वहीं, पृ.369

3 कस्तवार रेखा स्त्री चिन्तन की चुनौतियां, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली–110002, 2016, ISBN 978-81-267-1793-2 Rs.495/-

4 वहीं, प्राक्कथन, पृ.7

बाहर निकलने का मतलब खुद के शोषण के लिए निकलना, सम्बन्धियों के अतियार के बारे में बोले तो बेशरम। स्त्री बाजार में देह मंडी वाली क्योंकि –

सेल्सगर्ल की भूमिका निभाती है। विज्ञापनों में देह दिखाती है। देह पर कपड़े कम करके प्रदर्शन करती है। सौन्दर्य प्रतियोगिताओं का हिस्सा बनती है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के सामानों की बिक्री के लिए मुस्कान बिखेरती विश्व सुन्दरी है। रेखा कस्तवार का मानना है कि – बदलते परिवेश, बदलती स्त्री, मानदंडों में बदलाव सामाजिक संक्रान्ति को जन्म दे रहा है। क्या स्त्री की पहल अपने जीने, अपने आत्म को पहचानने के लिए है ? क्यों सत्ता, धर्म, राजनीति, न्याय के संस्थान स्त्री को ड्योढ़ी चढ़ने देना नहीं चाहते ? आज खेतों, खलिहानों में मजदूरी करती स्त्री, सड़क पर गिट्टी फोड़ती स्त्री, अपनी बुलन्दियों को तलाशती है तो उसे कौन, क्यों रोका जाता है ? देह की स्वतन्त्रता चाहती है स्त्री इसमें आपत्ति क्या है ? देह के धरातल पर स्त्री स्वतन्त्रता की बाते क्यों करने लगी है ? उत्तराधिकार बनाम पुत्राधिकार की बातें, सम्पत्ति से बेदखल वाली बातें कब स्त्री की पक्षधरता को स्वीकारेगी ? कब टूटेगी किलेबंदी पुरुष और पितृसत्ता की ? देह, श्रम और परिवार के बीच कब तक जूझती रहेगी, वह कब तक स्त्री होने की सजा पाती रहेगी ? स्त्री की देह स्त्री के पास हथियार है या शोषण का माध्यम ? यौन शुचिता, गर्भपात का अधिकार, पिल्स की भूमिका, कन्या भ्रूण हत्या की घटनाएँ दहेज वाली समस्याएँ कब तक स्त्री के विपक्ष में रहेगी ? क्यों स्त्री अपनी मर्जी से नहीं जी पाती है, क्यों वह स्वयं के बारे में निर्णय नहीं ले सकती है, क्या स्त्री–पुरुष विहीनता की पैरवी कर सकती है व खुद ठहर पाएगी इस दौर में?

इन्हीं प्रश्नों से मुठभेड़ करती लेखिका ने स्त्री चुनौतियों की पड़ताल की है।

रेखा कस्तवार ने इस कृति के माध्यम से – (1) समकालीनता की अवधारणा एवं स्त्री विमर्श के सरोकार, (2) स्त्री वैज्ञानिक और सामाजिक सन्दर्भ, (3) भारतीय सामाजिक संरचना में स्त्री के ऐतिहासिक पहलू, (4) भारतीय सामाजिक संक्रान्ति, (5) स्त्री लेखन–चिन्ता चुनौतियां चिन्तन, (6) पुरुष लेखन – स्त्री विषयक चिन्ता चुनौतियां चिह्न, (7) स्त्री के रूपाकार समावेशी आंकलन प्रस्तुत किया है। रेखा कस्तवार की कतिपय अवधारणाएं स्त्री चिन्तन, विमर्श को रेखांकित करती है, वह लिखती है – कि "स्त्री विमर्श स्त्री के लिए सुरक्षित क्षेत्र है एवं पुरुषों के लिए उसमें कोई स्थान नहीं है।[1] पुरुष के लिए नारीत्व अनुमान है, नारी के लिए अनुभव। जैसा सजीव चित्र नारी प्रस्तुत कर सकती है पुरुष नहीं कर सकता।

---

1 वहीं, पृ.19

पुरुष की भूमिका हमदर्द से अधिक नहीं हो सकती। स्त्रीत्ववाद पुरुष को कर्ता की भूमिका देने से इन्कार करता है स्त्री विमर्श का सरोकार जीवन और साहित्य में स्त्री मुक्ति के प्रयासों में है। स्त्री की स्थिति की पड़ताल संघर्ष, पीड़ा की अभिव्यक्ति, बदलते सामाजिक संदर्भों में स्त्री की भूमिका, नए प्रश्नों से टकराहट स्त्री विमर्श वाले प्रमुख सरोकार है।[1]

स्त्री के मनुष्यत्व को स्वीकार करना, आज मानवता का सबसे बड़ा सवाल है। स्त्री विमर्श स्त्री के जीवन के अनछुए अनजाने पीड़ा जगत के उद्घाटन के अवसर उपलब्ध कराता है।[2] आर्थिक परावलम्बन स्त्री के शोषण को गहरा करते हैं। हमारी सामाजिक संरचना में बदलाव के बिना स्त्री के हिस्से में बेहतरी आना सम्भव नहीं है। स्त्री विमर्श, स्त्री के स्वयं की स्थिति के बारे में सोचने और निर्णय लेने का विमर्श है।

स्त्री का संघर्ष पुरुष के साथ, पुरुष सत्तात्मक व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करने में है।[3] पुरुष मात्र को कटघरे में खड़ा करने से समस्या हल नहीं होगी। स्त्री विमर्श के सरोकार, स्त्री देह के धरातल पर, मुक्ति की पक्षधरता के साथ–साथ उसके लिए सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक स्वतन्त्रता व समानता की भी वकालत करते हैं। स्त्री विमर्श मात्र देह विमर्श नहीं है। वह स्त्री के सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष का विमर्श है।[4] कतिपय प्रमुख चुनौतियां इस प्रकार है –

(i) माता की भूमिका

रेखा कस्तवार ने अपनी कृति में माता के स्थान की विवेचनाएं प्रस्तुत करते हुए लिखा है –

- माता का स्थान पत्नी से श्रेष्ठ।
- देवी की परिकल्पना में माता के महत्व की स्वीकारोक्ति।
- देवत्व में मातृत्व के गुण को महत्व दिया गया।
- माँ न्यायी, व्यवस्था की संचालिका है जो दयालु निर्देशिका, रक्षिका है।[5]

(ii) कन्या की स्थिति

1 वहीं, पृ.24
2 वहीं, पृ.25
3 वहीं, पृ.26
4 वहीं, पृ.28
5 वहीं, पृ.369

मध्यकाल में कन्या के जन्म को अशुभ माना जाने लगा। लड़कियाँ पैदा करने वाली स्त्री को घृणा की दृष्टि से देखा जाने लगा। पुत्र की माता बनने पर स्त्री को सम्मान मिलने लगा। कन्या शिशु हत्या की परम्परा पनपी।[1]

(iii) विधवा की स्थिति

मध्य युग में बाल विवाह ने विधवा स्थिति को जन्म दिया। वैधव्य जीवन यातनाओं बन्धनों से भरा रहा। युवा विधवाओं को आर्थिक व शारीरिक स्तर पर अत्याचार झेलने पड़े। शुद्र वर्ण में विधवा विवाह सामान्य व सरल विधि से होने लगा। मुसलमानों में विधवा विवाह सामान्य था। विधवा जीवन में सती प्रथा, जौहर प्रथा पनपने लगी।[2]

वेश्याओं के बारे में भी विचार किया गया तथा वेश्या को कुलवधुओं की अपेक्षा स्वतन्त्र माना गया। गणिका पण्य के बदले पुरुष के साथ सम्बन्ध स्थापित कर सकती थी। पुरुष सम्भोग से वह अपनी आजीविका चलाती थी, उसकी जीविका की कुंजी स्वतन्त्र बने रहने का आधार काम को साधन बनाकर अर्थ का आहरण करना व अपने लिए स्थान बनाना था। कालान्तर में नगर वधू की परम्परा प्रारम्भ हुई।[3] मध्यकाल में यह सामाजिक व्यवस्था की अंग थी। वेश्याओं के सम्पर्क में रहना सम्पन्ता प्रतिष्ठा का अंग माना जाता था।[4]

(iv) कामकाजी स्त्रियाँ

शिक्षा के प्रचार–प्रसार और राष्ट्रीय आन्दोलनों में स्त्रियों की सक्रिय भागीदारी ने स्त्री को घर की चारदीवारी से निकालकर कामकाजी स्त्री बना दिया। रूसी क्रान्ति के बाद–स्त्रियों की आर्थिक मजबूरी के अतिरिक्त घर से बाहर नौकरी के लिए जाना अपमान जनक माना जाता था। समाज कठोर आर्थिक संकट में ही स्त्री को अर्थोपार्जन की अनुमति देता है। परिस्थितियों की विवशता में काम पर निकली स्त्री

– तरस का पात्र होती थी
– बेचारगी का प्रतीक थी
– पालने वाला कोई नहीं होता था

लम्बे समय तक कामकाजी स्त्रियाँ तलाकशुदा, विधवाएँ ही होती थी।

स्वतन्त्र भारत में शिक्षा के प्रचार–प्रसार ने स्त्रियों के लिए –

---

1 वहीं, पृ.64
2 वहीं, पृ.66
3 वहीं, पृ.62
4 वहीं, पृ.67

(1) अध्यापिका, (2) डॉक्टर्स, (3) नर्स, (4) क्लर्क, (5) प्रशासक, (6) वकील आदि कामों के अवसर सुलभ करा दिए ?[1]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के आसपास तक यदि पढ़ लिखकर स्त्री नौकरी करना चाहती थी तो विवाह व परिवार के दायित्वों की उसकी क्षमता पर शक किया जाता था ? बाद में बाजार में घर से काम के लिए निकलने वाली स्त्री के लिए –

- गृहस्थी के सुविधाजनक उपकरण जुटाए।
- जीवन की बढ़ती जरूरतों ने पुरुषों की मानसिकता में परिवर्तन किया।
- घर की आमदनी में पत्नी की भागीदारी सम्भव हो सकी।
- पहले असम्मानजनक समझी जाने वाली नौकरी परिवार की, पद, प्रतिष्ठा, इज्जत बढ़ाने लगी।
- विवाह और नौकरी समानान्तर सम्भव हो सकी।
- माताओं–पिताओं ने आर्थिक सहयोग हेतु अपनी बेटियों के कामकाजी होने को प्रोत्साहित किया।
- अविवाहित बेटियाँ अपने पिता के परिवार का पोषण करने लगी।

इससे यह दृष्टि विकसित हुई कि पति या माता–पिता के भरण पोषण में सक्षम होने पर भी शिक्षित स्त्रियों को आत्म निर्भर होना चाहिए।[2]

कार्यस्थलों पर स्त्रियों को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है उनमें छेड़छाड़ व यौन उत्पीड़न है। मनोरंजन व्यवसाय से जुड़ी स्त्रियों को यौन उत्पीड़न झेलना पड़ता है, अश्लील संकेतों का सामना करना पड़ता है। अधिकारियों द्वारा किए यौन शोषण को स्वीकारना पड़ता है।[3]

क्या स्वेच्छा से, मानसिक रूप से स्त्री अपने बॉस के साथ इन सम्बन्धों के लिए तैयार होती है ? कैरियर की सफलता व पदोन्नति के लिए इस तरह के रास्ते चुनती है? सफलता के लिए उसे अपने शरीर का इस्तेमाल करने में एतराज नहीं होता ? क्या घर से बाहर निकलने पर स्त्री की नैतिकता के बन्धन ढीले हो जाते हैं तथा यौन शुचिता का आग्रह कम हो जाता है ? सेक्स के प्रति दृष्टि में बदलाव ने स्त्री के लिए पति के

---

1 वहीं, पृ.90
2 वहीं, पृ.90–91
3 वहीं, पृ.96

अतिरिक्त रिश्तों की सम्भावना को जन्म दिया है। नौकरी के तनाव को कम करने के लिए ऐसे सम्बन्ध कारगर साबित हुए।[1]

(v) दहेज एवं बलात्कार विरोधी आन्दोलन

रेखा कस्तवार ने दहेज एवं बलात्कार विरोधी आन्दोलन की स्थिति पर तथ्यात्मक टिप्पणी प्रस्तुत की है – दहेज को लेकर पत्नी उत्पीड़न की ऐसी करतूतें –

- मन लायक दहेज नहीं मिलने की खीझ
- दहेज मिलने का लालच
- हत्या के उपरान्त पुनः विवाह द्वारा नए दहेज की लालसा के कारण होती है।

दहेज हत्या एवं उत्पीड़न के विरोध में स्त्रीवादी संगठन सक्रिय रहे हैं। स्त्री संघर्ष ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।[2] दहेज हत्या पर 304बी में आजीवन कारावास का प्रावधान रखा गया है।[3] बलात्कार के अपराध भारत में खूब बढ़े हैं। नाबालिग से बलात्कार पर फाँसी की सजा का प्रावधान सामने आया है बलात्कार का बोध स्त्री जीवन को खराब कर देता है।[4] स्त्री आन्दोलनों के कारण शिक्षा, पत्रकारिता, चिकित्सा के क्षेत्र में स्त्रीवादी गतिविधियां विस्तृत हुई है।[5]

बाजार में स्त्री

आज के दौर में बाजार में स्त्री की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता।[6] आज स्त्री ने बाजारू हुए बिना बाजार में प्रवेश करने की कोशिश की है और –

- आत्म निर्भरता के पैर जमाना
- नई छवि के निर्माण में योगदान देना
- धन उपार्जित करना
- समूची अर्थ व्यवस्था को गति देना, उद्योग मीडिया से पैसा कमाकर अपनी स्थिति सुदृढ़ करना इत्यादि कार्य किए हैं।[7] अर्थ के क्षेत्र में स्त्री की सक्रियता ने अर्थ और सत्ता बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। पढ़ी लिखी स्त्रियां

---

1 वहीं, पृ.97
2 वहीं, पृ.102
3 वहीं, पृ.103
4 वही, पृ.105
5 वही, पृ.109
6 वही, पृ.128
7 वही, पृ.129

व्यापार, सम्पति, प्रबन्धन के क्षेत्र में डायरेक्टर, मैनेजिंग डायरेक्टर बनने लगी है। स्त्रियों ने अपने लिए अवसर तलाशे हैं। विज्ञापन जगत में स्त्री की भूमिका औजार की है। पुरूष उपभोक्ताओं को ढ़ेर करने के लिए स्त्री का उपयोग चारे की तरह किया जाता है। जहाँ स्त्री उपभोक्ता है वहाँ यह तर्क दिया जाता है कि स्त्री उपभोक्ता को स्त्री ही अच्छी तरह समझा सकती है। विज्ञापनों ने स्त्री को एक नए सौन्दर्य शास्त्र का औजार बनाते हुए उसके शोषण के नए आयाम खोले हैं। समाज में स्त्री की दावेदारी को बढ़ाया है।

(vi) उपभोक्ता स्त्री[1]

आज के बाजार ने स्त्री को एक बेहतर उपभोक्ता के रूप में पहचाना है–

- शहरी मध्य वर्ग की स्त्री ने अपनी पसन्द की खरीददारी के अवसर जुटाए।
- परिवार के उपयोग में आने वाली वस्तुओं की खरीददारी में उसकी निर्णायक क्षमता को बाजार ने पहचाना है।
- उपभोक्ता स्त्री को प्रभावित करता है।
- स्त्री अपनी इस क्रय क्षमता को लेकर प्रसन्न है।
- उसने अपने पैसे का खुद उपयोग करना सीखा है।
- उसका हाथ अपने गहने, कपड़े, सौन्दर्य प्रसाधनों के लिए खुला है।

परन्तु स्थायी सम्पति की खरीददारी में अभी भी उसका प्रतिशत नगण्य है।[2]

(vii) उपभोक्ता स्त्री की दिशा व दशा :

स्त्री की श्रृंगार प्रिय छवि को बाजार में अनेक तरह से भुनाया है। सौन्दर्य को औजार की तरह प्रयुक्त किया गया है। मर्दवादी दृष्टि तय करती है कि स्त्री का चेहरा कैसा हो ? उसकी चमड़ी बाल, चाल, जूते, गहने, क्रीम, पाउडर, बालों का तेल कैसा हो ?[3] बाजार स्त्री को विशिष्ट सुन्दर स्त्री का प्रलोभन देता है। ब्यूटी मिथ स्त्री को देह केन्द्रित करता है। सौन्दर्य प्रतियोगिताएं, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के लिए ''ब्यूटी विद ब्रेन'' के आधार पर उपभोक्ता तैयार करने में मदद करती है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियां अपना

---

1 वही, पृ.130
2 वही, पृ.131
3 वही,पृ.131

बाजार बनाने के लिए स्त्रियों का शोषण करती है।[1] सुधीर पचौरी के अनुसार सौन्दर्य प्रतियोगिताओं ने स्त्री को घर से बाहर निकलने, मुकाबला करने, विवाद करने, नारे लगाने, बोलने के अवसर दिए हैं, बाजार में आई स्त्री जान गई है घर में मरने से बेहतर है बाहर मुकाबला करना।[2]

सेक्स विषयक विचार :

बाजार में स्त्री के लिए सेक्स विषयक विचार में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन आए हैं। सेनिटरी नेपकिन के विज्ञापनों में स्त्री की सुविधा, स्त्री की आजादी से जोड़कर, कष्टप्रद दिनों के बहाने घर में कैद स्त्री को बाहर आना सम्भव बनाया है।[3]

गर्भ निरोधकों की भूमिका

- सेक्स सम्बन्धों की गोपनीयता भंग करने की रही ।
- सेक्स से जुड़े अपराध बोध, पाप भावना से मुक्त किया।
- स्त्री को यौन शुचिता के आतंक से मुक्ति प्रदान की
- एड्स के डर से मुक्ति प्रदान की
- अन्तरंग सम्बन्धों को देहसुख से जोड़ा है। निरोधकों का बाजार समृद्ध बनाया है।[4]

(viii) मीडिया में उपयोग

मीडिया ने बाजार हित में स्त्री छवि का भरपूर उपयोग किया है। स्त्री के अर्धनग्न उत्तेजक मांसल शरीर की तस्वीरें एवं उनसे सम्बन्धित सनसनीखेज खबरों को समाचार पत्रों ने व्यापक महत्व प्रदान किया । स्त्री शरीर एक प्रोडक्ट के रूप में विकसित हुआ।[5] स्त्री फोटो में उनका चयन किया जाने लगा जिनके कपड़े अस्त–व्यस्त है।[6]सृजनात्मक साहित्य में भी स्त्री देह का उपयोग सस्ती लोकप्रियता और बाजार जुटाने के लिए किया जाता है।

---

1 वही,पृ.132–133
2 पचौरी सुधीर–असली औरत का बयान, दैनिक नव ज्योति–25.04.1997
3 कस्तवार रेखा––पृ.134
4 वही, पृ.134
5 वही, पृ.134
6 जैन अरविन्द–शालीनता के स्वेटर जल रहे हैं। राष्ट्रीय सहारा, 02.02.2005

इस प्रकार बाजार ने स्त्री को देह से मुक्ति भी दी है। सेल्स गर्ल बनाया है। पैसे कमाने के अवसर भी सौंपे हैं। पूंजी के बाजार में स्त्री ने सैंध लगाई है।[1] इस प्रकार स्त्री की चुनौतियों को व्यापक विस्तार मिला है।

2.5 नासिरा शर्मा – औरत के लिए औरत

नासिरा शर्मा ने इस पुस्तक[2] में स्पष्ट किया है कि औरत अधिक ईमानदार, निष्ठावान, कर्मठ, धर्मवान, बलिदान करने को सदा तत्पर रहने वाला जीव है जिसका मुकाबला दुनिया का दूसरा प्राणी नहीं कर सकता। लेखिका ने कुंठित मानसिकता का लोप दर्शाते हुए स्त्री का ऐसा मुद्दा उठाया है जिसके चारों तरफ राजनीति, अर्थव्यवस्था, धर्मशास्त्र, कानून व्यवस्था, समाज परिवार इत्यादि विश्व स्तर पर जवाब देह नजर आते हैं। विकास व उन्नति पर प्रश्नचिन्ह लग जाता है जब स्त्री का लहूलुहान चेहरा नजर आता है, लेखिका का मानना है कि स्वयं नारी ही अपने प्रति होते हुए अत्याचारों तथा शोषण का रुख बदलेगी, इस कृति में

- स्त्री जीवन के प्रति जागरूक सरोकार है।
- औरत द्वारा आबाद दुनिया है।
- जिंदगी जीते देखने की कामना है।
- समाज का स्त्री के प्रति क्रूर व्यवहार का अंकन है।
- स्त्री के प्रति खुला नजरिया है।
- औरत की जागरूकता की प्रामाणिक स्वीकृति है।

नासिरा शर्मा –''दो शब्द'' के माध्यम से स्पष्ट रूप से धारदार शब्दों में विवेचनात्मक अवधारणाएं सूत्र रूप में प्रस्तुत करती है। औरत भी एक इन्सान की तरह सांस लेती है। औरत के चारों तरफ जिदंगी चहचहाती है रिश्ते फूल और फलदार दरख्तों के रूप में उगते है। औरत संघर्ष कर कामयाबी हासिल कर सकती है। औरत की वेदना पर्तदार सच की तरह होती है और तमाम विरोध, विद्रोह, दमन, शत्रुता, अफवाह को सहकर भी संतान को बेहतर सुशिक्षित जीवन प्रदान कर सकती है।"[3]

---

1 कस्तवार रेखा––2145

2 शर्मा नासिरा, औरत के लिए औरत, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 110002, 2011, RS.300/- ISBN-81-7138-042-5

3 वही, पृ.6

सच्चाई तो यह भी है कि 80 प्रतिशत शोषित महिलाओं के बीच 20 प्रतिशत ऐसी भी है जो जमकर मर्दों व स्त्रियों का शोषण करती है। 60 प्रतिशत मर्द औरत को अपने पैर की जूती समझते हैं। ऐसी कोशिशें करते है कि औरत इन्सान की तरह जी न सकें। मर्द और औरत एक चने की दो दाल हैं, दोनों के सहयोग से ही बेहतर समाज की संरचना सम्भव है, जो परिवार को शांति, सुरक्षा, प्रेम और बेहतर भविष्य का वचन दे सकता है।[1] जब से औरत ने घर की चुनौतियों से बची रहना स्वीकार किया उसके लिए दुनिया पेचीदी हो गई। उसको सुलझाना किसी एक के वश में नहीं है। उनका हल सामूहिक प्रयास द्वारा ही संभव है। 1975 में संयुक्त राष्ट्र महिला सम्मेलन मैक्सिको में आयोजित होने पर तथ्य उभरे –

"नारी चेतना, को लेकर नई दिशाएं, सम्भावनाओं की खोज शुरु हुई हैं।
नारी उत्पीड़न और नारी उत्थान को लेकर नए कानून, नई योजनाएं बनी।
उत्पीड़ित स्त्री से संसार में हलचल मची।
पुरुष वर्ग भी जागा जो नारी के प्रति उदासीन था।[2]

भारत के संदर्भ में

स्त्री परिवार के स्तर पर आवाज से आवाज मिलाकर, मुट्ठियाँ बाँधकर, सड़क पर जुलूस के रूप में नहीं उतरी थी। घरों में ऊँचे सुरों में बात करने पर प्रताड़ना और सजा सहनी पड़ती थी। प्रेस ने सार्वजनिक मुद्दा बनाकर पाठकों तक पहुँचाया। समर्थन से आन्दोलन में सक्रियता आई। विश्वास बढ़ा। उमंग जागी और स्त्री अपने ऊपर होते हुए अत्याचारों के विरोध में आवाज उठाने लगी। पिछले 50 वर्षों में औरत द्वारा बाहर की दुनिया में हस्तक्षेप से उसकी समस्याएं तो बढ़ी पर उसका संगठित वजूद भी सामने आया व उपलब्धियों की दृष्टि से

(1) महंगाई प्रतिकार संयुक्त महिला समिति मुम्बई द्वारा जारी चीजों के दाम कम हुए।
(2) सेवा संस्थान अहमदाबाद द्वारा औरतों के लिए बराबर मजदूरी, दस्तकारी द्वारा रोजगार की तलाश की गई।
(3) बिचौलियों से बचाव हुआ।
(4) सही दाम पर माल की बिक्री हुई।
(5) सेवा बैंक की बचत योजना संगठित हुई

1 वही, पृ.7
2 वही, पृ.7

(6) गौरी देवी के नेतृत्व में चिपको आन्दोलन से पर्यावरण के प्रति महिलाओं का सरोकार जाहिर हुआ व पेड़ कटने से बच गए।[1]

निष्कर्षतः नासिरा शर्मा ने माना है कि –

- स्वयं स्त्री को अपने प्रति जागरूकता लानी पड़ेगी।
- वह अपने प्रति जवाबदेह बनेगी।
- दूसरी स्त्री के प्रति संवेदनशील होगी। उसके सुख दुःख को इन्सानी आँखों से देखेगी। महिला स्थिति में ठोस और प्रामाणिक बदलाव आएगा।[2]

श्रीमती नासिरा शर्मा ने अपने वक्तव्यों में स्पष्ट किया है कि सभी पुरुष बुरे नहीं है और सभी स्त्रियाँ अच्छी नहीं है। हमें स्त्री पुरुष के खांचों में बाँटने के बजाय –

- अत्याचार के विरूद्ध
- स्वतन्त्रता के समर्थन में रूढ़िवादिता और जड़ता पर प्रहार करना होगा।

नासिरा शर्मा ने अपना विमर्श इस प्रकार दिया है – प्रेमरोग में औरत रिश्तों के बीच औरत, घरेलू औरतों के तेवर, औरत के प्रति अपराध, मेहनत कश औरतें, कानून और औरत, सियासत में औरत, औरत और कार्यक्षेत्र जीवन लक्ष्य और औरत, समाज और स्वतन्त्रता कुछ प्रश्न, भागता समय : ढहती निष्ठा, मर्द का बदलना जरूरी, भारतीय नारी और नई औरत शीर्षकों से लिखे गए आलेखों के द्वारा प्रस्तुत किया है।[3] नासिरा मानती है कि – "औरत–मर्द के रिश्ते में प्रेम के साथ सम्मान का होना जरूरी है। केवल प्रेम से जीवन नहीं चल सकता। यदि प्रेम में सम्मान होगा तो एक दूसरे के विचार अहसास की कदर करनी पड़ेगी।"[4]

औरत के लिए प्रेम का मुद्दा

"औरत के लिए प्रेम का मुद्दा उस पर जुल्म ढहाता है। मोहब्बत की हत्या की कोशिशें की जाती है।[5] क्यों प्यार करने वाले बुजुर्गों की दृष्टि में चरित्रहीन होते हैं?"[6] जुल्म के आगे आत्म समर्पण केवल परिवार के खातिर, प्रेम से बड़ा कर्तव्य मानकर किया जाता है। यह व्यक्तिगत तानाशाही बंद होनी चाहिए।"[7] औरतों के प्रति लगाम लगाने के

---

1 वही, पृ.8
2 वही, पृ.9
3 वही, पृ.10–12
4 वही, पृ.16
5 वही, पृ.17
6 वही, पृ.19
7 वही, पृ.20

लिए – हिन्दू – पत्नी को जिंदा जलाने, दहेज कम लाने पर प्रताड़ना, संदेह होने पर हत्या, परिवार नियोजन के प्रति लापरवाही और औरत पर घर बाहर की जिम्मेदारी डालकर उसको पतिव्रता के कारागार में बंद करके सारी इच्छाओं का दमन करना तथा मुस्लिम–उच्च शिक्षा से वंचित करना, तीन तलाक की जलालत, हलाला का नासूर सब औरत पर लगाम लगाने के लिए कर रहे हैं।"[1]

खुद को पहचानो

आज औरत द्वारा लड़ी जा रही लड़ाई अधिकारों की लड़ाई है। अतः–

1. महिला समाज अपने अधिकारों के बारे में विस्तार से सोचे।
2. बहुत जल्दी तरक्की पाने की होड़ पर नियंत्रण जरूरी है।
3. कार्यक्षेत्र में महिला का शालीन व्यक्तित्व और उसका कार्य सम्बन्धी ज्ञान उसकी छवि बनाता है।
4. स्त्री अपने सोच का दायरा विस्तृत करे।
5. औरत के अधिकार, शांति–सुरक्षा पर बहस होनी चाहिए। महिलाएं खुद को पहचाने।[2]

महिला शिक्षा का मुद्दा :

नासिरा महिला शिक्षा के मुद्दे पर लिखती है कि – यदि महिला कम पढ़ी लिखी है तो उसे अपनी शिक्षा की तरफ ध्यान देना चाहिए तथा यह पढ़ी लिखी है तो अपने व्यक्तित्व को महत्वपूर्ण बनाने के लिए पति के कार्य में सहयोगी की भूमिका अदा कर संबंधों को नया आयाम दे सकती है।[3] आवश्यकता इस बात की है कि – (1) पति–पत्नी एक दूसरे के कार्यक्षेत्र में रूचि लेवें। स्त्री को अपने पति की बाहरी दुनिया के जोखिमों से पूरी तरह खबरदार रहना चाहिए।

मध्यम वर्ग की औरतों की जिम्मेदारियों का मुद्दा :

मध्यम वर्ग की औरतों की जिम्मेदारियों के मुद्दे में माँ–पत्नी, घर–परिवार, कामकाज–भविष्य प्रमुख हैं। इसमें –

- दबाव के कारण समझौते नहीं करे।

---

1 वही, पृ.21
2 वही, पृ.22
3 वही, पृ.36

- बाजार के अधीन न बनाए।
- अपने आन्तरिक सौन्दर्य पर विश्वास रखे।
- सादा जीवन उच्च विचार को अपनाएं।
- सुख का तेवर ईमानदारी में माने, बेईमानी की चमक दमक में नहीं फूंक फूंक कर कदम रखे।[1]

मेहनतकश औरतों का मुद्दा :

नासिरा शर्मा का मानना है कि मेहनतकश औरत अपने पेट भरने के लिए मेहनत कर सकती है लेकिन विद्रोह नहीं। उसे कम मजदूरी दी जाती है। बेकारी–रोटी व ठेकेदार–पति के बीच पिसती रहती है। वह क्यों घुटने टेकने को विवश हो जाती है ?[2]

औरतों के लिए कानून का मुद्दा

औरतों की सुरक्षा के लिए कानून तो बन जाते हैं परन्तु मुद्दा हल नहीं होता है क्योंकि –

- कानूनी समझ और जागरूकता का अभाव है।
- औरतें कानून का सहारा लेने से डरती है। बूढ़े माँ–बाप की सेवा का मामला।
- विचार के स्तर पर कोई जिम्मेदारी महसूस नहीं करती।
- पारिवारिक अनुशासन को तोड़ना कठिन मानती है।[3] औरतें स्वयं कानून बनाए और उनका प्रयोग करना सीखे व अपने वर्ग को भी दिशा बोध दे।[4]
- बलात्कार के मामलों में औरत–सहन करती जाती है। गलत व्यवहार बढ़ता है तो फैसले का स्वागत करना सीखें। अमानवीय घटनाओं से मानसिक रूप से मुक्त होना होगा। मानवता को न्याय के तराजू पर रखना होगा। असली मुजरिम तक कानून की पकड़ मजबूत करनी ही होगी। औरतें – आत्महत्या नहीं करे, मानसिक रूप से कमजोर न बनाए।

सही दिशा में कदम उठाकर समाज को करारा जवाब दे। पीड़िता को ही अपराधी और तुच्छ समझने का नजरिया समाज को बदलना पड़ेगा।[1]

---

1 वही, पृ.37–38
2 वही, पृ.58–59
3 वही, पृ.79–81
4 वही, पृ.81

2.6 मृणाल पाण्डे – परिधि पर स्त्री

इस पुस्तक[2] में मृणाल पाण्डे मानती है कि – "इस समय में नारीवाद का सवाल काफी उलझा हुआ है। नारी गरिमा के कथित दमन या विनाश के लिए घड़ियाली आँसू बहाए जा रहे हैं।"[3]

मृणाल पाण्डे ने अपने प्राक्कथन में माना है कि–उन्होंने ये बातें सुनी–

- औरत ही औरत की दुश्मन है।
- सारी नारीवादी औरतें तर्क विमुख होती है और पुरुषों से घृणा करती है।
- नारी संगठन बस नारेबाजी और गोष्ठियों का आयोजन भर करते हैं गाँवों में उनकी रूचि नहीं है।
- मध्यवर्गीय औरतें काम के नाम पर मटरगश्ती करने जाती है। घर बच्चे इसी से टूट रहे हैं।
- जो लड़कियां ससुराली शोषण और सड़कों पर छेड़छाड़ की शिकायत करती हैं, एडजस्ट करना नहीं जानती।[4]

मृणाल पाण्डे स्वीकार करती है कि –

- अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में नारी संगठनों ने
  - सामाजिक कुरीतियों
  - साम्प्रदायिकता
  - प्रतिगामी कठमुल्लेपन
  - भ्रष्टाचार का लगातार मुखर विरोध करने में पुरुषों का साथ दिया है।
- ग्रामीण साथी ने सभी पिछड़े वर्गों को समान काम के अवसर, समान वेतन और पारिवारिक दायित्वों के प्रति सरकार को अपने उत्तरदायित्वों की याद दिलाई है।
- नारीवादियों ने पारम्परिक तौर पर कमजोर तबको पर लादे हुए अत्याधिक काम के बोझ मर्दों पर पूरे परिवार के अकेले कामासुतपने का बोझा घटाने के प्रयास भी किए हैं।

---

1 वही, पृ.82–83

2 पाण्डे – मृणाल – परिधि पर स्त्री – राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली–110002, 2017, Rs 300/- ISBN-978-81-8361-173-2

3 वही, फ्लैप मेटर

4 वही, पृ.6

- नारीवाद पुरुषों का नहीं, उनकी मानवीयता घटाने वाले उस छद्म मुखौटों का प्रतिकार करता है जो मर्दानगी के नाम पर गढ़ा गया है।[1]
- परिवारों के भीतर बहुओं, बेटियों के खिलाफ हिंसा, कार्यक्षेत्रों में आर्थिक तथा यौन शोषण और राजनीति में लगातार उनके हाशिए पर धकेले जाने के खिलाफ उन्होंने दोनों जगह चेतना जगाई है।[2]
- देश की कामकाजी स्त्रियों में से 90 प्रतिशत ऐसी हैं जिनके काम किए बिना उनके परिवार नहीं पल सकते।
- नारीवाद में नारी के गुणों व गरिमाओं के प्रति आदर भाव जुड़ा है।[3]

इस कृति में मृणाल पाण्डे ने – गरीबी, महिला वोटर, असमानता, पुलिस, लोकतंत्र, महिला शरणार्थी छोटे परदे पर, अपराध, आबादी नियंत्रण, आत्मनिर्भरता आदि मुद्दों पर केन्द्रित लेख लिखे हैं। मृणाल पाण्डे पूछना चाहती है कि क्या सामूहिक बलात्कार जैसी घटनाओं पर चुप्पी साधना भयंकर अपराध नहीं है। जनहित तथा करूणा की अपेक्षा जो (भीष्म) भीषण प्रण को जो चुनेगा उसे अन्त में शिखण्डी की ओट में प्रश्नों की शरशैय्या ही मिलेगी।[4]

महिला वोटरों का मुद्दा :

मृणाल पाण्डे ने महिला वोटरों का मुद्दा उठाते हुए स्पष्ट किया कि प्रारम्भ में 51 प्रतिशत औरतें मतदान में भाग नहीं लेती थी। आपातकाल के बाद महिलाओं ने मतदान प्रक्रिया से अपने जीवन का सीधा रिश्ता महसूस किया और भारी तादात में मतदान में भाग लिया। उस समय मतदान का प्रतिशत बढ़ाने के लिए महिला को खींच कर मतदान केन्द्र तक लाने की जरूरत नहीं पड़ी। कुछ राजनीतिक दलों द्वारा – शराबबंदी, सस्ता चावल, पंचायती राज में 30 प्रतिशत महिला आरक्षण के कारण स्त्रियों को अपना भविष्य तथा वर्तमान सीधा नजर आया तो वोट प्रतिशत बढ़ा।[5] स्त्री शक्ति को राजनीति की मुख्यधारा में लाए बिना स्वस्थ लोकतंत्र की कल्पना नहीं कर सकते हैं।"[6]

---

1 वही, पृ.9
2 वही, पृ.10
3 वही, पृ.11
4 वही, पृ.17
5 वहीं, 24–25 (महिला वोटर–जगना एक सुसुप्त वोट बैंक का)
6 वहीं, पृ.35 (हजार बरस की असमानता क्यों ?)

पुलिस का मुद्दा :

जब मानवाधिकारों के दमन की बात की जाती है तो पुलिस का मुद्दा उभरता है। महिलाओं को थाने तक घसीटकर लाना, पिटाई करना, पुलिस का कोप भाजन बनना, सामान्य बात है। (कई लेखिकाओं ने इस पर उपन्यास लिखे हैं) पुलिस के दफ्तरी और सार्वजनिक आचरण में आई गिरावट भारतीय समाज तथा व्यवस्था में आई नैतिक गिरावट है। अतः पुलिस विभाग में – "महिलाओं के विरूद्ध अत्याचार निरोधक प्रकोष्ठ" जरूरी है ? उत्पीड़ित औरतों को अविलम्ब न्याय मिले।[1]

महिला शरणार्थियों का मुद्दा :

अपने लेखों में कलम चलाते हुए मृणाल पाण्डे ने महिला शरणार्थियों के मुद्दे पर समुचित चिंतन किया है।

भूख–प्यास–थकान, अकाल–महामारी–बीमारी के कारण कई बार आपदा प्रबन्धन से भी कई महिलाओं को शरणार्थी बनकर शरण लेनी पड़ती है। घरद्वार, मवेशी खेत पीछे छूट जाते, आर्थिक सामाजिक जड़ें नष्ट हो जाती, गोलियां, गालियां और भूख, पथराई आँखें, अब क्या होगा ? इन औरतों की समस्याऐं –

- विभीषिकाओं को झेलना।
- घर–कुटुम्ब चलाना पेट भरना–पालना।
- झुग्गी बस्तियों में डेरा डालना।
- रोटी–रोजी की लम्बी कड़वी तलाश करना है।
- ऐसी औरतें घरों में चूल्हा चौका, निर्माण कार्यों में दैनिक मजदूरी कर रोज कुँआ खोदना रोज पानी पीना को झेलती है।
- अपराध प्रवृतियां, मानसिक रूग्णता अधिक होता है।
- पुलिस वाले रिपोर्ट ही दर्ज नहीं करते हैं।
- राशनकार्ड, बिजली, पानी जैसी न्यूनतम आवश्यकताओं से वंचित रहती है। प्रसूति अवकाश भी नहीं मिलता।
- वेश्यावृति कराने वालों के चंगुल में फंस जाती है।

अतः इनके कल्याण पर ध्यान देना जरूरी है। श्रम कानून में सुधार अपेक्षित है। स्त्री शिक्षा की समुचित व्यवस्था है। स्वास्थ्य संबंधी जानकारी पहुँचा कर संक्रामक रोगों

---

1 वही, पृ.36 (पुलिस लोकतंत्र और लोकलाज)

का उपचार उपलब्ध कराना प्राथमिक आवश्यकता है। आजीविका के संसाधन आसानी से मिलने चाहिए।[1]

अर्थजगत, आदमी, औरत और उपभोक्ता का मुद्दा :

निरक्षरता व अन्य कारणों के चलते शिशु और माताओं की मृत्युदर घटने को नहीं आ रही है।[2]

आयातित कृषि व खाद्य प्रसंस्करण सामग्री पर आयात शुल्क में भारी छूट के कारण–कृषि क्षेत्र से जुड़ी महिलाओं को निराई–गुड़ाई–पराई तथा कूट–पीस–छानन जैसे कामों से वंचित होना पड़ रहा है जो उनको रोटी दे रहे थे। तम्बाकू पावरलूम में मशीनी उपयोग से कई औरतें धन्धे से बेदखल हो गई हैं। धान की रोपाई मशीनों से होने लगी है।[3] मशीनी क्रांति के बाद–खेतों और पारम्परिक हुनरों से बेदखल औरतें स्वाभिमान और स्थानीय संस्कृति को त्यागने को विवश हैं, औरतें, छाँटनी, तालाबंदी की शिकार होती है।[4] इन्हें – बढ़ती महँगाई, मुद्रास्फीति, बेरोजगारी से जूझना पड़ता है।[5] उदारीकरण से औरतें छँटनी की चपेट में आने लगी।[6] अतः

- सार्वजनिक वितरण प्रणाली के स्वरूप में बदलाव जरूरी है।
- घरेलू स्त्रियों का स्वास्थ्य परीक्षण करा सुधार लाना होगा।
- पोषाहार का वितरण बढ़ाना होगा।
- पढ़ाई पर पूरा ध्यान देना होगा।[7]

मृणाल पांडे ने स्त्री विमर्श में सकारात्मक सोच वाले सहकारिता युक्त पक्ष को उजागर कर नारी अस्मिता को बचाने की दिशा में लेखनी चलाई है। वह सामूहिकता की पक्षधर है।

2.7 मृदुला गर्ग – चुकते नहीं सवाल

यह पुस्तक[1] स्त्री केन्द्रित नहीं है परन्तु कुछ लेखों में स्त्री प्रश्नों पर बात हुई है। साहित्य में –

---

1 वही, पृ.48–52 (महिला शरणार्थी की त्रासदी)
2 वही, पृ.53
3 वही, पृ.54
4 वही, पृ.55
5 वही, पृ.56
6 वही, पृ.58
7 वही, पृ.58

स्त्री की छवि

कहानी में नारी चेतना

सत्ता और स्त्री

देसी फेमिनिस्ट इत्यादि ऐसे आलेख हैं।

बदलती छवियों पर विचार कर, रूपचेती नारी चेतना, विकास के प्रतिमान, पितृ/मात्र सत्ता के गुण–दोष, जमीन से जुड़ी स्त्रियों के प्रश्नों पर विवेचन हुआ है। मृदुला गर्ग ने नारी आन्दोलन के बारे में अपनी राय व्यक्त करते हुए माना है[2] –

- नारी अस्मिता की बात करना सम्भव हुआ है।
- कानून की ओर से नारी को पुरुष के बराबर दर्जा दिया जाने के भरसक प्रयत्न हुए हैं लेकिन सामाजिक–आर्थिक–पारिवारिक ढाँचे में बहुत अधिक परिवर्तन न होने से महिलाएँ आज भी भेदभाव की शिकार हैं।
- नारी अस्मिता आन्दोलन की सबसे बड़ी लड़ाई, मर्दवादी सोच, सड़ी गली मान्यताओं से है।
- नारी अस्मिता का अर्थ है – स्त्री पुरुष के बीच घटने वाले सम्बन्ध को नकारे बिना पारम्परिक सम्बन्ध से मुक्ति।
- जो दृष्टि नारी की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक छवि के तिलिस्म को तोड़े वही नारी चेतना है।
- फेमिनिज्म – नारी की चेतना नहीं नारी सम्बन्धी चेतना है। नारी चेतना या दृष्टि से सम्पन्न होना मुख्य है।[3]
- नारी शोषण का मुद्दा सत्ता/शक्ति से जुड़ा है। जिसके पास सत्ता आ जाती है वह कमतर व्यक्ति का शोषण करता है। जो स्त्रियां सत्ता के उच्च शिखर पर पहुँच जाती है वे भी अन्य स्त्रियों के लिए योगदान नहीं देती है।
- स्त्री की मुक्ति या प्रगति तभी सार्थक हो सकती है जब उसकी लड़ाई पुरुष से न होकर दोषपूर्ण व्यवस्था रूढ़ धार्मिक मान्यता, दोहरी मूल्य पद्धति से हो।[4]

---

1 गर्ग मृदुला–चुकते नहीं सवाल, सामयिक प्रकाशन, 1999, मूल्य 150 रूपए
2 वही, पृ.279
3 वही, पृ.49
4 वही, पृ.65

- सत्ता में आने पर स्त्री के द्वारा अनाचार–अत्याचार औरत की ईर्ष्यालु प्रवृति, माँ द्वारा कमाऊ लड़की का आर्थिक शोषण के रूप में होता है। पचपन खंभे लाल दीवारें की सुषमा ऐसी ही पात्र है।[1]
- जैसे ही स्त्री–पुरुष के बराबर खड़ी होती है, पुरुष को अनिष्ट की सम्भावनाएँ नजर आने लगती है।[2]
- नागरिक संहिता में कई विसंगतियों पर मृदुला गर्ग कहती हैं –
    - i. पति की आय में पत्नी की हिस्सेदारी नहीं।
    - ii. सम्बन्ध विच्छेद होने पर उसके व बच्चों के भरण पोषण का प्रावधान नहीं।
    - iii. पैतृक सम्पति में उसका बराबर का हिस्सा नहीं है।
    - iv. खेती–कृषि का पूरा काम करने के बावजूद खेती–जमीन की मालकिन नहीं अनेक कमियाँ है,[3]
- मृदुला गर्ग कानूनी खामी को दर्शाती है – स्त्री के निजी जीवन का सेक्स से सम्बन्ध नहीं है। स्त्री प्रताड़ना में बाल विवाह जैसी सामाजिक कुरीति है। जब तक प्रबुद्ध समाज में सेक्सुअल सामंती पूर्वग्रह रहेंगे आम स्त्री प्रताड़ित होकर न्याय से वंचित रहेगी।[4]
- कथाकार ने महिला आरक्षण के मुद्दे पर स्पष्ट कहा है कि – शिक्षा संस्थानों, नौकरियों, पंचायतों में आरक्षण ना काफी हैं। मुफ्त शिक्षा का प्रावधान हो। प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य हो। सरकार न्यूनतम आर्थिक मदद करे। स्त्री चेतना की व्यापक वृद्धि असमानता के उन्मूलन से होगी।[5]
- स्त्री के तीन स्तर है – जीवन यापन के –
    - (i) विशिष्ट वर्ग – जिसे शक्ति चाहिए।
    - (ii) साधारण जिंदगी की तलाश जिसके सपने हैं।
    - (iii) पता नहीं सत्ता क्या होती है ? सपने क्या होते हैं ?

---

1 वही, पृ.66
2 वही, पृ.69
3 वही, पृ.70
4 वही, पृ.70
5 वही, पृ.72

कानून क्या होता है ? उसे दो वक्त की रोटी मिल जाए तो नसीब को सराहती है। इसी तीसरे वर्ग को – कल्याण, विकास एवं सशक्तीकरण की आवश्यकता है।[1]

- नारीवाद – इतिहास और मौजूदा व्यवस्था को परखने–समझने की एक भिन्न जीवन दृष्टि है।[2] भारतीय समाज में प्रबुद्ध स्त्री–पुरुष नारीवाद का अर्थ लेते हैं–
  - (i) पुरुषों से घृणा करने वाली औरत
  - (ii) भदेस वेषभूषा से सज्जित स्त्री
  - (iii) मुँहफट तेज तर्रार परिचय का अनुकरण करने वाली महिला[3] कठगुलाब उपन्यास में विपिन नारीवाद का समर्थक है।
- लेखिका प्रश्न उठाती है – हारा हुआ पुरुष स्त्री को दाँव पर कैसे लगा सकता है (संदर्भ–द्रौपदी) क्या नारी पुरुष की सम्पत्ति है ? कोई भी पुरुष स्त्री का स्वामी क्यों है ?"[4]
- आज भी हिन्दुस्तानी औरत यह नहीं जानती कि उसका अपना कोई मूल्य है या नहीं ? वह बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के बावजूद कहती है – कुछ नहीं करती। वह जानती है – वह न होगी तो परिवार नष्ट हो जाएगा वह कठिन परिश्रम करके परिवार की जरूरतों को पूरा करती है।"[5]
- फेमिनिज्म को भारतीय संदर्भ में स्पष्ट करते हुए वह कहती है कि "हर राजनीतिक–आर्थिक निर्णय में महिलाओं की भागीदारी जरूरी है। नारीवाद का अर्थ अन्नपूर्णा और शक्ति का समन्वय जरूरी है। जिसका भारत में – प्रसन्नभाव अन्नपूर्णा का है तथा रौद्रभाव काली का है।[6] महिलाओं की अर्थव्यवस्था में भागीदारी नारी प्रयत्नों में नारी सशक्तीकरण का अभिन्न अंग है।

शील की समस्या का मुद्दा

नारी विमर्श में शील की समस्या का मुद्दा उठाते हुए वह स्पष्ट करती है कि नारी की समस्या शील की है। शील की रक्षा की है। शील पर आक्रमण की है।[7] इस प्रकार मृदुला गर्ग ने नारी स्वतंत्रता के विभिेन्न मुद्दों पर गंभीर विमर्श प्रस्तुत किया है।

---

1 वही, पृ.72
2 वही, पृ.73
3 वही, पृ.73
4 वही, पृ.74
5 वही, पृ.74
6 वही, पृ.79
7 वही, पृ.44

2.8 राज किशोर स्त्री के लिए जगह

यह पुस्तक[1] दर्शाती है कि पिछले दो–तीन दशकों में स्त्रियाँ जीवन के हर क्षेत्र में आगे आयी हैं। पुरुष के साथ कदम से कदम बढ़ाती हुई स्त्री समाज के प्रति अपने हर दायित्व को बखूबी निभा रही है किन्तु इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता है कि इन वर्षों में स्त्रियों के साथ बलात्कार, अपहरण, सामाजिक उत्पीड़न की घटनाओं में लगातार वृद्धि हुई है।

स्त्री के प्रति व्यावसायिक व भोगवादी नजरिया तेजी से पनपा है। उसे व्यावसायिक प्रचार–प्रसार के साधन के रूप में पेश किए जाने की एक त्रासद प्रतिद्वन्द्विता चल पड़ी है। स्त्री स्वातन्त्र्य के नाम पर आधुनिक वेषभूषा, फूहड़पन स्वच्छन्द श्रृंगार को स्त्री स्वातन्त्र्य का पर्याय मान लिया गया है। पुरुष शासित समाज में आज भी स्त्री पुरुष की गुलाम और सामाजिक प्रताड़नाओं का शिकार है।

राज किशोर ने प्रस्तुत पुस्तक में आज के प्रश्न के माध्यम से सम्पादक की बात को प्रस्तुत किया है – स्त्री क्या चाहती है ? के रूप में प्रस्तुत किया है तथा गंभीर चिन्तन किया है, पुरूष स्त्रियों से होड़ लेने में लगे हैं। स्त्री का रहस्य लोक पुरुष ने ही बनाया है। स्त्री जो कई हजार वर्षों से पराधीन है अब हर प्रकार की स्वतन्त्रता का अनुभव कर रही है लेकिन अनेक स्त्रियां यह नहीं जानती कि इस स्वतंत्रता का क्या करे?

इधर पुरुष यह तय नहीं कर पाया कि नव स्वतंत्र स्त्री के साथ कैसे पेश आया जाए ? स्त्री को छलनामयी/रहस्यमयी बताना, एक मिथक है।[2] आज हर जगह उन बंधनों से अवगत कराया जा रहा है जो स्त्री होने के कारण उन पर स्वाभाविक रूप से लागू होते हैं। श्रीमती अलका सरावगी का सवाल है – स्वाधीन होने के बाद क्या स्त्री भी अंधी महौवाकांक्षा की उस कपट दौड़ में शामिल हो जाए, जिसका नाम आधुनिक सभ्यता है ? स्त्री बाजार में पैर रखते ही बाजारू बना दी जाती है, कौन निर्धारित करता है ?[3]

रवीन्द्र वर्मा इसे सिर्फ ताकत का खेल कहते हैं। सवाल यह भी है कि स्वतन्त्र और स्वाभिमानी स्त्री क्यों समाज को हमेशा अपने खिलाफ नजर आती है ? लीला दुबे

---

1 राज किशोर–स्त्री के लिए जगह, वाणी प्रकाशन दिल्ली, 10002, 1994, Rs. 200/- ISBN 978-81-7055-365-6

2 वही, पृ.5

3 वही, पृ.6

का मानना है कि स्त्री अगर धरती है और पुरुष उसमें बीजारोपण करने वाला किसान तो स्त्री की हैसियत उपनिवेश की हो सकती है।[1] राजकिशोर स्वीकार करते हैं कि – स्त्री खुले में पैर रखना सीख रही है और जीवन के हर क्षेत्र में उसकी व्यापक उपस्थिति से अब इन्कार नहीं किया जा सकता। स्त्री की नयी सक्रियता तथा बढ़ता हुआ आत्म विश्वास रेखांकित है। प्रश्न यह ज्वलंत है कि क्या स्त्री पुरुष–अपरिचय और मुठभेड़ की युग्म बुराइयों से मुक्त होकर एक दूसरे के साथ सहज रिश्ता नहीं बना सकते ?[2]

लड़की का व्यवहार

पूर्णिमा वाजपेयी–70 से 94 तक लेख में लड़की के व्यवहार को व्यक्त करती है– मैं झेंपू थी – यह लज्जा थी, मैं संकोची थी – यह शील था, मैं दब्बू थी – यह सहनशीलता थी।[3]

एक अन्य लड़की माँ बाप की गरीब संतान, तीनों बेटियों से सबसे छोटी, माता पिता शादी का खर्च उठाने में असमर्थ, फिर भी पढ़ने में होशियार, शांत सौम्य समझदार, न खेलती न विवाद में पड़ती, खिंची–खिंची सी रहती पारिवारिक सम्बन्धों पर मौन साधती क्या करेगी ? उत्तर था साध्वी बनेगी। बात जमी नहीं।[4] कभी मत भूलो स्त्री हो किसी भी वक्त टूट कर बिखर सकती है। जिन्दगी का कोई भी फैसला सोच समझ कर करना। क्यों स्त्री जब मन चाहे अनुसार नहीं जी पाती तो खुद मौत को आमंत्रण देती है ? क्या यह अनिवार्य है ? (पृ.15) एक लड़की से 60 वर्ष का वृद्ध कहता है – होटल में वक्त नहीं कटता। कभी आओ न मिलने उसके चेहरे पर वहशीपन, कामुकता थी। स्त्री का उत्तर क्या तुम्हारी बेटियाँ तुम्हारे साथ सुरक्षित महसूस करती है ? (पृ.18) स्त्री के सामने ऐसा दर्शन क्यों है – ये (पति) जैसे चाहते हैं, वैसे ही तो चलना होगा। (पृ.18)

परीक्षण का मुद्दा

एक औरत कहती है "पाँच बेटियाँ हो चुकी है। आदमी बेटा चाहता है। आखिर मैं भी हाड़ माँस की हूँ। कब तक जनती रहूँ ? अगर बेटी ही होनी है तो क्यों न पहले ही गिरवा दूं ?" (पृ. 9)

---

1 वही, पृ.6–7
2 वही, पृ.7
3 वही, पृ.11
4 वही, पृ.12

अवैध सम्बन्ध का मुद्दा :

यदि देवर भाभी में अवैध सम्बन्ध है। भाभी के गर्भ ठहर जाता है तो स्त्री ही दोषी है। पति की दृष्टि में बदचलन, घर से निकाला जाता है, परन्तु भाई को निकाला नहीं ? क्यों ? गर्भ गिरवाए तो सब चलता है लेकिन कब तक ? (पृ.37)

परदे का मुद्दा

एक बार किसी ने कहा – हम तीनों भाई पढ़े लिखे हो, तुम्हें पत्नी के साथ खाना चाहिए परदा दूर करना चाहिए। हमारे घरों में स्त्रियाँ यह नहीं चाहेगी ? लेकिन कब तक ? परदा कब हटेगा ? क्या नहीं हटना चाहिए ? (पृ.38)

परस्पर समभाव का मुद्दा

पत्नी के सिर में दर्द, पति ने कहा – लाओ मैं दबा दू ? वह राजी नहीं हुई। यह पाप वह कहाँ रखेगी ? क्या यह पाप है ? क्या दोनों एक–दूसरे के सुख–दुःख के भागीदार नहीं है ? यदि है तो फिर ऐसा दुराव क्यों ? (पृ.39)

राजकिशोर का मानना है कि – "नारी सामान्य अवस्था में नहीं लड़ती। खुद को सदा असामान्य अवस्था में लड़ने को मजबूर पाती है जिससे उसका हारना निश्चित होता है। इससे दूसरी औरतों का भी मनोबल गिरता है यदि सही समय पर सही लड़ाई लड़े तो विजय प्राप्त हो सकती है। जहाँ उसे पैरों की जूती बनाकर रखा जाता है, वह वहाँ क्यों नहीं लड़ती ?"[1] नारी हिटलर या कबीर से जीत पाएगी ? हिटलर उसका कत्ल कर देगा और कबीर उसे माया कहकर छोड़ देगा तब नारी क्या करेगी ? कोई पुरुष के रूप में फकीर रहना चाहता है तब नारी क्या करे ? नारी कहेगी – क्या कर लाए।

पति दाल रोटी जितना कमा कर लाता है क्या स्त्री सन्तुष्ट हो जाए ?

ना–पर और अधिक कमाने के लिए कहे।

पुरुष और अधिक कमाने से मना कर दे तो पत्नी क्या करेगी ?

स्वयं कमाए या पति से झगड़ा करे ?

यदि संतुष्ट न रहे तो गृह त्याग ?

क्या समाज स्त्री/पुरुष को गृह त्याग करने का अधिकार प्रदान करे ? (पृ.89) लेखक ने विचारोत्तेजक सवालों की छानबीन विस्तार से की है तथा समाज में स्त्री की वास्तविक जगह की तलाश में ठोस वैचारिक जमीन तैयार की है।

---

1 वही, पृ.89

2.9 आशारानी व्होरा – नारी शोषण आईने और आयाम

यह पुस्तक नेशनल पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली से 1982 में प्रकाशित है। पुस्तक में स्त्री शोषण के विविध आयामों पर विस्तार से विचार किया गया है। शोषण के मूल में हमारे नैतिक मूल्य हैं। लेखिका ने स्त्री पुरुष दोनों ही वर्गों को इस स्थिति के लिए बराबर रूप से जिम्मेदार माना है। लेखिका का मानना है कि – "नारी के लिए काँटों भरा विषम मार्ग पुरुष समाज ने स्वयं तैयार किया है। वही उसे अपनी मुक्ति के मार्ग का सबसे बड़ा अवरोध समझता रहा। बौद्ध युग में महात्मा बुद्ध भी नारी को संघ में दीक्षित कराने के पक्ष में नहीं थे।"[1]

भारत में स्त्रियों को पश्चिम की तरह संघर्ष नहीं करना पड़ा। यहाँ पर भारतीय मनीषियों, पुरुषों तथा समाज सुधारकों ने पहल की। नारी को अधोमुखी स्थिति से बाहर निकलने को प्रेरित किया। स्त्री की भूमिका सहयोगी की थी न कि प्रतियोगी की।"[2] भारत में महिला दिवस प्रेरणा दिवस के रूप में तथा पश्चिम में संघर्ष दिवस के रूप में मनाया जाता है। यहाँ की नारी अपने जातीय अधिकारों के लिए लड़ी व आज भी लड़ रही है। उसने पुरुष के साथ कंधे से कंधा भिड़ाते हुए देश की आजादी के लिए, राष्ट्र की मुक्ति के लिए लड़ाई लड़ी।[3]

2.10 ज्योति सिंह – मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता का प्रश्न

यह पुस्तक[4] दर्शाती है कि पुरुष और स्त्री एक दूसरे के पूरक होकर भी स्वतंत्र है। प्रत्येक देश–काल में दोनों के अस्तित्व को लेकर भिन्न प्रकार से मान्यताएँ बनती रही हैं और उन्हें सिद्ध किया जाता रहा है। इसी प्रक्रिया में नारी के अस्तित्व पर अनेक प्रश्न उठाए जाते रहे हैं और उसकी स्वतंत्रता, स्थिति को, वजूद को दोयम दर्जे का सिद्ध करने के प्रयास भी निरंतर होते रहे हैं। आज के इस आधुनिक दौर में, नारी अस्मिता की खोज साहित्य तथा समाज में निरन्तर जारी है। डॉ. ज्योति सिंह ने नारी विमर्श को ऐतिहासिक संदर्भों में देखते हुए, उसकी सामाजिक स्थिति का क्रमिक विकास, संघर्ष, भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टिकोण, नारी आन्दोलन का स्वरूप तथा नारी सशक्तीकरण में

1 व्होरा आशारानी – नारी शोषण आईने और आयाम, पृ.9
2 व्होरा आशारानी – भारतीय नारी दशा दिशा, पृ.12
3 वहीं – पृ. 155
4 सिंह ज्योति – मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता के प्रश्न – हिन्दी साहित्य निकेतन बिजनौर, उत्तरप्रदेश, 2008, Rs. 300/- ISBN-978-81-89790-51-6

उसकी भूमिका को रेखांकित करने का स्तुत्य प्रयास किया है। लेखिका का मानना है कि मृदुला गर्ग ने नारी होकर, नारी अस्मिता विषय पर सार्थकता की तलाश की है। जीवन में जूझने तथा अस्तित्व को कायम रखने की कोशिशें लगातार लेखन के माध्यम से की है।

उनके उपन्यासों का केन्द्रीय विषय – व्यक्ति स्वातंत्र्य की खोज है। अनित्य के पात्रों काजल बैनर्जी, संगीता, प्रभा, शुभा, श्यामा, स्वर्णा ने अपने अस्तित्व के प्रति पूर्ण सजगता दर्शायी है। इन चरित्रों ने उनके रचना संसार को जानने के लिए प्रेरित किया है। नारी इक्कीसवीं सदी में भी गरीबी सामाजिक रूढ़ियों के तले पिस रही है। मृदुला गर्ग ने आर्थिक दृष्टि से – उच्च, मध्यम, निम्न तीन वर्गों की स्त्रियों को स्थान देकर, अनेक जीवन से जुड़ी समस्याओं का अध्ययन अंकन, अपने साहित्य में किया है। उच्च वर्ग – अंतर्जगत निम्न वर्ग – रोटी – रोजी की समस्याओं से ग्रस्त और त्रस्त है। लेखिका ने व्यापक चिंतन का परिचय दिया है व नारी अस्मिता पर बहुआयामी चिंतन किया है। यह चिंतन नारी की – सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों के संदर्भ में है। विवाह को लेकर सामाजिक संस्थाओं में नारी की स्थिति, रवैया, परिवर्तन के प्रयासों का विवेचन करते हुए, आरोप, नैतिकता पर नवीन दृष्टिकोण, कामकाजी महिलाओं की स्थिति को विशिष्ट स्थान प्रदान किया है।

डॉ. ज्योति सिंह ने इस कृति में – नारी अस्मिता – अर्थ व स्वरूप, मृदुला गर्ग की नारी अस्मिता संबंधी दृष्टि, नारी अस्मिता – सामाजिक संदर्भ, (विवाह पूर्व के विवाहेतर संबंध, परिवार – नारी की भूमिका – माँ पत्नी प्रेमिका बहिन, बेटी, बहू, सास) नैतिक मूल्य और नारी, नारी अस्मिता – आर्थिक तथा सांस्कृतिक संदर्भ तथा अभिव्यक्ति के उपकरण के संदर्भ में विवेचन किया है।

लेखिका का मानना है कि नारी अस्मिता से जुड़े प्रश्न – अस्तित्व, आकांक्षाओं, मुक्ति को लेकर है।[1] पुरुष प्रधान समाज को बोलने वाली स्त्री कभी भी गले नहीं उतरी, स्त्री को देवी कहकर उसे समस्त मानवीय अधिकारों से वंचित कर दिया गया। नारी के अधिकारों का प्रश्न समूची मानवता का प्रश्न है।[2] आज की नारी के मन में असंतोष इस बात को लेकर है कि नारी को उसके अधिकारों से वंचित क्योंकिया जाता है ? शारीरिक संरचना को लेकर उसके साथ भेदभाव करना कहाँ तक उचित है ?[3] परिवार तथा समाज

1 वही, पृ.11

2 वर्मा रूपरेखा, हंस, जनवरी 2002, पृ. 84

3 सिंह ज्योति – मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता के प्रश्न – हिन्दी साहित्य निकेतन बिजनौर, उत्तरप्रदेश, 2008, Rs. 300/- ISBN-978-81-89790-51-6, पृ.12

के मुखिया – "पुरुष ने नारी को दयनीय तथा पराश्रित बना दिया। नारी ने इसे जीवन चक्र मानकर स्वीकार कर लिया। पति से अलग उसको अस्तित्वहीन करार दिया गया।"[1] पुत्र संतान की कामना के पीछे भी वंश वृद्धि के साथ पुरुष तंत्र को बनाए रखा गया।"[2] यह कैसी विडम्बना है कि जो नियम पुरुष के लिए अधिकार है, बेटी स्त्री के दमन और शोषण को बढ़ावा देते हैं। लिंग के आधार पर भेदभाव स्थापित करते हैं जिसके फलस्वरूप आधुनिक युग में नारी अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष, आक्रोश, पीड़ा से उपजे आँसू को अभिव्यक्त करती है। मुक्ति की तलाश करती है। क्यों पुरुष की अधीनता में उसकी स्थिति दासी के समान है ?"[3]

रामायण काल में

- राम ने सीता का परित्याग किया।
- सीता के लिए जीवन की अंतिम मंजिल राम है।
- राम के लिए अंतिम मंजिल सीता नहीं है।
- राम ने जन्म जन्मान्तर में पत्नी के रूप में सीता मिलने की कोई प्रार्थना सीता के समान नहीं की।
- पत्नी की खातिर वह राज्य त्याग कर वन में नहीं जा सके।[4]

द्रौपदी

(i) स्त्री या पत्नी होने के अपराध के कारण पुरुष की सम्पत्ति कैसे हो गई?

(ii) पति ने पत्नी को जुएँ के दांव पर क्यों लगाया ?

(iii) क्या दाँव पर लगाने से पहले द्रौपदी से पूछा ?

(iv) उसे पाँच–पाँच पत्नियों की भार्या होना क्यों स्वीकार करना पड़ा ?

(v) द्रौपदी को भरी सभा में चीख चीखकर पुकारने पर भी न्याय क्यों नहीं मिला ?

(vi) क्यों विवश हुई वह प्रतिशोध की अग्नि में जलकर – दुशासन की छाती के लहू से बाल धोने के लिए ?[5]

---

1 वही, पृ.13
2 वही, पृ.14
3 वही, पृ.15
4 कापडिया – कुंदनिका – दीवारों के पार : आकाश – भूमिका
5 वही, पृ.17–18

नारी एक वस्तु

लेखिका प्रश्न करती है कि नारी को एक वस्तु माना गया। कहाँ तक उचित है ? स्त्री को – जीतना – हारना, दाँव पर लगाना, दान में देना क्या स्त्री का निजत्व कुछ नहीं ? पूंजीवादी व्यवस्था का षड्यंत्र है –

(i) स्त्री को गुलाम बनाए रखना।

(ii) सौंदर्य और अर्थ के घटाटोप में उलझाए रखना।

(iii) स्वतंत्र चिन्तन और वास्तविक अस्मिता से दूर रखना।[1]

पुरुष ने स्त्री को अपनी रक्षा के उपाय के लिए हथियार नहीं दिए, युद्ध में पारंगत नहीं किया, आहुति देने के लिए शिक्षा अवश्य दी।[2] पुरुष मौन शीर्षक की भूमिका निभाता रहा है।[3]

आदिकाल में नारी

- युद्धों के केन्द्र में रही।
- नख शिख वर्णन व संयोग का चित्रण रहा।
- राजाओं की विलासिता का साधन रही।

भक्ति काल के कवियों ने –

(1) माया

(2) कंचन कामिनी

(3) साधना मार्ग की कंटक कहा।[4]

रीतिकाल में केलि क्रीडा प्रमुख थी मीरा ने कृष्ण प्रेम के बल पर समूचे पुरुष समाज से टक्कर ली। आधुनिक काल में यशोधरा, सीता, उर्मिला पात्रों की वाणी दबी घुटी है।[5] प्रेमचंद के गोदान की झुनिया, धनिया सारे पुरुष समाज से टक्कर लेने की क्षमता रखती है। झुनिया कहती है – "सर्वस तो तभी पाओगे जब अपना सर्वस दोगे (गोदान)[6] गुनाहों का देवता की पत्नी कहती है "अगर विवाह संस्था हट जाए तो कितना

---

1 वही, पृ.18
2 वही, पृ.19
3 वही, पृ.20
4 वही, पृ.28
5 वही, पृ.29
6 गोदान प्रेमचन्द, पृ.49

अच्छा हो। पुरुष और नारी में मित्रता हो, बौद्धिक मित्रता और दिल की हमदर्दी।[1] इस प्रकार आधुनिक काल में नारी अस्मिता के नवीन आयामों में प्रमुख है –

नैतिकता की नवीन व्याख्या, दाम्पत्य सम्बन्धों में व्यक्तिवाद, नारी का राजनीति में प्रवेश, नारी चेतना की सबल अभिव्यक्ति, भारतीय नारी के जीवन पर पाश्चात्य जीवन शैली का प्रभाव[2]

ऐ लड़की–कृष्णा सोबती स्त्री सम्बन्धी आचरण व सामाजिक नैतिकता पर प्रश्न उठाती है। "रुकोगी नहीं राधिका" (उषा प्रियंवदा) की नायिका अपने निर्णय स्वयं लेती है। "शेष यात्रा" की नायिका अपने प्रति सजग है। पराए पुरुषों से सम्बन्धों की खुलकर स्वीकृतियों अनारो (मंजुल भगत) इदन्नमम् – मैत्रेयी पुष्पा की कुसुम भाभी, मित्रों मरजानी की मित्रों (कृष्णा सोबती) मनीषा उसके हिस्से की धूप मृदुला गर्ग इत्यादि में हुई है। यह

(i) विवाह संस्था को अस्वीकार है,

(ii) संभोग में रत रहने का अपराध न मानना है,

(iii) मुक्ति की सदम्य पिपासा है।[3]

कतिपय प्रश्न प्रासंगिक है –

- क्या औरत सारी परम्पराओं तथा रूढ़ियों को तोड़कर नई दुनिया रचने का मादा रखती है ?
- क्या उसकी स्वतंत्रता का अभिप्रायः उच्छृंखल हो जाना है ?
- क्या पुरुष से विलग उसका कोई अस्तित्व ही नहीं है ?
- क्या उसका जन्म केवल कोख के लिए हुआ है ?
- क्या पुरुष के वांछित–अवांछित स्पर्श में वह पवित्र–अपवित्र हो जाती है ?
- क्यों यौन शुचिता का राक्षस उसके समक्ष भीषण अट्टहास करता है ?[4]
- नारी प्राकृतिक संरचना के लिए प्रकृति को क्यों कोसे ?
- क्या बलात्कार पुरुष की पशु विकृति की मानसिकता नहीं है ?
- क्या बलात्कार द्वारा पुरुष नारी के मन में भय पैदा करता है ?[5]

---

1 गुनाहों का देवता – धर्मवीर भारती, पृ. 102

2 सिंह ज्योति – मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता के प्रश्न – हिन्दी साहित्य निकेतन बिजनौर, उत्तरप्रदेश, 2008, Rs. 300/- ISBN-978-81-89790-51-6, पृ.31

3 वही, पृ.33

4 वही, पृ.35

5 वही, पृ.36

- यदि नारी – अपनी इच्छाओं की पूर्ति की माँग करती है तो वह अश्लील क्यों है?
- नैतिकता की दुहाई देकर स्त्री का दमन किया जाना कहाँ तक उचित है ?
- नैतिकता के आधार पर नारी को दूसरे दर्जे पर खड़ा कर देना क्या पुरुष का नैतिक कर्म है ?
- क्यों स्त्री को हीन ठहराया जाता है ?
- यदि नारी अपनी शक्ति जानती है तो फिर वह शुद्र लालसाओं के लालच में बेड़ियाँ पहनने को क्यों प्रस्तुत होती है ?
- क्या नारी को सुरक्षा भावना सबकुछ सहने को प्रेरित–विवश करती है?[1]

डॉ. ज्योति सिंह स्वीकारती है कि –

(1) "नारी अस्मिता का अर्थ – समस्त नारी जगत को मानव के पद पर प्रतिष्ठित करना है।"[2]

(2) स्त्री और पुरुष मात्र परस्पर सहयोगी ही नहीं, सहभोगी भी नहीं, सहभागी भी है। अर्द्धनारीश्वर की भाँति – एक के बिना – दूसरे का अस्तित्व पूर्ण नहीं है।[3]

जीवन चक्र भी यही कहता है – स्त्री–पुरुष के संसर्ग से पुनर्सृजन होता है। शिशु जन्म लेता है। यौवन की दहलीज पर कदम रखने पर विपरीत लिंगी साथी की आवश्यकता होती है जो उसे मानसिक व शारीरिक सन्तुष्टि दे सके। प्रकति ने स्त्री–पुरुष को इसी क्रम में स्वीकार किया है।? लिंगभेद – मर्द समाज ने तथा शारीरिक भेद प्रकृति ने दिया है। प्राकृतिक भेद बना रह सकता है, सामाजिक भेद ठीक होना ही चाहिए यही स्त्री विमर्श का नया योगदान है।

आधुनिक नारी के बारे में विचार

(i) आधुनिक नारी – चेतना सम्पन्न है।

(ii) मर्दवादी सोच के सभी सिद्धान्त खारिज करती है।

(iii) यौन शुचिता के हौवे से वह नहीं डरती है।

(iv) उसने देवत्व की परिभाषा को नकार दिया है।

---

1 वही, पृ.37
2 वही, पृ.38
3 वही, पृ.38

(v) दुनिया को अपने दृष्टिकोण से देखना प्रारम्भ किया है।

(vi) अवसर पाते ही बोलती है, दब कर नहीं रहती।

(vii) शोषण को सहपाने में असमर्थ है।

(viii) यौन शुचिता, पवित्र कोख, अनछुई योनि को पुरुष समाज का षड्यंत्र मानती है।[1]

डॉ. ज्योति सिंह का निष्कर्ष है कि नारी अस्मिता का अर्थ–स्त्री पुरुष के बीच घटने वाले संबंधों को नकारे बिना पारम्परिक सम्बन्धों से मुक्ति है।[2]

मृदुला गर्ग की नारी अस्मिता संबंधी दृष्टि पर डॉ. ज्योति सिंह ने समग्रतः विश्लेषण प्रस्तुत किया है। मृदुला गर्ग को यह अखरता है कि साहित्य लेखन में महिलाओं को मुख्य धारा से काट कर देखा गया है।

आलोचकों की दृष्टि में –

मध्य वर्ग की औरतों का खाली समय में किया गया लेखन, अनुभव की कमी, सीमित, संकुचित किस्म का लेखन बताया।[3]

नारी अस्मिता आन्दोलन की लड़ाई – मर्दवादी सोच, सड़ी गली मान्यताओं से है।[4]

नारी चेतना –

जो दृष्टि नारी की, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक छवि के तिलिस्म को तोड़े।

नारी को –

कानूनी, राजनीतिक, आर्थिक अधिकारों का मिलना तभी सार्थक होगा जब उन्हें सामाजिक स्वीकृति मिले।[5] मेरी कहानी की पात्रा – मीता को यह अधिकार है कि वह कब मातृत्व स्वीकार करे और कब न करे।[6]

नारी की मानसिक शक्ति –

- अन्याय से लड़ने का साहस देती है।
- बेटे – बेटी का भेद नहीं करती।

---

1 वही, पृ.40
2 वही, पृ.41
3 वही, पृ.45
4 वही, पृ.47
5 वही, पृ.53
6 वही, पृ.54

- दान–दहेज की बुराईयों को समाप्त करने की सोचती।
- शिक्षा की असमानता को अवसर की असमानता मानती।

रंग ढंग में मृदुला गर्ग :

सेक्स की अतिवादिता तक चित्रण प्रेम का पर्याय मानती है। उसे पेशेवर दृष्टि से देखने का विरोध करती है। वह पूछती है – क्या बच्चों का पालन–पोषण कोई स्त्री बाध्य होकर करती है।"[1] स्त्री को हर काम के बदले अनुचित माँग नहीं रखनी चाहिए, परिवार का सदस्य, छोटे–बड़े काम के लिए पैसे माँगने लगे तो स्नेह खत्म हो जाएगा।"[2] परिवार ढाल की तरह व्यक्ति की कथा करता है। सुरक्षात्मक भावना परिवार बनाता है।"[3] हमारे देश में स्त्री आती है बहू बनकर, किन्तु रहती है पत्नी बनकर, विवाह जीवन का अनिवार्य आश्रम है।"[4] कठगुलाब में नारी पात्रों में माँ बनने की अदम्य लालसा है। वह मानती है परिवार हमें शाख ही नहीं जड़ें भी देता है।"[5] चित्तकोबरा में खुला सेक्स चित्रण–प्रेमहीन शारीरिकता के विरोध को दर्शाता है।"[6] समग्रतः वे नारी को गर्भाशय की कैद से मुक्त करके, मातृत्व के पोषक तत्व की भाँति स्वीकारती हैं, जिसमें सबका कल्याण निहित हो।"[7]

आधुनिकता का नारा लगाने वाली लेखिका –

- स्त्री पुरुष संबंधों के स्वतंत्र अस्तित्व की पक्षधर है।
- वैवाहिक बन्धन को अस्वीकृत करती है। कठगुलाब में अनुरक्ति है।
- इनकी रचनाओं को निकष पर नहीं रखा जा सकता।[8]
- इनके लेखन में कुंठा नहीं है।[9] शब्द नगाड़े पर चोट करते प्रतीत होते हैं।[10] कुल मिलाकर चित्रण प्रासंगिक है।

---

1 गर्ग मृदुला रंग ढंग – 78–79
2 वही, पृ.79
3 वही, पृ.47
4 वही, पृ.27–28
5 वही, पृ.47
6 सारिका 16–30 नवम्बर 1984, पृ.47–48
7 सिंह ज्योति – मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता का प्रश्न, पृ.70
8 वही, पृ.158–159
9 वही, पृ.162
10 वही, पृ.163

2.11 शफिका दस्तगीर मुलाणी ममता कालिया के लघु उपन्यासों में नारी विमर्श

यह पुस्तक[1] ममता कालिया के लघु उपन्यासों –

- एक पत्नी के नोट्स, लड़कियाँ, प्रेम कहानी के सन्दर्भ में केन्द्रित हैं। इसमें ममता कालिया की –
  - नारी विषयक विचारों की सक्षमता, नारी के बारे में दृष्टिकोण, नारी जीवन की समस्याओं का गम्भीर अध्ययन, नारी चेतना का परिचय प्रस्तुत होता है।[2] ममता कालिया की नारी विमर्श विषयक संकल्पनाओं में प्रमुख हैं –

(i) महिला प्रकृति की अनोखी रचना है।

(ii) सृजन की प्रणेता है।

(iii) सृष्टि के विकास क्रम में उसका योगदान है।

(iv) मानव जीवन की जन्मदात्री है।

(v) उसे सौन्दर्य, दया, ममता, भावना, संवेदना एवं समर्पण की मूर्ति माना गया है।

(vi) वह समाज रूपी गाड़ी का एक पहिया है।[3]

प्रारम्भिक दौर में स्त्री के विद्रोह में शालीनता थी।[4] बाद में उग्र तेवर दिखे।[5] जिससे समाधान की अपेक्षा जटिलताएं उभरी। स्त्री विमर्श का मूल स्वर प्रतिशोधात्मक नहीं है। यह स्त्री की मुक्ति की कामना, बराबरी, सामाजिक न्याय, स्वत्व बोध व अस्मिता का स्वर है।[6]

नारी विमर्श –

- पुरुष सत्ता द्वारा शोषण का आंकलन करता है।
- उसके विरूद्ध संघर्ष करना।
- नारी द्वारा उसके प्रति मनुष्य रूप का व्यवहार करने की अपेक्षा में निहित है।[7]

---

1 मुलाणी – शफिका दस्तगीर – बोहरा पब्लिशर्स, इलाहबाद, 211006, 2016, 395/- ISBN-978-81-7889-082-1

2 वही, पृ.5

3 वही, पृ.50

4 वही, पृ.51

5 वही, पृ.52

6 वही, पृ.52

7 वही, पृ.53

कठगुलाब की नारियां पुरुष से घृणा करती है, आक्रामक होती है।[1] अपनी सलीबें की मीना जनजागरण का काम[2] कर बलात्कार के विरूद्ध आन्दोलन की राह पकड़ती है (नमिता सिंह) स्त्री वर्ग के सामने उभरी समस्याएँ।

आज के दौर में स्त्री वर्ग के सामने उभरी समस्याएँ इस प्रकार है – अकेलेपन की समस्या, पुरुष समाज की स्त्रियों के प्रति बेईमानी, आर्थिक समस्या , स्त्री का शोषण इत्यादि ममता कालिया चाहती है समाज में संतुलन कायम हो एवं स्त्री–पुरुष सम्बन्ध सशक्त तथा स्थाई बने। ममता कालिया परम्परागत जीवन दृष्टि को नकारात्मक मानती है तथा परिवर्तनशील जीवन मूल्यों को स्वीकारने के स्थान पर स्वस्थ जीवन मूल्यों को आत्मसात करती है।[3] ममता कालिया के उपन्यासों में नारी अबला नहीं, वह समाज में अपना अस्तित्व खोजती है। समस्याओं से जूझती है। जीवन की सार्थकता का नया मार्ग तलाशती है। वह

– स्वतन्त्र है, आत्म निर्भर है, भौतिक समानता से युक्त है, सुख को प्राप्त करती है।[4] एक पत्नी के नोट्स में नायिका की क्रियाएँ है –

– किताबें पढ़ना, लेक्चर तैयार करना, सेमिनार अटैंड करना, भाषण देना, घंटों खाली लेटना।[5]

लड़कियों की नायिका–लल्ली

- परिवार–पति की दखल अंदाजी से बचती है
- विवाह का प्रस्ताव ठुकराती है
- मुम्बई में अकेली रहकर नौकरी करती है
- विज्ञापन ऐजेंसियों में जोखिम भरा काम करती है।
- विज्ञापन आलेख की दुनिया में क्रान्ति कर दिखाने की हैसियत रखती है।[6]

संक्षेप में यह कृति एक स्त्री के रूप में ऐसी स्त्री की कल्पना प्रस्तुत करती है जो स्वतंत्र इकाई के रूप में अपनी अस्मिता की खोज करती है।

---

1 वही, पृ.63
2 वही, पृ.64
3 वही, पृ.70
4 वही, पृ.71
5 वही, पृ.73
6 वही, पृ.74

2.12 जगदीश्वर चतुर्वेदी – स्त्रीवादी साहित्य विमर्श

यह पुस्तक[1] दर्शाती है कि विगत 10 वर्षों में स्त्री साहित्य का एक नया उभार आया है। बड़े पैमाने पर औरतों की आत्म–कथाएँ आई है। स्त्री की लड़ाई के स्तर है मन, परिवार, समाज व विचारधारा।

इस पुस्तक में – स्त्री साहित्य के इतिहास लेखन की समस्याएँ, लोकप्रिय स्त्रीवादी काव्य, अभिजनवादी स्त्री काव्यधारा, स्त्रीवाद, प्रेम और राष्ट्रवाद, स्त्रीवादी कथा साहित्य में मूल्यांकन की समस्याएं, आधुनिक कालीन स्त्रीवादी पुरुष विमर्श तथा स्वातंत्र्योत्तर स्त्रीवादी विमर्श के अतिरिक्त लिंग भेदीय पुरूषवादी विमर्श, पितृसत्तात्मकता और साहित्य, एलेन शोवाल्टर का नजरिया, स्त्री भाषा की सैद्धान्तिकी, साहित्य सैद्धान्तिकी, स्त्री आत्मकथा का लक्ष्य है न्याय की तलाश एवं स्त्री आत्मकथा सैद्धान्तिक मानदंड शीर्षकों से आलेख है।[2] लेखक ने अपनी कतिपय संकल्पनाओं को पुष्ट किया है–

- स्त्री की उपेक्षा आधे यथार्थ की स्वीकृति है।
- स्त्री अंतर्विरोधों में जीती है। उन्हीं के बीच अपना आगे का मार्ग प्रशस्त करती है।
- स्त्री के प्रतिरोध का अध्ययन करने के लिए चुप्पी के पार जाकर झांकने की जरूरत है। स्त्री की चुप्पी ऐतिहासिक विकास का परिणाम है। जो उसके जीवन की बेड़ी थी। उसने प्रतिरोधक अस्त्र बदल दिए।
- स्त्रीवादी आलोचना में अनुभूति की प्रामाणिकता बुनियादी तत्व है।
- स्त्री की अनुभूतियों में सामान्य तत्व साधारणीकरण के बजाय विशिष्ट तत्व (आत्मकथा) का बोलबाला होता है।
- स्त्री की अस्मिता को प्राथमिकता देकर ही समाज एवं साहित्य के इतिहास में उसकी सर्जक एवं उत्पादक भूमिका की पहचान संभव है।[3]
- स्त्री की आत्मकथा में प्रतिरोध भाव है। पुरुष निर्मित व्यवस्था का प्रतिरोध जिसने स्त्री को अभिव्यक्ति के अवसर नहीं दिए।[4]
- स्त्रीवादी लेखिकाएं पुंसवादी भाषा में लिख रही है।[1]

---

1 चतुर्वेदी जगदीश्वर – स्त्रीवादी साहित्य विमर्श, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्टीब्यूटर्स, नई दिल्ली–110002, 2018, ISBN-978-81-7975-405-4 Rs.995/-

2 वही, अनुक्रम–(1–371)

3 वही, पृ.34

4 वही, पृ.125

निष्कर्षतः यही कहा जा सकता है कि – "आंतरिक संघर्ष में कोई लेखिका जितनी समर्थ रूप में उभर कर आती है उतने ही समर्थ रूप में वह अन्य मोर्चों पर भी संघर्ष कर पाती है।[2]

स्त्री विमर्श केन्द्रित अन्य कृतियों का प्रतिनिधि स्वरूप में संक्षिप्त, सूत्रात्मक किन्तु संश्लिष्ट सार्थक विवेचन

आज स्त्री विमर्श को लेकर नारी विषयक साहित्य प्रचुर मात्रा में लिखा जा रहा है। यहाँ पर सभी का विस्तृत अध्ययन प्रायोगिक दृष्टि से प्रासंगिक नहीं है। अतः स्त्री विमर्श केन्द्रित, अन्य उपलब्ध कृतियों का, प्रतिनिधि स्वरूप में – संक्षिप्त, सूत्रात्मक (निष्कर्ष परक) वस्तुनिष्ठ, संश्लिष्ट एवं सारगर्भित सार्थक रूप में विवेचन निम्नानुसार प्रस्तुत है –

मृणाल पाण्डे ने[3] – माना है कि विश्व की अधिकांश आबादी – महिलाएं व बच्चे हैं इसलिए किसी भी स्थिति में, किसी भी क्षेत्र में, किसी भी दृष्टि से इनकी अवहेलना करके ब्यौरा नहीं प्रस्तुत किया जा सकता। स्त्री के लिए घर, परिवार, शिक्षा, श्रम, हिंसा की खबरों, अश्लीलता का विरोध इत्यादि को नहीं छोड़ा जा सकता। प्रत्येक पक्ष को गंभीरता से लेना, देखने के विरूद्ध – महिला पत्रकारिता की यात्रा पर और तटस्थ रहकर मूल्यांकन करना पड़ेगा। 'बन्द गलियों'[4] आधारित है जो पत्रकारिता के क्षेत्र में नारी की पहचान बनने को रेखांकित करती पुस्तक है। ऐसी मान्यता को दर्शाया गया है कि बंदगलियों के चक्रव्यूह के विरूद्ध कलम चलाना स्त्री के लिए नए क्षितिज खोलना है।

बोउवार भी[5] मृणाल पाण्डे की ऐसी पुस्तक है जो स्त्री स्वास्थ्य पर केन्द्रित है। इस पुस्तक में स्त्री के यौन व प्रजनन स्वास्थ्य परक लेख–स्त्रियों की गर्भ, स्त्री–पुरुष शारीरिक सम्बन्ध, जन्म देने के सुख, विश्वासों की आधारशिला इत्यादि को केन्द्र में रखकर लिखी गई है। सभी में चिंता स्त्री की बेहतर स्थिति के लिए है।

अरविन्द जैन[6] की तीन कृतियां रेखांकित योग्य है। अरविन्द जैन–औरत होने की सजा में कानूनी विश्लेषण–अदालती फैसलों को लेकर प्रस्तुत करते हैं। औरत, अस्तित्व और मानसिकता में समकालीन स्त्री के चिन्तन में पुरुष की भूमिका पर टिप्पणी है। वह

---

1 वही, पृ.127
2 वही, पृ.131
3 देह की राजनीति से देश की राजनीति तक, राधा कृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली–1987
4 बन्द गलियों के विरूद्ध – सम्पादक – मृणाल पाण्डे तथा क्षमा शर्मा –, 2001, रूपए 300/–
5 राधा कृष्ण प्रकाशन, 2003, 95/–
6 जैन अरविन्द, औरत होने की सजा–विकास पेपर बेक्स दिल्ली–31, 1994, 50/– तथा औरत आस्तित्व और अस्मिता–सारांश प्रकाशन 2000, 160/–, न्याय क्षेत्रे : अन्याय क्षेत्रे, राजकमल प्रकाशन, 2002, 250/–

एक अधिवक्ता के रूप में स्त्री के पक्ष की पुरजोर पैरवी करना चाहते हैं एवं औरत की जीत हार को अपनी जीत हार मानते हैं। प्रभा खेतान के शब्दों में – "महिला लेखन पर साहित्य की यह ऐसी पुस्तक है जिसे लांघकर समकालीन साहित्य जगत में स्त्री विमर्श के सन्दर्भ में कुछ भी कहना असम्भव नहीं तो कठिन जरूर होगा।" उनका विचार जैन की स्थापित अवधारणाओं पर आधारित है –

(i) पूँजीवाद और विवाह संस्था के माध्यम से पितृसत्ता स्त्री का शोषण करती है।

(ii) नारी अपनी अस्मिता की तलाश में संघर्षरत है। श्री जैन ने उत्तराधिकार बनाम पुत्राधिकार तथा यौन हिंसा तथा न्याय की भाषा पुस्तकों में भी चर्चाएं की है। उन्होंने कानून की दृष्टि से – कानूनी कमजोरियों को उजागर करते हुए पुरुष वर्चस्व, लिंग परीक्षण, कामकाजी स्त्री कोख–कानून, सत्ता संस्थानों की भूमिका, बाल विवाह कन्यादान, बच्चे पर माँ का अधिकार, गुजारा भत्ता, दूसरी औरत आत्महत्या, वधूदहन, व्यभिचार, देह शोषण, बलात्कार यौन हिंसा, उत्तराधिकार इत्यादि विषयों पर अपनी कलम चलाई है।

श्री जैन ने नारी विमर्श व अस्मिता को कानूनी दृष्टि से सुदृढ़ रूप में प्रस्तुत करने का कार्य किया है।

तसलीमा नसरीन ने औरत के हक में – चरम लज्जा समझना (स्त्री होने को) पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की स्थिति पर अपने अनुभवों के माध्यम से विमर्श दिया है। जब कि सरला माहेश्वरी ने समान नागरिक संहिता में विवाह और उत्तराधिकार पर सीधे सीधे प्रश्नों का खुलासा किया है। दुर्गद्वार पर दस्तक–कात्यायनी की ऐसी कृति है जो श्रम और शोषण का परिदृश्य प्रस्तुत करती है। वह बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आगमन व भूमंडलीकरण को स्त्री के पक्ष में नहीं पाती है। विश्व बैंक भी नारी के विपक्ष में खड़ा होता है।

राजकिशोर की पुस्तक अश्लीलता का हमला में मुक्त देह आखेट, कामुकता की संस्कृति, सौन्दर्य का षड्यंत्र, इलेक्ट्रॉनिक तरंगों की मनमानी, सौन्दर्य और उत्तर संस्कृति के माध्यम से हमले जैसे संवेदनशील मुद्दों पर गहन चिंतन प्रस्तुत करते हुए कहा गया है कि "अश्लीलता समस्या नहीं हमला है। एक अश्लील संस्कृति लगातार हमारी संवेदना पर चोट कर रही है।"

सरला माहेश्वरी ने नारी प्रश्न के माध्यम से नारीवाद के पश्चिमी सन्दर्भों को उकेरा है तथा विवाह–तलाक, राष्ट्रीय महिला आयोग, महिला आरक्षण के सन्दर्भ में सार्थक चिंतन प्रस्तुत किया है। उषा महाजन – "उठो अन्नपूर्णा साथ चलें" शीर्षक से

बदलते दाम्पत्य सम्बन्धों को रेखांकित करती है। उनके कतिपय रेखांकित योग्य आलेखों के शीर्षकों में –

- दहेज सम्बन्धी कानून हिन्दू विवाह का बदलता स्वरूप बदलता सामाजिक परिदृश्य साथ रहते अविवाहित जोड़े विवाह की बेड़ियाँ प्रमुख है।

इन्होंने दाम्पत्य की विकट स्थितियों से गुजर रहे पति – पत्नियों के केस अध्ययनों में – न्यायधीशों, वकीलों, मनोवैज्ञानिकों, मनोचिकित्सकों, मनोविशेषज्ञों, पुलिस अधिकारियों, महिला संस्थाओं के संचालको के विचार विमर्श प्रस्तुत किए हैं। अनामिका 'स्त्रीत्व का मानचित्र'' नामक पुस्तक के माध्यम से ''स्त्रीवादी आन्दोलन को – पौराणिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में देखने–परखने का गम्भीर प्रयत्न करती है। स्त्रीवादी आन्दोलन की राजनीतिक यात्राओं से प्रारम्भ होकर– पश्चिमी दार्शनिक निकायों, भारतीय आर्य ग्रन्थों, लोक साहित्य, स्त्रीवादी चिन्तन एवं आलोचना की धाराओं पर विचार करते हुए– स्त्रीत्व और भाषा, स्त्री कथाकारों की स्त्रियाँ, तीसरी दुनियां की स्त्रियां, संक्रमण काल में भारतीय स्त्री, उत्तरवाद की चुनौतियों के माध्यम से स्त्री प्रश्नों पर गहन विचार प्रस्तुत किए है।

क्षमा शर्मा ने स्त्री का समय (मेघा बुक्स) ''भयावह रूप में हिंसक और अमानवीयता की हद तक खतरनाक हो गए स्त्री समय'' पर विचार किया है। हमारे समय के गम्भीर मुद्दों को – कन्या भ्रूण हत्या, दहेज हत्या, सती बलात्कार प्रकरण, पारिवारिक हिंसा, शोषण उत्पीड़न, मर्यादा, फैशन, संस्कार, सौन्दर्य प्रतियोगिता आदि के परिप्रेक्ष्य में स्त्री छवि को देखने–परखने की प्रभावी कोशिशें की है।

दिव्या जैन ''हौवा की बेटी'' बाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, के माध्यम से औरत जात के अछूत तबके में जाकर उनके दर्द से रूबरू होते हुए त्रासद यथार्थ को प्रस्तुत करती है। देह व्यापार की घुटन, गरीबी के कारण बेटियों को बेचने वाले माँ–बाप, प्यार विवाह के झाँसे में गुमराह की गई किशोरियां, वैश्या जीवन से बाहर निकलने की छटपटाहट पुर्नवास के सीमित साधन व समस्याएं इस पुस्तक के केन्द्र में रहे हैं।

सुधीर पचौरी –''स्त्री देह विमर्श'' (आत्मा राम एण्ड सन्स) के माध्यम से स्त्रीत्व के पक्ष में सत्ता मूलक विमर्श प्रस्तुत करते है।

सौन्दर्य प्रतियोगिता,

माधुरी दीक्षित बनने की चाह रखने वाली लड़कियां,

स्त्री देह के कथन और स्त्री लेखन,

सेक्स क्रान्ति और बाजार,

विज्ञापन और बहु राष्ट्रीय कम्पनियों की मंशा का पर्दाफाश अंकन,

स्त्री को त्वचा में बदलने का बाजारी षडयंत्र,

स्त्रियों के लिए लागू ड्रेस कोड,

इलेक्ट्रोनिक मीडिया के सांस्कृतिक प्रभाव,

देह राजनीति और कन्डोम कल्चर,

जैसे ज्वलत मुद्दे उठाए गए हैं।

राजेन्द्र यादव ''आदमी की निगाह में औरत'' (राजकमल प्रकाशन) के माध्यम से बेबाक टिप्पणियां करते हैं। स्त्री का कोई घर नहीं होता। घर होता है– बचपन में पिता का, जवानी में पति का और बुढ़ापे में बेटे का स्त्री उपनिवेश है क्यों? वे "हंस" में टिप्पणियों के माध्यम से होना है। एक खूबसूरत दुश्मन के साथ आदि के लिए विवादस्पद भी रहे हैं।

सुमन कृष्ण काल ''इक्कीसवीं सदी की ओर'' (राजकमल) के माध्यम से महिलाओं को नई शताब्दी में प्रतिनिधि परिवर्तन की कारक बनाने की चेष्टा करती है। इन्हें चुनौतियों को स्वीकार करना होगा, स्वयं को सक्रिय भूमिका निभानी होगी। यह कृति **"**बेहतर कल की संभावना की तलाश**"** की दृष्टि से सार्थक है। इलीना सेन– "संघर्ष के बीच", सारांश प्रकाशन, के माध्यम से – उत्तराखण्ड की जाग्रत महिलाएं, धूलिया में आदिवासी संघर्ष, केरल में मछुआरों का संघर्ष, भोपाल में गैस पीड़ित महिलाओं का संगठन जैसे विषयों पर विचार व्यक्त करती है। इनका मानना है कि **"**महिलाएं अपनी उपस्थिति से अपने लिए जनाधार बनाने में सफल हुई है।**"**

नीलम कुलश्रेष्ठ –''जीवन की तनी डोर पर ये स्त्रियां'' (मेघा बुक्स) के माध्यम से कचरा बीनने वाली स्त्रियों से लेकर रानियों तक के अनुभवों को उजागर करती है। वृन्दावन की विधवाएँ, सर्कस में काम करने वाली लडकियां, कचरा बीनती औरतें इनकी कलम पर आई है। देवी से मानवी में तब्दील होती स्त्री यहां देखी जा सकती है।

स्त्री संघर्ष का इतिहास (राधा कुमार वाणी प्रकाशन, स्त्रीवादी विमर्श समाज और साहित्य राजकमल) स्वागत है "बेटी" विभा देवसरे (मेघा बुक्स), हम सभ्य औरतें मनीषा (सामयिक प्रकशन) उपनिवेश में स्त्री (प्रभा खेतान राजकमल) इत्यादि पुस्तकें समग्र रूप से स्त्री परक चिन्तन, चुनौतियां, स्वतन्त्रता, विद्रोह विमर्श, सुरक्षा सत्ता, स्वामित्व अधिकार व स्त्री छवि का निरूपण करती है।

समाहार

नारी आन्दोलन को लेकर कई लेखकों लेखिकाओं ने अपने विचार पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं में लेखों के माध्मय से व्यक्त किए है। यह नारीवादी विमर्श–नारी चिन्तन को व्यापक विस्तृत फलक पर बहुआयामी दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत करता है। इस विमर्श में जहाँ एक तरफ ऐतिहासिक दृष्टि है वहीं पर परम्परा की बेड़ियों को तोड़ने की कोशिशे हैं, आन्दोलन है, संघर्ष है, चुनौतियां है। स्त्री–पुरूष के बीच सत्ता अस्तित्व को लेकर खींचतान से इन्कार नहीं किया जा सकता। नारी अपनी सुरक्षा चाहती है। वह सुरक्षा पति, विवाह, परिवार समाज से प्राप्त कर अपना संघर्ष कर प्राप्त करे। नारी देह से मुक्ति के नाम पर मुक्ति के मार्ग पर चल तो पड़ती है लेकिन वहाँ खुला बाजार है उसकी देह पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियां लालच की आँखें गड़ाती है देह मंडी बन जाए फिर वह कहाँ जाए। क्या फ्री सेक्स उसे पति, परिवार, बच्चे से अलग कर पाएगा ? क्या वह सब बन्धनों को तोड़ेगी। तो फिर कहाँ किसके बीच रहेगी। क्या संस्कारों के बीच पली नारी अश्लील हो जाए। ऐसे कई सवालों को लेकर नारी आन्दोलन उभरे, स्त्री चिन्तन में मुक्ति, सुरक्षा, संघर्ष, परिवर्तन और सकारात्मक नकारात्मक पहलू सबको कलम कारों ने छुपा, किसी भी पक्ष को अनदेखा नहीं किया है। पत्रकारिता, मीडिया, सौन्दर्य, स्वास्थ्य के क्षेत्रों में नारी घरेलू सीमाओं का परित्याग कर आगे बढ़ी, अपनी सार्थक पहचान बनाने में उभरी। यही आधी आबादी का सच है। आज नारी कई अर्थो में न उपेक्षित है न शोषित, न प्रताड़ित वह है नेतृत्व प्रदायक निर्णायक, सृष्टिकर्त्ता, निर्माता, सक्रिय कार्यकर्त्ता अधिकारी और स्वयं का भाग्य स्वयं लिखने वाली, स्वयं के जीवन में फैसले स्वयं लेकर आगे बढ़ने वाली।

यह सब सम्भव हुआ– नारी विमर्श से नारी आन्दोलन से नारी की सक्रियता व जागरूकता को बदलता परिप्रेक्ष्य नारी की अस्मिता, स्थान, वजूद को नकारता नहीं स्वीकारता है। उसे अपमानित प्रताड़ित शोषित लांछित नहीं करता प्रेम प्यार सत्कार देकर सहयोगी समझकर साथ लेकर चलता है, आगे बढ़ाता है।

आज स्त्री की भागीदारी हर क्षेत्र में महत्वपूर्ण हुई है। यह सतत् नारी विमर्श, अस्मिता का संघर्ष व नारी आन्दोलनों से अपनी सक्रियता तथा जागरूकता का ही परिणाम है। इसमें पाश्चात्य विचारों का खूब प्रभाव रहा है।

समकालीन परिवेषगत चुनौतियों का सामना करती नारी की दुखद पूर्ण दशा से मुक्त करने का आह्वान हिन्दी महिला कथाकारों ने अपनी कथाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया है?

तृतीय अध्याय

प्रमुख महिला उपन्यासकार एवं उनकी चर्चित कृतियां

1. उपन्यास
2. महिला उपन्यासकार
3. प्रतिनिधि महिला उपन्यासकार एवं उपन्यास

उषा प्रियंवदा—	रूकोगी नहीं राधिका, पचपन खम्भे लाल दीवारें
उषा भारती—	रेत की मछली
कृष्णा सोबती—	मित्रो मरजानी, सूरजमुखी अंधेरे के
कृष्णा अग्निहोत्री—	बात एक औरत की, टेसू की कहानियां
मन्नू भण्डारी—	आपका बंटी, महाभोज, एक कहानी यह भी
ममता कालिया—	बेघर, दौड़
प्रभा खेतान—	छिन्नमस्ता
गीतांजली श्री—	माई
शर्मा क्षमा—	परछाई अन्नपूर्णा
चित्रा मुदगल—	आवां
मृदुला गर्ग—	चितकोबरा, अनित्य, मैं और मैं, कठगुलाब
मैत्रेयी पुष्पा—	चाक, मैत्रेयी पुष्पा के अन्य उपन्यासों में स्त्री विमर्श (बेतवा बहती रही, इदन्ननम् अल्माकबूतरी, झूलानट इत्यादि)
निरूपमा सेवती—	पतझड़ की आवाजें
मणिका मोहिनी—	पारू ने कहा था
शिवानी—	चौदह फेरे

- समाहार

तृतीय अध्याय

प्रमुख महिला उपन्यासकार एवं उनकी चर्चित कृतियां

उपन्यास

उपन्यास आज के साहित्य की सबसे लोकप्रिय और सशक्त विधा है। इसका कारण इसमें मनोरंजन का तत्व तो है ही, साथ ही जीवन को बहुमुखी छवि के साथ व्यक्त करने की शक्ति भी है। उपन्यास मानव मन की आंतरिक अनुभूति, कोमलतम कल्पना और सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति से युक्त होकर साहित्य में श्रेष्ठ स्थान का अधिकारी है। आधुनिक युग में उपन्यासों में मनोरंजन सामग्री की अपेक्षा मानसिक विश्लेषण, सामाजिक निरीक्षण की यात्रा अधिक है। इसीलिए प्रभावोत्पादकता, लोकप्रियता की दृष्टि से साहित्य का सर्वाधिक जीवन सम्पन्न और महत्वपूर्ण अंग है।

हिन्दी साहित्य में उपन्यास का प्रारम्भ आधुनिक काल के यथार्थवादी परिवेश में हुआ है। उन्नीसवीं शताब्दी के साथ ही उपन्यास का प्रारंभ माना जाता है, यह विधा पश्चिम से आयातीत है। रागात्मक चेतना को पोषित करने एवं जागृत करने की सबसे अधिक शक्ति कथा साहित्य में है और कथा साहित्य में उपन्यास सर्वोपरि है। इसमें कथा का ताना–बाना घटना, प्रति घटनाओं तथा चरित्रों के माध्यम से बुना जाता है। वे मानव जीवन के ही अनिवार्य अंग होते है। उपन्यास जीवन को उसकी पूरी गतिशीलता के साथ प्रतिबिंबित करता है। उसमें कल्पना के अनेक रंगों का मिश्रण भी होता है।

उपन्यास वास्तविकता, भावात्मकता तथा रोचकता की समन्वित रचना है जिसके प्रति भिन्न–भिन्न रूचियों के व्यक्तियों के मन में प्रेम एवं आकर्षण होना नितांत संभव है। शाब्दिक दृष्टि से उपन्यास उप + न्यास, उप = समीप, न्यास = संभालकर व्यवस्थित रूप से रखना है। ''मानव जीवन की विविध घटनाओं को, मानव के समक्ष रखना, अर्थात् सम्पूर्ण जीवन के उतार–चढ़ाव की विविध घटनाओं को, कलात्मक किन्तु सरल रूप में, समाज के सामने रखना ही उपन्यास है।''[1] मुंशी प्रेमचन्द उपन्यास को "मानव चरित्र का चित्र मानते हैं। मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।"[2] लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय के अनुसार "उपन्यास यथार्थ मानव

---

1 मधुधवन– साहित्यिक विधाएँ– सैद्वान्तिक पक्ष, पृ. 11
2 प्रेमचन्द–कुछ विचार, पृ. 44

अनुभवों एवं सत्य का आकलन है। वह जीवन की एकता में समग्रता स्थापित करने का प्रयत्न करता है।"[1]

रामदरश मिश्र– "उपन्यास को पूंजीवादी समाज की अनिवार्य उपज मानते हुए – यथार्थ के नए स्तर व आयाम, भौतिकवादी चिन्तन व मूल्य की अभिव्यक्ति इसमें समाहित करते हैं। यथार्थवादी जगत, जीवन की विराटता समस्त वैविध्य, गहरा भाव बोध, को व्यक्त करने में समर्थ स्वीकारते हैं।"[2]

उपन्यास में काव्य किसी भावुकता, संवेदना है– "जो पाठकों को तल्लीन करती है, प्रकृति और प्रकृत्येत्तर दृश्यों व रूपों की योजना का सौन्दर्य है, निबन्ध किसी चिन्तन मूलकता है, चरित्रों का विश्लेषण है, नाटक किसी संवाद योजना है, स्वगत चिंतन है।"[3] उपन्यासकार के पास होनी चाहिए – जीवन दृष्टि, जीवन के यथार्थ का गहरा अनुभव, सर्जनात्मक कल्पना की अपार शक्ति, विचार की गहनता के साथ जीवन का विवेचन करने का सार्मथ्य।[4] कथानक– उपन्यास का मेरूदंड, चरित्र प्राण है।[5] पात्र स्थिर चरित्र व गतिशील चरित्र वाले[6] "कथोपकथन–कथावस्तु का विकास करने वाले, पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का उद्‌घाटन करने वाले तथा उपन्यासकार का उद्देश्य स्पष्ट करने वाले होने चाहिए।"[7] प्रतापनारायण टंडन के अनुसार– उपयुक्तता, अनुकूलता, सम्बद्धता, स्वाभाविकता, संक्षिप्तता और उद्देश्य कथोपकथन के गुण है।"[8] सुरेश बावर के अनुसार भाषा मनोभावों की पद्धति का प्रमुख साधन है। शैली उस साधन का उपयोग करने की रीति अथवा पद्धति है। भाषा में उत्कृष्टता की शक्ति अवंलबित होती है।"[9] उषा सक्सेना भाषा में स्वाभाविकता व पात्रों के मानसिक स्तर के अनुरूप होने"[10] तथा मक्खनलाल शर्मा प्रवाह का गुण होने"[11] को स्वीकारते हैं। धीरेन्द्र वर्मा शैली को विषयवस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर व प्रभावपूर्ण बनाने का अंग कहते हैं। यह आत्मकथा, पत्र, डायरी–कथा के रूप में हो सकती है।"[12]

---

1 वार्ष्णेय लक्ष्मी सागर हिन्दी उपन्यास उपलब्धियां, पृ. 11
2 मिश्र रामदरश– हिन्दी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा, पृ. 13
3 वही, पृ. 14
4 वही, 14 (Ralphfox-The Novel and the people.p.54)
5 शुक्ल राम लखन– हिन्दी उपन्यास कला, पृ. 23
6 सक्सेना उषा– हिन्दी उपन्यासों का शिल्पगत विकास, पृ.88
7 पंत बसंती–हिन्दी उपन्यास रचना विधान और युग बोध, पृ. 32
8 टंडन– प्रताप नारायण हिन्दी उपन्यासों में कथा शिल्प का विकास, पृ. 61–62
9 बावर सुरेश– भीष्म साहनी के साहित्य का अनुशीलन, पृ. 185
10 सक्सेना उषा–हिन्दी उपन्यासों का शिल्पगत विकास, पृ. 331
11 शर्मा मक्खन लाल – हिन्दी उपन्यास सिद्वान्त और समीक्षा, पृ. 88–89
12. वर्मा धीरेन्द्र–हिन्दी साहित्य कोश भाग–2, पृ. 6 म

महिला उपन्यासकार

कमलेश्वर ने कहा है कि – ''एक झंडे से अनेक झंडे बनते गये। हमारी सुनहरी झंड़ियां देश के बंटवारे ने बिखेर दी। हम देखते रह गए और देश में हमारी स्त्रियां लाज खो बैठी। कोई पुरूष उनका चीर बढ़ाने नहीं आया।[1]'' नारी परदे से बाहर आ सदियों से भोगी गुलामी के विरोध में कामकाज दफ्तर खटखटाने लगी।

प्रारम्भिक उपन्यास लेखन में शैल कुमारी देवी (उमा सुंदरी), रूकमणी देवी (मेम और साहब) यशोदा देवी (सच्चा पति प्रेम) प्रियंवदा देवी (लक्ष्मी) गोपाल देवी (दयावती) गिरिजा देवी (कमला, कुसुम, कुटुम्ब, प्यारी देवी (हृदय का नाथ) ज्योतिर्मयी ठाकुर (मधुवन) तेजरानी दीक्षित (हृदय का काँटा) उल्लेखनीय है।"[2]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् जीवन तथा चेतना का नया रूप अभिव्यक्त होने लगा। महिला उपन्यासकारों ने नारी शिक्षा, संघर्ष पूर्ण स्थितियों से उभर कर जीवन निर्वाह हेतु घर से बाहर आना, समाज की टूटी फूटी मर्यादाओं, पुराने संस्कारों को बदलने के लिए अपनी आवाज मुखर की बदलते जीवन मूल्यों, सामाजिक परिवेश को चित्रित किया।"[3] गहरी संवेदना, नारी मनोविज्ञान, यथार्थ से युक्त उपन्यास लिखे गए। इस्मत चुगताई के शब्दो में –''किसी के साथ भी जुल्म–ज्यादती, नाइन्साफी होती है तो मैं पूरे गुस्से के साथ नाइंसाफी के खिलाफ बोल उठती हूँ।'' मृदुला गर्ग के अनुसार ''जीवन में जो कुछ घटता है, गहरे छूता है। व्यथित करता है, वह सब एक दिन उपन्यास के रूप में फूट जाता है।'' शशी प्रभा शास्त्री का कथन है– उनका कथानक छोटी सी घटना से लेकर भंयकर मंजर तक को आत्मसात् कर यथास्वर देता है। सूर्यबाला इस यथार्थ को स्वीकृति देती है उन्हें मृत्यु नहीं जीवन प्रिय है। कृष्णा अग्निहोत्री के अनुसार शोषण अन्दर के सत्य को उभारता है और बेबाक ईमानदारी और निडरता के साथ छोटी–छोटी संवेदनाओं को यथार्थ के स्वर देने में छटपटाहट बरकरार रखता है। आधुनिक समसामयिक घटनाओं को मैं नजर अन्दाज नहीं कर सकती। मंजुल भगत कहती है– ''मैं सहिष्णुता, सुख–दुःख, अभावग्रस्त जीवन को परखती हूँ और उन्हें यथार्थ के स्वर देती हूँ। मालती जोशी गृहस्थ जीवन से समाज को निचोडकर लिखना चाहती है। निरुपमा सेवती महानगरीय जीवन की यथार्थ चेतना प्रस्तुत करती है। राजी

1 गीते निहार– स्वातन्त्रोत्तर महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में यथार्थ के विभिन्न रूप, पृ.1
2 वही, 7

3 वही, पृं 10

सेठ को कल्पना यथार्थ के रसायन लिखने को बाध्य करते हैं तो चित्रा मुद्गल जीवन की शून्यता, बेबसी, टूटन को प्रस्तुत करती है।"[1]

इनके उपन्यासों में "पति–पत्नी, प्रेमिका, वैवाहिक जीवन की प्रतिक्रियाएं, समाज–घरेलू स्त्रियों के प्रश्न उभरकर सामने आए हैं। सम्बद्ध विच्छेद नारी बच्चों की समस्याएं, नारी मन का संघर्ष अंकित हुआ है।"[2] सेक्स विसंगतियाँ, पवित्रता, अपवित्रता पर खुलकर लिखा गया। रूढ़ियों को तोडा गया अनुभूतियों के आन्तरिक धरातल से जुडकर आदर्श और नैतिकता के मानदण्डों में बदलाव आया है। मोहभंग साफ नजर आने लगा।"[3]

प्रतिनिधि महिला उपन्यासकार एवं उपन्यास

नारी के संघर्षपूर्ण मन व विभिन्न स्थितियों का चित्रण शिवानी (कृष्ण कली, चौदह फेरे) मन्नू भंडारी (आपका बंटी, महाभोज) उषा प्रियंवदा (पचपन खम्भे लाल दीवारें, रुकोगी नहीं राधिका) कृष्णा सोबती (मित्रों मरजानी, यारों के यार) शशी प्रभा शास्त्री (वीरान रास्ते, झरना, नावें, सीढ़ियां) ममता कालिया (बेघर, नरक दर नरक, दौड़) मृदुला गर्ग (चित्तकोबरा) कृष्णा अग्निहोत्री (टपरे वाले, प्रीत एक औरत की) मंजुल भगत (अनारो) निरुपमा सेवती (बंटता हुआ आदमी) चन्द्रकान्ता सोनरेक्सा (इन्सान अभी जिंदा है।) मेहरून्निसा परवेज (कोरजा) नासिरा शर्मा (पारिजात) मणिका मोहिनी (पारो ने कहा था) सूर्यबाला (मेरे संधि पत्र) मैत्रेयी पुष्पा (चाक, इदन्नमम्, गुड़िया भीतर गुड़िया) आदि प्रमुख हैं।

मन्नू भंडारी के उपन्यासों में फ्रायड, एडलर, यंग आदि का प्रभाव मन की काम इच्छाएं नैतिकता के कारण कामवासना का दमन, कुंठाओं का यथार्थ चित्रिण हुआ है। आपका बंटी में बंटी सोचता है ''पंलग देखते ही फिर गन्दी गंदी बातें दिमाग में आने लगी। अंगुलियों का क्रास कितना बेकार हो जाता है ऐसे मौके पर।''[4]

कृष्णा अग्निहोत्री लिखती है ''मेरी उम्र के अपने दस साल बर्बाद भी कर दिए। शेष जिंदगी तो आपकी नहीं है। मैं सोने–चाँदी के बन्धनों से मुक्त हूँ। अब मैं अपने बेटे के साथ जुल्म से हटकर, आत्म सम्मान से, आत्म निर्भर हो जी सकूंगी।"[5] रामेश्वर शुक्ल अंचल के उपन्यास की नायिका कहती है ''मैं उन औरतों में नहीं हूँ, जो व्यक्तिगत का

1 वही, पृ. 10
2 वही, पृ. 12
3 वही, पृ. 13
4 भंडारी मन्नू, आपका बंटी, पृ. 164
5 अग्निहोत्री कृष्णा, अभिषेक, पृ. 115

बलिदान करती घूमती हैं जिनकी कोई मर्यादा व शील नहीं होता। जो पर पुरूष की हवा लगने से ही खराब हो जाती है। मैं पति की गुलामी को सच्चरित्रता नहीं मानती। मुझमें आत्म निर्भरता की कमी नहीं है।[1] अन्य उदाहरण भी दृष्टव्य है। उषा प्रियंवदा की राधिका कहती है–''वह उसी पुरूष के साथ विवाह करेगी जो उसे अतीत व अवगुणों के साथ स्वीकार करें।''

समग्रतः

जीवन की सच्चाई के प्रति जागरूक होती, थोथे आदर्शवाद से मुँह मोड़ती, आज के नारी जीवन की विसंगतियों पर खुली दृष्टि डालती सेक्स के आवृत में बुरी तरह घूमती, समलैंगिक यौनाचार, रतिभाव, राष्ट्रव्यापी भ्रष्टाचार, मुक्ति के लिए लड़ती, विकृत विवाह सम्बन्धों को उजागर करती, यातना का खुला चित्रण करती इन लेखिकाओं ने गहरे यथार्थ के साथ महत्वपूर्ण लेखन किया है।

3.1 रुकोगी नहीं राधिका (उषा प्रियंवदा)

स्वातंत्र्योत्तर अस्तित्ववादी चिंतन से प्रभावित उषा प्रियंवदा के उपन्यासों में 'रुकोगी नहीं राधिका', 'पचपन खम्भे लाल दीवारें' प्रमुख हैं। 'रुकोगी नहीं राधिका' की नायिका–राधिका अपने पिता को प्यार करती है। विधुर का जीवन जीते–जीते उसके पिता त्रस्त हो जाते है। एकाकीपन को खंडित करने के लिए राधिका की एक सहेली से विवाह कर लेते हैं। राधिका इस नए जीवन को सहन नहीं कर पाती। उसे गहरा धक्का लगता है राधिका अपने पिता को, जीवन के क्षणों को, किसी अन्य के साथ, बांटते नहीं देख सकती। वह ''डैन'' नामक पुरूष के साथ अमेरिका चली जाती है। डैन उसे असंतोष व टूटन देता है। वह वापस भारत आ जाती है। राधिका अपने पिता के अनुराग पूर्ण सम्बन्धों में गहरा तनाव पाती है। सुरक्षा व प्यार पाने मनीष, अक्षय से जुड़ती है। अकेलेपन का अहसास लगातार तोड़ता है। वह पिता के साथ रहना अस्वीकार कर देती है।

प्रस्तुत उपन्यास नारी की दुविधा को आधार बनाकर लिखा गया है। अकेलेपन को भोगना ही है।"[2] वह अकेलापन स्वेच्छा से अपनाती है। उसमें आधुनिकता व अजनबीपन का बोध है। विदेशी व देशी जड़ता है। राधिका ने बचपन में माँ के मरने के बाद अठारह साल से अकेलेपन को जाना है। अकेलापन भयावह होता है। तटस्थता,

1 अंचल रामेश्वर शुक्ल, उल्का, पृ. 111

2 निहार गीते, पृ. 62

सूक्ष्मता, पिता, पुत्री के प्रति अनुराधा का तनाव, मनीष अक्षय की अनिश्चित स्थिति के बीच का तनाव, अन्तर्द्वन्द्व का बोध व्यक्त होता है– तुम लोग कल जा रहे हो? कह जो रहे थे। और तुम? और आप ? मैंने अपने बारे में कुछ सोचा नहीं हैं। चाहता हूँ कि तुम यहीं रहो राधिका, पहले की तरह। नहीं पापा मैं जाना चाहती हूँ। मनीष मेरे एक बन्धु हैं।[1]

राधिका अपने अस्तित्व तथा स्वातन्त्र्य की खोज में भटकती यह उपन्यास उच्च वर्ग की अनुभूति को ईमानदारी से व्यक्त करने वाला उपन्यास है। इसके पात्र खंडित है। अकेलापन, सूना पन है। मनुष्य सिमट रहा है। जीवन पोषक मानवीय मूल्यों से निरन्तर कटता जा रहा है। इसमें डैन का कथन सांस्कृतिकता को गहरा स्वर देता है। माँ के मरने के बाद तुम्हारा पिता के प्रति लगाव बहुत कुछ एब्नार्मल हो गया। यदि भारतीय परिवेश में तुम्हे प्रारम्भ से ही युवा मित्र बनाने की सुविधा होती हो ऐसा नहीं होता। तब तुम्हें प्रसन्नता होती कि तुम्हारे पिता ने जीवन में फिर सुख पाया।[2]

सांस्कृतिक टकराव और एकाकीपन की त्रासदी को यह उपन्यास व्यक्त करता है। भारतीय व्यक्ति अब भी परिवार से जुडकर रहने में शांति अनुभव करता है। खंडित व्यक्तित्व से कोई भी नारी कहीं भी नहीं जुड़ सकती। नारी किसी भी स्थिति में प्लेबॉय से नहीं जुडना चाहती।[3]

राधिका के माध्यम से प्रेम के बदले स्वरूप को प्रकट करना आधुनिक शिक्षित समाज में युवा बेटे बेटियों के रहते वृद्ध विवाह नहीं कर सकते, परम्परागत संस्कारों के टूटने पर परिवार के बच्चे क्या अनुभव करते हैं ? को अभिव्यक्त करते हुए नारी को नयी अर्थवत्ता प्रदान की गई है।

3.2 पचपन खम्भे लाल दीवारें :

पचपन खम्भे लाल दीवारें, उपन्यास की नायिका सुन्दर, शिक्षित नारी, महाविद्यालय में महत्वपूर्ण पद पर कार्यरत रहकर परिवार के प्रति दायित्व निभाती है। नील से भय है सुषमा को नील वय में उससे छोटा है। प्रेम नहीं निभा सकेगा। कभी भी उसे छोड देगा। वह स्वयं को आत्मपीडिता नारी के रूप में पाती है।

1 प्रियंवदा उषा – रुकोगी नहीं राधिका–99
2 वही, पृ. 11
3 वही, पृ. 33

वह संसार के प्रति कटु होती जाती है। उसे टूटने का अहसास होता है। सूना एकाकीपन भविष्य की परछाई लगता है। सुषमा के पिताजी मध्यम वर्गीय व्यक्ति है। बेटी में असाधारण बौद्धिकता पाते हैं। उसे परिवार का सहारा बनी देखना चाहते हैं। बेटी के विवाह के प्रति उपेक्षित रहे। सुषमा अपनी स्थितियों से समझौता करती है। महाविद्यालय में व्याख्याता–वार्डन बनकर कालेज के पचपन खम्भों की तरह स्थिर बनकर जीती है। वह नील के बारे में सोचती है नील के बगैर मैं कुछ नहीं हूँ। एक छाया–एक खोए हुए स्वर की प्रति ध्वनि मन की वीरानियों में भटकती हुई।"[1] इस उपन्यास की विशिष्टताएं रेखांकित योग्य है– बेटे माता पिता का उत्तरदायित्व नहीं निभाते परन्तु बेटियां अविवाहित रहकर भी माता–पिता का उत्तरदायित्व निभाती है। इसमें नारी की विकासशील जीवन मूल्यों की इच्छा क्षमता से अधिक काम करने का चिंतन, नारी मन की घुटन, तड़फ, अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण, आधुनिक प्रेम की चरम परिणति, अजनबीपन की अनुभूति, अकेलेपन की स्थिति उत्तरदायित्वों के बीच पीसता नारीमन इत्यादि व्यक्त हुआ है।

3.3 कान्ता भारती (रेत की मछली)

श्रीमती कान्ता भारती का "रेत की मछली" उपन्यास लेखकीय जीवन और उसके निकट परिवेश को मानवीय सन्दर्भों में रखने का प्रयास है। इस उपन्यास में नारी के दो रूप भारतीय नारी का उच्चादर्श व दुश्चरित्रता नारी नाम को कलंकित करने वाला रूप देखने को मिलता है। कुन्तल के रूप में उच्चादर्श नारी की झलक है जो पतिपरायण है, पति द्वारा दी जाने वाली यातना को सहन करती है। अपने सम्मुख पति को दूसरी स्त्री के साथ केलिक्रीडारत देखती है जो नारी की सहनशीलता की पराकष्ठा है। हालांकि वह अपने अधिकारों का हनन होते देखकर चीत्कार उठती है फिर भी पति के द्वारा क्षमा मांगने पर उसे क्षमा कर देती है। पीटे जाने पर भी पति को छोडकर पिता के साथ नहीं जाना चाहती।[2] दूसरी तरफ है मीनल जो भाई जैसे पवित्र रिश्ते की पवित्रता को भी कलंकित करती है। वह नारी दूसरी नारी का सुख, चैन, सुहाग का हरण करने वाली नारी सुलभ लज्जा का उपहास करने वाली है।[3]

यह उपन्यास दर्शाता है कि – समाज में सभ्यता के मुखौटे लगाए पुरूष अपनी पत्नी के साथ घिनौना व्यवहार कर सकते हैं। विशिष्ट किशोरावस्था में लड़कियां अत्यधिक रोमांटिक होकर अपना जीवन साथी तो चुन लेती है परन्तु स्व विवेक से कार्य

1 वही, पृ. 123
2 गीते निहार– पृ, 67
3 गीते निहार – पृ, 68

नहीं करती, न ही परिवार का मार्ग दर्शन स्वीकार करती है। उनका जीवन नारकीय हो जाता है।

विवाह के बारे में रोमांटिक होकर नहीं सोचना चाहिए। विवाह का कार्य माँ बाप पर छोड देना चाहिए। यह भारतीय परम्परा है जो दुःखदायी कम सुखदायी अधिक है। शोभन को पाने की इच्छा रेगिस्तिान में पानी की इच्छा के समान है। पानी रेगिस्तान में कहाँ ? पानी का भ्रम अवश्य उत्पन्न करता है। वह उस पानी के लिए रेगिस्तान की रेत में तड़पती मछली जैसी बनकर रह गई।[1]

1. रेत और रेगिस्तान – कुन्तल के जीवन का संकेत है। रेत घर नहीं बनाती। कुन्तल रेत की मछली है। जो रेगिस्तान में तड़पती रह जाती है।
2. जंगली लतर मीनल है जो बगीचे में उग आई है। चारों तरफ फैल रही है। उसके फूलों को सोख रही है। उसकी कोमलता को सुखा रही है।
3. नीला कमरा, शोभन का रूम है। जो सब जगह शोभन के साथ जाता है।

इस प्रकार रेत की मछली उपन्यास रोमांटिक वासना का खुला चिट्ठा, रूढ़ियों से घिरी नारी, जो समाज में यातना भोगने को विवश है का चित्रण करने वाला, स्त्री के वासनात्मक प्रेम का उल्लेख करने वाला, दैहिक क्रियाओं का उद्‌घाटन कर बीमार मानसिकता को प्रकट करने वाला है।[2]

3.4 कृष्णा सोबती

नारी की सामाजिक नियति को मानवीयता से देखने परखने वाली, संवेदना के धरातल पर अनुभव करने वाली कृष्णा सोबती ने काम इच्छाओं के विभिन्न रूप अपने यथार्थ के तेज व तरल तेवर में व्यक्त किया है। उनके प्रतिनिधि उपन्यासों में डार से बिछुडी, सूरजमुखी अंधेरे के, जिन्दगीनामा प्रमुख है। नारी की बेबसी के बीच–ऊर्जा, यौन साहसिकता यौन संदर्भों को सांकेतिक व खुले आम घटित होते दर्शाती है यह लेखिका।

मित्रों मरजानी

मित्रों मरजानी की नायिका सभ्य परिवार की बहू है संकीर्ण इच्छाओं व बंधे जीवन में जीने का रिवाज उसे नहीं भाता। वह हाड–माँस से बनी, अपनी उद्दाम वासनाओं के साथ जीने वाली नारी है जिसमें स्नेह, ममता, कामवासना का आवेग है। वह

---

1 वही, पृ. 67
2 वही, 69

माँ बनने के लिए आतुर, प्रेम वासना की तृप्ति चाहने वाली है।[1] गुरूदास और धनवन्ती (पंजाबी परिवार) के मंझले लड़के सरदारी की पत्नी मित्रों कहती है ''सात नदियों की तारू तवे सी काली मेरी माँ और मैं गोरी चिट्टी उसकी कोख पडी इलाके के बडभागी तहसीलदार की मुहदरा है मित्रों। अब तुम ही बताओ जिठानी तुम जैसा सत बल कहाँ से लाऊँ ? देवर तुम्हारा मेरा रोग नहीं पहचानता बहुत हुआ तो हफ्ते पखवारे मेरी देह में इतनी प्यास है, कि मछली सी तड़फती हूँ।[2] माँ बनने की आतुरता की अभिव्यक्ति जब सुहागवन्ती की हरी भरी गोद देखती है तो कहती है ''अम्मा अपने लाडले बेटे का भी तो आड तोड जुटाओं निगौडे मेरे पत्थर के बुत में भी कोई हरकत तो हो।[3]

सूरजमुखी अंधेरे के

कृष्णा सोबती बोल्ड लेखिका है। सूरज मुखी अंधेरे के उपन्यास के माध्यम से सेक्स सम्भोग को अंधेरे बंद कमरों से बाहर निकालने के लेखन द्वारा अपनी पहचान अलग कराती है। इस उपन्यास की नायिका स्त्री है जो– शैशवकालीन बलात्कार का अपराध बोध सहकर समस्याओं से घिर जाती है। उसका जीवन फटी जिन्दगी सा हो जाता है। उसका रवैया पुरूष जाति के प्रति कठोर है। वह अपनी सुन्दरता से पुरूषों को आकर्षित करती है। उनके बिल्कुल पास आने पर छटपटाहट से घबरा कर छोड देती है उन्हें पीड़ित करती है। पुरूष उसके ठंडेपन के शिकार है।

"अमानवीय क्रीडा में उसे आनन्द नहीं आता।"[4] जब उसकी मनोग्रंथि एक विवाहित पुरूष दिखाकर द्वारा टूटती है तो वह कहती है ''मैं जुड़े हुए को नहीं तोडूंगी। विभाजन नहीं करूंगी मेरी देह अब तुम्हारी प्रार्थना है।"[5] यह उपन्यास भोग का उन्मुक्त चित्रण बनकर रह गया है। परिवेश की कुरूपता में जकड़ी नारी की निर्यात लड़ाई बेबसी उजागर करती है। जिसमें क्रूरता, भयावहता और अकुलाहट को उभारा गया है। प्रेम का स्वरूप भी मात्र सेक्स तक सीमित है।

---

1 वही, पृ. 71
2 सोबती कृष्णा–मित्रो मरजानी, पृ. 63
3 वही, पृ. 84
4 सूरज मुखी अंधेरे के–कृष्णा सोबती
5 वही, पृ. 125

3.5 कृष्णा अग्निहोत्री

स्वातंत्र्योत्तर महिला लेखिकाओं में ईमानदार वैविध्यपूर्ण बहुमुखी लेखन के कारण कृष्णा अग्निहोत्री चर्चित है। नारी उत्पीड़न, दाम्पत्य जीवन के अनेक पक्षों के साथ निम्न वर्ग का चित्रण, राजनीतिक भ्रष्टाचार, आदर्श–यथार्थ का समन्वय, यथार्थ के प्रति झुकाव, समाज की विडम्बनाएं भ्रष्टाचार, अनैतिक कार्यों को लेखिका ने प्रस्तुत किया है। बौनी परछाइयाँ, बात एक औरत की, कुमारिकाएँ आपके उपन्यास हैं।

बात एक औरत की

'बात एक औरत' की शीर्षक की उपन्यास स्त्री–पुरूष के नाजुक सम्बन्धों को लेकर लिखा गया है। इसमें लेखिका ने परम्परावादी तथा आधुनिक दाम्पत्य जीवन का चित्रण विभिन्न परिवेश, नए–पुराने मूल्यों की टकराहट के साथ अंकन किया है एवम् पति द्वारा पत्नी पर किए जाने वाले विभिन्न प्रकार के व्यभिचार, अनाचार, पापाचार को व्यक्त किया गया। पत्नी सारे आदर्श अपनाने के लिए दर्शाई गई जिसे घर की चार दीवारी में कैद रखा गया। पति द्वारा पत्नी को सेक्स संतुष्टि का साधन मात्र समझा गया। उपन्यास की नायिका कनु – पति की परम्परावादिता एवं आधुनिक दृष्टिकोण के बीच तालमेल बिठाने की कोशिशें करती है।

संघर्ष के दौर से गुजरती है विवाह संस्था पर कुठाराघात करती है। वह चाहती है अच्छी बातों में मन लगाना, पति को देवता मानना परन्तु सफल नहीं हो पाती।"[1] वह टूटती चली जाती है तथा अन्त में बिखर जाती है। वह भारतीय नारी की प्रतिमूर्ति है। वह पूछती है "पुरूष कभी पुरूषत्व खोकर बैचेन नहीं होता स्त्री क्यों त्रस्त होती है। उसे स्त्री होने के कारण अपना अस्तित्व बिखरता दिखता है। तो वह पुरूष जाति से छुटकारा पाने के लिए स्वावलम्बी होना चाहती है।[2]

वह सीखती है निम्नांकित कार्यों को – सिलाई, पेन्टिंग, टाइपिंग, वह पढ़ाई करने का विकल्प अपनाकर बी.ए., एम.ए. करती है। नौकरी पाने का प्रयास तो करती है लेकिन सफल नहीं हो पाती। अनाचार को देखकर बौखला जाती है और कहती है स्वार्थ के अतिरिक्त रिश्ता कुछ नहीं है। सेक्स को लेकर दुनिया विक्षिप्त है। कनु अपने समय के साथ लड़ने वाली स्त्री का प्रतिनिधि पात्र है। वह आंचल में दूध आँखों में पानी लिए ही

---

1 अग्निहोत्री कृष्णा– बात एक औरत की
2 वही, पं. 144

आगे नहीं बढ़ती है, अंगारों के बीच दहकती भी है। साहस के साथ सच्चाई उजागर करती है।

वह समाज से पत्नी का स्थान जीवन संगिनी के रूप में रखने की मांग करती है तथा मात्र सेक्स तक सीमित रखने को अस्वीकारती है, विरोध करती है। वह अपने पति संजय को वहशी जानवर के रूप में देखती है।[1] लेखिका के शब्दों में इस उपन्यास की नायिका सम्पूर्ण समय के साथ लड़ना चाहती है। इसके भीतर मनोवेग है। संस्कार उसे अपनी तरफ आकर्षित करना चाहते हैं, लेकिन यथार्थ यह है कि हर चौराहे पर खड़ा पुरूष उसे केवल जिस्म की औरत के रूप में ढूंढता है।[2] नारी की बढ़ती हुई चेतना का अंकन करते हुए, स्त्री के टूटने के कारणों का भी खुलासा किया गया।[3] पति द्वारा पत्नी को माँस का लोथड़ा समझना, उसकी भावनाओं को अनदेखा करना शरीर के प्रति एकमात्र लगाव वेश्यावृति है। पुरूष को चाहिए कि वह पत्नी को शारीरिक व मानसिक दोनों ही रूपों में अपनाएं। वैवाहिक जीवन में यौन सम्बन्धों के महत्व व अनिवार्यता से इन्कार नहीं किया जा सकता है पर स्त्री मात्र काम पूर्ति का साधन नहीं होती उचित सम्मान भी चाहती है। नारी का सम्मान बच्चों के कारण परिवार में बढ़ता है। निसंतान होने पर नहीं।[4] सास बेटे को बहू के विरूद्ध भडकाती है।[5]

टेसू की कहानियाँ

इस उपन्यास[6] में समसामायिक जीवन का चित्रण है जिसमें आतंकवाद, असुरक्षा, अव्यवस्था, अवसरवादी राजनीति, स्वार्थ के कठघरों की स्थितियाँ, भ्रष्टाचार, निराश स्थिति, जनतन्त्र के हथियारों का दुरूपयोग, पूंजी के प्रति लिप्सा, मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था हीनता के बावजूद मानव धर्म, सभ्यता–संस्कृति के माध्यम से देश की सूखी टहनियों पर टेसू के फूल खिलने की आशावादिता की अभिव्यक्तियाँ हुई है। आज के दौर में आत्मविश्वास, धीरज, कर्म संघर्ष का अभाव है। संस्कार व अधकचरे संस्कारों के बीच सभ्य, शालीन व्यक्तित्व पिसा जा रहा है। रुपया नहीं तो जिंदगी नहीं, जीवन शैली

1 वही, पृ. 1
2 वही, पृ. 1
3 वही, पृ. 200
4 गुप्ता नीलम– हिन्दी लेखिकाओं के उपन्यासों में सामाजिक तत्व, पृ. 55
5 वही, पृ. 48
6 अग्निहोत्री – कृष्णा – टेसू की कहानियाँ – नेशनल पब्लिशिंग हाउस–दिल्ली–जयपुर ISBN-978-81-8018-139-9 2014, Rs. 325/-

लादना—गलत है। अंधविश्वासों, कुरीतियों से स्त्री लड़ रही है। स्त्री को पुरुष का साहचर्य चाहिए – जीवन में टेसू के फूल, स्त्री–पुरुष के सहयोग से ही खिल सकते हैं।

सीता दी के लिए मधुर का नजरिया – "उस एकाकी महिला को अपने बाहुपाश में जकड़कर सीने में धँसा ले और कंधे पर सिर टिकाकर अधपके केशों में अपने यौवन का आवेग ढुलका दे।"[1] "सीता दी भी मधुर का साहचर्य चाहती है तथा वह – जिंदगी जीने का अर्थ समझाती है, जीने का हौंसला देती है। जीवन के किसी मोड़ पर छोड़, मत देना, मुझे तुम्हारी जरूरत है कहती है।"[2]

जिन्दगी जीने के उद्देश्यों का खुलासा—चलना है, थकना नहीं, प्रगति के सुख में दूसरे भी सुखी रहे[3] के रूप में किया है। अन्तर्जातीय विवाह पसंद नहीं करना विवाह संस्था पर प्रश्न है। मधुर को गीतिका स्त्री लगती है जो उसका देखने का नजरिया है – लम्बी चमेली की डाल जैसी, बड़ी आँखें, मेघों जैसी भरीभरी, रंग सांवला पर चिकना[4] क्राइस्ट मधुर की माँ को कहते हैं जो धर्म की पोल खोलने वाला ढोंग लगता है – "मैंने तो तुम्हारी अतृप्त आत्मा को तृप्त किया। तृप्ति गैर कानूनी नहीं। तुमने कुसुम को पाला वह मेरी निशानी है।[5] मधुर कुसुम को आत्मनिर्भर बनने की सलाह देते हुए कहता है – "आत्मनिर्भर बनने की जगह दूसरों के कंधों पर लुढ़कने से तो कहीं भी निर्भर नहीं रहोगी।[6]

दशरथ पति के रूप में जब पत्नी सुमित्रा को लात मारता है तो वह विकराल रूप धारण कर लेती है, कपड़े धोने की मुंगरी उठाती है, पति को धमकाती है, अब मार लात! तुझे मेरे दो बेटों को दो रोटी देना भी भारी पड़ता है।"[7] प्रकाश अपनी माँ से भावी जीवन साथी के लिए कहता है – "मुझे पढ़ी लिखी फूहड़ लड़की नहीं चाहिए, मैं तो अन्तर्जातीय विवाह करूंगा।"[8] वह पत्नी सीता से कहता है – यह मत समझना कि मैं तुम्हारा गुलाम हो जाऊँगा, इस व्यक्ति ने कभी किसी की गुलामी नहीं की और न करेगा।[9] प्रकाश की पुरुषवादी विचार धारा में माँ भी सहमत है। वह बहू के खिलाफ बेटे को भड़काती है, जिस औरत ने पति के प्यार से वंचित रहने को भेजा, वह इस बात को

---

1 वही, पृ.1
2 वही, पृ.1
3 वही, पृ.3
4 वही, पृ.6
5 वही, पृ.11
6 वही, पृ.13
7 वही, पृ.24
8 वही, पृ.26
9 वही, पृ.28

सहन नहीं कर सकती कि बेटे–बहू में प्यार रहे।[1] जब रात को प्रकाश पैग चढ़ाकर क्लब से लौटता है तब भी वह कहती है – "मेरा बेटा तो पत्नी के पल्लू से बँधने वाला नहीं, चाहे पल्लू में कितना भी दान दहेज सिमटा हो।[2] प्रकाश अपनी पत्नी सीता को कोसते हुए कहता है – पत्नियाँ तो स्वार्थी होती है। उन्हें तो पति के शरीर से प्रेम रहता है। वासनाओं की दृष्टि ही उनका जीवन है।[3] सीता स्त्री के रूप में वासना की पूर्ति को गलत नहीं मानती तभी कहना चाहती है – यह सब क्या गलत है ?

अच्छी चरित्रवान लड़की शादी होने तक अपने जिस्म को अछूत बनाए रखती है। तब शादी के बाद भी क्या जिस्म की माँग को वह वासना कहकर नकारती रहेगी ? अपने पति से ही अपनी माँग की सही पूर्ति क्या वासना है?[4] अनिता आधुनिक लड़की के रूप में कहती है कि "दो चार फिल्में किसी के साथ देख लेने से प्रेम थोड़े ही हो जाता है।"[5] प्यार एवं विवाह की अपेक्षाएँ मात्र शरीर के आकर्षण से पूरी नहीं होती। उसके लिए संस्कार सभ्यता आचरण और आदतें आवश्यक होती है।[6]

प्रकाश व सीता जब मनोरोग चिकित्सक के पास जाते हैं तो वह प्रकाश को सलाह देता है – "अपनी पत्नी से प्रेम करिए, उन्हें सुखी रखिए, तभी तो वह भी आपकी ओर आकर्षित रहेगी। सेक्स मानसिकता व प्यार भावनाओं से सम्बन्धित है।"[7] आज के दौर में स्त्री की सुरक्षा का मुद्दा प्रमुख हो गया है। कई घटनाएं इसका कारण है। लेखिका लिखती है "कहीं ऐसा समय तो नहीं आ जाएगा कि सड़क चलते कोई औरत सुरक्षित नहीं रहेगी। सभ्यता के नाम पर हम आदिम युग तक क्यों जा रहे हैं ?"[8] "शिक्षा के कारण औरतों में आत्मविश्वास बढ़ा है तथा वह माता–पिता का सहारा बनने लगी है। सुरेखा–गरीब है परन्तु नेक ईमानदार है। वह पुरुष स्टाफ में जीकर अपनी लकवे में पड़ी माँ को पालती है।[9] इन्दु एक ऐसा पीड़ित स्त्री पात्र है जो नारी त्रासदी झेलने को विवश है –

वह खाते – पीते परिवार की लड़की थी। ससुराल में मार–गालियों के बीच अपनी बच्चियों को पालती है। गैंग्रीन के कारण उसका पैर काटना पड़ा। वह पीढ़ी की

1 वही, पृ.29
2 वही, पृ.29
3 वही, पृ.30
4 वही, पृ.30
5 वही, पृ.33
6 वही, पृ.35
7 वही, पृ.43
8 वही, पृ.52
9 वही, पृ.53

संक्रांत कालीन गुलामी भुगतती है। बच्चों की भी गुलामी सहन करती है। उसके बच्चों को बड़ों के लिए कर्तव्य के संस्कार नहीं मिले।[1] उसे सास पीटती है। ससुर गाली देता है।[2] सुनीता गोयल के साथ लिपटती जाती है। हवा के तेज झोंके, में उड़ते कपड़े की तरह वह उड़ने लगती है। समाज में बलात्कार एक अपराध है। इस बारे में टिप्पणी करती है लेखिका – लड़के ब्रह्मचर्य संयम का अर्थ नहीं जानते। उन्हें माँ–बहन–बेटी के सम्बन्धों की पवित्रता समझ में नहीं आती। सस्ता जीवन, अपरिपक्व विचार, चलचित्रों का मीठा जहर उन्हें अधिक हिंसक एवं दानवी बना रहा है। अस्तित्ववादी विचारों को गलत तरीके से लिया जाने लगा है। सेक्स जीवन की अनिवार्यता है। पाप नहीं है। छीना झपटी अवसरवादी नहीं। खूबसूरत अहसास को बदरंग बीमारी बना दिया गया है।[3] प्रकाश शराब पीकर मन की भड़ास निकालते हुए सीता से कहता है "मेरा पौरुष देखना चाहती हो न! देखो ... खूब देखो .... और वह एकदम नंग धडंग अपनी पत्नी के सामने खड़ा हो गया।"[4] आज स्त्री पतिव्रता को सजगता से लेती है जो नारी विमर्शगत जागरुकता का संकेत है, सीता कहती है –

- पतिव्रता कोई मेरे जैसी थोड़े ही है जो लात खाकर भी सेवा करते हुए अपना सम्पूर्ण जीवन परिवार व समाज की सेवा में अर्पित करती है।
- पढ़ी लिखी स्त्री हूँ। ढोंग नहीं कर सकती। पति के कार्यों की पूछताछ कर रोकथाम करती हूँ। गलत कार्यों पर इसलिए पतिव्रता नहीं।"[5] एक शादीशुदा व्यक्ति को यह अधिकार नहीं होता कि वह शादी के बाद अपनी पत्नी की इच्छा के विपरीत जा सके।[6]

मेरी विनम्र सम्मति में यह उपन्यास – "औरत लड़ाई में अकेली नहीं है, वह नयी पीढ़ी की शुरुआत करना चाहती है। अशांत, भ्रष्ट, निस्पंद हिंसात्मक वातावरण में आशा बनकर टेसू के फूल खिलाना चाहती है। नए समाज व्यवस्था के लिए लड़ती हुई स्त्री प्रेम की सम्पदा को बचाना चाहती है, सन्देश देता है।" गीते नीहार के अनुसार – मनो विज्ञान का परोक्ष प्रवेश इसे मजबूत बनाता है। इन टहनियों से स्वस्थ रागात्मकता व जीवन्तता का संचार होता है। मध्यम वर्ग हमारी सामाजिकता की बुनियाद है। इस वर्ग

---

1 वही, पृ.55
2 वही, पृ.56
3 वही, पृ.80–81
4 वही, पृ.98
5 वही, पृ.101
6 वही, पृ.102

की विसंगतियों की जाँच पड़ताल लेखिका की ईमानदार कोशिश से रचनात्मकता बन पड़ी है।"[1]

3.6 मन्नू भंडारी

मन्नू भंडारी पुरातन संस्कारों और रूढ़ियों से अपने सहज मन को सरलता से तोड़ लेती है। अपने अनुभवों के आधार पर आज की नारी की सामाजिक नियति और मानसिकता को बड़ी गहराई से उभारती है। उनका सृजन क्षेत्र अपने तीखे तेवर के कारण कई सम्भावनाओं से परिपूर्ण है। नैतिक सम्बन्धों के बदलाव और उसमें पड़ने वाली सम्बन्धों की दरार को लेखिका ने अपनी विशिष्ट दृष्टि प्रदान की है। महिला होने के बावजूद स्त्री–पुरुष सम्बन्धों में जिस प्रमाणिकता और तटस्थता का परिचय मन्नू भंडारी ने दिया वह श्लाघनीय है। इनके लेखन की कतिपय विशिष्टताएँ रेखांकित योग्य है –

- आधुनिकता के नए आयाम और नवीन मान्यताओं का चित्रण।
- यथार्थ परक संवेदनाएं, परिवेश के प्रति गहरी सहानुभूति दृष्टव्य है।
- आपका बंटी–एक सम्बन्ध के बनने और दूसरे के टूटने के बीच दरार की कहानी है। यह उपन्यास दाम्पत्य जीवन की समस्याओं से उभरकर नए चरित्रों के साथ खड़ा होता है।

आपका बंटी, एक इन्च मुस्कान, महाभोज, एक कहानी यह भी आपकी चर्चित कृतियाँ है।

आपका बंटी

स्त्री मुक्ति की चुनौतियाँ और परिवार केन्द्रित यह उपन्यास दर्शाता है कि – बंटी की माँ और पिता में माता का दाम्पत्य जीवन सुखी नहीं है। दोनों के बीच तलाक के पश्चात् नए जीवन साथी का चुनना, बंटी का बाल मनोविज्ञान, उलझने, तनावों का संघर्ष का चित्रण मार्मिक है।

बंटी सोचता है – "उसकी मम्मी अब उसकी नहीं रही। किसी और की हो गई है। क्या मम्मी को पापा की याद नहीं आती ?"[2] बंटी अपने पिता से अपना अलगाव नहीं कर पाता है। शकुन डॉ. जोशी के साथ स्वाभाविक जीवन नहीं जी पाती। शकुन के लिए विवाहित जीवन अंधेरी सुरंग थी, वह उससे कट जाने को बाध्य थी। अजय बंटी को

1 गीते नीहार, पृ.82 (अशोक वक्त की नई पुत्रियाँ में टिप्पणी)
2 आपका बंटी, पृ.35

होस्टल भेजने को उत्सुक है। शकुन बंटी को बेटा ही नहीं हथियार भी मानती है। वह अजय को टॉर्चर कर सकती है। वह बंटी को लेकर सोचती है – उसे लगता है वह पूरी तरह मम्मी की तरफ है। कभी उसे पिता का अभाव खलता है। समझदार होने की पीड़ा बंटी जान गया है।

रात में जब मम्मी डॉ. जोशी की कार से उतरी तो बंटी लोहे के फाटक के पास खड़ा रो रहा था। वह अपने को फालतू सा महसूस करता है। वह शकुन और अजय के बीच का सेतु नहीं बन सका। बंटी को दरार ही बनना है तो मीरा व अजय के बीच में बने। मानसिक और शारीरिक सच्चाइयों पर से परदा हटाती लेखिका – "सू–सू से सारा बिस्तर गीला हुआ है। भय नहीं, शर्म। सबके बीच नंगे हो जाने जैसी शर्म। मम्मी–डॉक्टर के सम्बन्ध की प्रतिक्रिया – पलंग को देखते ही गंदी गंदी बातें ....।[1] बच्चा माँ से बदला लेने के लिए पिता से जुड़ना चाहता है। कलकत्ता होस्टल में जाने की कल्पना में व्यस्त हो जाता है। आपका बंटी – सच के बोध के साथ रोचक, संतोषजनक कृति है। जटिल समस्याओं का सरलीकरण है। दाम्पत्य जीवन का नया पहलू और चुनौती को प्रस्तुत किया गया है।[2] बच्चे की त्रासदी का यथार्थ है, तलाक का आधुनिक स्वर है। पुनर्विवाह का परिणाम है। चरित्रों की समस्याएँ है। पात्रों का भाव लोक है। छोटी छोटी घटनाएँ, मौलिकता, रोचकता, स्वाभाविकता, मार्मिकता आदि गुण है। शिक्षित मध्य वर्गीय परिवार का चित्रण है। बेटी के भावी जीवन का पतन अपने परिवेश की परिस्थितियों के कारण है, जिद्दी, डरपोक, अकेलापन मम्मी से बेहद प्यार, बिस्तर में 'सू–सू' डॉ. जोशी के प्रति ईर्ष्या – सबकुछ स्वाभाविक है। शकुन नौकरी पेशा, स्वतंत्र विचारों की महिला, दृष्टिकोण प्रगतिशील, व्यक्तित्व को निखारना चाहने वाली, डॉ. जोशी से शादी के बाद पति का महत्व स्वीकारती है, परन्तु बच्चे की प्रति मातृत्व में स्वयं को असफल पाती है। अजय – अहम् से पीड़ित, शकुन से असंतुष्ट पिता के रूप में अधिक उदार, नए जीवन में बेटे को आत्मसात् नहीं कर पाता है। यथार्थवादी व्यक्ति है। वह सहनशील होकर बेटी के कई आपत्तिजनक व्यवहारों को सहन कर जाता है। "सात साल से मैं अकेले बेटी को पाल रही हूँ। उसका हित – अहित मैं दूसरों से ज्यादा जानती हूँ।" कहने वाली नारी – आधुनिकता होने के बावजूद अपने कर्तव्य से विमुख नहीं है। शकुन सोचती है – "सच हम लोग बंटी को एक साधन ही समझते रहे। अपने अपने अहम् अपनी–अपनी महत्वकांक्षाओं, अपनी अपनी कुंठाओं के संदर्भ में ही सोचते रहे। बेटी के सन्दर्भ में कभी

1 वही, पृ.93
2 परमानन्द श्रीवास्तव – उपन्यास का यथार्थ और रचनात्मक भाषा, पृ.135

सोचा ही नहीं।" आपका बंटी उपन्यास – महानगरीय जिन्दगी के तलाक पहलू को तीखी वास्तविकता देता है। बंटी हमारे सामने आधुनिक युग के लिए एक चुनौती बनकर खड़ा है। शायद हम जवाब देने में असमर्थ है।

महाभोज

यह उपन्यास महिला लेखन के क्षेत्र में एक नया क्षितिज कायम करने वाला, महिला लेखन में आए गतिरोध को तोड़ने वाला, नए मोड़ का संकेत देने वाला जनवादी रचना धर्मिता से जोड़ने वाला है। यह अपने समय की प्रतिबद्ध रचना है। इसमें समकालीन जीवन का पूरा पक्ष रचनात्मकता के साथ स्वीकार किया गया है।

प्रस्तुत उपन्यास में हरिजन युवक की हत्या किस प्रकार होती है, उसे छिपाने के लिए कौन–कौन सी राजनीतिक चालें चली जाती है का लेखा–जोखा है। आम आदमी की नियति की व्यथा–कथा, गाँव की जनता का निर्मम शोषण, मानवीय सम्बन्धों की बदरंग होती चटख, मक्कार राजनीति, चुनाव – अपराध के बीच ममता – संघर्ष की सच्चाईयाँ है। आगजनी और बिसू की हत्या के प्रमाण के लिए सक्सेना का कथन – "चुप रहो रूक्मा" उसकी आवाज रूक्मा को बिंदा जैसी लगती है। चौंकी हुई रूक्मा का सोचना कि बिंदा जेल में है, अत्यन्त प्रतीकात्मक है। राजनीति भले ही आम आदमियों की आशा, आकांक्षाओं की लाश को गिद्धों, कौवों की तरह नोंच–नोंच कर खाती रहे, भोज जैसा स्वाद लेती रहे, पर बिसू का संधान बिन्दा तक और बिन्दा का आक्रोश सक्सेना तक निरन्तर संक्रमणित होता रहेगा। लेखिका ने महिलाओं का राजनीति में प्रवेश हस्तक्षेप का सांकेतिक प्रयोग करते हुए वास्तविकता के मर्म को आन्तरिक पहचान के साथ एक मानवीय दृष्टि से परिपूर्ण रूप में प्रस्तुत किया है।

एक कहानी यह भी

यह उपन्यास[1] मन्नू भंडारी की – अपनी जिन्दगी की कहानी है।[2] लेखिका लिखती है –

- अपनी कहानी लिखते समय सबसे पहले तो मुझे अपनी कल्पना के ही पंख कतर कर एक ओर सरका देने पड़े।

---

1 भंडारी – मन्नू – एक कहानी यह भी – राधाकृष्ण प्रकाशन (पेपर बैक्स), नई दिल्ली, 2007, ISBN-978-81-8361-239-5 Rs.125/-

2 स्पष्टीकरण – मैंने अपनी कहानी लिखने की जुर्रत की है, पृ.7

- यहाँ न किसी के साथ तादात्म्य स्थापित करने की अपेक्षा थी, न सम्भावना।
- यह शुद्ध मेरी ही कहानी है। जिनसे मैं गुजरी हूँ उसका ब्यौरा जस का तस है। यह आत्मकथा नहीं है। कहानी जिंदगी का एक अंश मात्र है जो मेरी लेखन यात्रा पर केन्द्रित है। आज अपनी अच्छाईयों–बुराईयों के साथ मैं जो जी रही हूँ, जो भी हूँ, जैसी भी हूँ, उसका बहुत सा अंश विरासत के रूप में पिता से मिला।[1]

इस उपन्यास का पूरक प्रसंग

मन्नू भंडारी इस उपन्यास का पूरक प्रसंग राजेन्द्र यादव के साथ वाला प्रकरण मानती है और बेबाक पूरी ईमानदारी, तटस्थता बरतती हुई स्पष्ट भी करती है –

- निजी जीवन की त्रासदियों से भरा है पूरक प्रसंग।
- मेरा और राजेन्द्र यादव का सम्बन्ध निजता अंतरंगता के दायरे में भी आता है।
- लेखन के कारण ही हमने विवाह किया। हम पति पत्नी बने।
- मेरे लेखकीय जीवन को राजेन्द्र ने प्रेरित–प्रोत्साहित किया। वे प्रेरणा स्त्रोत भी रहे।

पति–पत्नी के रूप में निरन्तर प्रहार, निरन्तर खंडित होता आत्म–विश्वास, लेखन में आया गतिरोध – पूर्ण विराम पर ही समाप्त हुआ। इसमें तथ्यों को तोड़ने–मरोड़ने की कोई कोशिश नहीं की गई है। न ही किसी दुर्भावना से विकृत करने की। यह लेखन आवेगहीन तटस्थता के साथ हुआ है। मन्नू भंडारी नहीं टूटी इसका कारण – जिजीविषा, सादगी, आदमीयत, रचना संकल्प ही है। जीवन की स्थितियों पर रोशनी डालने वाला है।[2] एक कहानी यह भी – यह रचना लेखिका की लेखकीय प्रतिबद्धता, ईमानदारी व यथार्थ परक लेखन, नारी संघर्ष को रेखांकित करता है जो नारी मनोदशा, निर्णायक समता, रचनात्मकता व विमर्श युक्त है।

स्वयं के बारे में खुद निर्णय लेना

मन्नू भंडारी मानसिक यन्त्रणा, जान लेवा दंश, छटपटाहट, टूटता–रिसता–कचोटता आत्मविश्वास, कटी–छँटी सी सिकुड़ती रहने वाली बेजान सी

---

1 वही, पृ.78
2 वही, पृ.10

जिन्दगी को छोड़कर स्वयं के बारे में खुद निर्णय लेती है तथा अकेली उज्जैन आ जाती है। वहाँ पर एक गमले की ढेर सारी पत्तियों का झड़ना, पौधे का झुंड भर रह जाना, माली का बेरहमी से पौधा उखाड़ते देखना तथा इनसे मोह रखने से काम नहीं चलेगा सुनना सोचने को विवश करता है। जो रेशे सड़े गले थे, जिन्होंने पौधे की जीवन शक्ति को कुन्द कर दिया था, उन्हें बड़ी निर्ममता से तोड़ फेंका। जो स्वस्थ थे, उन्हें साफ करके सहेजा सँवारा। क्या अपने को पुर्नजीवित करने के लिए अपनी जड़ों की तरफ लौटना नहीं है ? यही जीवन शक्ति –

- सारे सड़े गले रिश्तों के रेशों को उखाड़ती है।
- स्वास्थ्य को सँवारती है।
- नए सम्बन्धों, संदर्भों की मांग करती है।
- चुनौती स्वीकार करके टहनियों के अंकेरण की प्रक्रिया लेखन के रूप में स्वीकार कराती है।[1]

माँ के रूप में एक औरत की पीड़ा का अनुभव

मन्नू भण्डारी एक लेखिका के रूप में जब माँ को देखती है तो वह औरत की पीड़ा का अनुभव करते हुए लिखती है –

- माँ पढ़ी–लिखी नहीं थी। उसमें धरती से कुछ ज्यादा ही धैर्य व धनशक्ति थी। पिता की हर ज्यादती को अपना प्राप्य मानती थी। बच्चों की हर उचित –अनुचित फरमाइश और जिद को अपना फर्ज समझकर बड़े ही सहज भाव से स्वीकारती थी। उन्होंने जिन्दगी भर अपने लिए कुछ नहीं माँगा, चाहा नहीं, केवल दिया ही दिया।[2]

लड़की में नेतृत्व की क्षमता

मन्नू ने एक लड़की के रूप में शीला अग्रवाल अध्यापिका की प्रेरणा से प्रभात फेरियाँ, हड़तालें, जुलूस भाषण देना, हाथ उठाकर नारे लगाना, लड़कों के साथ आजादी के कार्यक्रमों में भाग लेकर न सिर्फ पिताजी से टक्कर ली वरन् सारे कॉलेज की लड़कियों पर रौब से सभी छात्राओं का नेतृत्व भी किया। धीरे–धीरे पिताजी का रौब गर्व

---

1 वही, पृ.14–15
2 वही, पृ.19

में बदलने लगा। एक लड़की के रूप में बिना किसी झिझक के धुँआधार भाषण देकर अपनी पहचान बनाई। यह वास्तव में नारीगत सक्रियता व अस्तित्व की पहचान थी।[1]

मीरा में क्रान्तिकारिता का बोध

मन्नू भण्डारी का मानना है कि राजस्थान के राज महलों में जहाँ स्त्री को उँगली तक दिखाना वर्जित है, वहाँ साधु सन्तों के बीच बैठकर मंजीर बजाती, नाचती गाती मीरा से भी अधिक कोई क्रान्तिकारी हो सकता है भला? आज स्त्री विमर्श की जद्दोजहद के ढोल ढमाके तो देखने–सुनने को बहुत मिले लेकिन ऐसा क्रान्तिकारी चरित्र शायद ही कहीं देखने में आया हो।[2]

अध्यापिका की आत्मीयता

मन्नू भण्डारी को अपनी छात्राओं के साथ प्रगाढ़ आत्मीयता थी। उनसे स्नेह सम्मान मिलता था जो शक्ति थी। वह लिखती है – "अपने पहले प्रेम की असफलता की टूटन जो मेरे शरीर में रोम–रोम में चर्म रोग के रूप में फूटी थी, मैंने इन छात्राओं के बीच ही झेली थी।"[3]

कदम–दर–कदमों का बढ़ना

पहले कहानी लिखना, साहित्य के क्षेत्र में कदम रखना, स्कूल की लाइब्रेरी के लिए किताबें मँगवाने के सिलसिले में राजेन्द्र यादव से परिचय, विवाह, गृहस्थी में प्रवेश, बिटिया का जन्म और जिन्दगी के मोड़ का सिलसिला कदम दर कदम बढ़ता गया।[4] जब कहानी स्वीकृत तो लगा – "मेरा अपना वजूद स्वीकृत हुआ है, अपनी एक अलग और विशिष्ट पहचान बनाता वजूद"[5] यह नारी चेतना के लिए प्रेरणास्पद है।

परित्यक्ता का दुःख

अकेली कहानी के माध्यम से परित्यक्ता का दुःख प्रकट करते हुए लेखिका लिखती है – "सोमा बुआ विधवा नहीं परित्यक्ता है। पति है पर साथ नहीं रखता।

---

1 वही, पृ.23–25
2 वही, पृ.28–29
3 वही, पृ.33
4 वही, पृ.34
5 वही, पृ.37

अकेलेपन के साथ अपमान का दंश झेलती है। साल में एक महीने के लिए पति आता है उसकी गतिविधियों पर अंकुश लगाने के लिए।[1]

औरतों की मजबूरी के साथ सहानुभूति

आनन्दी – की मजबूरी। रात दिन मेहनत करती कूटती पीसती। नशाखोर निकम्मा पति सारी कमाई छीन लेता, मारता – पीटता। असली नशा आनन्दी को पति की सेवा करने का।[2] कहानी के माध्यम से सहानुभूति पर स्त्री विमर्श हेतु विद्रोह की प्रेरणा का सूत्रपात भी है।

नारी का अन्तर्द्वन्द्व

एक लड़की का दो लड़कों के बीच बँटा होना समाज के लिए गोपनीय? यही सच है तथा फिल्म रजनीगन्धा का कथानक नारी सूत्र का अन्तर्द्वन्द्व के माध्यम से नया प्रस्तुत करता है।[3]

न घर तोड़ना न पत्नी छोड़ने का सत्य

मन्नू भण्डारी स्त्री सुबोधिनी कहानी की नायिका के माध्यम से समस्त नारी को विमर्श प्रदान करती है पूर्व में विवाहित पुरुष के प्रेम में नहीं फँसे उलझे साथ नहीं निभेगा, मूर्खतापूर्ण भावुक बातों पर विश्वास भी न करे क्योंकि न कोई अपना घर तोड़ता है और न पत्नी को छोड़ता है।[4] बर्बाद केवल लड़कियाँ होती है जो विश्वास करके अपना सब कुछ अर्पित कर देती है। यह कुँवारी लड़कियों को बोध कराता स्त्री विमर्श है। मन्नू भण्डारी मानती है कि आर्थिक संकट जिन्दगी का सारा रस निचोड़ लेता है।[5] लेखकीय अनिवार्यताओं के साथ राजेन्द्र से टकराव शुरू हो गया।[6] यह स्त्री–पुरुष की आम समस्या है। पुस्तकें, पत्र पत्रिकाएँ साहित्यकारों से मेल मिलाप, लिखने का वातावरण मिला लेकिन "छत जरूर हमारी एक होगी लेकिन जिन्दगी अलग–अलग, बिना एक दूसरे की जिन्दगी में हस्तक्षेप किए बिल्कुल स्वतन्त्र, मुक्त और अलग सुनकर वह अवाक रह गई।

---

1 वही, पृ.43
2 वही, पृ.45
3 वही, पृ.47
4 वही, पृ.49
5 वही, पृ.55
6 वही, पृ.56

मन्नू भण्डारी बताती है कि पति के रूप में राजेन्द्र से पीड़ाएँ शरीर से अधिक मन की होती थी।[1] प्रसव को लेकर भी वह गम्भीर नहीं थे। उनकी उदासीनता भी आधुनिक जीवन के पैटर्न का हिस्सा था।[2] उसके पास प्रतिरोध का एक ही हथियार था जुबान। उसमें छुरी–काँटे उग आए थे। वह गुस्से में सब सुनाती थी और राजेन्द्र चुपचाप सुनते थे। मन्नू भण्डारी लिखती है "उनको नकार देना मुझे अपने आपको नकार देना जैसा लगता था।"[3] पिताजी की इच्छा के विरुद्ध हुई इस शादी को वह असफल नहीं होने देना चाहती थी। यह चुनौती थी।

बच्चों की जिम्मेदारी

बच्चों की जिम्मेदारी स्त्री निभाती है पति लापरवाही बरतता है। क्या स्त्री इसे बोझ माने ? जब राजेन्द्र जी नौकरी नहीं करना चाहते, कर ही नहीं सकते तो पत्नी के नौकरी कर घर चलाने पर कुंठाएँ पालकर जीवन को तकलीफ देय तो न बनाए।[4] टिकू–बच्ची के जन्म से लेकर पालने पोसने क्या किया इन्होंने ?"[5] कथन लापरवाही का प्रतीक है जबकि जिम्मेदारी बराबर की है।[6] आपका बंटी को लेकर एक प्रतिक्रिया –

- एक स्त्री होकर भी आपने मातृत्व को कलंकित किया। हमारे यहाँ की स्त्री अपने बच्चों के लिए सब कुछ त्याग देती है।
- त्याग, सेवा, अपने को होम देना, मिटा देना क्या यही है स्त्रीत्व के गुण? यह संस्कारों की बात है। लेखिका ने स्त्री की शिक्षा के साथ जागरूकता, स्वतन्त्रता, अस्मिता को आधुनिकता के साथ उभारा है।[7] बेटी – अपनी जिन्दगी के फैसले खुद लेने लगे, खून के सम्बन्धों को नकारे, जिन्दगी का अनुभव हमसे ज्यादा उसका हित कौन देख सकता है ?[8] जैसी बाते स्त्री विमर्श चेतना का मुद्दा है।

पति के वर्चस्व को (परमेश्वरत्व) को स्त्री द्वारा चुनौती देने पर – आवाज बुलन्द करने पर – सम्बन्धों में दरारें पड़ती है, सम्बन्ध टूटते हैं, स्त्री स्वयं को मुक्त करती है, अकेलेपन का सन्नाटा पसरता है। बच्चों की उपेक्षा मातृत्व की उपेक्षा है। यह त्रासदी है।

---

1 वही, पृ.59
2 वही, पृ.60
3 वही, पृ.60
4 वही, पृ.67
5 वही, पृ.98
6 वही, पृ.117–118
7 वही, पृ.118
8 वही, पृ.119

यह कृति विवाह संस्था पर कई तरह के सवाल भी खड़े करती है। क्या विवाह संस्था के विरुद्ध झंडा उठाना वाजिब है ? मीता ने विवाह से इंकार करके परिणीता बनकर रहना स्वीकार नहीं किया तो फिर इतना आहत होने की क्या जरूरत?[1] यह विचारणीय कृति है जो कई नए आयाम खोलती है।

3.7 ममता कालिया

ममता कालिया ने दाम्पत्य जीवन का अत्याधिक साहसी चित्रण उन्मुक्तता और यथार्थ के तेज मिजाज के साथ किया है। यौन प्रसंगों का खुला चित्रण, औदात्य और पवित्रता की टूटन, शारीरिक यौन व्यापार की नग्नता का चित्र, एक विशेषता लिए हुए हुआ है। स्त्री–पुरुष लेखन की हदबंदियों को तो तोड़ती, यह लेखिका पात्रों और उनकी जीवनगत परिस्थितियों के माध्यम से मनुष्य चरित्र को प्रामाणिकता के साथ प्रकट करती है। इनके चर्चित उपन्यास – बेघर, दौड़, नरक दर नरक, एक पत्नी के नोट्स, लड़कियाँ, प्रेम कहानी आदि है।

ममता कालिया – एक ऐसी साहित्यकार के रूप में जानी जाती है, जिन्होंने अपने साहित्य में, अधिकांशतः नारी की विविध समस्याओं को प्रभावशाली रूप में चित्रित करते हुए नारी जीवन की यथार्थस्थिति का अंकन किया है। अपने स्त्री–पुरुष की समानता पर विशेष बल देते हुए, नारी अस्तित्व के प्रति सजगता दर्शायी है।

बेघर

यह उपन्यास स्त्री–पुरुष के शारीरिक सम्बन्धों को केन्द्र में रखकर लिखा गया है। आधुनिक समाज में पुरुष की संस्कारबद्ध जड़ता तथा संदेहवृति को उजागर करता है। कुँवारापन की परम्परागत धारणा नायक के जीवन की दिशा बदल देती है। सेक्स सम्बन्धी बदलती मानसिकता को उजागर करना, पुरानी धारणाओं पर चोट करना लेखिका का दृष्टिकोण रहा है। विवाह के पश्चात् संभोग के समय परमजीत को अहसास होता है कि उसकी पत्नी कुँवारी नहीं, शादी से पूर्व उसकी अलग दुनिया रही। पत्नी न चीखी, न पुकार, नहीं खून आया। परमजीत पर पहला न होने का दुःख हावी हो गया। परमजीत का जीवन टूटन और नैराश्य से घिर जाता है। रमा की अतिश्योक्ति उसे मशीन बनाती है। तनाव, यातना संस्कारबद्धता का चित्रण, सेक्स की रुढ़िगत मानसिकता का दृष्टिकोण इसके लेखन में रहा है।

---

1 वही, पृ.226

पुरुष–नारी की कुंठा की प्रस्तुति, पुरुष प्रधान संस्कृति में एक पक्षीय यौन पवित्रता, एक निष्ठता, नैतिक धारणाओं के भ्रम जाल का स्थान, नारी की चेतना व आत्मबोध, मूल्य निर्वाह की स्वस्थ दिशा को उभारते हुए दृष्टिकोण को व्यक्त किया गया है इस उपन्यास में। बम्बई में रहने वाले मध्यम वर्ग का चित्रण, रोमांस और विवाह के नए प्रसंगों का उद्‌घाटन, सार्थक खुलेपन की खोज, रमा के चरित्र में अतिरंजनाएँ तथा व्यक्ति के अन्तर्मन की गहराइयों का स्पर्श, संस्कारग्रस्तता, सम्बन्धों का अजनबीपन, भीतरी संघर्ष का मार्मिक स्वरूप लिए यह उपन्यास[1] महत्वपूर्ण है।

इसका कथानायक घर के होते हुए भी बेघर है। रमा की रुढ़िग्रस्तता नायक के आत्मनिर्वासन पर अंतिम मुहर लगा देती है। दो नगरों का रेशा–रेशा उघाड़ती यह विवाह व प्रेम की तथा अन्तर व अन्तराल का अध्ययन प्रस्तुत करती है। परमजीत के अवचेतन में प्रेम व घर एक सपना है। सपने में अश्लील यौन आकांक्षाओं की तृप्ति इच्छावस्तु है। वह सजीव नारी देह चाहता है। मन में दबी कुत्सित इच्छाएँ कहती है – "हमें इतना पास बैठना चाहिए कि मैं तुम्हें गोद में डालकर तुम्हारे ऊपर हाथ फेर सकूं, कहीं भी।"[2] पुरुष प्रेमी का कथन "अकेले में तुम्हारे तलवे सहलाकर, तुम्हारे बाल खोलकर, तुम्हारा ब्लाउज मसलकर तुम्हें एक ही पल में लड़की से औरत बना दूंगा सजी।[3] स्त्री देह पर मालिकाना हक जताता पुरुष कहता है – "ये होंठ भी मेरे हैं, आँखे भी मेरी है, गाल भी मेरे है, ठोड़ी भी मेरी है....।[4] संजीवनी को विपिन ने रेस्तरां के केबिन में जबरन दबोच लिया तथा खड़े खड़े दुर्व्यवहार किया था। वह खुद अपराध बोध से मुक्त नहीं हो पायी। विपिन उसकी दुनिया खत्म कर मारीशस जा बैठा।

पीटर बम्बई के लिए कहता है – पटरियों पर बिकती है रात में औरतें। चार रूपये में औरत मिल जाती है।[5] परमजीत को लगता है अगर केकी ने तमककर उसे नया घर तलाश करने को कह दिया तो वह बेघर हो जाएगा। इतने लम्बे–चौड़े शहर में वह कहाँ जाएगा ?[6] वह संजीवनी को कहता है –

मुझे इंतजार करना है सिर्फ

किसका ?

---

1 कालिया – ममता – बेघर – वाणी प्रकाशन, 2009, Rs.200/- ISBN-81-7055-900-6
2 वही, पृ.78
3 वही, पृ.83
4 वही, पृ.92
5 वही, पृ.28
6 वही, पृ.70–71

तुम्हारे साथ किसी कोने में सटकर बैठने का, ऐसी बातें मत करो।[1] यह कामुकता युक्त संवाद है। संजीवनी को भी अकेलापन खलता है वह सोचती है –

अब कभी कोई उसकी जिंदगी में नहीं आएगा।

कोई उसके नजदीक आकर नहीं बैठेगा।

कोई उसे वरसोवा में औंधी पड़ी नावों के पीछे नहीं ले जाएगा और कोई उसके ब्लाउज के बटनों से नहीं खेलेगा। वह अपने अकेलेपन में सिमटती जा रही थी।[2] परमजीत के कारण – उसका ब्लाउज रातों में कसने लगा था और गुसलखाने में अपने बदन पर तिल ढूँढ़कर सँकुचाने लगी थी। उसे परमजीत पौरुषमय और संवेदनशील लगता था तथा परमजीत को वह संतुलित तथा धीरज शील लगती थी।[3] जब परमजीत उसे मसलकर, सहलाकर, गुदगुदा कर उत्तेजित करता है तो संजीवनी निढाल हो गयी। ऐसे ही उस क्षण में परमजीत को लगा जैसे उसने गर्म मोम में अपने को डाल दिया है वह उसमें फँसता गया।[4] परमजीत को तकलीफ हुई – वह पहला नहीं था। लड़कियों के कुँवारेपन की पहचान चीख चीखकर खून से सम्बद्ध की थी।[5] उसे विश्वास नहीं हो रहा था।

विपिन ने उसे एक ठंडी लड़की कहा था। वह उसे जंगली कहीं के कह पाई। उसे विपिन से अरुचि हो गई। संजीवनी के लिए यह पहला अनुभव था। वह परमजीत को बताना चाहती थी कि उस पर आकस्मिक आक्रमण हुआ था।[6] वह लड़खड़ाकर कुर्सी पर गिर गई थी। उसे लगा था जैसे अन्दर लोहा चुभ गया है।[7] संजीवनी को अपने पर गुस्सा आ रहा था – उस समय न बोल पाने का। क्यों वह गुनाहगार की तरह आँसू बहाने लगी ? क्यों नहीं उसने परमजीत को झिझोंडकर कहा कि वह उस पर शक करने की हिम्मत कैसे कर सका ? क्या संजीवनी का अब तक सारा प्यार दुलार सिर्फ – इस अप्रिय छोटी सी दुर्घटना से वह नजर अन्दाज कर देगा।[8] उधर परमजीत ने–

उस स्मृति को मिटा दिया था। वह यों पीड़ित होकर बैठ गया जैसे वह ट्रक के नीचे कुचल गया हो। जब परमजीत रमा के साथ शादी करता है तो उसे लगता है – उसकी बीवी कुँवारी थी। सीधी सादी कुँवारी लड़कियों की तरह उसने रात काफी

---

1 वही, पृ.72
2 वही, पृ.82
3 वही, पृ.82–83
4 वही, पृ.92
5 वही, पृ.93
6 वही, पृ.99
7 वही, पृ.100
8 वही, पृ.100

तकलीफ बर्दाश्त की थी। अब वह बाकायदा बहुओं की तरह रसोईघर में बैठी चाय बना रही थी।[1] इस प्रकार इस उपन्यास में आधुनिकता व तनाव संस्कारबद्ध है। अरविन्द जैन ने इस उपन्यास को कौमार्य की अग्नि परीक्षा माना है। यह स्त्री के प्रति भोगवादी, सामंती व्यवहार में घर से बेघर की जाती संजीवनियों की अंतहीन व्यथा कथा है।

दौड़

दौड़[2] उपन्यास भूमंडलीकरण और उत्तर औद्योगिक समाज से प्रभावित युवा वर्ग के इक्कीसवीं सदी का वह परिदृश्य प्रस्तुत करता है जिसमें रोजगार नौकरी के रास्ते बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा खोलकर व्यापार की प्रतिस्पर्धा में लगातार भागते–दौड़ते जीवनयापन है। आर्थिक उदारीकरण, व्यापार प्रबन्धन, विज्ञापन विपणता, उपभोक्तावाद, मानवीय सम्बन्धों के समीकरण दौड़–तनाव, व्यावसायिकता की महत्ता है। इससे – पारिवारिक सम्बन्ध, भावात्मकता, आत्मीयता नष्ट हुई है। राष्ट्रीयता मनुष्यता की मर्यादाएँ टूटी है। जीवन संवेदना शून्य व मूल्यहीन हो गया है। उपभोक्ता वादी संस्कृति के नए चरित्र उभरे हैं। अपनी सास की मर्जी के खिलाफ प्रेम विवाह करने वाली पवन की माँ–पवन की पसंद स्टैला खाना पकाना सिखने पर दबाव डालती है।[3] पवन शिल्पा काबरा को बेवकूफ लड़की हमेशा गलत आदमी से मुखातिब होने वाली कहता है।[4] शहर में जगह जगह महिलाओं ने घरों में खाना खिलाने का प्रबन्ध कर रखा है नौकरी पेशा छोड़–अविवाहित युवक उनके घर जाकर खाना खा लेते हैं।[5]

रोटी–सब्जी–दाल न रायता न चटनी न सलाद। प्रति व्यक्ति एक वक्त 350/– रूपए इन महिलाओं को मौसी कहा जाता है। रात को 9.30 के बाद खाना नहीं मिलता। पवन शिल्पा काबरा को हल्केपन में शिल्पा का (ब्रा) कहता है।[6]

विज्ञापन मॉडल के क्षेत्र में कई लड़कियाँ आती है लेकिन कैमरा मेन ना पसंद करे तो सब बेकार। रोज पार्लर में सौन्दर्य उपचार की आड़ में गलत धन्धे होते हैं।[7] स्टैला – की कम्पनी गुर्जर गैस कम्पनी को कम्प्यूटर सप्लाई करती थी। उम्र 24 साल,

---

1 वही, पृ.148
2 दौड़ – कालिया ममता वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011, Rs.125/- ISBN-81-7055-714-3
3 वही, पृ.7
4 वही, पृ.10
5 वही, पृ.16
6 वही, पृ.19
7 वही, पृ.34

अपने माता–पिता के साथ आधी दुनिया घूम चुकी थी, जीन्स व टॉप में वह लड़का ज्यादा लड़की कम नजर आती थी। उसके ऑफिस में हर समय–गहमा गहमी रहती। फोन बजता रहता, फैक्स आते रहते, कम्प्यूटर्स का ऑर्डर मिलता, कान्फ्रेंस से बुलावा आता, कई तकनीशियन रख रखे, व्यवसाय के हर पहलू पर उसकी तेज नजर थी।[1] पवन अपनी माँ को बताता है – स्टैला मेरी बिजनेस पार्टनर, लाइफ पार्टनर व रूम पार्टनर है।[2] पवन की माँ रेखा कहती है – "मैंने तो ऐसी कोई लड़की नहीं देखी जो शादी के पहले ही पति के घर में रहने लगे।"[3] इस पर पवन का तर्क – सौराष्ट्र में शादी तय होने के बाद लड़की महीने भर ससुराल में रहती है। लड़का लड़की एक दूसरे के तौर तरीके समझने के बाद ही शादी करते हैं।" अनुपम बताता है किसी दिन स्टैला भाभी हमारे लिए टोस्ट और काम्पलोन तैयार कर देती है। पर ज्यादातर तो ऐसे ही भागते हैं हम लोग।[4]

भरत–रोटी बनाने वाली रेखा से पूछता है तुम कितनी रोटी खाती हो? यह वाक्य रेखा के मन पर ढेले की तरह पड़ा।[5] स्टैला गुडमॉर्निंग कहती हुई रेखा को गुलदस्ता देती है, बाय सी यू कहते हुए इवनिंग मेम टेक केयर कहकर चली जाती है। पवन अपने कई काम बताते हुए शादी के लिए 3–4 दिन का समय खाली रख सकता है। रेखा को शादी से पहले बेटे का पराया हो जाना अखरता हैं वह लड़की को धोखा नहीं दे सकता। रेखा – स्टैला के बारे में कहती है – वह व्यवस्थापक है मैनेजर है। बैठे–बैठे कम्प्यूटर जोड़ती है। एक समय का खाना नौकर बनाता है दूसरे समय का बाजार से आता है। दूध तक गरम करने में दिलचस्पी नहीं है उसे।[6] रेखा और राकेश को सामूहिक विवाह में ज्यादा गरिमा, विश्वसनीयता लगती है न माता पिता की महाजनी भूमिका, न नाटकीयता। स्वामी जी की उपस्थिति में वधू को एक सादा मंगलसूत्र पहनाया जाता है फिर विवाह को नोटरी द्वारा रजिस्टर किया जाता है। अन्त में सभी दर्शकों के बीच लड्डू बाँट दिए जाते हैं।[7] लेखिका का संकेत क्या यही होगा भविष्य में विवाह का स्वरूप ? स्टैला दुपट्टा नहीं संभाल सकती जीन्स–टॉप पर आ जाती है। स्टैला कैलोरी गिनकर खाना निगलती है, स्वाद पर ध्यान नहीं देती। संवाद योजना –

---

1 वही, पृ.39
2 वही, पृ.51
3 वही, पृ.52
4 वही, पृ.53
5 वही, पृ.54
6 वही, पृ.60
7 वही, पृ.62

- वह दाल रोटी तो बनाना सीख ले।
- खाना बनाने वाला 500/– रूपए में मिल जाएगा।
- इसे बावर्ची थोड़ी बनना है।
- माँ – आज के जमाने में स्त्री–पुरुष का उचित अलग–अलग नहीं रहा है। माँ – समय की दस्तक पहचानो। इक्कीसवीं सदी में ये सड़े गले विचार लेकर नहीं चलना है हमें।
- इनका तर्पण कर डालो।[1] क्या सैटेलाइट व इन्टरनेट से दाम्पत्य चलेगा ?[2] यह एक चुनौती पूर्ण प्रश्न है। घरों में माइक्रोवैव, वेक्यूम क्लीनर का उपयोग होने लगेगा।[3]

बाजार में सब चीज मोल मिल जाती है पर बच्चे नहीं मिलते।[4] सभी ने निर्णय लिया –

वसीयत नामा संभालकर रखना, बैंक खातों का विवरण रखना

आल्मारी में 2–4 हजार रूपये रखना। कभी भी आकस्मिक कोई घटना हो सकती है।

सिन्हा साहब कहते है – मैंने तो गऊदान भी जीते जी कर दिया। पता नहीं अमित बम्बई से आकर यह करे न करे। इस प्रकार दौड़ इक्कीसवीं सदी मे स्त्री पुरुष सम्बन्धों का परिदृश्य प्रस्तुत करने वाला उपन्यास है। नयी पीढ़ी–पैसे ग्लैमर, भव्यता, चकाचौंध की दीवानी किसी के भी कन्धे पर पाँव रखकर सफलता का चरम चूमना चाहती है। उसके लिए – सामाजिक बन्धन, परिवार, अपनापन, ममत्व सब छलांग है।[5] टेक्नीकल जीवन के आदी हो चुके बच्चों को – अपने सपने, अपने भविष्य, अपने वैभव के आगे सम्बन्धों की गरमाहट कसक बेमतलब लगती है।[6] हमने समय की क्रूरता देखी है तो अब समय को भी हमारी क्रूरता देखनी होगी।[7] मनुष्य उपभोक्ता संस्कृति व्यावसायिक संस्कृति बनाने को आतुर है। ऐसा क्यों ?

---

1 वही, पृ.63
2 वही, पृ.65
3 वही, पृ.75
4 वही, पृ.82
5 वही, पृ.89
6 वही, पृ.90
7 वही, पृ.104

3.8 प्रभा खेतान

प्रभा खेतान भारतीय साहित्य की विलक्षण बुद्धिजीवी–दर्शन, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, विश्व बाजार और उद्योग जगत में गहरी जानकारी रखती हैं। यह सक्रिय स्त्रीवादी लेखिका है।[1] उन्होंने स्त्रीवादी लेखन का व्यापक अध्ययन कर, अपने समाज में उपनिवेशित स्त्री के शोषण, मनोविज्ञान, मुक्ति के संघर्ष पर विचारोंत्तेजक लेखन भी किया। इनके चर्चित उपन्यास आओ पेपे घर चलें, छिन्नमस्ता, पीली आँधी, अग्निसंभवा, तालाबंदी, अपने अपने चेहरे तथा आत्मकथा–अन्या से अनन्या है।

छिन्नमस्ता

स्त्री के अपने पैसे पर अलका सरावगी की टिप्पणी – "ऐ औरत, तूने जब भी किसी भी कोने में पुरुष से अलग अपना कुछ बनाया है तो तुझे इसकी कीमत देनी पड़ी है। लेकिन तुम इस अपने पैसे की, जो कभी तुम्हारा नहीं था और न कभी तुम्हारे हाथ में था, आखिरी कितनी कीमत चुका पाओगी?" छिन्नमस्ता की नायिका प्रिया – अपने होने का अर्थ खोजती, स्त्री विमर्श का प्रमुख महत्वपूर्ण पात्र बनती है। प्रिया जिस परिवार का प्रतिनिधित्व करती है वहाँ पर पैसे की कमी नहीं है, करोड़ों का व्यवसाय है, हीरे जवाहरात है, मौज मस्ती के लिए विदेश यात्राएँ है, महंगी शॉपिंग के अवसर है। ऐसे परिवार में स्त्री का आर्थिक, स्वावलम्बन परम्परागत, मस्तिष्क में प्रश्न खड़े करता है और माँ हम लोगों को रूपयों की जरूरत तो नहीं ? का उत्तर – "मुझे तो है बेटा"[2]

यहाँ पर प्रिया का दृष्टिकोण विचारणीय है – "परिवार को आर्थिक सहयोग देने की भावना मात्र स्त्री को आर्थिक स्वावलम्बन की ओर प्रेरित नहीं करती, उसके पीछे सामाजिक मनोवैज्ञानिक कारण भी है।"[3] परम्परागत स्थिति में – स्त्री की अधीनस्थ की भूमिका रही, कभी मूल्य लेकर, कभी मुफ्त में। यह व्यवस्था समाज द्वारा स्वीकार्य रही। जब स्त्री – असाधारण व्यवसायों के प्रति आकृष्ट हो तो उसका संघर्ष बढ़ जाता है। इसमें प्रमुख तत्व – अपनी प्रतिमा का उपयोग, अपने लिए पद प्रतिष्ठा प्राप्त करना, अपनी अलग पहचान बनाना है।[4]

जब स्त्री स्वयं का व्यवसाय करना चाहती है तो, अपना पैसा बनाने की चाहत, पूँजी की बनी बनाई व्यवस्था को तोड़ने की स्थितियाँ, प्रश्न खड़े करती है। प्रिया के

---

1 सरावगी – अलका, शेष कादम्बरी (राजकमल) 2001, पृ.78
2 खेतान प्रभा – छिन्नमस्ता, पृ.15
3 कपूर प्रमिल – कामकाजी भारतीय नारी, पृ.59–60
4 कस्तवार रेखा – स्त्री चिन्तन की चुनौतियाँ, पृ.179

सामने दो में से एक विकल्प चुनना था परिवार अथवा व्यवसाय। प्रिया ने व्यवसाय चुना प्रिया को नरेन्द्र कहता है – "मैं सीरियस हूँ फिर कहता हूँ – यदि आज तुम लन्दन गई तो मेरे घर में तुम्हारी जगह नहीं। यह भी साली कोई जिन्दगी है, जब देखो तब बिजनेस, फिर सुन लो, यहाँ मत आना, आओगी तो मैं धक्के देकर बाहर निकलवा दूँगा।"[1] स्त्री को केवल विवाह के लिए बड़ा किया जाता है न कि कैरीयर के लिए। पढ़ने लिखने की उसकी अभिरुचि का कोई मूल्य नहीं। विवाह के बाजार में उसकी बौद्धिक क्षमता नहीं, उसकी चमड़ी का रंग महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा।

प्रिया की अपनी पहचान, कमजोरियाँ व विशेषताएँ है – उसका व्यक्तित्व "काली लड़की" से पहचाना जाता है। वह अनचाही बेटी है। उसके व्यक्तित्व विकास के लिए कोई अवसर नहीं। वह किसी बड़े सपने के साथ बड़ी नहीं होती परन्तु अपने लिए हमेशा रास्ते निकाल लेती है। वह स्वयं को कमजोर दब्बू मानती है। उसे दादी माँ भाई द्वारा होने वाले बलात्कार के खिलाफ आवाज उठाने से मना करती है किसी से कहना नहीं। वह जानती है चुप रहना बलात्कार से लड़ने का विकल्प नहीं है। वह भाई को आत्महत्या की धमकी देती है और बार–बार बलात्कार की यातना से मुक्ति का रास्ता खोजती है। पति के धनाढ्य परिवार में पति के नाम से जाना जाना उसे स्वीकार्य नहीं है। उच्च वर्ग के दिखावटी जीवन के मध्य वह सहज नहीं होती। वह सामन्ती परिवेश के कच्चे चिट्ठे खोलती है। जहाँ स्त्री के पास पैसा है, जेवरात हैं, महंगी पार्टियाँ है, पैसा खर्च किया जा सकता है – ब्लू फिल्में देखी जा सकती है। जेवर पहने जा सकते है। जेवर बेचना चाहे तो संयुक्त परिवार की सम्पति है अतः कोई सम्भावना नहीं है। निजी रूप से उसका अधिकार नहीं। उसकी अभिरुचियों का कोई सम्मान नहीं वह कपड़ों पर खर्च कर सकती है किताबों पर नहीं। गरीब नौकर तक की मदद करने का उसे हक नहीं क्योंकि वह कमाती नहीं है। यदि स्त्री कुछ करना चाहती है तो उसे कमाना होगा अथवा गुलाम की तरह पति की दया पर जीवित रहना होगा।[2]

प्रिया कैरियर के प्रति सचेत होती है डमी पार्टनर बनकर अपना व्यवसाय अपना पैसा के लिए खून पसीना बहाकर, देश विदेश में व्यवसाय फैलाकर, राष्ट्रपति पुरस्कार प्राप्त करती है। अरविन्द जैन के अनुसार – शायद पहली बार – हिन्दी उपन्यास की नायिका – परिवार, पूँजी, परम्परा की चौखट लाँघकर, देशी विदेशी सभी सीमाओं के उस

---

1 खेतान प्रभा – छिन्नमस्ता, पृ.14
2 वही, पृ.194–197

पार तक – स्त्री के पक्ष में वकालत के साथ–साथ एक खतरनाक बौद्धिक विमर्श का जोखिम उठाती है।[1]

सामान्यतः परिवार स्त्री की प्रतिभा की अनदेखी करता रहा है – बौद्धिक क्षमता का उपयोग करना न प्रिया का परिवार जानता है न पति का। नरेन्द्र तो यह भी स्वीकार करने को तैयार नहीं होता कि प्रिया में कोई प्रतिभा है।[2] वह प्रिया के व्यवसाय को या तो रुपयों की हवस समझता है या अकेले मौज मस्ती करने का साधन।[3] प्रिया की उद्दाम महौवाकांक्षाओं में वह सेक्सुअल फ्रस्टेशन खोजता है।[4] जब तक प्रिया नरेन्द्र के अधीन रहती है तब तक स्वीकार्य था किन्तु कार्य जगत में जब वह स्वतंत्र निर्णय लेने लगती है तो पत्नी में खामियां नजर आने लगती है।[5] जब स्त्री की चेतना विकसित होती है तो – परम्परागत व्यवस्थाएँ चरमराती है, महौवाकांक्षाएँ अस्वीकार होती है। जब स्त्री अपने व्यवसाय में व्यस्त है – घर में समय नहीं दे पाती। पति की दैहिक जरूरतों को पूरा नहीं कर पाती तब परिवार बिजनेस का औचित्य नहीं समझता। अच्छी स्त्री की परम्परागत भूमिका से भिन्न छवि परिवार को स्वीकार्य नहीं है। अपने लिए जगह बनाती स्त्री से समाज को भी खतरा है तथा वह उससे परिवार को बचाकर रखना चाहता है व उसके प्रति आँखों में घृणा होती है। "ऐसी औरत को कैसे घर बुलाए ? कल हमारी बहू – बेटियाँ भी ऐसे कदम उठाएंगी।"[6] नरेन्द्र अपनी पत्नी के लिए आवारा हो गई[7] कहता है। ऐसी स्त्री को सजा मिलनी चाहिए। एक औरत लड़कर कुछ हासिल कर लेती है तो दूसरी औरतें भी तो उन्हीं रास्ते पर चलेंगी।[8] प्रिया जानती है कि व्यवस्था तोड़ने वाली स्त्री को समाज सौ कोड़े लगाता है।[9]

प्रिया का व्यक्तित्व दर्शाता है कि –

- अपराध बोध से निकलने में समय तो लगता है।
- अपराध बोध से बाहर आना संभव है।
- मृत सम्बन्धों को ढोने में जितनी ताकत लगती है उससे एक चौथाई ताकत में व्यापार किया जा सकता है।

---

1 जैन अरविन्द – औरत अस्तित्व और अस्मिता, पृ.56
2 खेतान प्रभा – छिन्नमस्ता, पृ.215
3 वही, पृ.10–11
4 वही, पृ.164
5 वही, पृ.203
6 वही, पृ.200
7 वही, पृ.201
8 वही, पृ.206
9 वही, पृ.187

- अपने पैरों पर खड़ी औरत को स्वीकार करने में समाज को अभी समय लगेगा।[1]

राजेन्द्र यादव का विचार है कि – प्रतिभा व अस्मिता से लैस प्रिया – वह नारी है जो सामाजिक चुनौतियों की तरह उभरती है। प्रिया जैसे चरित्र के कारण प्रभा खेतान स्त्री विमर्श की महत्वपूर्ण लेखिका है। यह उपन्यास स्त्री परिवार की सम्भावनाओं को जन्म देता है। उत्तराधिकार की स्त्री परम्परा का संकेत इस उपन्यास में है।[2]

अन्या से अनन्या – आत्मकथात्मक उपन्यास

अन्या से अनन्या – यों तो आत्मकथा घोषित है परन्तु है उपन्यास। इसमें मारवाड़ी समाज की दुनिया में स्त्री की घुसपैठ है। एक अविवाहित स्त्री का धुँआधार प्रेम में पागलपन है। गर्भपात कराकर प्रेमिका घोषित करने की धुन है। भावनात्मक निर्भरता की खोज है। यह दस्तावेज है बेहद बेबाक, वर्जना हीन और उत्तेजक।

नफीसा की दम तोड़ती दुनिया

नफीसा वह औरत है जिसे दुनिया दम तोड़ने पर मजबूर करती है – क्योंकि – वह भूखी–गरीब है। शौहर, शेखों का महल बनाने रियाद गया है। वह पैसे भेजता है लेकिन उसका भाई दारू में उड़ा देता है। वह शौहर के घरवालों से शिकायत नहीं कर पाती। पैसे पैसे की मोहताज होकर घुटती रही – बीमार रही। तपेदिक से फेफड़े गल गए। दम तोड़ दिया।[3]

प्रभा खेतान एक ऐसी स्त्री का चरित्र खड़ा करती है जो कुँवारी है और शादीशुदा व्यक्ति से प्रेम करती है। यह स्थिति कई सवाल खड़े करती है।

सवालों के बीच खड़ी कुँवारी प्रेमिका

ऐसी स्त्री सोचती है – मैं क्या लगती थी डॉक्टर साहब की ? मैं क्यों ऐसे उनके साथ चली आई ? मैं तो कभी भी पूरी पत्नी नहीं बन सकती क्योंकि उनकी एक पत्नी पहले ही मौजूद थी। वे बाल बच्चों वाले व्यक्ति हैं। प्रेमिका की भी कोई भूमिका होती है ? डॉक्टर साहब मेरा भरण–पोषण नहीं करते। मैंने कभी कोई आर्थिक सहायता नहीं ली। मैं तो खुद कमाती थी। स्वावलम्बी थी। एक संघर्षशील आत्मनिर्भर महिला थी।

---

1 वही, पृ.208
2 यादव राजेन्द्र – आदमी की निगाह में औरत, पृ.301
3 खेतान प्रभा, अन्या से अनन्या, पृ.7

मुझे मालूम था वह शादीशुदा है। एक शादीशुदा व्यक्ति को दूसरी पत्नी का अधिकार कैसे मिल सकता है ? मैं बस ऐसे ही ठीक हूँ अकेली जिन्दगी जी लूंगी जिसे अपना मान लिया, मान लिया। मेरी कमजोरी के क्षण, भूल थी, भूल को अपराध कैसे मान लूँ।[1]

औरत का दृष्टिकोण

एक "काली लड़की" के माध्यम से औरत का मर्द के प्रति अभिव्यक्ति प्रस्तुत की है। मर्द हमेशा औरत को रूलाता है, इन मर्दों को पैदा हम औरतों ने किया है। अमेरिका में समाज में जाने वाला लौटकर नहीं आता। वेलफेयर में भोजन मिल जाता है। अकेली औरत भी रह लेती है।[2] प्रभा खेतान अपनी पहचान पर खुद ही सवाल खड़े करती है – मैं कौन हूँ ? क्या मेरी कोई पहचान नहीं है ? मैं सधवा नहीं क्योंकि मेरी शादी नहीं हुई। मैं विधवा नहीं क्योंकि कोई दिवंगत पति नहीं। मैं कोठे पर बैठी रंडी भी नहीं क्योंकि मैं देह का व्यापार नहीं करती। मैं किसी पर निर्भर नहीं करती, स्वावलम्बी हूँ अपना भरण–पोषण खुद करती हूँ। तब मैं क्या हूँ ? – एक अबोध माने मूर्ख ?[3]

मिसेज सर्राफ से चुभते हुए सवाल

एयरपोर्ट पर जब मिसेज सर्राफ कहती है कि आप जैसे इन्हें ले जा रही है, वैसे ही ले भी आइएगा। ये मेरी अमानत है, मेरा सुहाग, मेरे बच्चों के पिता। मैं पूछना चाहती थी – और मेरे ?

क्या डॉक्टर साहब मेरे कुछ नहीं ?

पच्चीस साल के सम्बन्ध ? मेरे जीवन में इस व्यक्ति का कोई महत्व नहीं ? सब कुछ जानते हुए भी लोग क्यों इस सम्बन्ध को नकारना चाहते हैं? स्वीकारने में उनका अहम् क्यों टूटता है ?[4] इन तीखे सवालों का सामना समाज नहीं करना चाहता। शायद रखैल का कोई स्थान नहीं है।

शादी का मुद्दा ही सब कुछ तो नहीं

डॉ. सर्राफ प्रभा को नाराज होने पर प्यार से समझाते हैं – क्या शादी ही सब कुछ है ? बिना शादी के तुम्हारा कोई अस्तित्व नहीं ? तुम्हारी – पढ़ाई – लिखाई,

---

1 वही, पृ.9
2 वही, पृ.10
3 वही, पृ.12
4 वही, पृ.13

व्यापार, साहित्यिक कृतियाँ, तुम, कुछ नहीं ? वह कहती है – जहाँ जाती हूँ वहीं सुनना पड़ता है –

आपकी शादी किससे हुई है ?

क्या ये आपके बच्चे है ?

क्या ये आपके भाई – बहिन है ?

शादी का मुद्दा ही तो सब कुछ नहीं होता है ?[1] वह अन्या है। क्या यह मात्र देह का आकर्षण था ?[2] वह इस रिश्ते को देह से परे सुरक्षा का प्रतीक मानती थी। बरगद की छाँव थी। जिन्दगी का पड़ाव थे।

नारी का आत्मविश्वास

यह उपन्यास नारी के आत्म–विश्वास को रेखांकित करता है –

मुझे रूपया कमाना आता है।

बेईमानी से नहीं ईमानदारी से

मेरा अपने आप पर भरोसा है।

कोई भी काम कर लूँगी।[3]

प्रेम के स्थान पर व्यवसाय के प्रति गंभीरता

प्रभा खेतान नारी विमर्श प्रदान करते हुए लिखती है – "हम औरतें प्रेम को जितना गंभीरता से लेती है, उतनी ही गंभीरता से यदि अपना काम लेती तो अच्छा रहता जितने आँसू डॉक्टर साहब के लिए गिरते हैं, उससे बहुत कम पसीना भी यदि बहा सकूँ तो पूरी दुनिया जीत लूंगी।"[4]

क्या आकर्षण का केन्द्र सिर्फ गोरा रंग ही है ?

आज की स्त्री के समक्ष प्रमुख प्रश्न यही है कि क्या नारी के लिए आकर्षण का केन्द्र सिर्फ गोरे रंग की चमड़ी मात्र ही है ? राधा नौकरानी कहती है – "एक तो प्रभा बाई ऐसे ही काली है, फिर यह सरसों के तेल की मालिश। कहाँ से गोरी होगी ?"[5]

---

1 वही, पृ.13
2 वही, पृ.14
3 वही, पृ.14
4 वही, पृ.15
5 वही, पृ.15

मन की ग्रन्थियाँ

लड़की के मन में अपने आस–पास के वातावरण लोगों के व्यवहार से ग्रंथियाँ बन जाती है जो बाद में व्यवहार में झलकती है। प्रभा का कथन इस दृष्टि से विचारणीय है – मैं उपेक्षिता थी, आत्म सम्मान की कमी ने मेरा जिन्दगी भर पीछा किया। माँ ने प्यार नहीं किया। मैं ठहरी काली। गीता की तरह स्मार्ट नहीं मुँह फट जवाब नहीं दे पाती।[1] मेरे साथ अकेलापन हमेशा रहा है। मैंने अपने आप को बचाया है। अपने मूल्यों को जीवन में संजोया।[2] पुरुष जानवर बनकर अपनी भूख मिटाने के लिए किसी का भी शिकार कर सकता है। प्रभा के साथ भी ऐसा ही हुआ।[3] प्रभा का कथन – "हमारा सम्बन्ध असाधारण है। हमारे मिलने का कारण देह नहीं। पर हम देह से अलग भी तो नहीं हो पा रहे।"[4] नारी नीयति को दर्शाता है।

बुरी बात मत कहना भूल जाना की नसीहत

स्त्री के लिए किसी के द्वारा शरीर के स्तर पर की गई जबरदस्ती मात्र दुर्घटना है। बुरी बात है; सभी कहते है किसी से भी मत कहना। भूल जाना परन्तु प्रभा न तो भूलती है और न ही कहने से चुकती है। यह बोल्डनेस है या दुस्साहस या फिर स्त्री पर आधुनिकता का प्रभाव ? यह प्रश्न विचारणीय है – संवादों से घिरा यह घटनाक्रम रेखांकित है – हमारी उम्र में अठारह साल का अंतर है। मैं एक खेला खाया पुरुष हूं जबकि तुम्हारा यह पहला अनुभव होगा ? नहीं आप पहले पुरुष नहीं है मेरे जीवन में। ऐसे ही कुछ घटा था देह के स्तर पर। मैं कुँवारी नहीं। किसी ने जबर्दस्ती मेरा .....। जब मैं नौ साल की थी। घर में ही ....। प्रश्न यह है – "उत्पीड़न के बावजूद औरत को खामोश रहने के लिए क्यों कहा जाता है ?[5] प्रभा को खुद पर भरोसा है वह कह सकती है –

आप न केवल झूठे हैं बल्कि कायर भी ... "आप सच्चाई का सामना करने से कतरा रहे हैं मेरे समर्पण से आपको घबराहट होती है। आपसे मैं कुछ माँगने तो नहीं

---

1 वही, पृ.27
2 वही, पृ.29
3 वही, पृ.69
4 वही, पृ.72
5 वही, पृ.73

आई। आपको मेरे लिए कुछ करने की जरूरत नहीं। मैं अपने आप जी लूंगी। इतना सामर्थ्य है मुझमें।"[1] यहाँ पर पुरुष भी स्त्री को गलत नहीं सही विमर्श प्रदान करता है –

मुझे इतना प्यार मत दो। मैं इसके लायक नहीं। घर चली जाओ प्रभा। तुम बहुत मासूम हो। यथार्थ का चाकू तुम्हें काट डालेगा। यह प्यार नहीं बस देह का आकर्षण है। मैं तुमसे शादी नहीं कर सकता।[2] परन्तु प्रभा थी जिद्दी – वह स्वीकारती है – "मेरी देह से एक – एक कर उतरते कपड़ों के साथ और भी अडचन उतरती जा रही थी।[3] वह इस कथन की भी अनदेखी कर जाती है – "एक दिन अपने इसी निर्णय पर तुम्हें पछताना पड़ेगा। मेरी गलती है। मुझे पहले दिन ही सजग रहना था।"[4] वह जिन्दगी के बारे में बताती है – "जिन्दगी कोई बहीखाता नहीं कि हम लेन देन का हिसाब करे।[5] गीता भी प्रभा को स्त्री विमर्श प्रदान करती है –

तुझे और कोई जुटा नहीं, 22 वर्ष की और 40 साल के पुरुष, वह भी पाँच बच्चों के पिता के पीछे पागल हुई जा रही है। मूर्ख हो। ऐसे कोई अपने को आग में झोंकता है ? पागल है तेरे भाई लोग सुनेंगे तो मार दी जाएगी। मगर क्यों ?, मैंने क्या अपराध किया ? विवाहेतर सम्बन्ध को पाप कहा जाता है और तू अपना अपराध पूछती है।"[6]

शान्ता भी समझाती है –

इस बात को तुम अपने तक ही सीमित रखो। किसी से कभी मत कहना। एडल्ट्री इज ए क्राइम। यदि उनकी पत्नी पुलिस में खबर कर दे तो चौबीस घंटे के लिए हवालत में बंद कर दिए जाओगे।[7] इस प्रकार यह आत्मकथात्मक औपन्यासिक कृति उस प्रथा की कहानी है जो विवाह संस्था को ओवरहेड मानती है फिर भी खाली उसके मानने से क्या होगा ? सदैव विवाह और प्रेम अलग अलग घटनाएँ है।"[8] वह समाज से भी पूछना चाहती है – क्या यही है पढ़ने लिखने का लाभ कि – "घरवाले चाहे जिस खूँटे से बाँध दे। चुनाव निर्णय की स्वतन्त्रता, प्रतिबद्धता ....। बस क्या यही है स्त्री की नियति ... उसका जीवन ?"[9]

---

1 वही, पृ.77
2 वही, पृ.78
3 वही, पृ.79
4 वही, पृ.80
5 वही, पृ.80
6 वही, पृ.84
7 वही, पृ.84–85
8 वही, पृ.86
9 वही, पृ.87

जिन्दगी की प्लेट पर

बच्चे का गर्भपात कराने के संदर्भ में प्रभा को सुनना पड़ा – "शायद तुम ठीक कह रही हो इसे मिटा देना अच्छा है। भविष्य के सन्दर्भ में यही उचित निर्णय होगा। जिन्दगी की स्लेट को गीले कपड़े से पौंछ दो, उस पर जो लिखा हुआ सब मिटा दो, साफ धुली हुई स्लेट पर फिर नया कुछ लिखना।"[1] इस प्रकार गर्भपात, भ्रूण हत्या, प्रजनन पर भी बहुत कुछ सोचने को विवश करती है प्रभा खेतान की यह कृति। विदेशी धरती पर – "औरत की सारी स्वतंत्रता उसके पर्स में निहित है।"[2] का अनुभव भी आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। वहाँ जाकर प्रभा ने जाना – "अमेरिकी औरतें भी भारतीय औरतों की तरह असहाय हैं। केवल पेंट पहनने और मेकअप करने से औरत सबल नहीं हो जाती। औरतों को अपने हक के लिए लड़ना पड़ रहा है।"[3] औरत द्वारा विद्रोह करना अच्छा समझा गया – "तुमने विद्रोह किया ? तब अच्छा है ना। विद्रोही व्यक्ति भला कहीं रूकता है ? विद्रोही को कोई भी बाँध नहीं पाया है।"[4]

अमेरिका में – किसी से बात करना, प्यार करना और शादी करना तीनों एक बात नहीं। इसे चरित्रहीनता नहीं समझा जाता – यह जेफ कहता है।[5] कई बार औरत को अपनी गोपनीयता बनाए रखनी चाहिए यही सोचकर प्रभा आइलिन के इन सवालों – क्या तुम एक विवाहित जीवन नहीं जीना चाहती ? तुम किसी बच्चे की माँ नहीं बनना चाहोगी ? पर चुप रह जाती है।

भारतीय माँ की बेटी को नसीहतें क्या बुरी है ?

जब प्रभा को माँ चिट्ठी लिखकर कुछ नसीहतें देती है तो क्या बुरा, क्या गलत करती है ? बेटी शादी कर ले ? लाल घाघरे में सारे दाग छुपते है लेकिन सफेद आँचल में लगा जरा सा भी छींटा सबको दिखाई पड़ता है।[6] कैथ प्रभा से कहती है – "प्रभा। औरत अभी मनुष्य श्रेणी में नहीं गिनी जाती। हम सब औरतें अर्ध मानव है। पहले व्यक्ति तो बनो, बाद में बात करना।"[7] समग्रतः नारी विमर्शात्मक चुनौतियों का मुकाबला करती, तीखे नुकीले प्रश्नों की बौछारें करती, उनके उत्तर ढूँढती यह रचना दुःख, क्रोध, अपमान,

---

1 वही, पृ.95
2 वही, पृ.131
3 वही, पृ.142
4 वही, पृ.143
5 वही, पृ.145
6 वही, पृ.147
7 वही, पृ.157

आँसुओं का सैलाब बन गई है। उम्र का फासला, देह का आकर्षण प्यार बनाम वासना का खेल चिन्ता चिन्तन की गुत्थियाँ सुलझाता भी है तो उलझने भी कम नहीं करना।

पैसा कमाना, बर्बाद करना, आर्थिक स्वावलम्बन क्या कुछ रच पाए ? क्या दे पाए इस समाज को आधुनिकता के नाम पर ? क्या पति–पत्नी के बीच आकर कोई तीसरी स्त्री मात्र अन्या से अनन्या बनकर रह जाती है ? क्या विवाह संस्था ओवरहेड बनकर फैशन परस्तों की भीड़ में फालतू निरर्थक बनकर रह गई है ? क्या परम्पराएँ, सुरक्षा भावना, मातृत्व घर परिवार बच्चे किसी का कोई महत्व नहीं रह गया है ? क्या जीवन का सार खाओ पीओ मौज करो तक सिमट कर रह गया है ? सब चिन्तन, चिन्ता, चुनौतियों का संसार है।

3.9 गीतांजलि श्री – माई

गीतांजलि श्री का उपन्यास "माई" स्त्री को परम्परागत दृष्टि से भूमिकाओं को परिभाषित करने, नई नैतिकता के माध्यम से व्यक्तित्व के विस्तार को समझने, न समझने के द्वन्द्व का उपन्यास है। यह शाश्वत स्त्री को पहचानने के क्रम में स्वयं को पहचानने का, परम्परा में शामिल होने न होने की कशमकश का आख्यान है तो पितृसत्तात्मक समाज के मध्य स्त्री की अपनी जगह की तलाश भी है। आज स्त्री की पहचान का संकट – स्त्री विमर्श का महत्वपूर्ण आयाम है।

माई की बेटी – सुनैना का संकट – "अब कहाँ से फिर शुरू करें माई के संग जीना कि वह हमारे नहीं अपने ही रूप में हमें दिखाई दे। एक अलग माई, न बाबू दादा की गढ़ी, न हमारी गढ़ी।" वह – माई को ड्योढ़ी से मुक्त करना चाहती है। माई को हमेशा धड़ से पहचानने की कोशिशें की गई। उसके सिर व धड़ को जोड़ने की कोशिशें नहीं की गई।[1] माई को बचाने की सारी ईमानदार कोशिशें नाकामयाब रही है। उसका अस्तित्व फ्रेम के पीछे दबे चूर होने वाले पत्र की तरह पृष्ठभूमि में चला गया।

परिवार ने रज्जों को अपने अतीत से काट दिया। वह धड़ बनकर जीती रही। रज्जो का सिर लगाने की कोशिश किसी ने नहीं की। यदि धड़ पर रज्जो का सिर लगाया जाता तो उसकी आजादी खोजने की जरूरत ही नहीं रहती। श्री अरविन्द जैन सिर धड़ की जोड़ को बुद्धि और देह की जोड़ के रूप में देखते है।[2]

---

1 गीतांजलि श्री – माई (राजकमल प्रकाशन), पृ.92
2 जैन अरविन्द–औरत अस्तित्व और अस्मिता, पृ.62

सुनैना की सोच – "हम अपनी ही शख्सियत के घेरे में कुछ ऐसे पड़े थे कि जो देखते उस घेरे के गुबार के बीच देखते और वहीं मुख्य प्यारा लगता था, जिस पर उस गुबार का रंग चढ़ गया हो या जो अख्स प्यारा लगता था उस पर गुबार का रंग चढ़ा लेते।[1]

माई की कमी कोई अपरिचित झलक देखी तो आँखें कौतुक से झपकाकर हम फिर अपनी परिचित छवि का अंकन कर डालते। माई – फँसी है, दुःखी है, सितम की हारी है और हम हैं उसे सम्भालने पैदा हुए।[2] वह कमजोर, उसकी रीढ़ की हड्डी कमजोर है, वह सताई हुई है। इन्सान होने की शर्त पूरी नहीं करती। सुनैना की सारी कोशिश माई को इन्सान बनाने की होने लगती। उसके भीतर का इन्सान, जो कभी सुबोध के फ्रेम से कभी बाहर था जिसे लम्बे समय तक अस्वीकार करते रहे।

माई की छवि – कठपुतली। डेरों पर फिरकती।[3] वह टुकड़ों में बिखरी नहीं साबुत रही। बिना खुला विरोध किए सुनैना और सुबोध को सुरक्षा प्रदान की।[4] बस हो गया की मुद्रा में बच्चों का साथ देने वाली, हमलों से बचाने वाली। चुप रहकर भी रास्ता साफ करने वाली। खुले विरोध की हिमायती नयी पीढ़ी जिसे माई की कमजोरी समझती रही, वह प्रतिरोध का तरीका था, नए रास्तों की तलाश थी। सीधी भिडन्त न करना परन्तु आए अवसरों को नहीं चूकना भी एक प्रक्रिया है। स्त्री अपनी परम्परा बेटी के माध्यम से शाश्वत बनाती है – अगली पीढ़ी को ऊर्जा देती है, अपने लिए ताकत खींचती है। बेटी के पैदा होने पर वह समजीवा हो जाती है। वह कभी नहीं मरती। निरन्तरा होती है। सुनैना माई को – बेचारी समझती है। उसे दर्प है ड्योढ़ी से बाहर निकल कर आने का। वह त्याग के महिमा मंडन के बहाने होने वाले शोषण को जानती है। सच्चाई जानकर उस शोषण से माई को निकालना चाहती है। वह स्वयं स्वीकारती है – "मैं चाहूँ तो भी माई नहीं बन सकती। मुझे त्याग बुरा लगता है। नम्रता व उदारता का आवरण ढोंग लगता है। उसे इतिहास में लड़ना, नकारना है।"

"यह माँ बेटी का आन्तरिक संघर्ष है" – माँ बेटी में देखना चाहती है – आत्म निर्भरता, कमजोरियों से मुक्ति, जीवन की अकेलेपन की चिन्ताओं से मुक्ति की कामना।"[5] माई बेटी को बताते हुए समझाती है – "घर का स्वामी कमाई से परिवार के लिए सुविधा जुटाता है, साथ ही अपनी ताकत बनाता है, इसी प्रभुताई के आगे बच्चों की माँ गिरवी

---

1 गीताजंलि श्री – माई (राजकमल प्रकाशन), पृ.95
2 वही, पृ.136
3 वही, पृ.116
4 वही, पृ.417
5 कस्तवार रेखा – स्त्री चिन्तन की चुनौतियाँ, पृ.170

पड़ी रहती है।" उसका वक्त तब सुधरेगा जब वह आप कमाने लगेगी।"[1] माई की माँ पितृसत्तात्मक व्यवस्था के दबाव के बीच जी कर, अपने तरीके से बेटी के लिए रास्ता बनाती है परन्तु सत्ता के दबाव में मुक्ति कहाँ ? वह शिक्षा से सहजीवन तक के पतली गली के रास्ते खोलती है।[2]

3.9 क्षमा शर्मा – परछाँइ, अन्नपूर्णा

परछाई अन्नपूर्णा – स्त्री प्रश्नों को, कामकाजी स्त्रियों के परिप्रेक्ष्य में उठाता उपन्यास है।[3] प्रश्न यह है कि स्त्री पैसा कमाने के लिए नौकरी करती है या आत्मविश्वास के लिए।[4] स्त्री के सामने घर – बाहर स्वतन्त्रता व सुरक्षा का प्रश्न खड़ा होता है। घरेलू श्रम और आर्थिक स्वावलम्बन, घरेलू हिंसा, मानसिक व शारीरिक यौन उत्पीड़न, पुरुष का वर्चस्व के कई सवाल जिनसे कब तक स्वयं को छिपाए, मुँह चुराए, कैसे बच पाए ?

स्त्री के सामने शाश्वत प्रश्न है – कैरियर का चुनाव करना। स्त्री शिक्षा व प्रशिक्षण पर खर्च, किया गया श्रम, स्त्री की प्रतिभा का व्यर्थ हो जाना, नौकरियों में महिला प्रत्याशियों के प्रति अरुचि उत्पन्न होना, इत्यादि स्थितियाँ ही अन्नूपर्णा के जीवन संघर्ष की अभिव्यक्ति बन पाता है।[5]

श्री अरविन्द जैन ने – कामकाजी महिलाओं के संकट, संघर्ष, सामाजिक स्थितियों पर बहस सचेत स्त्री के संदर्भ में इसे महत्वपूर्ण माना है।[6] समाज की मानसिकता के अनुसार – क्या स्त्री को घर व नौकरी में से किसी एक को चुनना चाहिए ? क्या छोटे लाभ के लिए सबकुछ दाँव पर लगाने वाली बन जाना चाहिए ?[7] क्यों घर से बाहर निकलकर सड़क पर आने वाली स्त्री को चरित्रहीन घोषित कर दिया जाता है ?

कामकाजी स्त्रियों के कार्यस्थल पर होने वाले यौन शोषण को केन्द्र में लाकर लिखा गया है यह उपन्यास। सहकर्मी पुरुष की मानसिकता विभा व विनीता के वार्तालाप में व्यक्त हुई है।

---

1 वही, पृ.171
2 वही, पृ.172
3 वही, पृ.172
4 वही, पृ.172
5 वही, पृ.173
6 जैन अरविन्द औरत अस्तित्व और अस्मिता, पृ.93
7 शर्मा क्षमा – परछाई, अन्नपूर्णा, पृ.31

- औरत की बात आते ही उसके अन्दरूनी हिस्सों की याद आना।[1]
- कार्यालय समय में द्विअर्थी संवाद।
- स्त्रियों के चरित्र का इतिहास मंथन।
- बॉस की बेटी के साथ सम्बन्ध जोड़ने वाली बातें।
- फब्तियों में, स्त्री देह को लाना।
- स्त्री कर्मियों को सेक्स में बदलने की कोशिशें विभा जानती है।[2]

विभा – स्त्रियों को अंग विशेष से व्याख्यायित करने व स्त्री कर्मियों के चरित्र की हत्या करने पर अपना आक्रोश व्यक्त करते हुए कहती है "आप लोगों के पास औरतों के बारे में ऐसी ही जानकारी क्यों रहती है ?"[3] ऐसी क्या स्थितियाँ है कि स्त्री को लज्जा रोकती है, बिना अपराध किए डरती है स्वयं को मात्र चरित्र के मानक पर तोलने से घबराती है।[4] विभा एक डरपोक लड़की है, जो प्रेम पत्रों के माध्यम से परेशान किए जाने वाले पुरुषों की उपस्थिति मात्र से विचलित होती है, डरती है, बुरे सपने देखती है तथा छुटकारा पाने के लिए आत्महत्या करने के रास्ते पर विचार करती है।[5] सुधीर पचौरी का स्त्री के लिए विमर्श यहाँ रेखांकित है। "मर्दों के समाज में स्त्री लज्जा को हथियार नहीं बना सकती। उसे अधिक निर्लज्ज होकर, मर्दों को लज्जित करना होगा, तभी शायद कोई सम्मान उसे मिल सकेगा।[6] क्षमा शर्मा कार्यालयी संस्कृति से परिचित है। यह मानती है कि –

- स्त्रियाँ पुरुषों का हक छीनती हैं।
- उनके चयन में प्रतिभा से अधिक उनकी सुन्दरता का योगदान रहता है।
- वे कुछ काम नहीं करती। वे तो सिर्फ दफ्तर की शो पीस होती है।
- चुनाव के वक्त उनकी सुन्दरता को ध्यान में रखा जाता है।
- स्त्री सहकर्मी को फैशनेबल स्मार्ट मानकर यह माना जाता है कि वह अपनी मुस्कान के जादू में दुनिया के मर्दों को पटाने निकली है।[7] लोग इस बात का

---

1 वही, पृ.28
2 वही, पृ.42
3 वही, पृ.42
4 वही, पृ.48
5 वही, पृ.47
6 पचौरी–सुधीर स्त्री देह के विमर्श में, (लज्जा कोई हथियार नहीं), पृ.181
7 वही, पृ.31

मजाक उड़ाते हैं कि और सिर्फ साड़ी लिपिस्टिक में गड़गच्च रहती है।[1] विभा का व्यक्तित्व एक स्वीकारोक्ति भी है उसके लिए

- कार्यालय पैसा कमाने की जगह है ?"[2]
- पैसा कमाना घर में तनाव कम करने का साधन है ? आत्मविश्वास के अवसर वहाँ पर नहीं है। घर से बाहर निकलकर अपने लिए थोड़ा वक्त बटोरती है, घर पर तो अखबार पढ़ने का भी समय नहीं मिलता है।[3] कामकाजी महिला के आत्म संघर्ष की अभिव्यक्ति भी भरपूर करता है यह उपन्यास जो स्वयं स्त्री को अपराध बोध का अहसास भी कराता है –
- कामकाजी स्त्री को संघर्ष झेलना पड़ता है।
- घर और बाहर तालमेल बिठाना पड़ता है विवाहिता व माँ के रूप में समय व कार्य के समायोजन में नट की तरह रस्सी पर झूलना पड़ता है।
- वह ठीक से न घर संभाल पाती, न नौकरी न ही बच्चों को। परम्परा बच्चों को प्राथमिकता देना सिखाता है।[4] बच्चों को दिया जाने वाला वक्त कार्यालय में देना होता है तो स्त्री अपराध बोध से ग्रसित हो जाती है।[5] बच्चा जब बीमार होता है, वह माँ का सानिध्य चाहता है तो उसकी विवशता के कारण यह अपराध बोध बढ़ जाता है। स्त्री को घरेलू हिंसा के स्तर पर जीना भी एक त्रासदी है। जब स्त्री बच्चे को अपने पति के पास छोड़ती है तो उसे सुनने को मिलता है –

वह सीधा–सादा मिल गया। यह बड़ी–बड़ी बातें करती फिरती है और वह बेचारा बच्चों के गू–मूत धोता फिरता है।[6]

स्त्री बाहर हजारों भेड़ियों का शिकार बनती है तथा घर में जंगली के नाखून – दाँत सहती है।[7] स्त्री अपने व्यक्तित्व विकास की क्षमता का उपयोग पुरुष के प्रतिरोध के लिए नहीं करती स्त्री सहन करती है। पुरुष को गलती महसूस नहीं कराती डौमेस्टिक स्लैव बनी रहती है।

इस प्रकार – परछाई अन्नपूर्णा उपन्यास – कामकाजी स्त्री को विमर्श प्रस्तुत करता है। यह कामकाजी स्त्रियों के जीवन के विविध पक्षों का उद्घाटन करता है।

---

1 वही, पृ.22
2 वही, पृ.13
3 वही, पृ.63
4 वही, पृ.33
5 वही, पृ.22
6 वही, पृ.7
7 वही, पृ.41

उनकी समस्याओं के संकेत करता है। रोने धोने, खीझने, गाली, गुस्सा आक्रोश व्यक्त करने, आत्महत्या का विकल्प खोजने वाले जीवन को सामने रखता है। इन समस्याओं से उबरने का विकल्प भी खोजता है। अरविन्द जैन की दृष्टि में आत्महत्या के विरुद्ध मुठभेड़ का उपन्यास है – परछाई अन्नपूर्णा।

3.10 चित्रा मुद्गल – आवां

चित्रा मुद्गल का उपन्यास आवां –भारतीय नारी की आर्थिक विषमताओं व सामाजिक विसंगतियों को केन्द्र में रखकर लिखा गया है। वह परिवार के हक में निर्णय लेती है। स्त्रियों की अधिकार सम्पन्नता उनके जीवन में सकारात्मक रूप से प्रभावित करने लगी है। विवाह परिवार व्यवस्था में स्त्री को समुचित सम्मान और सम्पति में समान अधिकार दिए बिना वर्तमान विवाह संस्था को बचा पाना सम्भव नहीं होगा। चित्रा मुद्गल ने इस उपन्यास में परिवार के हक में स्त्री के निर्णय लेने की स्थिति को, स्त्री की अधिकारहीनता। सम्पन्नता की गति को, तथा – विवाह संस्था को बचाने के लिए स्त्री के अधिकारों व सम्मान की चर्चा सुरक्षात्मक दृष्टिकोण से की है। उसकी आँख विस्फोटक स्थिति "आगे खतरा है" पर रही है क्योंकि – परिवार–समाज और राष्ट्र से संतान का भविष्य जुड़ा हुआ है। संतान प्रभावित होती है। यथार्थ और स्वतन्त्रता के अर्थ – पित्रसत्तात्मक संस्कार, स्थिति की परम्परागत स्थिति, परिवर्तन का रेखांकन आवां के माध्यम से सम्भव हो सका है।

महिला कथाकारों ने –

स्त्री मुक्ति व संघर्ष की बात की पित्रसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्री के शोषण होने को स्वीकारा फिर भी परिवार के हक में, परिवार के पक्ष में निर्णय लिए हैं।[1] प्रश्न फिर यह है कि – "आज की स्त्री – परिवार के उस परम्परागत ढाँचे में ही अपनी अस्मिता की तलाश क्यों करती है ? क्यों – राजनीति, प्रशासन, शिक्षा, चिकित्सा, व्यवसाय आदि में अपनी दावेदारी जताने वाली महिलाएँ – हताश होकर परिवार में शरणागत होने को विवश होती है ? क्या पारिवारिक स्तर पर असफलता व्यावसायिक सफलता को अधूरा बनाती है ?[2]

---

1 सोबती कृष्णा हिन्दुस्तान, 16.1.2000

2 शर्मा राम विनय – अनिश्चय की जमीन पर विकल्प की तलाश कथाक्रम अप्रैल–जून 2000, पृ. 101–102

डॉ. सत्यदेव त्रिपाठी का मानना है –

महिला लेखन में परिवार से बाहर जाने का विकल्प स्वीकार नहीं किया गया। ऐसी स्थिति हमारे देश में अभी नहीं है। स्त्री का परिवार की ओर लौटना यथार्थ दृष्टि माना गया है। अकेलेपन की पीड़ा का दंश, परिवार से मिलने वाले अपमान व मन्त्रणा को अधिक गहरा स्वीकारा गया।[1] नारीवाद की आड़ में उद्दंडताओं को जीने वाली, शिक्षित स्त्रियों को देश की देशी औरतों से प्रेरणा लेकर कौटुम्बिक जीवन के क्षरण को रोकना चाहिए।[2]

- परिवार का मुखिया पक्षपात के कारण बिस्तर पर है।
- परिवार में दो बेटियाँ व एक बेटा है।
- बेटी पर माँ के साथ (बड़ी होने के कारण) परिवार के भरण–पोषण का दायित्व है।
- बेटा छोटा है – भविष्य की आशा का केन्द्र है महँगे अंग्रेजी स्कूल में पढ़ता है यह कार्य माँ के द्वारा किया जाता है।[3]

स्त्री के प्रति यह भेदभाव, स्त्री के अवचेतन में, पीढ़ियों से संक्रमण करता चला आ रहा है। जो भविष्य को बेटे में देखती है और बेटी को बेदखली सौंपती है। अवचेतन में बैठी गैर बराबरी की यह भावना स्त्री को स्त्री के खिलाफ खड़ा करती है।[4] सामाजिक संरचना के पूरे अधिकार पुरुष के पास सुरक्षित है।[5] फिर भी स्त्री व्यक्तिगत लाभ के लिए स्त्री–स्त्री के विपक्ष में खड़ी होती है। बेटी की कमाई से घर का खर्च स्वीकारने वाली माँ क्यों बेटे के लिए मायूस होती है। कमाने वाली लड़की को चार दिन की चांदनी मात्र माना गया है। वह कभी भी प्रेम की अनारकली बन सकती है।

लड़का सलीम भी बन जाए तो ठिकाने लाएगा किसी न किसी अनारकली को।[6] लड़की को पराया धन मानने के कारण – बेटी के प्रेम प्रसंग स्वीकार्य नहीं। बेटी के प्रेम प्रसंग तूफान खड़ा करते है।[7] बेटे के स्वीकार्य है क्योंकि बेटा अंतिम संस्कार करेगा। मुँह में पानी डालने लायक बनेगा। पति की मृत्यु पर उर्मिला (माँ) कहती है – "कुल दीपक

---

1 त्रिपाठी सत्यदेव – हिन्दी उपन्यास समकालीन विमर्श, अमन प्रकाशन, कानपुर, 2000, पृ.18
2 मुद्गल चित्रा – आवां – सामयिक प्रकाशन, 1999, पृ.363
3 वही, पृ.26
4 कस्तवार रेखा – स्त्री चिन्तन की चुनौतियों, पृ.190
5 वही, पृ.191
6 मुद्गल चित्रा – आवां, पृ.240–41
7 वही, पृ.209

बेटा जना है मैंने – बेटा।"[1] क्यों समाज को पिता को मुखाग्नि देने की बेटी की इच्छा – बाप की मिट्टी खराब करना लगती है। जिनके सपूत नहीं होते, पितिआउत भाई–भतीजे उन्हें मुखाग्नि देते है।[2] चित्रा मुद्गल ने बेटी के खिलाफ खड़े परिवार में बेटी को कमाऊ पूत के विकल्प के रूप में बेटी के द्वारा पिता का क्रिया कर्म करवाकर स्त्री के सम्बन्ध में खड़े सवालों पर भी अपनी तीखी टिप्पणी प्रस्तुत की है। क्या बेटी पिता को मुखाग्नि दे सकती है ? अथवा बेटे जनने का गर्व माँ इसी दिन के लिए करती रहेगी।

पारिवारिक सुरक्षा

परिवार के पक्ष में सबसे प्रबल तर्क – परिवार से मिलने वाली सुरक्षा है। पुत्री के कौमार्य को बचाए रखने का दायित्व परिवार में पिता का माना जाता है। परिवारों मे होने वाले यौनाचार, बलात्कार स्त्री के सम्पूर्ण जीवन को असामान्य बना देते है। बचपन से होने वाले बलात्कार मानसिक संरचना स्त्री के व्यक्तित्व विकास एवं निर्माण में अवरोध उत्पन्न करते हैं।

चित्रा मुद्गल यौन शोषण को –

- स्त्री की भूमिका/भविष्य को स्याह करने के रूप में व्यक्त करती है।
- नमिता यौन शोषण का जमकर प्रतिकार नहीं कर पाती।
- बचपन से होने वाली यौन शोषण की घटनाएँ स्त्री के भीतर की सारी प्रतिरोधात्मक क्षमता व शक्ति को नष्ट कर देती है।

इसमें माँ का दृष्टिकोण और ज्यादा आघात पहुँचाता है। मौसा द्वारा यौनाचार दस वर्षीय नमिता को जड़ करता है। माँ कहती है – चुप रहा जाए। यदि शोर मचाया जाएगा तो सम्पन्न बहिन से उसके रिश्ते समाप्त हो जाएंगे। माँ को बेटी के साथ हुआ यौन दुराचार बहिन के साथ रिश्तों की टूटन की तुलना में मामूली घटना लगती है। "जो हुआ सो पेट में डाल वरना मामूली सी बात जले बैर हो उठेगी।"[3]

इस घटना के प्रतिफल स्वरूप नमिता अन्ना साहब की यौन वृति का तत्काल विरोध नहीं कर पाती है। बड़े नेता अपनी विकृत कामनाओं को पूरा करने व सही साबित करने की स्थिति में आ जाते है। अपनी क्षीण प्रतिरोधात्मक क्षमता के बावजूद आर्थिक संकट के समय कामगार अघाड़ी की नौकरी छोड़कर नमिता अपना प्रतिरोध व्यक्त करती

1 वही, पृ.399
2 वही, पृ.399
3 वही, पृ.303

है। सौतेले भाई की हवस का शिकार बनी गौमती भी प्रतिशोध लेने की हिम्मत नहीं कर पाती। चित्रा मुद्गल – मदन खत्री (मटका किंग) द्वारा अपनी बेटी का यौन शोषण के कथानक के माध्यम से कहती है – "पिता का स्नेह पाने को व्याकुल बेटियाँ जब पिता से बलात्कार की सौगात पाती है तब परिणाम आत्मविश्वास खोने के रूप में सामने आता है।" स्मिता की बहन से इस कदर डर जाती है कि – "आईने में अपना मुँह तक देखने की हिम्मत नहीं कर पाती है।"

ऐसे पिता को – (शराब में धुत) सीढ़ियों से लुढ़काकर मार दिया जाकर मुक्ति की तलाश का विकल्प ढूँढ़ा गया है। स्मिता की माँ स्त्री को परिवार की बाड़ कहती है। पर मौत में समस्या का समाधान खोजती है।[1] हर स्त्री को अपना संघर्ष खुद ही करना पड़ता है। पित्रसत्तात्मक व्यवस्था में पुरुष – स्वामी है मुखिया है। उसका पूँजी पर अधिकार है। उसकी पूँजी में स्त्री का श्रम भी शामिल है पर उसका कोई मूल्य नहीं। पत्नी के लिए अनिवार्य शर्त यौन शुचिता है परन्तु पति इस शर्त से मुक्त रहता है। विवाह से पूर्व – डायना को वर्जिनिटी टेस्ट से गुजरना पड़ता है प्रिन्स चार्ल्स को नहीं।

जीवन और साहित्य में किराए की कोख का विकल्प भी सामने आया है। "मुझे सिर्फ उस लड़की से औलाद चाहिए थी, जो पेशेवर नहीं हो। पवित्र हो। जो मुझे प्रेम कर सके। सिर्फ मेरे लिए माँ बने।"[2] संजय कनोई कहता है – देखो मेरे बच्चे के संग तुमने आवेश में आकर कोई छेड़खानी की, किसी के भी पट्टी पढ़ाए, तो मेरी चेतावनी को कोरी गीदड़ भभकी मत समझना, तंदूर कांड हो जाएगा। जान से जाओगी तुम नैना साहनी की तरह।"[3] बच्चे को लेकर प्रश्न है, कानून कहता है जिसका बच्चा है, स्त्री अविवाहित है तो वह उससे विवाह करे लेकिन क्या धर्म परिवर्तन अनिवार्य है ? सुनन्दा प्रश्न उठाती है – सुहेल ने प्रेम करते समय तो कोई शर्त नहीं रखी। ब्याह करना होगा तो उसे नहीं, इस्लाम से करना होगा या उसे हिन्दुत्व से।[4]

मातृत्व अवकाश का मुद्दा

कानून–माताओं को मातृत्व अवकाश स्वीकृत करता है किन्तु सुनन्दा का आवेदन निरस्त कर दिया जाता है। सुनन्दा प्रश्न उठाती है – "सुविधा का प्रावधान गर्भवती स्त्री व उसके बच्चे को लेकर है न कि अविवाहिता अथवा ब्याहता को लेकर।" कुँवारी माँ को

1 वही, पृ.372–373
2 वही, पृ.539
3 वही, पृ.526
4 वही, पृ.111

क्या आराम की जरूरत नहीं होती ? माँ बनना किसी के निजी मामले के बजाय कम्पनी का मामला कैसे हो गया ?[1] वह कहती है – "मेरा मातृत्व ब्याह के टुच्चे प्रमाण–पत्र का मोहताज नहीं। किन्तु व्यवस्था को स्त्री की यह बदली हुई चेतना स्वीकार नहीं है। वही चित्रा मुद्गल लैंगिक असमानता, असुरक्षा के आतंक, कोख के एकाधिकार व व्यापार के मध्य स्त्री की बहुस्तरीय लड़ाई की जटिलता को पहचानती है। स्त्री की लड़ाई संस्कार बद्धता से स्वीकार करते हुए पुरुष की मानसिकता को अनावृत करती है। यह उपन्यास स्त्री के कोष को कमजोर नहीं करता लड़ाई की जमीन तैयार करता है। आवां के माध्यम से स्त्री के लिए आधार प्राप्त हुआ है।

इस उपन्यास में स्त्री – परिवार के यथार्थ से साक्षात्कार है। स्त्री विमुक्ति के रास्तों की खोज – परिवार से बाहर है। देह से जानी जाकर स्त्री अपना मूल्य निर्धारण अस्वीकार करती है। वह सुविधा को छोड़कर संघर्ष को चुनती है। अपनी पहचान देह के स्थान पर श्रम और बुद्धि से बनाना चाहती है। यह लड़ाई अकेले की नहीं, अकेले लड़ी भी नहीं जा सकती है।

3.11 मृदुला गर्ग

मृदुला गर्ग अपने समय की सर्वाधिक चर्चित कथाकार है। यश – अपयश दोनों के बीच सबसे अधिक विवादास्पद[2] इनकी रचनाएँ अपनी समग्रता में नारी के विभिन्न स्वरूपों पर प्रकाश डालती है। नर और नारी समाज रूपी रथ के दो पहिए हैं। यह इस संसार की वास्तविकता है। एक दूसरे के बिना सृष्टि में अधूरापन रहेगा फिर भी पुरुष समाज – नारी को बराबरी की हकदार नहीं बनने देना चाहता।[3] भारतीय संस्कृति में विवाह को जीवन का प्रवेश द्वार माना गया है। यह एक सामाजिक समझौता है जो, स्त्री–पुरुष के यौन सम्बन्धों को स्वीकृति देता है। मृदुला गर्ग की अति बौद्धिक दृष्टि में स्त्री–पुरुष सम्बन्धों का आधार भावना नहीं, शारीरिक आवश्यकता है। वह लिखती है – "पुरुष और स्त्री का संभोग, कुछ नहीं है यह, महज एक गड्ढे को भर देने की उत्कट लालसा है जो हर मानव को विरासत में मिली है।"[4] मृदुला गर्ग के उपन्यासों में – वंशज, चित्तकोबरा, अनित्य, मैं और मैं, कठगुलाब, मिलजुल मन चर्चित रहे हैं।

---

1 वही, पृ.111
2 वैचारिकी – संकलन अप्रैल–1998, पृ.48
3 सिंह ज्योति, मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता के प्रश्न, पृ.83
4 गर्ग मृदुला – चितकोबरा, पृ.18

वह लिखती है – जो लिखा है, वह एक कहानी थी, जो मेरे अन्तर्मन में फैलती सिकुड़ती रहती थी।[1] लेखिका की मान्यता है कि – "स्त्री पुरुष सम्बन्धों को स्वतंत्र और स्वच्छन्द होना चाहिए। इस स्वच्छन्ता के लिए वह विवाह की मर्यादा को भी नहीं मानती। "उसके हिस्से की धूप" में लेखिका विवाह की प्राचीन पद्धति को बंधन मानते हुए मनीषा के द्वारा उसके परिवर्तित रूप को प्रकट करती है। "माँ–बाप, पंडित पुरोहित ने मिलजुलकर, मंगल नक्षत्रों के तले, अग्नि की साक्षी दे, दो इन्सानों के दुपट्टे बांध दिए और वह चल दिए, एक शैया पर जीवन पर्यन्त प्रेम का नाटक करना।"[2]

चित्तकोबरा

इस उपन्यास[3] की नायिका – विवाहिता है। एक भरे–पूरे परिवार की बहू। आदर्श पत्नी। मनु अपने पत्नीत्व का आदर्श प्रस्तुत करते हुए कहती है– "मैं चुपचाप उसे वह सब देने में जुट गई थी, जो मेरे ख्याल में एक औसत पति, पत्नी से चाह सकता था।

सुन्दर सुचारू घर गृहस्थी, साफ स्वस्थ बच्चे, सुघड़ सजग पत्नी, दोस्तों की भरपूर खातिरदारी, सामाजिक मेल मिलाप"[4]

चित्तकोबरा भारतीय विवाह संस्था पर प्रश्न चिह्न लगाता है। पति – पत्नी साथ रहते हैं, यंत्रवत बर्ताव करते हैं। किन्तु महेश (पति) का कथन – "विवाह के बंधन में मेरा विश्वास नहीं है मनु।"[5] कहकर विवाह संस्था को अस्वीकार कर देता है फिर – मनु की अस्मिता की खोज, विवाह को बरकरार रखते हुए भी उसकी मर्यादा को लाँघ जाती है। वह अपने पति के साथ रत होकर पीड़ा को अनुभव करती है। इसकी नायिका तन के स्तर पर अपने पति महेश के साथ है किन्तु मानसिक रूप से वह सदा रिचर्ड के साथ रहती है। यह उपन्यास वैवाहिक जीवन की त्रासद स्थिति को स्पष्ट करते हुए, अवैध संबंधों को स्वीकृति देता है। रिचर्ड और मनु प्रेम तो करते हैं किन्तु विवाह नहीं करना चाहते – रिचर्ड कहता है – "मैं बच्चों को नहीं छोड़ सकता।"[6] मनु कहती है – "तुम पूरी दुनिया में घूमते, मैं इंग्लैंड में बैठकर तुम्हारे बच्चे पालती। एक दिन महेश वहाँ आ निकलता और मुझे उससे प्यार हो जाता। मैं तुम्हें छोड़ देती और उसके साथ चली

---

1 गर्ग मृदुला – प्रक्रिया – चितकोबरा, पृ.7
2 गर्ग मृदुला – उसके हिस्से की धूप, पृ.88
3 गर्ग मृदुला – चितकोबरा (राजकमल), 1979, Rs.250/-, ISBN978--81-267-2405-5
4 गर्ग मृदुला – चितकोबरा, पृ.101
5 वही, पृ.102
6 वही, पृ.138

जाती।"[1] यहाँ पर – मनु – घुम्मकड़ी वृति की है। वह नैतिक मूल्यों को तोड़ना चाहती है। मन में उठी वासना का साधन ढूँढ़ती है। उसमें संयम का अभाव है। नैतिकता को अर्थहीन बताती है।[2]

लेखिका का कथन भी रेखांकित योग्य है। सेक्स प्रेम की अभिव्यक्ति की राह का एक पड़ाव है जहाँ से गुजर कर व्यक्ति वह अंतर्ज्ञान अर्जित कर सकता है जिससे मन के सामने तन की नगण्यता उसके प्रति उद्घाटित हो जाए और वह अशरीरी प्रेम की ओर बढ़ सके।[3] इस उपन्यास में वर्णित प्रेम प्रसंग ने महिला लेखन को क्रान्तिकारी पहचान दिलाई है। सेक्स के उन्मुक्त चित्रण द्वारा क्रान्तिकारिता व यथार्थपरकता का परिचय दिया है।

यौन चित्रण का स्वरूप – "उसके हाथ मेरे स्तनों पर है। दो अँगुलियाँ सिमटकर स्तनाग्र को दबोच लेती हैं और मसल कर झटक देती हैं। मैं जानती हूँ – बस, जरा देर में वह उसे होठों में समेट लेगा। वह चाहता होगा, उसके तीन जोड़ी ओंठ हो । एक मेरे ओंठों पर रखे, एक–एक उरोजों पर या दोनों चूचुक एक साथ एक जोड़ी ओंठ में दबोचकर, तीसरा होंठ मेरी टांगों के बीच, उस ओंठों पर रख दे जो इस समय भी उसके आगमन की प्रतीक्षा में तिरमिरा रहे हैं।[4]

आधुनिक समाज, सभ्य–शिक्षित जिसका रिवाज स्त्री पुरुष का नाचना, पार्टनर बदलकर फिर नाचना "ये एक साथ नाचते हैं, एक साथ रूकते हैं और पार्टनर बदलकर फिर एक साथ नाचने लगते हैं।[5] "प्रेम" को लेकर लेखिका की टिप्पणी नारी विमर्श की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। प्रेम परोपकार नहीं होता। जो प्रेमी बलिदान चाहे, वह प्रेमी नहीं होता। बलिदान के बाद प्रेम, प्रेम नहीं रहता, परोपकार बन जाता है। तुम मुझसे प्रेम करती हो। बलिदान न तुम माँगती न मैं देता।[6] मनु – "मैं तो तुम्हें प्यार नहीं करता था। सुनकर कहती है जो स्वीकारोक्ति भी लगती है। मैं हमेशा जानती रही हूँ। जब उसे विवाह किया था, तब भी जानती थी। महेश के लिए वह एक तयशुदा, सुनिश्चित विवाह से अधिक कुछ नहीं है। प्यार सिर्फ मेरी तरफ है, सिर्फ मेरी तरफ।"[7] यहाँ पति पत्नी और

---

1 वही, पृ.148
2 वही, पृ.8
3 वही, पृ.8
4 वही, पृ.112–113
5 वही, पृ.15
6 वही, पृ.42
7 वही, पृ.88

वो त्रिकोण, मनु – महेश और रिचर्ड इस त्रिकोण में मनु शादी महेश से करती है और प्यार रिचर्ड से। क्या यही आज की सामाजिक दम्पत्ति का आदर्श है।

"क्या महेश मुझसे प्यार करता है ?

वैसे जैसे मैं करती हूं। करता तो है ?

क्या बिल्कुल करता ही नहीं ?

अगर तुम्हारा किसी से प्यार होता, तो उसी से शादी करता।"[1]

प्रेम और शादी को लेखिका अलग करके देखती है। महेश प्रेम की विडम्बना को व्यक्त करता है – "मेरे साथ बड़ी भारी विडम्बना घट गई है मनु! शायद ठीक उसी समय जब तुमने मुझे प्यार करना बंद किया। मैं तुम्हें प्यार करने लगा।"[2] महेश स्थिति को जानता, समझता और कहता भी है – "दुख मत करना। शायद कोई भी इन्सान, एक ही समय में एक–दूसरे को प्यार नहीं करते, जब एक करता है तो दूसरा नहीं करता, जब दूसरा करता है देरी मुझसे हुई मनु।"[3] प्यार के बारे में सामाजिक दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए महेश के माध्यम से लेखिका का नजरिया अलग दृष्टिकोण रखता है – अगर समाज में पति – पत्नी प्यार करे तो –

- समाज की कौन परवाह करेगा ?
- बच्चों की परवरिश बंद हो जाएगी।
- व्यापार–व्यवसाय ठप्प हो जाएंगे।
- राजनीति का भट्टा बैठ जाएगा।
- बड़े – बूढ़े मर खप जाएँगे।
- सभी स्त्री–पुरुष एक दूसरे में डूबे रहेंगे।
- देश रक्षातल में चला जाएगा क्योंकि प्यार होने पर और कुछ नहीं सूझता।[4] मृदृला गर्ग के लेखन में शील–अश्लील इतना महत्व नहीं रखता वह सिर्फ नई चेतना जानती है तभी तो खिलती है – मुझे आलिंगन में ले लिया। मैं उसके सीने से जा चिपकी उसके दोनों हाथ खाली हो गए बिना झिझक मेरे उरोज पर आ टिके स्वामित्व भरे लाड़ से उसने उन्हें दबोच लिया। मैं समझ गई आज रात महेश मुझे प्यार करेगा। रेजर में ब्लेड लगाकर मैंने अपनी देह के तमाम बाल

---

1 वही, पृ.89
2 वही, पृ.91
3 वही, पृ.92
4 वही, पृ.92–93

साफ कर दिए। मेरे हाथ देह के हर हिस्से को साबुन मलकर धोने लगे। एक भी हिस्सा आक्रमण से बचकर निकल नहीं पाएगा।[1]

क्या यही देह विमर्श गत नारी चेतना है ?

लेखिका – शायद कुछ ढूँढ़ना चाहती है –

"जो मैं ढूँढ़ रही हूँ, बहुत गहरे छिपा है। रेतीले कंगारों के गर्भ में। बहुत अन्दर।"[2] रेत में कुछ ढूँढ़ना शायद निराशा जो परिवेश में आशा की तलाश है वह भी स्त्री के अपने पक्ष में। अकेलापन नारी क्या सोचती है तब– भयंकर अकेलेपन से छुटकारा मिल जाएगा ?

यह अकेलापन अपनी गिरफ्त में लेता है। छोड़ता ही नहीं।[3] क्या यह नारीगत सोच की यंत्रणा नहीं है। यह उपन्यास 1979 में लिखा गया जनवरी 80 में अश्लीलता का आरोप लगाकर लेखिका को गिरफ्तार करने की कवायद। एक औरत की मानसिक प्रताड़ना की अभिव्यक्ति पति के साथ काम क्रिया, में यंत्रवत भागीदारी का प्रामाणिक – सजीव चित्रण – नारी लेखन को लेकर नया दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। यह उपन्यास पति – पत्नी सम्बन्ध–गुण–दोष, मन मस्तिष्क, देह की माँग–समरसता की दृष्टि से प्रासंगिक व चर्चित रहा है। जब आप प्यार में होते हैं तो अन्य नजर नहीं आता लेकिन जैसे ही प्यार से अलग होते हैं अन्य जरूरी हो जाता है। आपको दुनिया के साथ जीना पड़ता है। यही इसका सार है।

अनित्य

यह उपन्यास[4] उपभोक्ता वादी संस्कृति के शिकार शोषण से ग्रस्त पात्रों की कथा है। संगीता, काजल और माधवी तीनों जीवन में नए अर्थ की महत्ता को प्रतिपादित करती है। पढ़ लिखकर आत्मनिर्भर होना चाहती है किन्तु शिक्षा के लिए धन कहाँ से आए ?

मृदुला गर्ग ने आर्थिक स्थिति का चित्रण करते हुए नारी अस्मिता पर प्रश्न खड़े किए हैं। धर्मवीर भारती की दृष्टि में "देवदारू" पेड़ जो धीरे–धीरे कमजोर पड़ता, एक दिन जड़ से उखड़कर गिर पड़ता प्रतीक है – उस संस्कारवान व्यक्तित्व का जो राष्ट्रीय संघर्ष के दौरान उभरा था। वह समझौतों के खिलाफ था। लक्ष्मी नारायण लाल की दृष्टि

---

1 वही, पृ.96–97
2 वही, पृ.195
3 वही, पृ.145
4 गर्ग मृदुला – अनित्य (राजकमल पेपर बैक्स) 2013, RS.250/- ISBN-978-81-267-2585-4

में यह दुविधा से आगे प्रतिशोध की सशक्त कथा है। मनोहर श्याम जोशी इसे परम्परावादी लेखन नहीं मानते। डॉ. ज्योति सिंह इसे राजनीतिक उपन्यास कहती है। लेकिन यह राजनीतिक नहीं है घटनाएं बस नाटक की तरह आ गई है। अविजित के संबंध विवाह पूर्व थे विवाहोपरांत भी प्रेम संबंध चले कारण दाम्पत्य जीवन से असन्तुष्टि। पत्नी श्यामा अतिरिक्त सौन्दर्य की स्वामिनी, अविजित दैहिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ।[1] अविजित के लिए वह नाम मात्र की पत्नी जबकि – संगीता पत्नी न होते हुए भी पत्नी की आवश्यकताओं की पूर्ति का माध्यम बनी। काजल बैनर्जी के साथ उसके विवाह पूर्व सम्बन्ध है तथा संगीता व रंजना से विवाहेत्तर सम्बन्ध।

श्यामा – भारतीय नारी के पत्नी रूप को उजागर करती, पति का स्थान अन्य पुरुष को नहीं देती। अविजित के अवैध सम्बन्धों पर शर्म महसूस करती है किन्तु उसका साथ नहीं छोड़ती। उसके लिए पति का स्पर्श ही दवा का काम करता है – "सिर दर्द का तो बहाना है, स्पर्श को महसूस करने के लिए। देर तक रहे तो स्पर्श दवा बन जाता है।"[2]

संगीता केवल पैसों के लगाव के कारण अमीर उद्योग पति सुरेश मंडालिया से विवाह करती है। वह अविजित से प्यार करती है जो विवाहित है। वह सुरेश से विवाह करके भी प्यार नहीं कर पाती। अविजित कहता है – "मैं कभी सोच ही नहीं सकता था कि तुम बिना प्यार किए, सिर्फ पैसों के लिए शादी कर सकती हो।"[3] संगीता कहती है – "आप तो मेरी माँ को जानते थे। उन्होंने हमेशा यही सीख दी किसी मर्द से प्यार की खातिर शादी मत करो। प्यार लो, दो कभी नहीं।"[4]

अविजित से प्रेम में संगीता अपने पति की हत्या तक कर देती है। सुरेश बदसूरत होने के कारण संगीता की काम पिपासा को शांत नहीं कर पाता। वह कहती है – आखिर तुम चाहते क्या हो ?, मैं तुम्हारी बीवी हूं या नहीं ?, मुझे छूते क्यों नहीं ?, शादी क्यों की थी मुझसे ?, प्यार करते हो तो करो प्यार, रोते क्यों हो ?[5] संगीता उसकी कुर्सी के आगे जमीन पर गिर गई और अपनी बाहों से उसकी जाँघें घेर ली। उसका ड्रेसिंग गाउन वक्ष से पूरी तरह हट गया। सुरेश ने उसे नहीं छुआ।

काजल अविजित से विवाह पूर्व प्रेम करती है किंतु सुंदर न होने के कारण अविजित उससे विवाह करने से इंकार कर देता है। काजल का विवाह मुखर्जी से होता

---

1 सिंह ज्योति – मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता का प्रश्न, पृ.88
2 गर्ग मृदुला – अनित्य, पृ.12–13
3 वही, पृ.15
4 वही, पृ.15
5 वही, पृ.215

है जो कि असफल रहता है। पति से अपमान व तिरस्कार मिलने पर काजल उससे सम्बन्ध विच्छेद कर लेती है और अपने बेटे को भी उसी के पास छोड़ देती है।

अविजित की आया – स्वर्ण भी विवाहित है, किन्तु पति द्वारा झूठ बोलने पर वह उसे छोड़कर कलकत्ता चली जाती है। हमको बोला बंगाली है। हम ब्याह कर लिया। गाँव पहुँचा तो देखा – सब लोग उड़िया बोलता है। हम बोला – हमारा संग रहना है तो चलो कलकत्ता। नौकरी करो। वो बोला घर गृहस्थ है। खेती करेगा। करो खेती। हम आ गया छोड़कर।[1] स्वर्णा का चरित्र पति के प्रति समर्पिता का है। वह – स्वावलंबी, स्वाभिमानी पत्नी भी है। एक दिन उसका पति ढूँढ़ता – ढूँढ़ता कलकत्ता आ पहुँचा, बाजार में मिल गया। वह कहती है – "स्वामी हमको लेने आएगा और हम इधर पड़ा रहेगा, पैसा की खातिर। स्वर्णा का अपने पति से एकनिष्ठ प्रेम है। उसकी जिन्दगी में कोई दूसरा पुरुष नहीं आता विवाह से पूर्व वह लक्ष्मण से प्रेम करती थी तथा विवाहोपरांत भी उसी के प्रति समर्पित रहती है।

अनित्य वह पात्र है जिसका इस संस्कृति से पूर्णतया मोह भंग हो चुका है। उसे किसी भौतिक उपलब्धि की इच्छा नहीं है। वह नितांत सम्बन्;ध हीनता की स्थिति में जीता है। कहीं पर भी उसका स्वार्थ या अपना हित आड़े नहीं आता है।

प्रभा – आधुनिक मिजाज की लड़की है – बेहिसाब सहेलियां, पिक्चर सैर सपाटा, खाना–पीना, रोज–रोज प्रोग्राम, लोगों से हरदम घिरे रहना पसंद करती है। प्रवृतियों में खुशमिजाजी, हमदर्दी, मित्रभाव, समाजप्रियता या अकेलेपन का डर।

शुभा – अभिनय की शौकीन। कॉलेज से सीधा घर आती है। किताब लेकर कोने में बैठ जाती है। श्यामा बीमार होती है तो चुपचाप आकर उसके बिस्तर के पास खड़ी हो जाती है।

संगीता – डॉक्टरी करना चाहती थी। कर सकोगी ? अविजित के प्रश्न पर – कोशिश करूंगी। क्यों नहीं कर सकूंगी, शक करने की हिम्मत कैसे हुई आपकी ? कहने वाली की – दुबली पतली देह, पर भारी वक्ष, कृश मुख, असाधारण जहरीली आँखें थी।[2] सोलह साल की थी तब अविजित 32 साल का था।[3]

स्वर्णा – का पति लछमन – भाग गया। संवादात्मक स्थिति।

- कहाँ गया ?

---

1 वही, पृ.48
2 वही, पृ.37
3 वही, पृ.89

- कौन जाने किधर गया हरामी। गाँव गया होगा मरने। खेती करेगा। करो। बायेगा अपना देह का हड्डी काटेगा हमारा सिर।
- भूखा मरेगा तो अपने आप लौट कर आएगा।
- जितना पैसा जमा किया सब लेकर भागा है।
- रुपया खत्म होते ही लौट आएगा। हम उसके पीछे नहीं जाएगा। हमारा अपमान करेगा। चोरी करके भागेगा। मर जायेगा। उसके पीछे नहीं जाएगा।[1]

यह है स्वर्णा जैसी स्वावलंबी औरत का आत्म स्वाभिमान। हमारा अभिमान को लात मारेगा और हम रहेगा उसका पास ?[2] काजल अपनी सुंदरता के बारे में अविजित को कहती है – "मैं सुंदर नहीं हूँ अविजित। न बीस साल पहले थी न अब हूँ। मैं नहीं चाहती, कोरे मेरे मुँह पर सुंदर कहे?[3] (क्योंकि यह झूठ है) पुरुष के वर्चस्व वाले विचारों में – "भारतीय संस्कृति में पति का स्थान पुत्र से ऊँचा माना गया है। बेटा स्त्री का भार सब संभालता है जब पति उस योग्य नहीं रहता।"[4] परन्तु आजकल तो बेटियाँ खुद पिता की जिम्मेदारी निभा लेती है। प्रभा – स्वयं कैलाश राव से शादी करके दिल्ली छोड़कर चली जाती है।[5] यह उपन्यास – भगत सिंह या अन्य किसी बड़े राजनीतिक नेता के जीवन को लेकर नहीं बुना गया। यह साधारण लोगों की कहानी है। उनकी जिन पर राजनेताओं का गहरा प्रभाव है। अनित्य ऐसा ही पात्र है। उपभोक्ता संस्कृति, महाजनी सभ्यता, भौतिक वस्तुओं का आकर्षण अनदेखा नहीं है परन्तु विवाह संस्था की सफलता/असफलता विवाह प्रेम – दाम्पत्य भाव – स्त्री पुरुष सम्बन्ध विवाहेत्तर सम्बन्ध अवश्य प्रभावी रहे हैं। अविजित कन्फेशन के अंदाज में कहता है – "रंजना – मैं सजा से नहीं डरता। हर किसी को यह अधिकार नहीं देना चाहता कि मुझे सजा दे ले। तुम रंजना सिर्फ तुम मेरा न्याय करना फिर जो सजा तुम दोगी, मैं स्वीकार कर लूंगा।"[6]

---

1 वही, पृ.43
2 वही, पृ.48
3 वही, पृ.53
4 वही, पृ.183
5 वही, पृ.225
6 वही, पृ.246

मैं और मैं

यह उपन्यास[1] अपने भीतर के जगत को सच की तपिश से बचाने की प्रवृति को रेखांकित करता है। क्योंकि सच से साक्षात्कार करें तो भीतर अपराध बोध पनपता है और झूठ में शरण लेने की लालसा। कौशल – माधवी के बनते – टूटते सामाजिक और नैतिक आग्रह के सम्बन्धों का सच है यह उपन्यास। माधवी–राकेश एक विवाहित जोड़ा है। एक दूसरे को समर्पित। माधवी पति – बच्चों को पाकर खुश है किन्तु मानसिक बौद्धिक आवश्यकता पूरी करने के लिए कौशल जैसे कुरूप व्यक्ति के प्रति आकृष्ट होती है। अपने साहस और समझदारी से दाम्पत्य जीवन को बिखरने से बचा लेती है।

माधवी जानती है – यह आदमी किस कदर बदशक्ल है फिर भी कौशल पूछता है – मैं बहुत बदसूरत हूँ नहीं ? मैं आपके मन में घृणा नहीं जगाता ? आपको नहीं लगता तो मैं बदसूरत हो ही नहीं सकता।[2]

लेखिका – कहना चाहती है – "वांछित पुरुष को पा लेने से स्त्री का जीवन सार्थक नहीं हो जाता। एक पुरुष को छोड़कर दूसरे के पास जाने से क्षणिक आवेग भले शान्त हो जाए, अन्ततः निस्सारता ही लाभ लगी है।"[3] माधवी अपने पति राकेश को लेकर सोचती है – "कितना प्यारा पति पाया है उसने भारतीय पुरुष पत्नी के अकेलेपन की जरूरत को समझे। ऐसा पति जिस स्त्री का हो उसे और क्या चाहिए ? चाहत की कोई हद नहीं है। आदर्श पति की आदर्श पत्नी बने रहने में दो – चार दिन से अधिक संतोष नहीं मिल सकता। दिमाग को खुराक चाहिए, शरीर को प्रसाधन।"[4] वह अपनी अलग अलग भूमिकाओं के बारे में सोचती है। कभी आदर्श पत्नी, कभी स्वतंत्र प्रेम में आस्था रखने वाली, कभी सुघड़ गृहिणी, कभी मुखर बुद्धिजीवी, कभी वर्गीय अहंकार से समरी सोशलाइट, कभी वर्ग विभेद से विमुख लेखिका।"[5] वह एक के बाद एक भूमिका निभाती चलती है। माधवी एक आदर्श पत्नी की तरह – कौशल से साफ–साफ कहती है – "पैर छूने के बहाने, बार–बार मेरे करीब, किसलिए चले आते हैं ? मैं किसी का हाथ पाँव छूना बर्दाश्त नहीं कर सकती।"[6]

माधवी और कौशल – एक नफरत का भाव। नफरत की मोम में मढ़ी देह को समर्पण की आग में झोंक देना – आत्म पीड़न है, आध्यात्मिक परितृप्ति है जो स्त्री ही

---

1 गर्ग – मृदुला – राजकमल (पेपरबैक्स) Rs.195/- 2013, ISBN-978-81-267-2580-9
2 वही, पृ.9
3 वही, पृ.15
4 वही, पृ.16
5 वही, पृ.17
6 वही, पृ.53

जान सकती है। जैसे–जैसे नफरत की आग फैलेगी माधवी के चेहरे से शालीनता, तटस्थता, आत्म नियंत्रण के मुखौटे उतरते जाएंगे और सभ्य शिष्ट देह में कैद अग्रिम औरत जंजीरे तोड़कर बाहर निकल आएगी।"[1] क्या इसीलिए बार–बार कौशल माधवी के पास जाता है ? माधवी भी क्या वास्तव में नहीं चाहती है कि कौशल पास आए ? तो फिर वह उसके सामीप्य को क्यों बर्दाश्त करती जा रही है।[2]

मनोग्रंथियों का विश्लेषण – जेनेन्द्र के त्याग पत्र के बहाने – मृणाल का एक कोयले वाले के साथ भाग जाना – माधवी स्त्री, क्यों असुन्दर–वीभत्स, कुत्सित को गले लगाती है ? क्यों एक कुंठाग्रस्त मनोग्रंथि से पीड़ित पुरुष को आस्था के साथ स्वीकारती है ? स्त्री बेजान यंत्र नहीं है कि पुरुष की मनोग्रन्थियों को सुलझाने में उसका उपयोग किया जाए ?[3] माधवी – कौशल द्वारा उसके हाथों को चूमने पर उसे घर से निकल जाने की कहती है।[4]

फिर राकेश व उसके संवाद कौशल को लेकर दाम्पत्य सम्बन्धों की टूटन बताते हैं –

- क्या वह रोज आता है ? अब नहीं आएंगे ?
- अब तक क्यों आते थे ? जवाब दो न ?
- तुम्हें कौशल का यहाँ आना अच्छा नहीं लगता ? तुम्हें पसंद नहीं है तो मैं मना कर दूंगी। तुम चाहते हो वह न आए ? तुम क्या चाहती हो? हमें हो क्या गया है राकेश।" माधवी अपने पति के सामने सच कहती है झूठ नहीं बोलती है – "कौशल मेरे लेखन के लिए अनिवार्य हो गया है। उसे दिखलाए बिना उपन्यास आगे नहीं चला पाती है। इसीलिए यहाँ आने से उसे रोक नहीं पाती।" राकेश – माधवी के मन के शब्द – "उसके मन में मेरे लिए श्रद्धा है को आकर्षण के रूप में लेता है तथा पैसा होने के कारण माधवी को कौशल को एक मोहरे की तरह इस्तेमाल करने से मना करता है।[5] जिससे प्रेम करो उसकी रक्षा करनी पड़ती है। सच्चा प्रेम एकतरफा होता है। प्रेम का प्रतिकार नहीं मिल सकता–[6] ये सब बौद्धिक बातें है। भले ही कौशल कहे "मैं अपराधी हूँ।"[7] लेकिन एक अपराध बोध

---

1 वही, पृ.55
2 वही, पृ.58
3 वही, पृ.60
4 वही, पृ.62
5 वही, पृ.63–65
6 वही, पृ.66
7 वही, पृ.67

माधवी में है। अपने वर्तमान का। उच्च वर्गीय रहन सहन का जिसे चाहकर भी वह छोड़ नहीं सकती और न अपराध भाव से मुक्ति पा सकती है।[1] एक अपराध बोध कौशल का है – अपने व्यतीत को लेकर। करुणा, संवेदना भय से बने सम्बन्धों के सामने प्रेम क्या है ? माधवी – सीमा में रहते हुए अपनी समझदारी से दाम्पत्य जीवन को बचाती है तथा कौशल को कहती है – "आपका यहाँ आना ठीक नहीं है। मेरे घर अब आपका आना नहीं हो सकता। कहीं बाहर बैठकर बात कर सकते है। वे त्रिवेणी कैंटीन में 11 बजे मिलकर बात करना तय करते है।[2]

राजेश्वर मिश्र पुरुष वादी दृष्टि दर्शाते हुए कहते हैं– "औरत का प्यार पाना कौन मुश्किल है ? आदमी के मुँह से अपनी तारीफ सुनकर पागल हो जाती है।"[3] कौशल का कथन स्वीकारोक्ति युक्त है – "मैं बहुत मामूली आदमी हूँ। झूठ बोलता हूँ। धोखा देता हूँ। मौके का फायदा उठाकर मतलब सीधा कर लेता हूँ लेकिन लेखन की मेज पर सच्चा और ईमानदार हूँ।[4] यह उपन्यास स्त्री के लिए प्रेम का अर्थ आत्मपीड़न मानता है।[5] प्रश्न–स्त्री का रोना सुनकर आदमी को सुखकर क्यों लगता है ?[6] वही सफल माना जाता है परिवार में जो बच्चों के प्रति अपने कर्तव्य निभाता है।[7] माधवी पुरुष वर्ग से सवाल पूछती है कि किसी के बारे में व्यक्तिगत जीवन के सवाल पूछने का क्या अधिकार है ?[8]

यह उपन्यास लेखक के जीवन में झलकता है कभी स्त्री की तरफ तो कभी पुरुष की तरफ। दोनों का अहम् है, चिन्तन, टूटन है तो सम्भावनाएँ भी है लेकिन लेखक होना अलग बात है और परिवार चलाना अलग बात है। लेखक होने का अर्थ परिवार के उत्तरदायित्वों से मुक्त होना कभी नहीं होना चाहिए। पति, पत्नी, बच्चे हम सबका सामाजिक उत्तरदायित्व है जो करुणा, दया, न्याय, ममता मांगते हैं। कर्तव्य की कसौटी बराबर रहती है।

---

1 वही, पृ.68
2 वही, पृ.69
3 वही, पृ.101–102
4 वही, पृ.106
5 वही, पृ.125
6 वही, पृ.137
7 वही, पृ.141
8 वही, पृ.143

कठगुलाब

यह उपन्यास[1] स्त्री जीवन के बहु आयामी सन्दर्भों को सृजन की सम्भावनाओं में विश्लेषित करता है। स्त्री की सृजनात्मक क्षमता स्त्री विमर्श की सबसे प्रशंसनीय जमीन है।[2] साहित्य व जीवन में स्त्री की सृजनात्मक क्षमता को उसके मातृत्व से जोड़कर देखा – परखा जाता रहा है किन्तु यह उपन्यास अन्य विकल्प प्रस्तुत करता है। संतान पैदा न कर पाने पर कोई बंजर नहीं हो जाता[3] असीमा के जीवन में उर्वरता समाप्त हो जाने के बाद भी विपिन उसे गोधड़ योजना तक ले जाता है।[4] स्वतन्त्रता के इच्छुक के लिए मातृत्व–बन्धन है, लम्बी जिम्मेदारी तथा भावी के विवेक को साधने का नैतिक भार है।[5] इस उपन्यास के सभी पात्र मातृत्व में अपने जीवन की पूर्णता तलाशते हैं।[6]

मातृत्व का मुद्दा

मातृत्व एक जैविक प्रक्रिया है। इससे स्त्री की सृजनात्मक क्षमता जुड़ी होती है। सामाजिक धरातल पर इसका सृजन – "पति की कृति" स्वीकारा जाता है। स्त्री के जीवन के महत्वपूर्ण वर्ष बच्चे के पालन पोषण में बीतते हैं। समाज मातृत्व का महिमा मंडन करता है। विवाहित मातृत्व में पुरुष के – "अपने बच्चे" की अवधारणा महत्वपूर्ण होती है। मातृत्व को स्त्री – जीवन का लक्ष्य बनाती है इसके पीछे कारण है – जीवन का दुःख से निजात। जीवन की सार्थकता के लिए।

एक बच्चे के लिए वह सभी को माफ करने को तैयार है।[7] स्त्री पुरुष से जुड़ती है। स्त्री के भाव – मैं एक बच्चा पालना चाहती हूँ। मैं उसका पहला शब्द सुनना चाहती हूँ। पहला कदम सम्हालना चाहती हूँ। अपनी आँखों के सामने बच्चों को आत्म निर्भर बनते देखना चाहती हूँ, उसे आत्म निर्भर बनाने में इन्वेस्ट करना चाहती हूँ। मैं पालना – पोसना, सहेजना – संवारना चाहती हूँ। मैं एक सर्जक होना चाहती हूँ।[8]

पितृसत्तात्मक व्यवस्था में पत्नी का सब पति होता है लेकिन पति का सब पत्नी का नहीं हो सकता। लम्बी हताशा, पीड़ा, अपमान की लम्बी प्रक्रिया के बाद अकेले छूट

1 गर्ग मृदुला– कठगुलाब–भारतीय ज्ञान पीठ 2013, Rs.270/- ISBN-987-93-263-5109-6
2 त्रिपाठी–सत्यदेव–हिन्दी उपन्यास समकालीन विमर्श, पृ.129–142
3 वही, पृ.242
4 वही, कैसे उगा मैं
5 सेठ राजी – कठगुलाब से गुजरते हुए – कथा देश, जून–98, पृ.63
6 जैनेन्द्र कुमार – स्त्री की सार्थकता मातृत्व में है।
7 गर्ग मृदुला का वंशज, पृ.146
8 वही, पृ.104

जाने पर, लेखन ही उसका शस्त्र भी बनता है और ढाल भी। उसके सृजन पर प्रश्न चिह्न लगते हैं। सृजन के नए आयाम पाकर दुःख पीड़ा में डूबे जीवन के महत्वपूर्ण लम्हें सृजन की गरिमा से लहलहा उठते हैं। मृदुला गर्ग ने इस उपन्यास के माध्यम से – मारियान स्त्री चरित्र के द्वारा – भविष्य कुछ भी हो लेकिन, अपने पर विश्वास, सृजन के सन्दर्भ खोजकर विकल्प प्रस्तुत किया है। स्त्री अपनी संतान के माध्यम से अगली पीढ़ी को संस्कार देती है। रोटी कपड़े की व्यवस्था के लालच में, अपने पति को स्मिता के बलात्कार के समय नहीं फटकारना, पति से जुड़े रहना – अवसर परस्ती का जीवन दर्शन है।

विपिन – अर्द्ध नारीश्वर के गुणों से युक्त असीमा का बीज अपने गर्भ में रखना चाहता है, विराट दुःख बोध, घनघोर एकात्मकता में अपनी माँ की छवि देखना चाहता है। नीरजा के माता – पिता के कड़वे रिश्ते विवाह में नीरजा का विश्वास नहीं पनपते देते। विपिन की बच्चे की कामना है तथा नीरजा का विवाह संस्था से प्रतिरोध है। बच्चे के लिए साहचर्य रिश्तों को यांत्रिकता में बदल देता है।

नमिता का पति – उसकी बहिन स्मिता को उसी के सामने हथेली से उसका वक्ष दबोचता है और स्मिता दर्द से सिसकारी भरती है तब नमिता कहती है "अरे छोड़ों उसे। क्यों तंग कर रहे हो।"[1] क्या है यह ? कैसा स्त्री विमर्श? असीमा का कथन "मर्दों की दुनिया में रहने के लिए होम साइंस नहीं कराटे की जरूरत है।"[2] स्त्री विमर्श की दृष्टि से जरूर ठीक है। वह समझाती है, किसी की दया मत स्वीकारो। अपने पर भरोसा रखो। केवल अपने पर।[3] वह स्मिता को हिम्मत बँधाती है "तू फिक्र मत कर, जैसे भी होगा, मैं तेरी फीस के पैसे दिलवा दूंगी। तू आगे पढ़। अपने पैरों पर खड़ी हो। हमारे भरोसे मत रह। काम धाम करेगी तो एक नहीं अनेक दोस्त मिलेंगे। अपनी मन पसंद शादी करना। मेरी तरह भिखारिन मत बनना।"[4]

स्मिता के मन में प्रतिशोध के भाव पनपते थे – "वह उन सबकी हत्या करना चाहती थी – जिन्होंने उसकी अवमानना में हिस्सा लिया था – जीजा, नमिता, उन तमाम मर्दों जो उसे देखने आते थे तथा उस औरत की जिसने बाल खींच खींचकर सीधे किए

---

1 वही, पृ.16
2 वही, पृ.18
3 वही, पृ.20
4 वही, पृ.20

थे।"[1] स्मिता का चरित्र न आत्म मुग्धता न हीन भावना, अपराध बोध से अछूती है।[2] वह स्वयं से सवाल पूछती है –

- मैं खुद को दूषित पापी क्यों नहीं मानती ?
- खुदकुशी करने को मेरा जमीर मुझे क्यों नहीं उकसाता ?
- मैंने प्रतिशोध क्यों नहीं लिया ?
- भगोड़ों की तरह पलायन क्योंकिया ?
- क्या एक बेहतर जिन्दगी का ख्वाब देखना बुजदिली है ?[3] स्मिता अपने जीजा के मरने की खबर सुनकर कहती है – "अच्छा हुआ, मेरा प्रतिशोध प्रकृति ने ले लिया। वह भरपूर जवानी में चल बसा। यही तो मैं चाहती रही थी।"[4]

मनोविश्लेषक चिकित्सकों का निष्कर्ष – "माँ–बाप के सेक्स सम्बन्धों का बच्चों पर दूरगामी प्रभाव पड़ता है।"[5] चरित्र गढ़ने की दृष्टि से महत्वपूर्ण सूत्र है। लांछित, प्रताड़ित, बलात्कृत और पिटी हुई एब्यूज्ड औरतों की चर्चा इस उपन्यास में खूब है जिनमें पीड़ा सहने की अपार शक्ति है, आदत है। लेखिका का मानना है कि "नग्नता केवल देह की नहीं होती, रूहानी नंगापन बर्दाश्त नहीं होता है।"[6] इर्विन मारिया से उपन्यास को मानस पुत्र कहकर लेखन को नए आयाम देता है।[7] जैसे ही यह उपन्यास छपकर आएगा हम एक और बच्चा बनाएंगे।[8] इस प्रकार उपन्यास वुमन ऑफ द अर्थ बाँझपन को समाप्त करने का प्रतीक बनता है।

मृदुला गर्ग कामकाजी औरतों के बारे में लिखती है – "हैबिचुअल गर्भपात की बीमारी, ज्यादातर कामकाजी और खासकर फैमिनिस्ट औरतों में होती है। वे काम की रैट–रेस में गर्भ को इतने दिन तक सूना रखती है कि उसे आजाद रहने की आदत पड़ जाती है।"[9]

स्त्री विमर्श का प्रश्न यह भी हे कि – "औरत, औरत के साथ अन्याय क्यों करती है ? क्या उसके मूल में पुरुष ईर्ष्या नहीं रहती ? वह पुरुष होना चाहती है। इसीलिए समर्थ होने पर भी, दूसरी स्त्रियों पर अपने उधार के पौरुष को रौब जमाती है जैसे छोटे

---

1 वही, पृ.24
2 वही, पृ.33
3 वही, पृ.34
4 वही, पृ.38–39
5 वही, पृ.41
6 वही, पृ.60
7 वही, पृ.93
8 वही, पृ.95
9 वही, पृ.105

बच्चे बड़ों की नकल करके तुष्टि पाते हैं।[1] क्या औरत एक विडम्बना है ? औरत होना विडम्बना को जन्म देता है। औरत होना एक विडम्बना है। औरत खुद एक विडम्बना है। जहाँ औरत होगी। एक विडम्बना जन्म लेगी। औरत तेरा नाम विडम्बना है।[2]

तभी – स्त्री – पुरुष से बराबरी की मांग करती है। आजादी की गुहार लगाती है। इस प्रकार यह उपन्यास – स्त्री की त्रासद कथा है। उपन्यास की हर स्त्री अपने समय की प्रवक्ता हैं सहकारी संस्थाएँ बनाने से समस्याएँ सुलझती नहीं, संघर्ष की शुरुआत होती है। इस देश में औरत या माँ–पैर की जूती। इनसे काम करवाने के लिए इनकी अम्मा बनना जरूरी है क्या ?

कौन सोचेगा ? कौन उत्तर देगा ऐसे तीखे सवालों का ? पैसों के खेल से कब मिलेगी मुक्ति और कैसे ? इसे भी तय करना पड़ेगा। बाँझपन के बाद क्या सब विकल्प समाप्त ? या कोई अन्य रास्ते भी है ? पूरी सच्चाई के साथ यह मन्थन करता उपन्यास प्रासंगिक है जिसमें कठगुलाब की तरह कठोरता को तोड़ने की कलमी ताकत मौजूद है।

3.12 मैत्रेयी पुष्पा

मैत्रेयी – महिला कथाकार – उनके उपन्यास, कहानियाँ आत्मकथा ने अपनी एक अलग ही पहचान बनाई है। उनकी कथा दृष्टि, शैली, वाक्य रचना, पुरुष लेखन से भिन्न है। मानवीय भावों की सघन अंतरंगता, सम्बन्धों की जटिलता, स्त्री मन की परतें खोलते कथानक है। मैत्रेयी ने अपने उपन्यासों में समाज के अनुशासन पर लिखा, किन्तु केन्द्र में स्त्री रही। इदन्नमम् की मंदा, गोमा हँसती हैं, की गोमा, चाक की सारंग वरक्षम, झूलानट की शीलो रुढ़िबद्ध परम्पराओं का घोर विरोध करती है। सम्पत्ति व भोग्या होने से इन्कार करती है। वस्तु से व्यक्ति होने का भरपूर प्रयत्न करती है। ये साधारण नारियां नहीं है, जीवटता तथा जिजीविषा के साथ उभरकर अहा शक्ति बनती है।

इनके चर्चित उपन्यासों में बेतवा बहती रही, इदन्नमम्, चाक, झूलानट, अल्मा कबूतरी, अगनपारवी, कही ईसुरी फाग, त्रिया हठ, गुनाह–बेगुनाह है वहीं पर कस्तूरी कुण्डली बसै, गुड़िया भीतर गुड़िया आत्मकथात्मक कृतियां है।

---

1 वही, पृ.113
2 वही, पृ.113

चाक

यह उपन्यास[1] चाक (समय–चक्र) है। चाक घूमेगा और मिट्टी को बिगाड़कर नया बनाएगा। नए रूप में ढालेगा। अतरपुर–जाट किसानों का गाँव, हर बदलाव का विरोध, मूल्यों–विश्वासों की टूटन, परम्परागत मान्यताओं में बदलाव की कोशिशें, इस परिवर्तन की सूत्रधार बनने के कारण शिकार होती स्त्री की कथा है। इसमें परिवर्तन की धारा का प्रभाव है, रीति रिवाजों, जाति संघर्षों, गीत, उत्सवों, नृशंसताओं, प्यार, ईर्ष्याओं, कर्मकांडी अन्धविश्वासों के बीच सारंग – रंजीत के सम्बन्धों का अंकन है। पाठकीय परिवेश के चरित्रों से सहसम्बन्ध स्थापित करता – सामाजिक राजनीतिक परिवर्तन, पंचायती राज, चुनावी तिकड़म बाजी भ्रष्टाचार मुकदमेबाजी के बीच पिसती स्त्री का उत्पीड़न इसमें रेखांकित होता है।

स्त्री पात्र – विस्फोटक, विकासशील, रीति–मूल्यों से जूझने वाले, पुरुष सत्तात्मक सीमा रेखाओं को लाँघने वाले है। विधवा जटनी स्त्री रेशम अवैध गर्भधारण करती है – उसका विचार है – "पेड़ हरा भरा रहे तो फल–फूल क्यों नहीं लगेंगे ? क्या ऐसा हो सकता है कि ऋतु आए और वल्लरी न फूटे?"[2] वह गर्भ धारण करती है और एलान करती है। "हाँ मैं पेट से हूँ अम्मा" वह सास से सवाल पूछती है आज तुम्हारा बेटा मेरी जगह होता तो तुम पूछती "तू किसके संग सोया था ?"[3] परम्परावादी सास से कहती है – "अपने पूत के लिए रोती है और मेरे बालक की हत्या पर उतारू है।। मेरी छातियों का दूध मत सुखाओ।"[4] वह खूंखार पंजों के सामने छाती ताने खड़ी रहती है।[5] स्त्री मुक्ति – स्त्री अस्मिता का प्रश्न है और देह स्वतन्त्रता पहला सोपान। औरत और जमीन बिना मालिक की नहीं रहती। रेशम ने हठ ठानी थी अकेली जीने की।[6] चाक महिला सशक्तिकरण को उन्नतिशील बनाता है। यौन–मुक्ति, नारी चेतना, नारी अधिकार, सह अस्तित्व को विश्लेषित करता है।

---

1 पुष्पा मैत्रेयी – चाक, राजकमल प्रकाशन, 1997, 300/- ISBN-81-7178-571-9
2 चाक – मैत्रेयी पुष्पा, पृ.18
3 वही, पृ.19
4 वही, पृ.21
5 वही, पृ.22
6 वही, पृ.16

रंजीत कहता है – "सारंग जैसी तेज की धनी स्त्री सबको मिलती है क्या ? कम से कम अपनी बात को होंठो तक लाने का प्रयास तो करती है।"[1] सारंग का कथन – "तुझे इस बदसलूकी का मजा न चखा दिया तो मेरा नाम सारंग नहीं।"[2] सारंग को स्वयं पर बहुत विश्वास है – "सारंग जिसके पास दो हाथ हैं , इस माथे में बुद्धि है, उसके लिए काम की क्या कमी ?"[3] तुम क्या जानो – औरत का कलेजा कैसा होता है ? कब वह पत्थर की शीला हो जाती है और कब पिघला हुआ मोम ? चन्दन से प्यारी नहीं "है मुझे अपनी देह।"[4] बनिया कहता है – अपनी बहू से – "बंसबेल नहीं चलाएगी तो तुझे हम चाटेंगे धरकर ? जिस पेड़ पर फल नहीं लगते उसको काटकर आग में झोंक दिया जाता है।" इस पर उसकी बहू का प्रतिरोध – मैं नहीं मानती की मैं बाँझ हूँ। मेरा आदमी ही नामर्द .....।"[5]

सम्बन्धों की वैधता पवित्रता को चुनौती इन शब्दों मे दी गई है मैत्रेयी द्वारा – "सामने खड़ी औरत दो बूँद का दान माँग रही है और तू लंगोट कस रहा है। इसके घरवालों से ज्यादा कसाई है तू। भोग की इच्छा वाली औरत को ठुकराने वाला मर्द नरकगामी होता है।"[6]

चाची सारंग की हिम्मत देखकर कहती है – "इस गाँव की लुगाई तो सरग में थेगरी लगाती है।[7] वह मेहमान की देह को पूरा पाव भर तेल मालिश के बहाने पिला देती है।"[8]

गुलकंदी – खटीक के मूत पर जान देने वाली[9], सारंगी डोरिया से कहती – देह तोड़ने से ज्यादा जरूरी होता है मनोबल तोड़ना[10] रंजीत औरत के आँसू को मर्द की कायरता कहता है[11] सारंग श्रीधर को कहती है – "मैं बंधन में बंधी, रंग–रंग में दहशत लिए पाँवों की बेड़ियाँ झनकाती तुम्हारी तरफ बढ़ रही हूँ।"[12] वह अपने बेटे चन्दन को

---

1 वही, पृ.45
2 वही, पृ.46
3 वही, पृ.52
4 वही, पृ.56
5 वही, पृ.99
6 वही, पृ.99
7 वही, पृ.101
8 वही, पृ.103
9 वही, पृ.116
10 वही, पृ.118
11 वही, पृ.143
12 वही, पृ.154

कहती है – "चंदन मेरी फुनगी नहीं जड़ है। बनावट है। दुनिया है। सृष्टि है।[1] चाक उपन्यास यौन शुचिता की कट्टरता में शीथिलन को व्यक्त करता है। बदलती सामाजिक मानसिकता का संकेत करता है।[2] चाक नैतिक मूल्यों की लड़ाई का प्रतीक है। यह संघर्ष करने, जूझने व टूटकर भी निर्मित होने की प्रक्रिया को संकेतित करता है।

मैत्रेयी के अन्य उपन्यासों पर स्त्री विमर्श दृष्टि

विस्तार से बचते हुए – मैत्रेयी के अन्य उपन्यासों पर अति संक्षेप में, स्त्री विमर्श दृष्टि का सांकेतिक सूत्रवत संदर्भ प्रस्तुत करना आवश्यक प्रतीत होता है।

बेतवा बहती रही स्त्री के मर्म की सच्ची तस्वीर है। क्या स्त्री होना गुनाह है ? क्या उसका तड़प–तड़प कर मरना जरूरी है।[3] उर्वशी ने स्त्री का चोला त्याग दिया। इदन्नमम् की कमतरी – मैं उर्वशी को बचा क्यों नहीं सकी? स्त्री की अच्छी छवि क्या यही है ?[4] मंदाकिनी को व्यभिचारिणी मानने वाली कुसमा भाभी को नहीं मानना स्त्री चेतना को लहूलुहान करता है।[5] मैत्रेयी कहती है मेरे पात्र दैहिक स्वतन्त्रता की मांग करते हैं।[6] क्या इन बदचलन मानी जाने वाली औरतों के सामाजिक सम्बन्धों, पारिवारिक रिश्तों में पुरुष जुड़ेगा।[7] स्त्री को बाहरी मनोरंजन (कामुकता) की चीज मानना, उसकी निर्लज्जता, ईमानदारी, शर्मशारी ही पुरुष के कुकर्म से अंजाम पाती है। सेक्स के स्तर पर औरत को कमजोर सिद्ध करके पुरुष पूरी जिन्दगी उसे बराबरी के अयोग्य ठहराता है। यह कैसा न्याय है ? स्त्रियाँ आगे आने की कोशिशें करे तो बात पचती क्यों नहीं ?

इदन्नमम् – नायिका प्रधान उपन्यास, नायिका मंदा – अपनी कोख से मानव जाति का भविष्य धारण करके भी बिल्कुल खाली। उसका अपना कोई नहीं। निपट अकेली। बेसहारा। यंत्रणाएँ झेलते जाने के कारण लचीली, गठीली, नुकीली, अशक्त भी नहीं, औरत के हौंसले, बुद्धि, को टहलाने, कुचलने बरगलाने वाले पुरुष समाज को चुनौती देने वाली, बदनीयत को उधेड़ने वाली है मंदा, पवित्र गंगा – एक विशाल भू भाग को सींचने पोसने, विशाल जन समूह को जीवन दान देने वाली। मिट्टी को पुनर्जीवित करने का संकल्प करने वाली। तेजस्विनी लोक नायक के समस्त गुणों से विभूषित,

---

1 वही, पृ.157
2 कस्तवार रेखा उत्तर शती के उपन्यासों में स्त्री, पृ.70
3 पुष्पा मैत्रेयी – हंस – जुलाई 2004, पृ.35 – लेख कथा साहित्य में सती पूजा।
4 वही, पृ.36
5 वही, पृ.37
6 वही, पृ.38
7 वही, पृ.38

समाज के बीचों बीच खड़ी होकर समय को सुधारने को कटिबद्ध। अंचलवासियों को अज्ञान, अशिक्षा, अंधविश्वास, भीरूता, दैन्य से मुक्त कराने वाली।

- संगठन में विश्वास रखने वाली – "अकेला व्यक्ति उत्पीड़क शक्तियों के सामने जितना बौना और कमजोर है मिलकर उतना गैर मामूली नहीं रहता" – कहानी वाली।

यह उपन्यास इदन्नमम् – दलित समाज के पुनर्निर्माण का स्वप्न है। औरत सदियों से इसका हिस्सा रही है। अल्मा कबूतरी में स्त्री संघर्ष का मार्मिक उद्घाटन है। भूरी बाई, कदम बाई के संघर्ष को अल्मा सार्थक सिद्ध करती है। कबूतरा समाज की शिक्षित लड़की है। औरत होने के कारण नरक भोगने की बाध्यता, जीवन से भागा नहीं जा सकता, शारीरिक शोषण से निपटने भविष्य का रास्ता बनाती है। वह कहती है – आप लोगों ने हमारी दुनिया उजाड़ी है। मैं आपको उजाड़े बिना नहीं मरूंगी। मैं सबको बता दूंगी कि पाप कहाँ पलता है ? अपराध कौन लोग करते हैं ? सताने और मारने वाले ठेकेदार कौन है ?

अल्मा स्त्री कबूतरी पुरुष सत्ता के अनेक पाशविक अत्याचार सहकर भी अपना रास्ता बनाती है। उसके भीतर आस का एक नन्हा सा पंछी फड़फड़ाता है। झूलानट की नायिका शीलो की कहानी विवाह संस्था के भीतर गढ़ी गई है। नायक शीलो का पति पुलिस विभाग में – शहर में एक अन्य स्त्री के साथ रहता है। शीलो के साथ पति धर्म का निर्वहन नहीं करता। शीलो की सास–विवाह का दबाव बनाने के कारण अपराध बोध से ग्रसित है। दूसरे पुत्र बालकिशन के हवाले शीलो को करती है।

परम्परा के अनुसार शीलो पर बालकिशन का चादर डालना, स्त्री सुरक्षा का प्रश्न भी है। बहिया प्रथा स्त्री बिना मालिक के नहीं रह सकती। बालकिशन जरखेज गुलाम बनकर रह जाता है। शीलो शक्तिमती, सास की नजरों में भी रंडी हो जाती है। रखैल हो जाती है। क्यों शीलो जैसी तेजतर्रार औरत को समाज बर्दाश्त नहीं कर पाता। शीलो की सास का कथन – "आबरू के घंटे तो हम जनियों के गले में ही लटके रहते हैं जिन्हें न उतारते बने न ढोते।"

मैत्रेयी ने स्त्री विमर्श मुद्दे को इस उपन्यास (झूला नट) में बहुत ही विश्वसनीय ढंग से उठाया है। शीलो की तार्किकता के समक्ष गाँव समाज परिवार निरूत्तर हो जाता है। बछिया से इन्कार करती शीलो–तन–मन का ब्याह। तीसरा कौन होता है हमारे बीच ? अम्माजी सात भाँवरे, अग्नि साक्षी और बारातियों के आगे वचन भरकर संगी मुझे त्याग गया तो भाई या बहिन का क्या विश्वास करूं ?

यह विवाह संस्था पर प्रश्न चिह्न है। समानाधिकार की आवाज बुलन्द करती शीलोनिरर्थक लोकाचारी, विरोधाभासी धर्माचारों का विखण्डन करती, स्त्री स्वतन्त्रता की वकालत करती है तभी तो इस कथन की परवाह नहीं करती – "पुलसिया बेटा की बछिया की पाँत खा ली ? पूछा नहीं कि बरकट्टों ब्याही है या रखैल ? बेटों के चलते रसम रीत भूलकर बहुओं की पीठों पर कौड़े लिए फिरती है। तुम बूढ़ी जनी।"

शीलो विवाहेत्तर सम्बन्धों से – सुमेख बालकिशन दोनों के हिस्सों को हस्तगत करती सास को निहायत कमजोर बना देती है। यह उपन्यास – स्त्री शक्ति को भरपूर महत्व देता प्रेम – सम्भोग का उद्दाममय आवेगमय निरूपण करता है। शीलो के माध्यम से स्त्री की तार्किकता, साहसिक कथनों की क्षमता को उजागर करता है।

3.13 निरुपमा सेवती

निरुपमा सेवती के प्रमुख उपन्यास पतझड़ की आवाजें, मेरा नरक अपना है, बँटता हुआ आदमी, दहकन के पार है।

"पतझड़ की आवाजें" में नर नारी की समकालीनता

समस्याओं को उठाया गया है परन्तु समाधान देने में संकोच है। अनुभा, सुशीला और उषा–तीन नारियाँ, अनुभा–नौकरी पेशा आत्मनिर्भर स्त्री है जो विवाह करना चाहती है किन्तु विवाह से घबराती है। वह एक के बाद एक पुरुष से सम्बन्ध स्थापित करती है लेकिन वह स्थाई रूप धारण नहीं करता। अनुभा–रमेश का विवाह इसलिए नहीं हो पाता कि वह एक बदनाम इमारत में रहती है।

नौकरी करना उसकी विवशता है क्योंकि उसे विपन्न परिवार की सहायता करनी है। सुशीला भी नौकरी पेशा परन्तु खुला दृष्टिकोण रखने वाली, विवाह को इतनी महत्ता नहीं देती, वह विवाह के बिना भी जीवन जीना चाहती है। दोनों नायिकाएँ – अकेली, टूटी, उदास है। शारीरिक प्यास तो बुझ जाती है लेकिन मन तृप्त नहीं होता। मर्द के साथ तभी सोओ जब माल हासिल हो, पोजीशन हासिल हो या फिर शादी करता हो साला। वरना मजे के लिए तो क्या, प्यार के खातिर भी सोओ तो ये लोग समझते क्या है ? रंडी ही।[1]

यह उपन्यास – कार्यरत नारी का अन्तर्द्वन्द्व, उनकी बदली हुई धारणा, महानगरीय जीवन का संघर्ष, नारियों की शोषण जनित विवशताएं अपने अस्तित्व की

---

1 सेवती निरूपमा पतझड़ की आवाजें, पृ.97

तलाश का अंकन है।[1] लेखिका – जीवन, रचना में वेदना, पीड़ा को स्वीकारती है। प्रेम विवाह का बदला दृष्टिकोण, महिला व्यक्तित्व का सशक्त प्रामाणिक रूप इससे व्यक्त हुआ है।

परम्परागत प्रेम व सेक्स का विरोध करना, नायिकाओं के विवाह की कामनाएँ, जीवन में स्थायित्व की चाह, नारी की अभिशप्त नियति का यथार्थ चित्रण, आत्मनिर्भरता के बावजूद अतृप्ति का अहसास, आत्महत्या करने का कमजोर विचार इसमें है लेकिन भाषा सांकेतिक है। संकेत क्या आन्दोलन परिवर्तन कर पाने में सफल होते हैं ? शायद बहुत कम ?

3.14 मणिका मोहिनी – पारो ने कहा था

मणिका मोहिनी का उपन्यास पारो ने कहा था – परित्यक्ता नायिका पर आधारित उपन्यास है। पुरुष जब चाहे–तीन चार विवाह कर सकता है पर पत्नी पति के मरने पर विवाह क्यों नहीं कर सकती ? प्रायः यह देखा गया है कि जिस पुरुष से स्त्री विवाह रचाती है उसके पहले वाली पत्नी से हुए बच्चों के साथ वह समझौता नहीं कर पाती। मणिका मोहिनी – माँ–बेटी के निष्कर्षों को अलग–अलग रास्तों की स्वीकारोक्ति के रूप में देखती है। टूटना स्वीकार करना सरल है लेकिन उसकी पीड़ा से गुजरना पड़ता है जो अनजाने पागलपन के दौर से गुजरने जैसा है।

डॉ. शशि जैकब के शब्दों में – "पारो ने कहा था" में – नारी जीवन की विडम्बना को व्यक्त किया गया है। जो दुःख का अवतार है, दुःख को भोगना ही उसकी नियति है।"[2]

औरत को पाँव की जूती समझने वाला पुरुष स्त्री से केवल त्याग की अपेक्षा रखता है तथा समानता अधिकारों की बात को स्वीकार ही नहीं करता। यह जूती पुरुष के पाँव में फिट नहीं आएगी हमेशा चुभती रहेगी।[3] स्त्री को अपने लिए खुद की भावनाओं को समझना आवश्यक है। लेखिका की भाषा बोल्ड है।

---

1 गीते निहार, स्वातंत्र्योत्तर महिला उपन्यासकारों में यथार्थ के विभिन्नरूप, पृ.85
2 जैकब शशि – महिला उपन्यासकारों में वैचारिकता, पृ.239
3 मोहिनी मणिका – पारु ने कहा था, पृ.40

शिवानी

शिवानी के उपन्यास नायिका प्रधान होते हैं। उन्होंने नारी हृदय की भावुकता को – चौदह फेरे, कृष्णकली, विषकन्या, कैन्जा, भैरवी, विवृत में उभारा है।

चौदह फेरे

चौदह फेरे की नन्दी–कलकत्ता के प्रसिद्ध उद्योगपति की पत्नी – अल्मोड़ा में रहकर बुजुर्गों की सेवा करती है। पति रूठकर कलकत्ता चला जाता है। अर्थ प्राप्ति के कारण पत्नी, पुत्री को भूलना, मलिका नाम की स्त्री से नए सम्बन्ध स्थापित करना, ससुराल वालों का देहान्त होने के पश्चात् नन्दी का कलकत्ता जाकर बेटी अहिल्या को पिता के पास छोड़कर संन्यास ग्रहण करना, मलिका द्वारा अहिल्या को बोर्डिंग में डालना, कथा सूत्र है।

अहिल्या पिता से रूठकर टीचर बन जाती है। धर्णीधर का कथन – देखो अम्मा तुम्हारी बहू भगोड़ी है। कहीं फिर न भाग जाए इसलिए चौदह फेरे करवा दिए है। नन्दी आदर्शवादी पात्र है। शिवानी इस उपन्यास के माध्यम से नारी अधिकारों की मांग को सामने लाती है। आत्म निर्भरता की ओर नारी पात्रों के कदम बढ़ाती है। नारी का संन्यास धारण करना पलायन है, विकल्प नहीं। प्रेम का होना टूटना जुड़ना सूत्रबद्ध है। नारी पात्रों में कर्मठता, निडरता, साहस का अभाव सा प्रतीत होता है। मानसिक उहापोह ज्यादा है।

समाहार

महिला उपन्यासकारों की प्रतिनिधि कृतियों से यह स्पष्ट होता है कि– महिला उपन्यासकारों की ये कृतियाँ स्त्री विमर्श के लिए सुरक्षित हैं।

पुरुष के लिए नारीत्व चित्रण अनुमान है परन्तु नारी के लिए अनुभव है। नारी नारी की हमदर्द होती है। पीड़ाओं के सरोकारों से जुड़कर अभिव्यक्त करती है। स्त्री ने पुरुष को कर्ता की भूमिका देने से इन्कार किया है। नारी ने स्त्री देह का दमन का विविध रूपों में प्रखर स्वरों में विरोध किया है। कई लेखिकाएँ पुरुषों के लिए प्रतिरोध का नहीं सहयोग का रास्ता चाहती है तथा उन्हें खारिज नहीं करती। स्त्री रचनाओं में प्रचलित भाषा – मुहावरों में स्त्रीवादी प्रश्न उठाए है। स्त्री पात्रों की यथार्थपरक विवेचनाएँ की है। न्याय की माँग की है। मुक्ति संघर्ष की महत्ता का प्रतिपादन किया है।

अनछुए अनजाने पक्ष को छूकर पीड़ा जगत को व्यक्त करना विशिष्ट आयाम बना है। शोषण में यौन प्रमुख है। आर्थिक आत्म निर्भरता शिक्षा समय की माँग है जो विकल्पों की तलाश करते हैं। स्त्री का परावलम्बन ही शोषण का आधार बनता है। स्त्री का संघर्ष नारी को चेतना देता है तथा खुद की पहचान कराता है। स्त्री विमर्श के सरोकार स्वयं चेती हुई स्त्री के लिए अधिक रहे हैं। विसंगतियों पर प्रहार करके नारी ने समस्याओं के समाधान की दिशा में विकल्पों की तलाश में पहल की है। बांझपन से मुक्ति–साहित्य रचना धार्मिकता के विकल्प से जुड़ने के रूप में प्रस्तुत की गई है। भविष्य – स्त्री सशक्तिकरण को लेकर अच्छा सुखद रहेगा ? ऐसा सोचा गया है। स्त्री की मुक्ति को पुरुष की वर्चस्ववादी सत्ता से मुक्ति के रूप में नए सिरे से परिभाषित व विवेचित किया गया है।

आज की नारी ने पुरुष सत्ता द्वारा निर्धारित सीमा रेखाएँ लांघी है इन पात्रों के चरित्रों के माध्यम से। वे विकासशील भी हुई है तो विस्फोटक भी। नारी लेखिकाओं का विचार है देह विमर्श अपराध बोध नहीं है – शरीर की माँग है। विवाह संस्था के परम्परागत सोच में बदलाव जरूरी है। नारी सह अस्तित्व चाहने लगी है। नारीवादी आन्दोलन की विचारधाराएँ कई बार अतिवाद की तरफ बढ़ती रहती है। सम्भोगीय स्थितियों का चित्रण इसका संकेत है लेकिन हर हाल में व्यक्ति चेतना जाग्रत हुई ही है।

चतुर्थ अध्याय

नारी आन्दोलन से सम्बन्धित उपन्यासों में सुखात्मक एवं दुखात्मक संवेदना

पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित

1. अपना खुदा–एक औरत – नूर जहीर
2. केशरमाँ – ज्योत्सना मिलन
3. साथ चलते हुए – जय श्री राय
4. ऑब्जेक्शन मी लार्ड – निर्मला भुराड़िया
5. उर्मिला का दीया – सतीश बिरथरे
6. खानाबदोश ख्वाहिशें – जयंती रंगनाथन
7. चाक – मैत्रेयी पुष्पा
8. शाल्मली – नासिरा शर्मा
9. क्योंकि औरत ने प्यार किया – जेबारशीद
10. सही नाप के जूते – लता शर्मा
11. अन्हियारे तलछूट में चमका – अल्पना मिश्र
12. फरिश्ते निकले – मैत्रेयी पुष्पा
13. पोस्ट बाक्स नं. 203 नाला सोपारा – चित्रा मुद्गल

राजनीति जीवन से सम्बन्धित

1. दुक्खम सुक्खम – ममता कालिया
2. कल्चर वल्चर – ममता मालिया
3. अनित्य – मृदुला गर्ग
4. एक कहानी यह भी – मन्नू भंडारी

धार्मिक जीवन से सम्बन्धित

1. नीलकंठी बृज – इंदिरा गोस्वामी
2. अमावस की रात – उषा यादव

समाहार

चतुर्थ अध्याय

नारी आन्दोलन से सम्बन्धित उपन्यासों में सुखात्मक एवं दुखात्मक संवेदना

1. पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित : नारी आन्दोलन से जूड़ी संवेदनाओं का मूर्तरूप इन लेखिकाओं के उपन्यासों में देखा जा सकता है।

4.1 अपना खुदा एक औरत – नूर जहीर

औरत की आजादी की दास्तान में सुख–दुःख दोनों प्रकार की अनुभूति नूर जहीर के उपन्यास "अपना खुदा एक औरत"[1] में होती है।

फ्रेडरिक एंगेल्स के अनुसार – "औरतों की आजादी और पुरुषों के साथ उसकी समानता उस वक्त तक नामुमकिन रहेगी, जब तक सामाजिक उत्पादन प्रक्रिया से अलग रखकर उन्हें घरेलू काम तक, जो निजी काम है सीमित रखा जाएगा।"[2]मजदूर आन्दोलन में औरत–संघर्ष में बराबरी की हिस्सेदार बनी, भारत की आजादी के आन्दोलन में उसकी भूमिका को स्वीकारा गया यह सुखद है किन्तु सामाजिक सम्बन्धों और धार्मिक प्रक्रियाओं पर इसका असर कम देखा गया ? यह दुःखद है। आजादी के बाद, संविधान और लोकतांत्रिक व्यवस्था कायम हो जाने के बावजूद औरत की आजादी अपना सही स्वरूप ग्रहण नहीं कर सकी है।

औरत की आजादी की मुखर पैरोकार, जानी मानी लेखिका–नूर जहीर का उपन्यास "अपना खुदा एक औरत" आकर्षित करता है। अपनी बात–बेबाक होकर वह कहती है – "औरतों की आजादी की गुत्थी इतनी उलझी हुई इसलिए है कि मर्दों ने इसको देने न देने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली है। औरतों ने मर्दों को सबसे बुनियादी चीज अगवा करने दिया। आजादी की परिभाषा और कैसे उसे हासिल किया जाए, क्यों कर उसे जिया जाए।[3]

---

1 हार्पर कालिंस पब्लिशर्स, इंडिया–नोएडा–2011, 1991

2 भारद्वाज–नन्द–औरत की आजादी की दास्तान (समीक्षा) समकालीन भारतीय साहित्य अंक 168, जुलाई–अगस्त 2013, पृ.216

3 जहीर–नूर–अपना खुदा एक औरत, पृ.279

ससुराल–अमीरों की दुनिया – सुखद अनुभूति

सफिया की शादी ऐसे खानदान में हुई जिसमें – दो अदद "सर" की उपाधियाँ, पाँच खान बहादुर और नौ बैरिस्टर मौजूद थे। शौहर भी बैरिस्टर, ससुर अवध हाईकोर्ट के जज (अमीरों की दुनिया)[1] सुखद अनुभूतियाँ थी किन्तु– एक मध्यम वर्गीय शिक्षक परिवार में जन्मी, इंटरमीडिएट तक शिक्षित, सत्रह वर्षीय सफिया, जब बैरिस्टर अब्बास जाफरी से शादीकर जिंदगी के नए सफर पर निकली तो कई तरह की आशंकाओं से घिरी थी। ग्यारह सेर जेवर और जरी की भारी भरकम पोशाक में वह नहीं जानती थी शौहर एक पढ़ा लिखा जहीन इन्सान होना सुखद है जो अपनी शरीके हयात को जिन्दगी में बराबरी का हिस्सेदार मानता है। वह केवल घर–परिवार की चार दीवारी तक उसे सीमित नहीं रखता है। उसे तर्क के बिना अपने से अहसमत होने की पूरी आजादी देता है।

अब्बास उस जमाने की मजहबी पाबंदियों के खिलाफ चुनौती बन गए। सामाजिक बदलाव की हिमायत करने वाली क्रान्तिकारी पार्टी के लिए भी उनका समर्थन करना आसान नहीं रह गया। उन्होंने जिन्दगी की सारी सुख–सुविधाएँ ठुकरा दी। यह दुःखद है। क्रान्तिकारी विचारों, मजहबी फतवों के कारण जेल जाना पड़ा, आजाद मुल्क की धर्म निरपेक्ष सत्ता के लिए भी वे उलझन का कारण बने।[2] अब्बास सार्वजनिक जीवन में सच्चाई और न्याय के पक्ष में लड़ते रहे। अपने घर की वालिदा जीनत बेगम के खिलाफ हो गए क्योंकि गरीब लड़कियों को मजहबी दलाल के जरिए सस्तेदामों पर गुलाम के रूप में खरीदना चाहती थी। मजहबी पाबंदियों को अपने परिवार व बहू पर लागू करना चाहती थी। उन्हें व सफिया को घर से अलग होकर नौकरों के लिए रहने वाले हिस्से में जाना पड़ा ?[3] अंग्रेज हुकूमत ने अब्बास को गिरफ्तार कर जेल भेज दिया तो सफिया को अपने ससुर के पास इलाहबाद पहुँचकर ग्रेजुएशन की पढ़ाई पूरी करनी पड़ी। दो साल बाद – मुल्क आजाद हुआ। अब्बास जेल से छूटे। सफिया के पास आए और वापस लखनऊ लौट आए।

सफिया के सामने – "साजिद हुसैन गर्ल्स स्कूल" में शिक्षिका के रूप में कार्य करने का प्रस्ताव सुखद है। उसने सहमति दी क्योंकि उसे काम की जरूरत थी। सफिया को लगा – मुसलमान लड़कियाँ शारीरिक दृष्टि से कमजोर है उन्हें व्यायाम की शिक्षा देना जरूरी है। उसने ऐसा किया जिसका विरोध हुआ।

---

1 भारद्वाज–नन्द, पृ.217
2 वहीं, पृ.217
3 वहीं, पृ.218

नाइंसाफी से बचाव

जब सफिया ने लड़कियों को आत्म जज्बा बनाकर अन्याय से लड़ने का हौसला जगाया तो एक लड़की ने आकर कहा – "उसके वालिद उसकी शादी उम्र दराज अमीर से करना चाहते है।" सफिया ने समझाया – निकाह के मौके पर जब उसकी रजामंदी पूछी जाए तो कबूल से इन्कार कर देना। सफिया और अब्बास ऐन मौके पर मौजूद रहे व एक मासूम के साथ हो रही नाइंसाफी से उसे बचा लिया। यह सुखद है।[1]

संघर्ष की कठिन राह पर

सफिया को संघर्ष की कठिन राह पर चलते हुए – मजहबी लोगों से व अपनी सास से लड़ना पड़ा। अब्बास को मजहबी फतवे के कारण गिरफ्तार किया गया। वह कट्टरपंथी हमले में मारा गया। घर वालों ने सफिया व उसकी बेटी को यह कहकर घर से निकाल दिया कि जब उसका बेटा ही नहीं रहा तो उस औरत से उनका कोई रिश्ता नहीं बचा। उन्होंने रिहायशी मकान भी छीन लिया। उसे न्याय नहीं मिला।[2]

तिनके को सहारे की स्थिति

सफिया को अपना ठिकाना बदलकर दिल्ली आना पड़ा जहाँ उसे – अब्बास की बेहतर साख व पढ़ी लिखी सजग स्त्री होने के कारण "संगीत संस्थान गन्धर्व केन्द्र" में नौकरी मिली जो तिनके को सहारे वाली सुखात्मक स्थिति थी किन्तु जब उसे गन्धर्व केन्द्र की मालकिन अमृता के बारे मे जानकारी मिली –

- अमृता का पति गोविंदराम एक अय्याश किस्म का व्यक्ति है।
- वह अपनी बीवी और अपाहिज बच्ची के साथ अच्छा सलूक नहीं करता।
- उन्हें शारीरिक प्रताड़नाएँ देता है। तो दुःखात्मक अनुभूति हुई और उसके संघर्ष का दायरा बढ़ गया।

लेखिका नूर जहीर ने शहबानो केस से कथानक को जोड़ा व सफिया धोखा खाकर इन्दौर केस के साथ जुड़ने के लिए गयी किन्तु इन्दौर पहुँचने पर वह चल बसी स्टेशन मास्टर इम्तियाज ने अंतिम क्षणों में उसकी देखरेख की तथा अंतिम संस्कार सम्पन्न करवाया।[3]

इस प्रकार –

यह उपन्यास दोनों तरह की अनुभूति कराता है तथा औरत की आजादी पर फिर से विचार करने की जरूरत का गहरा अहसास कराता है।

---

1 वहीं, पृ.219
2 वहीं, पृ.219
3 वहीं, पृ.220

4.2 केशरमाँ – ज्योत्स्ना मिलन

केशरमाँ – ज्योत्स्ना मिलन का उपन्यास जो स्त्री अस्तित्व को गौरव प्रदान करने की अनुभूतियाँ कराता है। केशरमाँ – ज्योत्स्ना मिलन का उपन्यास[1] स्त्रीत्व को सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक स्तर पर स्त्री मुक्ति की कामना और संघर्ष को लेकर आख्यानों में गढ़ने और पहचानने की सुखद, सार्थक अनुभूति कराता है।

प्रस्तुत उपन्यास में स्त्री को उसकी पारंपरिक कर्मभूमि, घरेलू संसार में अवस्थिति, स्त्रीत्व की पहचान वाला कथानक है।[2] उपन्यास की नायिका घर परिवार के बीच स्त्री प्रतिरोध, अवसाद के रिश्ते का सामान्य बोध, व्यंजक और मार्मिक विडम्बना का मूर्तस्वरूप – व्यक्त करती है – "यह तो कोई दूसरी ही स्त्री थी, जिसे हमने अभी तक नहीं देखा, क्योंकि अभी तक उसने जो जीवन जिया था वह किसी दूसरे का था, उसका नहीं।"[3]

केशरमाँ साधारण बूढ़ी स्त्री, एक टूटे बिखरे से मध्यमवर्गीय परिवार के अवशेषों के बीच, वैधव्य का लम्बा जीवन, उसकी वाणी गति प्रदायक, वह जब निरन्तर बोलती है तो अच्छा लगता है। उसकी वाणी में प्रबलता है। जो नायकत्व प्रदान करती है। उसके व्यक्तित्व में विक्षेप, जीवन की लय गति, उसके होने, सोचने, रहने के ढंग में विशिष्टताओं को दर्शाया गया है। उसका अकेलापन, अवसाद उसके अस्तित्व का गौरव उभारता है। उसके जीवन की कहानी को बयान किया गया है। यह उपन्यास वाणी में चरितार्थ स्त्री का आख्यान है। उसके जीने के ढंग में मुक्ति, सतत् आवर्ती, विस्थापन का भाव है जो स्त्री जीवन के पक्ष में सुखद है।"[4]

4.3 साथ चलते हुए – जय श्री राय

साथ चलते हुए – जय श्री राय का उपन्यास जो स्त्री पुरुष संबंधों में आत्म को खोजता सुखद अहसास देता है। स्त्री हमेशा ठगी जाती रही है। स्त्री–पुरुष संबंधों में जटिल जीवन स्थितियाँ, मूल्यों की भेंट चढ़ती नारी अस्मिताओं पर विमर्श, जो स्त्री को अंधेरे की कैद से मुक्त कराना चाहता है। जय श्री राय का उपन्यास – साथ चलते हुए[5] स्त्री पुरुष सम्बन्ध के माध्यम से आत्म की खोज करता है। इस उपन्यास की नायिका –

---

1 हार्पर कॉलिंस पब्लिकेशन इंडिया–ए53, सेक्टर–57, नोएडा, 2011, 175/–

2 सोनी मदन – वाणी में चरितार्थ स्त्री का आख्यान, समकालीन भारतीय साहित्य, अंक 162, जुलाई अगस्त 2012, पृ.201

3 वहीं, पृ.202

4 वहीं, पृ.203

5 राय जय श्री – साथ चलते हुए – सामयिक बुक्स 3320–21, जटवाड़ा दरियागंज, नई दिल्ली–110002, रूपए 250/–

अनवरत टूटन और जीवन की वास्तविकताओं से साक्षात्कार करती है। अपर्णा–अपने को पूरी तरह सौंप देने के बाद भी जीवन जीने का सामर्थ्य प्राप्त नहीं कर पाती। सहज और सुखी रहने की स्थिति में शून्य का शिकार होती है। बेपनाह पसरी उदासी और अवसाद के सिवाय कुछ नहीं होता उसके जीवन में।[1] अपर्णा–आशुतोष से प्रेम करती है, उससे ब्याह करती है। वह काजोल के जन्म होने पर उसमें स्वयं को पाती है लेकिन उसकी मृत्यु के अवसाद से घिर जाती है। आशुतोष को चाहती है परन्तु वह दाम्पत्य को लगातार दूषित करने की कोशिशें करता है सरसता–विश्वास का भाव गायब हो जाता है। वह पैसे से उपकृत करना चाहता है, जिसका वह तिरस्कार कर देती है संघर्षों में जीती रहने वाली अपर्णा सुख–शांति के दिनों की कामना में कौशल से जुड़ती है और जीवन के शेष दिनों को जीने का यत्न करती है।

एक औरत अपने होने में सिर्फ दाता है, जो सर्वस्व लुटाती है, पर उसे छलना, तिरस्कार ही मिलता है। वह अपने अस्तित्व पर भी संदेह करने लगती है। प्रेम करती है। छली जाती है फिर जी उठती है, वह प्रेम से विरत नहीं है प्रेम उसमें सदा से होता है। वह कहती है – "प्रेम हममें घटित होता है, हम प्रेम में नहीं/ठीक वैसे, जैसे जीवन हमारे अंदर होता है। किसी दैवीय इच्छा से, हमारे चाहने, या न चाहने से नहीं। हमारा प्रेम किसी का सनातन साथी होता है।"[2]

यह उपन्यास सुखद–दुःखद दोनों ही प्रकार के अहसास कराता है, स्त्री जीवन भयावह अकेलेपन को झेलने को अभिशप्त है। पुरुष उसे अकेला करता है। समाज रूढ़िगत तराजू के मूल्यों पर तोलता है। जब स्त्री फिर से जी लेने का संकल्प करती है तो रूढ़ियाँ दूर जाती है। प्रेम की छलनाएँ ही उसकी शक्ति बनकर जीवन को भरोसे में बदल देती है। जीवन समाप्त नहीं होता। उसके भीतर असीमित उम्मीदों की परतें है जिसकी खोज करती जय श्री राय – मानवीय रिश्तों के बाहर भी ऐसे तमाम रिश्तों में जीवन की दूयत्ता देखती हैं जो कमी हमें अपनी सामाजिक संरचना में दिखाई भी नहीं देती।

भौतिकता से आक्रांत समय में अपने को जी लेने, प्रेम के सत्व के बल पर, अपने स्वत्व को पा लेने की संकल्प चेतना से सम्पन्न यह उपन्यास स्त्री की मनोगत रचनाशीलता की सार्थकता को उजागर करता है।

---

1 वहीं, पृ.187

2 वहीं, पृ.220

4.4 ऑब्जेक्शन मी लार्ड – निर्मला भुराड़िया

प्रस्तुत उपन्यास[1] "ऑब्जेक्शन मी लार्ड" निर्मला भुराड़िया का है जो – सदियों की आँख से देखी गई स्त्री जगत की सच्चाईयों को बेचारे अंदाज में बयान करता है।[2] लेखिका में आधुनिकता और जागरूकता का उफान है, वह स्त्रियों के राज खोलती है। रजस्वला होने पर "छूत" के विचार से नए किस्म की मानसिकता – शारीरिक यंत्रणा जीती किशोरी को तीन दिनों के लिए बहिष्कृत कर दिया जाना और उसकी सर्वाधिक गोपनीयता को सार्वजनिक बना दिया जाना, क्या इसलिए कि अब वह पुरुष के भोग और प्रजनन के लिए तैयार है? सतीत्व – स्त्रीत्व की सुरक्षा पिछड़ी संकीर्ण मानसिकता की परिचायक भले ही हो, किन्तु संस्कारों एवं उत्तर आधुनिक देहवादी उच्छृंखल संकल्पनाओं के द्वन्द्व के बावजूद स्त्रीत्व की सुरक्षा ही सर्वप्रथम स्त्री को अपनी पुख्ता अस्मिता का अहसास देती है।

यह उपन्यास – यमुना और उसकी बेटी माधवी की कहानी है। माधवी की चचेरी बहिन अपर्णा – "भीड़ देखकर पलट जाना पसंद करती थी, माधवी भीड़ में घुसकर यह जानना कि क्या हो रहा है ?"[3] वे हवेली की चौहदी से बाहर निकल दालमंडी और ग्वाड़ी में घूमकर वेश्यापुत्री खुशबू और व्यसनी मदन की पुत्री प्रेमा के साथ अंतरंगता स्थापित करती है।[4] लेखिका ने बाल विधवा मीठी बुआ और नपुंसक पति की तिरस्कृता – सरोज की जड़ सनकी जिंदगी का मार्मिक चित्रण किया है।[5] पुरातन पंथी संकीर्णमना निरंकुश दादी के भीतर जीती स्त्री की मानसिक गहराइयों के भीतरतम में भी अपने अस्तित्व की अस्मिता को जीने की चाह सुखद है।

टुकड़ों–टुकड़ों में खंडित स्त्री के इतिहास को एक सूत्र में पिरोती लेखिका "गहन वैचारिक बोध और अंतर्दृष्टि" के साथ कन्या भ्रूण हत्या, के आँकड़ों से लेकर आदिवासी क्षेत्रों में जागरूक स्त्रियों को डायन घोषित कर मरवाने की रपटें और जेलों में बंद–स्त्री कैदियों के साथ होती दोहरी नाइंसाफी की दास्तानें – एक प्रतिवादी की तरह – मानव जीवन की विकृतियों पर आपत्तियों को दर्ज कराने की लेखकीय चेष्टाएँ करती है जो सुखद है।

लेखिका की प्रतिबद्धता इन प्रश्नों से मुखरित होती है –

---

1 सामयिक प्रकाशन, 3320–21 जखाड़ा दरियागंज, नई दिल्ली, 2004, 300/–

2 अग्रवाल रोहिणी – नौदिन चले अढ़ाई कोस (समीक्षा) समकालीन भारतीय साहित्य अंक 117, जनवरी फरवरी 2005, पृ. 186–187

3 भुराड़िया निर्मला – ऑब्जेक्शन मी लार्ड, पृ.91

4 अग्रवाल रोहिणी – समकालीन भारतीय साहित्य अंक 117, पृ.187

5 वहीं, पृ.188

- स्त्री मुक्ति हेतु जीवन में आने वाले हर पुरुष का खलनायक होना जरूरी क्यों है ?
- क्या स्त्री–विमर्श अपर्णा सुखी – सुरक्षित जिंदगी न जी सकने वाली अ–सौभाग्यवती स्त्रियों की आह–दाह भरी राह है ?
- स्त्री विमर्श – स्त्री के लिए एक विकल्पहीन अवस्था और पुरुष के लिए एक विस्फोटक मुद्रा के रूप में ही क्यों उपस्थित होता रहता है बार–बार ?
- क्यों नहीं विमर्श के चाल रूढ़ अर्थों को चुनौती और तिलांजलि देकर इसे "बहस की जीवंतता" के सटीक पर्याय के रूप में घोषित कर एक जीवंत सामाजिक मुद्दा बनाया जाए ?
- क्या – परिवार – समाज की इकाई के रूप में – मनुष्य मात्र की अस्मिता और निजता की रक्षा के लिए दोनों पक्षों की बराबर की भूमिका पूर्वग्रह से मुक्त भागीदारी के रूप में अपेक्षित नहीं है ?[1]

इस प्रकार – यह उपन्यास तथ्यों से भरा, रोचक घटनाओं से युक्त, जीवंत बहस का सुखद अहसास कराता हुआ, विश्वसनीयता से युक्त है।

4.5 उर्मिला का दीया – सतीश बिरथरे

उर्मिला का दीया – सतीश बिरथरे का उपन्यास जो धार्मिक व राजनीतिक परिवेश में स्त्री की महत्ता को उजागर करता है।

यह उपन्यास[2] उर्मिला का दीया – सतीश बिरथरे का उपन्यास है। स्त्री लेखक नहीं है उपन्यासकार। फिर भी उपन्यास – उर्मिला के चरित्र के माध्यम से स्त्री की धार्मिक व राजनीतिक महत्ता को उजागर करने के कारण प्रासंगिक व महत्वपूर्ण बन गया है। उसमें नायिका उर्मिला व सत्यदेव (पति) का अंकन है। उपन्यास पारिवारिक कथा है।

- इसमें सोनिया प्रसव वेदना से कराहती है जो ग्रामीण वातावरण का चित्रण है।
- प्रतापगढ़ कुंडेश्वर के धार्मिक स्थलों, प्राकृतिक सौंदर्य, रीति रिवाज, शिवपूजन, शिव महिमा, धार्मिक आस्था का विवरण है।

---

1 वहीं, पृ.188

2 दीपा प्रकाशन – प्लॉट नं. 46, चतुर्थ तल, जानखंड–III, इंदिरापुरम् गाजियाबाद, 2011, 350/–

- सत्यदेव की पत्नी उर्मिला – ईश्वर भक्ति में लीन रहती है। पति की मृत्यु के पश्चात् प्रवचन देती है। सती नारी की तरह पानी में डूबकर अपनी जीवन लीला समाप्त करती है जो दुःखद है।
- उर्मिला–राजनीति के प्रति जिज्ञासु व उत्सुक है।

वह सत्यदेव से – अंग्रेजों के अत्याचार एवं तानाशाही की बातें पूछती है। उसमें रानी लक्ष्मी बाई के बारे में जानकर आत्मविश्वास जागृत होता है। स्वतंत्रता संग्राम में नारियों के भाग लेने व कुर्बानी के प्रसंगों का स्मरण सुखद है। उर्मिला अपने मन में आस्था व विश्वास का दीया जलाए रखती है। अंधकार को मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु मानती है। इसका हरण करने वाला प्रकाश (दीपक) सबसे बड़ा मित्र है – बहाती है। वस्तु की सही पहचान के लिए ज्योति आवश्यक बताती है। उसकी चारित्रिक विशेषताएं सुखद अहसास से युक्त है।[1]

4.6 खानाबदोश ख्वाहिशें – जयंती रंगनाथन

खानाबदोश ख्वाहिशें – जयंती रंगनाथन का उपन्यास जो व्यभिचार व भ्रष्टाचार का भंड़ाफोड़ करता औरत के संघर्ष की कहानी है जिसके हालात बदलने चाहिए। यह उपन्यास[2] खानाबदोश ख्वाहिशें – जयंती रंगनाथन का स्त्रीवादी उपन्यास है। यह औरत के संघर्ष की कहानी है। जो आश्रमों में व्याप्त व्यभिचार एवं भ्रष्टाचार का भंडाफोड़ करता है तथा वर्तमान हालातों पर दुःखद अनुभूति कर बदलना चाहिए की सोच विकसित करता है।[3]

जयंती रंगनाथन द्वारा लिखे गए इस उपन्यास में अनेक पात्रों को समेटकर जीवन की विसंगतियों को रेखांकित किया गया है। नर–नारी में आकर्षण विकर्षण से उत्पन्न विकट स्थितियाँ, दाम्पत्य जीवन में बिखराव, अविश्वास, संशय, टूटते रिश्ते, अवैध सम्बन्धों की सडांध, आलोच्य उपन्यास की कथा रीढ़ है।

यह उपन्यास दर्शाता है कि "माता–पिता की अनबन का संतान पर क्या बुरा प्रभाव पड़ता है ? कैसे बच्चे ग्रन्थियों से ग्रसित होकर गलत निर्णय लेते हैं फिर पीछे लौटने की स्थिति में नहीं रहते।" निधि एक नौकरी पेशा युवा लड़की है जिसे अपने

---

1 वंदना दीक्षित – स.भा.सा. अंक 160, मार्च अप्रैल 12, पृ.202–203
2 सामयिक प्रकाशन – जटवाड़ा, दरियागंज, नई दिल्ली, 2009, 250/–
3 फुल्ल–सुशील कुमार – अवैध सम्बन्धों का त्रासद चित्रण, समकालीन भारतीय साहित्य, अंक 157, सितम्बर–अक्टूबर, 2011, पृ.204–205

माता–पिता से कभी प्यार नहीं मिला। यह दुःखद अनुभूति है। पिता ने तंग आकर आत्महत्या कर ली लेकिन निधि बुजदिल नहीं बनना चाहती।

प्रेम–प्रसंग

निधि – शिवम् के प्रेम प्रसंग त्रासद है। निधि – शिवम् के प्रेम प्रसंगों में शिवम् गायक बनना चाहता है। निधि से पैसे लेकर बियर पीता है। पब्लिक में उससे लिपटने लगता है। रातभर यहाँ वहाँ घूमता है। निधि विद्रोह करती है। उसके साथ घर नालसपोरा चली जाती है। माँ रूपदन्ता से शिवम् का पत्ता लेकर पुलिस में केस दर्ज कराती है। दोनों पकड़े जाते है। प्रेम–प्रसंग चूर–चूर हो जाता है।

यह उपन्यास वांछित अवांछित सम्बन्धों के काम विषयक चित्रण पर टिका हुआ लगता है। इसमें नारी को पुरुष दृष्टि में मात्र भोग की वस्तु के रूप में उकेरा गया है। विद्रोह की भंगिमा गायब है। मात्र नायक–नायिका के लिपटने–लिपटाने के चित्र है। व्यभिचार, अवैध शारीरिक सम्बन्धों के चित्रण की भाषा उत्तेजक है।

आश्रमों में चलते दैहिक शोषण, सुरक्षा का कवच ढूँढ़ती निधि का आकाश स्वामी की बाँहों में सिमटना, औरतों का आश्रम के कारिन्दों व तुष्टियों की भूख शांत करना, पैसों के जुगाड़ में आश्रम चलना, असुरक्षा, अतृप्ति, युवतियों के भटक जाने का मुद्दा, माँ–बाप के संस्कारों से प्रभावित होती संतान की व्यथा कथा, पुरुषों की उच्छृंखलता का अंकन है।

निधि का अहसास – "मैं सिर्फ देह से तुम्हारी पत्नी रही, दिल से नहीं रही, तुमने निभाया तो सही, मैंने नहीं निभाया, मुझे इस बात का अफसोस नहीं है कि मैंने क्यों नहीं निभाया ? हाँ यह अफसोस जरूर रहेगा कि मैं एक अच्छी माँ नहीं बन पाई।

4.7 चाक – मैत्रेयी पुष्पा

चाक – मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास जो समय के साथ जिंदगी को घूमाकर सुख–दुःख की धूप छाया का अहसास कराता है।

चाक उपन्यास की नारी पात्र सारंग–रेशम की मौत पर कहती है –

"औरत के मरने पर गम ज्यादा देर नहीं मानते, उम्र भर तो कौन मनाए ? मगर तुम उन लोगों से अलग हो ? इस बेईमान जमाने में तुम न्याय की, बात को लेकर ऊँची आवाज कर सकते हो। तुम चुप हो, तो क्या मैं तुम्हें कायर मान लूंगी ? रंजीत यह

समझ लो, रेशम नहीं सारंग मरी है।"[1] औरत का इतनी हिम्मत के साथ कहना सुखद है। रंजीत का कथन – त्रासद स्थिति पर दुःख उपजाता है – "सच्चाई की शिनाख्त करने वाले लोग–अब रहे ही नहीं। दिन दहाड़े एक औरत मार दी जाए और गाँव चुप बैठा रहे। है न गजब ?"[2]

झूठे गवाहों पर दुःख होता है

थानेदार को झूठे गवाहों पर दुःख होता है – वह कहता है – "सच के पक्ष में कितने लोग गवाही देते हैं ? पैसा तो उन्हें झूठे पक्ष से ही मिलेगा। जो आदमी औरत को मार सकता है क्या गवाह का कत्ल नहीं कर सकता ? अब ऐसे बेवकूफ कहाँ मिलेंगे जो सच की रक्षा के लिए प्राणों की बाजी लगा दे।"[3] रंजीत जैसा पुरुष सारंग जैसी स्त्री की कद्र करे, सम्मान करे यह सुख की अनुभूति कराता है – वह कहता है – "मैं पीछे नहीं हटूंगा। सारंग जैसी तेज की धनी स्त्री सबको मिलती है क्या ? कम से कम अपनी बात तो होंठो तक लाने का साहस तो करती है। मन ही मन कद्र करते हैं पत्नी की।"[4]

बाबा का आक्रोश हौंसला बढ़ाता है जब वे कहते है – "हम साले भीष्म पितामह नहीं है कि द्रोपदी को भरी सभा में नंगी होती देख लें। वे देवता थे। देख लेते होंगे। हम देवता नहीं ...। वे बंदूक उठा लाते।"[5] सारंग–जूझने को अकेली और डराने को इतने लोग। जिसने बहन की दर्दनाक मौत और बेटे का अकारण बिछोह सहने का हौंसला जुटाया वह क्यों डरे ? वह खुद को समझाती है तो मन रूई सा हलका होना अच्छा लगता है।[6]

सारंग के साथ मुश्किल यह है कि चुप्पी से उत्पन्न भारीपन में उसका दम घुटने लगता है। वह हमेशा ही किसी तनाव से जल्दी से जल्दी मुक्त होना चाहती है। सारंग के रूप में औरत तनाव से मुक्त होने की सोचती तो है। यह चेतना भाव ही स्त्री के पक्ष में सुखद लगता है।[7] श्रीधर स्कूल मास्टर होकर सारंग को समझाना चाहते हैं कि पति से नहीं लड़े – "सारंग पुरानी कुरीतियों, रूढ़ियों से लड़ती तो शायद इतना टकराव न होता। उसका रास्ता बेहद टेढ़ा और शूलों भरा था। वह पति से लड़ना चाहती है। कई

---

1 चाक, पृ.15
2 वहीं, पृ.33
3 वहीं, पृ.41
4 वहीं, पृ.45
5 वहीं, पृ.48
6 वहीं, पृ.132
7 वहीं, पृ.142

बार मन में आता है – समझाया जाए उसे – कि देखो – परम्पराओं में रहकर, रीतियों को मानकर, तुम सुखी और सुरक्षित रहोगी। तुम ऐसी सत्ता से लड़ना चाहती हो जिससे अब तक तो कोई जीता नहीं। रंजीत का विरोध करके खुद ही चूर–चूर हो जाओगी।"[1]

यहाँ यही सुखद है कि स्त्री कठिन चुनौती को स्वीकार करती है।

श्रीधर जानता है कि – "सारंग जो सोचती है, उसे व्यवहार में लाने पर उतारू है। अपना फैसला, जुझारूपन और आजादी का साक्षात रूप ?"[2] यहाँ स्त्री की अस्मिता की स्वीकारोक्ति सुखद है। वह खुद सोचती है – "मुझे कोई जरूरत नहीं काँटों में उलझने की, लांछन सहने की, बदनामी कराने की।"[3]

स्त्री पुरुष संदर्भ में रंजीत व सारंग की बातचीत काफी अहमियत रखती है – रंजीत कहता है – "मर्द की भूल को तो आई–गई कर देते हैं लोग। वह दस दरवाजे झाँकने के बाद भी धुला–पूँछा सा लौट आता है अपने घर....। मगर औरत–उसके अच्छे होने की निशानी ही केवल उसका पवित्र चाल–चलन है। गंदी नजर वाली औरत को लोग रंडी या वेश्या कहकर पुकारते हैं।

सारंग मास्टर की उँगली पकड़कर ज्ञान के सागर में प्रवेश करती है लेकिन रंजीत को यह स्वीकार नहीं होता वह फिर कहता है – "गली में निकल कर देखो थू–थू होती है कि नहीं। घर का सत्यानाश हो रहा है और तुम हो कि गृहस्थ को ठट्ठा समझ रही हो। ऐसे नहीं चलेंगे रिश्ते। तुम डोर तोड़ने के हिसाब से खींचे जा रही हो।"

सारंग कहना चाहती थी – "श्रीधर का बोलना, चलना, देखना ही इस गाँव की उदासी में खुशियों की लहरें भर देता है। मेरी जिंदगी सूनी थी। घायल थी। लाचार थी। वे आए तो लगा घुटन भरे आसमान को फोड़कर हवा का कोई ताजा झौंका आया है। जो मेरे भीतर नई सांसे, घावों पर शीतल मरहम और सुनसान में मिले। तुम इसे कोई भी नाम दे।" पर वह रंजीत को कह नहीं पाती है।[4] स्त्री पुरुष के मध्य दाम्पत्य सम्बन्धों में किसी तीसरे की उपस्थिति ही बिखराव का मूल कारण बन जाता है। चटखन दुःखद होती है। यह उपन्यास जीवन चक्र की तरह घूमता पात्रों के दुःख सुख बटोरता अतरपुर के जन जीवन का जीवन्त चित्रण करता है।

---

1 वहीं, पृ.183
2 वहीं, पृ.185
3 वहीं, पृ.196
4 वहीं, पृ.210

4.8 शाल्मली – नासिरा शर्मा

शाल्मली – नासिरा शर्मा का उपन्यास जो स्त्री मुक्ति का इतिहास रचने की अच्छी बातें करता है। शाल्मली–अपने जगत की स्त्री के मनोजगत में गहरे उतरकर उसके–भावात्मक द्वन्द्वों, संवेदनात्मक आघातों, आकांक्षापूर्ण सम्बन्धों और सृजनात्मक स्वप्नों का संश्लिष्ट विश्लेषण प्रस्तुत करता हुआ उपन्यास है।

उपन्यास की लेखिका – नासिरा शर्मा – पितृ सत्तात्मक व्यवस्था के स्वरूप और स्त्री मुक्ति की बात करते हुए – पहले स्त्री को स्वयं को जानने की सुखद याद करती है और पूछती है – कितना मुक्त होना चाहती है स्त्री? और किससे ?[1]

शाल्मली – स्त्री जाति को, अपने आपको देखने का अवसर देने वाला उपन्यास है। द्वन्द्वों और दुर्बलताओं से साक्षात्कार का अवसर देता है जिन्हें कुलीनता, शालीनता के कारण हमेशा स्त्री मानने देखने से इंकार करती रही। पिता को कंटीली धार से घायल करती स्त्री।

शाल्मली उपन्यास की नायिका – अपने पिता को परम्परा से हटकर अलग नजरिए से देखती है तो लगता है आज की स्त्री कंटीली धार से उसे घायल कर रही है। पिता – जिन्होंने चूल्हे चौके में रची – बसी माँ को शत्रु माना, खोटी घरेलू औरत को दोयम दर्जे की नजर से देखा, माँ को प्रतिद्वन्द्वी बनाकर कैसे संस्कार दिए ? क्या स्त्री जाति को कमतर समझने का पुरुष भाव दिया ? या फिर पुरुष की कसौटियों पर कसे जाने और स्वीकृति पाने के रुढ़ स्त्रीभाव को आधुनिकता की चेतना से जोड़ा ?

नासिरा शर्मा जब कहती है – "पिता की उँगली पकड़कर अधेड़ावस्था को जीती हमारी पीढ़ी की स्त्री आत्म छलनाओं में जीने को अभिशप्त है।" तो लगता है स्त्री विमर्श भाव कारगर है, स्त्री चेतना से जुड़कर सोचने लगती है तो साहित्यिक प्रदेय का सुखद अहसास होता है। आज बेटी समझती है – "पिता उसे कर्त्ता, योद्धा और विजेता देखना चाहते हैं।" कष्ट तो सहने पड़ेंगे, अकेले, बिना किसी से शिकायत किए। पारिवारिक सामाजिक मर्यादाओं की बाध्यता बनाए रखने के साथ। उसे माँ की बात याद आती है – "सच्चाई को नकारना पौरुष है।[2]

शाल्मली समझती है – "माँ तो कमाती भी न थी, मगर आज तक कोई छोटा सा शब्द भी, जो माँ को अपमानित कर सके, पिताजी के मुख से उसने नहीं सुना था।"

---

1 अग्रवाल रोहिणी–नासिरा शर्मा का उपन्यास – शाल्मली के बहाने स्त्री विमर्श – समकालीन भारतीय साहित्य, अंक 152, नवम्बर–दिसम्बर, 2010, पृ.178

2 वहीं, पृ.179

उनकी सीख – "पुरानी मान्यताएँ सड़ गलकर लुप्त हो चुकी हैं, उनकी आज दुहाई क्यों ?, समाज को आगे जाना है या पीछे ?

लेकिन पिता ने नरेश की पृष्ठभूमि की ज्यादा जाँच – पड़ताल किए बिना हड़बड़ी में उसका ब्याह कर दिया – क्यों ? क्या उन्हें शाल्मली की प्रतिमा पर जरा भी विश्वास नहीं था ? कि प्रतियोगी परीक्षा पास कर वह ऊँचे ओहदे पर पहुँच जाएगी ? क्या वे नहीं जानते थे कि – पितृसत्तात्मक व्यवस्था का मौजूदा ढाँचा अपने से बेहतर शिक्षा एवं कैरियर पाने वाले पति के मन में पनपी हीनता ग्रंथि को कुंठा, दमन और प्रतिशोध बनाकर दाम्पत्य सम्बन्धों को चटखा देता है ?

शाल्मली समझ जाती है कि जब उसे अपने भीतर पनपता रेगिस्तान दिखा और उसने उन्हें थामने की कोशिश की तो वहाँ पर सिर्फ नसीहतें मिली – तू बहुत समझदार है बेटी। इस बहाव को संभाल सकती है। गोकुल झील बन जाना तो आम बात है, पर विपरीत दिशा में खड़े होकर किसी के साथ–साथ बहना मुश्किल। मुझे विश्वास है सदा की भाँति तू कठिन डगर चुनेगी।"[1] पिता–पति के साथ वैचारिक टकराव की आहट पाती शाल्मली कह देती है नरेश से – "मैं तुम्हारी छाया, तुम्हारी प्रतिध्वनि, तुम्हारा विस्तार नहीं हूँ।" लेकिन स्वयं से नहीं पूछती – क्यों उसने स्वयं को रूढ़ हदबंदियों में प्रतिष्ठित कर लिया ? समाज के नियम अपनाकर, मर्यादा का पालन कर उसे क्या मिला ? न मान, न सम्मान।

दरारें दाम्पत्य में नहीं होती अच्छी

शाल्मली के भीतर बैठी औरत विद्रोह की ज्वाला में सुलगती गई और उसके पति के बीच खटपट से दाम्पत्य जीवन में दरारे पनपने लगी तो अच्छी नहीं लगती हैं। नरेश (पति) की दृष्टि में वह देह से ज्यादा कुछ भी नहीं थी। इंसान के रूप में उपेक्षणीय थी। देह के रूप में मात्र भोग्या ने दुःख, आत्म दया को पोशाक की तरह पहन लिया। नरेश का कथन – "तुम घर में रहकर गृहस्थी व मुझे संभालों, इतना हाथ बटाओ मेरा, फिर देखो, मैं आकाश का पूरा सौर मंडल तुम्हारे चरणों में रख दूंगा।" शाल्मली का प्रतिवादी कथन "बार–बार औरत कहकर मुझ पर टीका–टिप्पणी मत किया करो। औरत की अक्ल पर शक करना छोड़ दो। एक स्तर के बाद हम औरत–मर्द नहीं रह जाते हैं, बल्कि

1 वहीं, पृ.180

हमारा काम हमारी पहचान होती है, हमारी अक्ल हमारी कसौटी होती है।"[1] शाल्मली का दाम्पत्य जीवन दरार–तकरार भरा होता है जो किसी को अच्छा नहीं लगता।

शाल्मली की सास – प्रतिरूप

शाल्मली की सास, शाल्मली का ही प्रतिरूप है। वह कहती है – "औरत का सुख–दुःख पूछने, उसके हृदय की थाह लेने में मर्द अपना अपमान समझता है। वह तो पूर्ण सन्तुष्ट इसी बात से रहता है कि उसके कारण किसी औरत को सौभाग्यवती बनने का अवसर मिला। उसके अस्तित्व में किसी औरत को क्या शिकायत हो सकती है ? उसकी शारीरिक मांगें पूरी हो ही जाती है। कपड़ा, खाना, रहना और संतान – इसमें कमी तो फिर उसका अपना भाग्य है। यह सोच मर्द की होती है औरतों के बारे में।"[2]

वह शाल्मली से सखी भाव से कहती है – "औरत, जन्मजली कभी स्वतंत्र नहीं। कहीं खूंटे से बंधी तो कही उसके गले से बंधी रस्सी, थोड़ी लम्बी या अधिक लम्बी। तू बड़ी स्वाभिमानी है। मैं जानती हूँ। कभी जवानी में मैं भी थी। फिर जैसे–जैसे जीवन में रचती–बसती गई, ना कि – स्वाभिमान औरत की आत्मा का गहना नहीं रह जाता। वहाँ जो बाकी बचता है – धैर्य, बलिदान, जिसे सब कहते करूणा।"[3]

आज का स्त्री विमर्श पुकारता है – जाग, शाल्मली जाग, तू कहाँ सो गई ? कहाँ खो गई ? इतना अपमान सहकर तुझे क्या मिल रहा है ?

सामाजिक प्रतिष्ठा ? सम्बन्धों का सम्मान ? परिवार का मान ? इस बिना छत वाली दीवारों के बीच तू किस तरह की सुरक्षा का भ्रम पाले बैठी है?[4]

निसन्देह – यह उपन्यास सफल और सार्थक है – स्त्री को चाहता है – लड़ने के लिए – आत्मसम्मान को बनाए रखने के लिए। यही सुखद अनुभूति है। शाल्मली का चरित्र लड़ाई का बिगुल बजाता है। जीतते देखने के लिए नासिरा चाहती है – समाज बदले व स्त्री भी बदले। नासिरा यह भी कहती है औरत को जहाँ भी अवसर मिले वक्ष की जाँच–पड़ताल करते तनिक झिझक नहीं होती। "उन पीड़ित बालाओं को माँ बनने का सुख कभी प्राप्त नहीं हुआ।"

---

1 वहीं, पृ.181
2 वहीं, पृ.181
3 वहीं, पृ.182
4 वहीं, पृ.182

व्यथित लेखिका का कथन – "वृन्दावन धाम तो संसार का सार है, जगत का मर्म स्थल, फिर यहाँ यह अनाचार क्यों ? भीख–गरीबी, बीमारी, पाखंड और दलालों की मारामारी।"

ऐसे नरक की जिन्दगी से बाहर लाने की जरूरत है।

4.9 क्योंकि .... औरत ने प्यार किया – जेबा रशीद

क्योंकि .... औरत ने प्यार किया – जेबा रशीद की सोयी चेतना को आवाज देता उपन्यास जो जागने पर सुकून मनाता है। यह उपन्यास[1] क्योंकि .... औरत ने प्यार किया, जेबा रशीद का है जो सवाल खड़े करता है, गहरी मुठभेड़ कराता है –

(1) औरत तो उस रोटी की तरह है जिसे भीतर रख दें तो सूख जाती है और बाहर रख दे तो बंदर लूट लेते हैं।

(2) औरत – सुरक्षा और छत के लिए जीवनभर गृहस्थी के पट्टे पर हस्ताक्षर करती है।

(3) औरत जन्म देती है फिर भी माँ, बेटी, बहन, पत्नी हर रूप में सताई जाती है।

जेबा रशीद स्त्री की सोयी चेतना को आवाज देती है। यह उपन्यास औरत के प्रति हो रही साजिशों को बेनकाब करता है।[2] स्त्री के माध्यम से कुछ पहलू विचारणीय है–

(1) जैनब मन में बोली – स्वार्थी, बेरहम यह कैसा इन्सान है, इसे पत्नी के दुःख दर्द का अहसास ही नहीं, बीमारी में भी अपनी इच्छा पूरी करना जरूरी समझता है।

(2) पति का कथन – "हम मर्दों को खुदा ने हक दिया है, कि – हम जब चाहे – अपनी इच्छा पूरी कर सकते है। अगर बीवी अपने शौहर की इच्छा पूरी करने से मना करती है तो उसकी बख्शिस नहीं होगी। प्रश्न यह है कि – खुदा का यह मतलब तो नहीं कि औरत को सताया जाए। हर पति पत्नी पर मनमानी करता है। जैनब को लगता है – "मोहब्बत दुनिया की सबसे शक्तिशाली वस्तु है। यह दुनिया का सबसे बड़ा सच है। वह काशिफ को मित्र के रूप में पाना चाहती है जो सुखद है क्योंकि उपन्यास स्त्री की सोई चेतना को जगाने में सफल रहा है।[3]

---

1 राजस्थानी ग्रन्थागार – जोधपुर, 2009, 150/–
2 ठाकुर जीवन सिंह, क्योंकि ..... (समीक्षा) वहीं, पृ.223
3 वहीं, पृ.224

4.10 सही नाप के जूते – लता शर्मा

'सही नाप के जूते' – लता शर्मा का उपन्यास जो नारी विमर्श की प्रामाणिक अभिव्यक्ति का संवेदनापरक, अहसास कराता है। लता शर्मा का यह उपन्यास[1] सही नाप के जूते उपभोक्तावाद का प्रभाव, बाजार वाद का करिश्मा पर आधारित है। यह उपन्यास कहानी है उस युवती की जो उर्मि से उर्वशी बनकर विश्व सुन्दरी का स्वप्न ही नहीं देखती, जी जान से भिड़ जाती है।[2]

उसकी माँ ही उसकी प्रेरक व गाइड है जो कहती है – "तुम्हारी देह, तुम्हारा मस्तिष्क, तुम्हारी अपनी पूंजी है। अंततः उसका निवेश होना ही है तो तुम स्वयं करो। कम से कम अस्सी प्रतिशत लाभांश तो मिलेगा।"[3] उर्वशी को पूरा भरोसा है अपनी देह पर, उसके मनचाहे उपभोग दुरूपयोग पर, "यह मेरी देह है; मैं चाहूं उपयोग करूं।" लेखिका लता शर्मा ने इस उपन्यास में – "पुरुष की सामंती प्रवृति, स्वेच्छाचारिता, पत्नी की पूंजी, उपभोग की वस्तु मानने की प्रवृति, पग–पग पर उसके शोषण को उजागर किया है।" उसकी माँ उसको बताती है –

"सारी दुनिया में खाना बनाना, घर की देखभाल करना, स्त्री का काम है। परिवार के बच्चों, बूढ़ों और बीमारों की सेवा–टहल स्त्री ही करती है। वह चाहे खेती करे, मजदूरी करे, टीचर हो, डॉक्टर हो, कारपोरेट एक्जीक्यूटिव हो – बच्चों का बर्थ डे केक स्त्री का काम है। बनाती है या आर्डर करती है। औरत – प्रत्यक्षतः पिता, पुत्र, पति की सम्पति है, अप्रत्यक्षतः समाज की।"[4] उर्वशी की माँ ने प्रेम विवाह किया, घर परिवार चलाया, पर पुरुष तो व्यापारी कम निवेश अधिकतम लाभ–यही उसकी सफलता की कुंजी है। उर्वशी – विश्व सुन्दरी बनने की तैयारी करती है। शारीरिक सुघड़ता, सुगमता के लिए जतन करती है ताकि न बने मस्से न तिल। न पड़े झाई।

उर्वशी के प्रेमी सुरेन्द्रनाथ को टी.वी. पर सौन्दर्य प्रतियोगिता नहीं जँचती – उसे लगता है – "प्रत्येक सुन्दरी के वक्ष, कमर, नितंबो का नाप बार–बार दिखाना, मांस की

---

1 भारतीय पुस्तक परिषद – 175सी पाकेट – ए मयूर विहार फेज–2, दिल्ली–2009, 300/–

2 उपाध्याय मृत्युंजय – नारी विमर्श की प्रामाणिक अभिव्यक्ति (समीक्षा) समकालीन भारतीय साहित्य, अंक 156, जुलाई–अगस्त 2011, पृ.315

3 वहीं, पृ.315

4 वहीं, पृ.315

मंड़ी, नगर वधू का चुनाव, नाम चाहें जो भी दो।"[1] लेखिका ने नारी विमर्श कर के रूप में भोग और सृजन के मध्य के अंतराल की पहचान अपनी निस्संगता से बनाई है।

विश्व सौन्दर्य प्रतियोगिता में विजयी की शक्ति, सीमा और दुर्गति स्नानघर और कैटवाक के दृश्य और बाजार देखते–देखते बाजार हो जाने की गाथा पर गहरी चोट करती लेखिका का साहस– "ऐसे ही संगीत की लहरों पर डूबते–उतरते अचानक एक बार चार्ल्स ऊपर चढ़ आया। दोनों हाथों से उर्वशी के पुष्ट उरोजों को भींचकर उसके अंदर उतर गया।"

नारी विमर्श की दृष्टि से क्या और किस हद तक कितना उचित – अनुचित है ? यह एक विचारणीय प्रश्न है।

चार्ल्स – उसके अंग–प्रत्यंग का मुआयना करता है। जैसे– कटने से पहले बकरे को नापा–जोखा जाता है। उर्वशी की माँ – परवाह नहीं करती और उसका भाई उर्वशी के धन पर गुलछर्रे उड़ाता है। माँ–बहन दोनों से विश्वासघात होता है। यह उपन्यास हमें आगाह करता है कि – उत्तर आधुनिकता, भूमंडलीकरण, बाजारवाद की दौड़ में, हम–नैतिकता, मानवता और परंपरा को कितना पीछे छोड़ आए हैं तथा इस चमक दमकवाली दुनिया में सारे रिश्ते छूट गए हैं। आर्थिक उदारीकरण ने जहाँ एक ओर बाजारवादी व्यवस्था को ताकत दी है, वहीं पारिवारिक संबंधों को अनुदार, आत्मकेन्द्रित और मतलबी बना दिया।[2]

लेखिका का यह कथन भाषा–प्रतीक सौष्ठव की दृष्टि से रेखांकित योग्य है – "सर्वत्र छाया है जूता – सपने में भी। चाँदी का जूता व यश का जूता – राजनीति का जूता, विज्ञापन प्रचार का जूता, यही आदमी को उसकी औकात बताता है।"[3]

पारम्परिक नारी चिन्ताओं से अलग हटकर, नग्न सच्चाई का सामना कराती, लेखिका ने समाज में नारी का शोषण, राजनीति तथा व्यापार के हथकंडों में घिरी उसकी मनोदशा। उत्तर आधुनिकता और बाजारवाद की गिरफ्त और ग्लैमर में छटपटाती, नापती नारी की अंतरात्मा को उजागर किया है। इस प्रकार – यह उपन्यास – स्त्री विमर्श और बाजारीकरण के प्रभाव की प्रामाणिक अभिव्यक्ति प्रभावशाली तरीके से करता है जो सुखद है – स्त्री व स्त्री विमर्श के हित में।

---

1 वहीं, पृ.316
2 वहीं, पृ.317
3 वहीं, पृ.317

4.11 "अन्हियारे तलछट में चमका" – अल्पना मिश्र

"अन्हियारे तलछट में चमका" – अल्पना मिश्र का उपन्यास जो स्त्री के तेज का प्रतिनिधित्व करता है।

अल्पना मिश्र का यह उपन्यास[1] एक प्रयास है – जीवन और संसार को समझने का। लेखिका का लेखन – स्त्रियों को समर्पित है। इस उपन्यास में स्त्री के विविध रूप –नौकरी पेशा स्त्री, प्रेम करती स्त्री, नौकरी की तलाश करती पढ़ी, लिखी स्त्री, परम्परागत ब्राह्मण परिवारों की रूढ़ियों में जकड़ी परिवार के प्रति समर्पित और पति को परमेश्वर समझकर अपनी जिन्दगी व्यर्थता बोध से भर लेने वाली स्त्री, प्रेम में धोखा खा जाने वाली युवती, प्रेम में अपने पति व प्रेमी द्वारा शारीरिक अत्याचार झेलती स्त्री, नौकरी कर घर–बाहर दोनों जिम्मेदारियों को संभालती, किन्तु अपने वेतन को अपनी सास औरत पति के चरणों में अत्याचारों से तंग होकर ससुराल छोड़कर मायके में अपनों का साथ पा लेने की आकांक्षा रखने वाली स्त्री।

स्त्री के जितने शोषित रूप है के सभी रूप इस उपन्यास में पूरी सच्चाई के साथ मौजूद हैं।[2] यह उपन्यास –

- स्त्री विमर्श की लेखिकाओं के उपन्यासों से अलग पूरी गंभीरता और संवेदनाओं की तरलता के साथ स्त्री की बाहरी स्थितियों और उसके भीतरी मन की सघन पड़ताल – पूरी विश्वसनीयता और निजता से करता है जो सुखद है।
- बिना किसी शोर के स्त्री जीवन के यथार्थ और उसकी कल्पना की रंगीन छवियों को दर्शाता है। लेखिका ने स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों में "हेम मृग" का प्रयोग किया है – "क्या यह हेम मृग – स्त्री के सपनों का वह पुरुष है जिसकी उपस्थिति असंभव है। जो सपनों के हरे वन में कुलाचें मारता है, यथार्थ से जो परे है उसको पकड़ लेना व्यर्थ है। क्या यह हेम मृग स्त्री की देह है ? स्वर्ण देह – जिसका शिकार किया जाना है। उसके मन को न जीत पाने की असफलता के बावजूद।"[3]

---

1 आधार प्रकाशन – पंचकूला–2014, रूपए 200/–

2 शुक्ला–स्मृति – स्त्री का तेज (समीक्षा) समकालीन भारतीय साहित्य, अंक 182, नवम्बर–दिसम्बर, 2015, पृ.190

3 वहीं, पृ.192

यह जानकर सुखद अनुभूति होती है कि – इस उपन्यास में वर्णित सभी पात्र हमारी दुनिया की आधी आबादी के प्रत्येक वर्ग की अधिसंख्य स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन स्त्रियों के जीवन में घना तिमिर है लेकिन इन सभी में घोर विपरीत परिस्थितियों के अँधेरे के पार जाकर अपने साहस के तेज की चमक पैदा करने का माद्दा भी है। स्त्री पात्र–शोषण, दुःख–दर्द और समाज के अंतर्विरोधों के बाद जो फैसले लेते हैं – वे स्त्री जीवन की मंत्रणा को अँधेरी सुरंग के बाद मिले प्रकाश और प्राणवायु की भाँति हैं।

यह उपन्यास समाज की तलछट में जीने वाली स्त्री को चेतना की पूर्णता तक ले जाने वाला उपन्यास है जो सुखद है।

4.12 फरिश्ते निकले – मैत्रेयी पुष्पा

फरिश्ते निकले – मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास – जिन्दगी में स्वाभिमान को मनुष्य की सबसे बड़ी दौलत मानने वाला सुखद अहसास का प्रतीक है। मैत्रेयी पुष्पा का यह उपन्यास – "फरिश्ते निकले"[1] उन लोगों पर आधारित है जो जिंदगी में स्वाभिमान को मनुष्य की सबसे बड़ी दौलत मानते हैं।[2] उपन्यास की नायिका – बेला बहू – एक औरत है। वह जिन्दगी में अपने स्वाभिमान के लिए लड़ती है। ग्यारह साल की उम्र में उसके पिता की मृत्यु हो जाती है। शूमर सिंह उसके पिता की उम्र का व्यक्ति जो अपने स्वार्थवश माँ–बेटी को सहारा देता है।

बेटा – बारह साल की उम्र में सगाई, पति की बच्चा चाहने की कामना, उसके साथ जानवरों जैसा सलूक इस उपन्यास का कथानक विस्तार है। मैत्रेयी पुष्पा ने इस उपन्यास के माध्यम से अनमेल विवाह की समस्या को उठाया है। अनमेल विवाह में कुँवारी औरत को अहमियत दी जाती है – मानसिकता को प्रकट किया गया है।

बिन्नू की बुआ की बेटी–सल्बी उम्र 11 वर्ष का विवाह 45 वर्ष की आयु के युवक के साथ हो गया क्योंकि वह अमीर था। बिन्नू की सहेली शिव देवी का विवाह बूढ़े व्यक्ति से, शकुन्तला का विवाह पचास साल के आदमी के साथ होता है।

यह उपन्यास – सफेदपोश, सुसंस्कृत, सभ्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों का पर्दाफाश करता है तथा इस सत्य को अभिव्यक्त करता है जिसमें औरत को जानवर समझकर मालिकाना हक जताना, उसकी देह को पैरों तले रौंदना मर्दानगी की परिभाषा बन गई हैं।

---

1 राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली : 2014, रूपए 395/–

2 सोनिया – परिवर्तन की राह पर – समकालीन भारतीय साहित्य, अंक 180, जुलाई–अगस्त 2015, पृ.184

अजन्में शिशु की मौत की वेदना में रोती स्त्री

भारत सिंह तथा जोरावर सिंह अपनी अंधी कामवासनाओं से त्रस्त है। बेला – की गर्भावस्था का भी ध्यान नहीं रखते और गर्भस्थ बच्चा इनकी काम वासना की भेंट चढ़ जाता है। तब बेला कहती है – "तुमने अपनी मर्दानगी की आजमाइश में मेरी देह पर इस कदर हमले किए कि मेरी कोख ही छेद डाली, मेरे अजन्मे बच्चे को मौत के घाट उतार दिया। क्या तुम इस वेदना से परिचित हो ? क्या तुम दर्द की इस तकलीफ को जानते हो कि उस अजन्में का हृदय धड़कने लगा था, तुम्हें पता है ?"[1]

मैत्रेयी पुष्पा प्रश्न उठाती है –

- यह कैसी मांसलता हम सब पर हावी होती जा रही है जो मनुष्यता को दर किनार कर रही है ?
- यह कैसा प्रेम है जो सिर्फ देह तक ही सीमित हैं ?
- क्यों सदियों से जारी है ऐसी वीभत्स कथा जो औरत को उजड़ने को बताती है ?[2]

बेला और उसकी सहेली एक ऐसा स्कूल खोलती है जहाँ शनिवार, रविवार के दिन तीन घंटे पढ़ाई होती है। इस स्कूल का मकसद बुराई पर अच्छाई की जीत है। यहाँ आज के समाज में फैली बुराई को देखते हुए एक ऐसी पीढ़ी तैयार की जाएगी जो समाज में परिवर्तन लाएगी।

इस उपन्यास में मिथक प्रयोग किया गया है, महाभारत का लाक्षागृह कांड, द्रौपदी, सती शांडिल्य की कहानी। जब भारत सिंह बेला को मंत्री के पास भेजता है और खुद पांचों भाई नशे में धुत छिपकर एक कमरे में सो रहे थे तभी बेला कमरे में आग लगा देती है और पाँचों भाई मर जाते हैं। बेला जैसी स्त्री का इतनी हिम्मत दिखाकर दुष्टों का संहार करना भी आज जरूरी है यह प्रेरणा की दृष्टि से सुखद ऊर्जा का संचार करता है।

4.13 पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा – चित्रा मुद्‌गल

पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा – चित्रा मुद्‌गल का उपन्यास – किन्नरों की करूण कथा को दर्शाता है। जो कथाएँ संवेदना के बीच से जन्म लेती है, वे मानवीय करूणा और जीवन मर्म की कारूणिक कथा बन जाती है।[1]

---

1 फरिश्ते निकले – मैत्रेयी पुष्पा, पृ.78

2 वहीं, पृ.79

किन्नर–जीवन–मनुष्य की यातना, बेबसी, परित्याग, अपमानजनक गाली के रूप में मानते है। यह उपन्यास दर्शाता है कि – समाज में देहधारी व्यक्ति स्त्री–पुरुष दोनों न होने से – तिरस्कार–बहिष्कार, अपमान सहने को मजबूर होते हैं। उस अपमान को संवेदन का सम्मान चित्रा मुद्गल ने इस उपन्यास में दिया है। यह उपन्यास पत्र शैली में है। पत्र में चार सम्बोधन – तेरा दीकरा, उर्फ विनोद, उर्फ बिन्नी, उर्फ बिमली। एक ही किन्नर पात्र की व्यथा के सम्बोधन है। जो स्वयं अपने पत्र के अंत में विनोद, अपने लिए, माँ यानि बा के शब्दों में व्यक्त करता है। मिशेल प्रस्तु फ्रांसीसी उपन्यासकार ने लेखकीय जीवन जीने और जीविका कमाने परिसर में आकर अपनी माँ को – चिट्ठियों में – प्यारी माँ, पोटली माँ, छोटी सी माँ, मेरी अच्छी मॉम कहकर सम्बोधित करता है।

चित्रा मुद्गल कुछ प्रश्न उठाती है –

क्या मनुष्य होना स्त्री–पुरुष होना ही है ?

तीसरा होना कोई न होना है ?

क्या एक किन्नर अपने सम्पूर्ण आकार में मनुष्य होकर भी केवल निर्लिंग होने से प्राकृतिक दोष के कारण मनुष्य होने से निरस्त किया जा सकता है ? क्या किन्नर के प्रति परिवार और समाज का क्रूर हिंसक और अमानवीय दृष्टिकोण हिजड़े को भी संवदेनशील बनाने के लिए उकसाना नहीं?[2] अपने ही घर से निकाल दिए गए विनोद की पीड़ा उसके अपनी बा को लिखे पत्रों में गहराई के साथ उजागर होती है। प्रश्न यह है क्या शब्द बदल देने से अवमानना समाप्त हो जाती है ? गलियों की गाली हिजड़ा को किन्नर कह देने से क्या देह के नासूर छिटक सकते हैं ? परिवार के बीच से छिटककर, नारकीय जीवन जीने वाले ये बीच के लोग, आखिर मनुष्य क्यों नहीं माने जाते ?

विनोद अपनी बा को पत्र में लिखता है – "जिस नरक में तूने और पप्पा ने धकेला है मुझे, वह एक अंधा कुँआ है जिसमें सिर्फ साँप–बिच्छू रहते हैं। साँप–बिच्छू बनकर वह पैदा नहीं हुए होंगे। बस इस कुएँ ने उन्हें आदमी नहीं रहने दिया। माँ तथा विनोद दोनों के लिए पीड़ादायक वाक्य – "अपनी कोख से ऐसी औलाद पैदा की है बा तूने ?" चम्पा बाई के पास जाने का तथ्य लेखिका ने इस प्रकार रचा है – "जिस दिन चम्पाबाई के सुपुर्द कर दिया गया, कसाई खाने के कपाट खुल गए। गाली हो गया है। हिजड़ा। गालियों की गाली। किन्नर कह देने भर से नासूर छिटक जाएंगे देह से ?[3]

---

1 दवे रमेश – किन्नर करूण कथा समकालीन भारतीय साहित्य, अंक 186, जुलाई–अगस्त 2016, पृ.205

2 वहीं, पृ.206

3 वहीं, पृ.207

राजनीति किन्नर को एक वोटर के रूप में देखती है। विधायक का हिजड़े पूनम से सम्पर्क और आत्मीय व्यवहार वितृष्णा और निरादर भोगते लोगों का राजनीति में उपयोग एक प्रकार का व्यंग्य है। चित्रा मुद्गल ने यह सिद्ध करने की कोशिश भी की है कि – राजनीति के स्वार्थ, लालच या भय से मनुष्यता की नैतिकता और संवेदना को पराजित नहीं किया जा सकता। चित्रा का यह उपन्यास सामान्य मनुष्य के अमनुष्य होने की स्वार्थपरकता के बावजूद किन्नर करुण कथा को जगाने में सफल रहा है।

2. राजनैतिक जीवन से सम्बन्धित :

4.2.1 दुक्खम–सुक्खम–ममता कालिया – आजादी की लड़ाई का केन्द्रीय कथानक

ममता कालिया का उपन्यास – "दुक्खम सुक्खम" आजादी की लड़ाई को केन्द्र में रखकर लिखा गया है। इसमें आजादी और गांधीजी का भी आकलन है। दुःखद अनुभूति यह है कि – कवि मोहन की पत्नी इंदु है। मथुरा का एक परिवार जिसका मुखिया नत्थीमल – पत्नी विद्यावती है।

जब बहू के दूसरी बार भी बेटी होती है तब विद्यावती का पारा चढ़ जाता है। इंदु को यातनाएं झेलनी पड़ती है। ताने झेलने पड़ते है। यह स्थिति सुखद नहीं है।

यही स्थिति इन्दु के जन्म की भी है। जिस दिन उसका जन्म हुआ था – घर में कोई उत्सव नहीं मना, लड्डू नहीं बंटे, बधावा नहीं बजा, घर की मनहूसियत बढ़ी, दादी ने चूल्हा तक नहीं जलाया, लालटेन की माद्मि रोशनी में सिर पर हाथ रखे वे देर तक तख्ते पर बैठी रही। उन्हें बड़े तीखे पन से – अपनी तीनों बेटियों का ध्यान आया, जिनके रहते वे कभी चैन से बैठ नहीं सकी। उठते – बैठते, ससुराल से लेकर पीहर तक सबने ताने मारे थे। लड़का था सिर्फ एक – उसके भी हो गई दो बेटियाँ।[1]

राम शंकर द्विवेदी ने उपन्यास को जिन्दगी का आख्यान कहा है।[2]

अनुभूतियों का जीवंत चित्रण पारिवारिक परिवेश में इस प्रकार दृष्टव्य होता है – "सतघड़े के उस मकान में अंधेरा तो वैसे ही बहुत रहता था, आज कुछ ज्यादा घना हो गया।" लालटेन की रोशनी में मग्गों की लम्बी परछाई देखकर दादाजी ने डपटा – "कहाँ ऊँट सी घूम रही है, बैठ चुपचाप एक कोने में।" दादी हिचकिचाई – "बहू का गुस्सा बेटी पर निकाल रहे हो। कौन मेल के बाप हो तुम।"

---

1 कालिया–ममता–दुक्खम सुक्खम, पृ.7

2 समकालीन भारतीय साहित्य–जुलाई–अगस्त, 2013, पृ.197

लाला नत्थी मल का क्रोध पत्नी की तरफ घूम गया – "तुमने का कम लाइन लगाई थी छोरियों की।" "हाँ, मैं तो दहेज में लाई थी ये छोरियाँ, तुम्हारी कछू नायँ लगे।"[1] इंदु का चरित्र नारी की दुःखद अनुभूतियों से युक्त है। उसकी दिनचर्या जेल में रहने वाले कैदी से भी ज्यादा कठोर थी। कैदी को सिर्फ मशक्कत करनी पड़ती थी, खुशामद नहीं। इन्दु के लिए दोनों निहायत जरूरी काम थे। बात–बात में लड़ने पर आमादा सास और बददिमाग ससुर से उसकी जान काँपती।[2]

इन्दु का पति–आगरा में पढ़ रहा था। सिर्फ छुट्टियों में घर आता था। इंदु अपने पति के स्वभाव और संघर्ष का ठीक से अनुमान नहीं लगा पाई थी।

गृहस्थी में पिसती इन्दु

इन्दु गृहस्थी में अकेली पिसती रहती है। उसका पति–कवि मोहन– जीवन की समस्याओं से घबराकर किताबों की शरण में जाता है। वह विवाह नहीं करना चाहता था किंतु माता–पिता के आगे न चली और विवाह करना पड़ा। गृहस्थी की खींचतान में ही उसकी पढ़ाई चलती थी।[3] राजनीतिक परिवेश से जुड़े इस उपन्यास में विद्यावती धीरे–धीरे गांधीजी के प्रभाव में आकर बदलती है। इसमें स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में आए परिवर्तन के भी चित्र है।

गांधीजी का व्यक्तित्व

आजादी प्राप्त होने पर गांधीजी का व्यक्तित्व एक लाचार ट्रेजिक हीरो जैसा हो जाता है। उन्होंने कहा था – "अगर कांग्रेस बँटवारे को स्वीकार करना चाहती है तो उसे मेरी लाश पर से गुजरना होगा। जब तक मैं जिंदा हूँ, कभी हिन्दुस्तान का बँटवारा स्वीकार नहीं करूंगा।"[4] आजादी के बाद गांधीजी के अनुयायी अलग राह पर चल पड़े। आजादी के बाद पंजाब सिंध से आए विस्थापितों ने व्यापार की नई नीति अपनाई जिससे दिल्ली जैसे शहरों का चेहरा बदल गया। कवि मोहन की दोनों लड़कियाँ–प्रतिमा और मनीषा इतनी आजादी के बाद अग्रगामिता के बावजूद वे न तो लेखक बनना चाहती थी

---

1 वहीं, पृ.197
2 वहीं, पृ.198
3 वहीं, पृ.198
4 वहीं, पृ.198

न कलाकार, न वह अफसर बनना चाहती थी, न लेक्चरर, वह मॉडल बनना चाहती थी।[1] दादी अपनी तरह की अलबेली स्वाधीनता सेनानी थी। कभी देश की आजादी के लिए लड़ी, कभी अपनी।[2]

समीक्षक – राम शंकर द्विवेदी की दृष्टि में यह उपन्यास अपनी आजादी के लिए लड़ती चार महिलाओं के जीवन का दस्तावेज कहा जा सकता है। सही मायने में दुःख हो या सुख – ये दोनों हमारे पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन के सजीव सहचर एवं हमारे निर्माता हैं।[3]

4.2.2 कल्चर–वल्चर – ममता कालिया – जागरण की लहर से आगे पराजित होती वैचारिक प्रतिबद्धता

जागरण की लहर सबसे पहले कलकत्ता में आई थी। कोलकाता की पृष्ठभूमि पर आजादी के बाद स्थापित साहित्य भवन को लेकर होने वाले साहित्यिक–सांस्कृतिक बदलाव को लेकर भूमंडलीकरण के कारण होता बदलाव, उपेक्षा भाव, पराजित होती वैचारिक प्रतिबद्धता को केन्द्रीय तत्व बनाकर लिखा गया है यह उपन्यास – कल्चर–वल्चर।[4]

लेखिका का मानना है कि – नई संस्थाएँ – कला, साहित्य, संस्कृति का राग अलापती है। अपनी पारदर्शिता का दम भरती है लेकिन ये संस्थान–कला साहित्य संस्कृति के कारोबार बनते जा रहे हैं। इनके हाथों संस्कृति विकृत बन रही है। कलाकार का शोषण होता है, कला जगत पर नए प्रकार का आधिपत्य होता है।[5] कोलकाता महानगर का साहित्य–संस्कृति भवन इस उपन्यास के केन्द्र में है जो संस्थानों के तंत्र के अधःपतन को कहती है जिसे जानकर दुःख होता है।

स्वतन्त्रता आन्दोलन और उसके पश्चात् राष्ट्र की उन्नति के लिए जब राजनीतिक स्वतंत्रता पर्याप्त नहीं लगी व बौद्धिक रचनात्मक स्वतंत्रता अपेक्षित होने लगी, तब – देश में अनेक साहित्यिक सांस्कृतिक संस्थाओं की स्थापना की गई। उपन्यास में कोलकाता में साहित्य–संस्कृति भवन इसी सोच का परिणाम है। लेखिका का मानना है

---

1 कालिया ममता, दुक्खम–सुक्खम, पृ.237
2 वहीं, पृ.274
3 समकालीन भारतीय साहित्य – जुलाई–अगस्त, 2013, पृ.199
4 कालिया–ममता – कल्चर–वल्चर – किताबघर प्रकाशन दरियागंज, नई दिल्ली, 2017, 350/–
5 ऐश्वर्या – पराजित होती वैचारिक प्रतिबद्धता (समीक्षा) समकालीन भारतीय साहित्य, जुलाई–अगस्त, 2018, अंक 198, पृ.191

कि – "भवन की विशाल इमारत और व्यापक परिसर ऊपर से पक्का लगते हुए भी अंदर से खोखला होता जा रहा है।"[1] जानकर दुःखात्मक अनुभूति होती है। साहित्य और संस्कृति – दोनों गायब होती जा रही हैं। बस भवन ही बचा था ?[2]

भवन ही मंत्री का चरित्र

ममता कालिया ने भवन की (सचिव) मंत्री के रूप में एक नारी पात्र–सुषमा अग्रवाल को रचा है जिनकी स्वार्थ पूर्ति का साधन साहित्य संस्कृति भवन है। उन्हें सचिव सम्बोधन पसंद नहीं। सचिव शब्द अधीनस्थता का बोध कराता। मंत्रियों की तरह उन्हें राजनीति के खेल में मजा आता है। वह कल्पना में सीधे प्रधानमंत्री का सपना देखती है जो उनके लिए सुखद अनुभूतिपरक है। वह अपने ही द्वारा सम्मानित लेखकों को नहीं पहचानती है। लेखक द्वारा पुस्तक देने पर श्रद्धा से पुस्तक लेकर आभार व्यक्त करते हुए, पढ़ने का आश्वासन देती है। लेखक के विदा होते ही, मेज पर किताबों का ढेर देखकर चिढ़ी हुई आवाज में, कहती है – "तारकेश्वर को बुलाऊँगा पर कहाँ – मेरे ऑफिस से सारा कचरा हटाए। मेरी मेज एकदम साफ होनी चाहिए।" यह जानकर किसे प्रसन्नता होगी ? जो किताबों को कचरा माने उसका क्या करे ?

घर–परिवार गृहस्थी के लिए स्थान नहीं

सुषमा अग्रवाल के लिए घर परिवार गृहस्थी के लिए कोई स्थान नहीं है। उसका पति पूछता है – "क्या तुम्हारी कभी इच्छा नहीं होती घर बैठकर जीवन जीने की ?" यह प्रश्न सुषमा अग्रवाल के लिए कोई मायने नहीं रखता। वह चाहता है सुषमा उसका ध्यान लगाए – घर के डूबते व्यवसाय को बचाने तथा अपनी बच्चियों को बचाने के लिये सुषमा के पास वक्त नहीं है। इस प्रकार – सुषमा का चरित्र – एक ऐसी स्त्री का है जो प्रत्यक्ष रूप से तो साहित्य – संस्कृति की संरक्षक बनती है, किन्तु वास्तविकता में वह साहित्य संस्कृति के भवन के प्रति झूठी निष्ठा दिखाकर उसे लूट रही है अपना स्वार्थ सिद्ध कर रही है।[3]

---

1 वहीं, पृ.191
2 वहीं, पृ.192
3 वहीं, पृ.193

हाँ में हाँ मिलाने का सुख

ममता कालिया ने राजनीति में पनप रहे भ्रष्टाचार, घोटालों व वर्चस्व की लड़ाई का प्रभाव साहित्य कला संस्कृति के क्षेत्र में भी दर्शाते हुए गोरखधन्धों, फर्जी बिलों, घोटालों का प्रचलन बताया है। इन कार्यों के लिए– मूर्तियों का बार–बार स्थान परिवर्तन कराना ताकि कारीगर मूर्तियों का स्थान बदलते रहे और कमाई होती रहे। निर्माण और पुननिर्माण से होने वाले शोर से भवन की प्रगति पर संतोष व्यक्त करना घोटालों की ओर संकेत है। कर्मचारी फर्जी बिलों की सच्चाई जानते हैं। पर्दे बदलवाने में 6500 रूपए के स्थान पर 65000 रूपए को बताना, भवन के कर्मचारी सुखराम की बीमारी को नोटंकी बताना, हाँ में हाँ मिलाने वालों को सुख की अनुभूति होना इत्यादि कार्य होते हैं।

साजिशों के शिकार

नवनियुक्त निदेशक नवीन मिश्र कुछ करना चाहते हैं किन्तु सुषमा अग्रवाल के प्रभाव से कर नहीं पाते क्योंकि – "साहित्य–संस्कृति के कर्णधार संस्कृति के संसार में अपनी विजय पताका ऊँची उड़ाना चाहते हैं।"[1]

नवीन मिश्र संस्कृत संध्या का आयोजन करते हैं। सभागार में कर्मचारियों के अतिरिक्त कोई अतिथि नहीं था। कार्यक्रम की असफलता में साजिश की बू आती है। वह कुछ कर नहीं पाते।

भवन का माहौल संवेदनशीलता की चपेट में

भवन का माहौल संवेदनहीनता से ग्रसित है। भवन में हड़ताल होती है। अध्यक्ष बाबू लाल माहेश्वरी सोचते हैं "अगर साहित्य संस्कृति भवन न रहा तो नगर में भारतीय भाषाओं का क्या होगा ? तथा सुषमा अग्रवाल सोचती है अगर साहित्य–संस्कृति भवन न रहा तो मेरा क्या होगा ?

ममता कालिया ने बड़ी दुःखद स्थिति की अभिव्यक्ति इस उपन्यास में की है – "कभी शिक्षा, संस्कृति साहित्य के केन्द्र रहे कोलकाता शहर में बुद्धिजीवियों की क्या दशा हो गई है ? लाल झंडा संघर्ष का प्रतीक रहा परन्तु लाल झंडे के तले हुई हड़ताल असफल रही है। इसका कथानक चालाकी–बेईमानी के इर्द–गिर्द बुना गया।

---

1 वहीं, पृ.198

एक अकेली महिला ने पूरे भवन को अपनी मुट्ठी मे कैद कर लिया। आँसू को छिपाने के लिए लगाया गया काला चश्मा उसकी विजय का प्रतीक व आँखों की चमक छिपाने का साधन है।

इस प्रकार यह उपन्यास लेखिका की चिन्ता व दुःखद अनुभूतियों की अभिव्यक्ति है – "स्वतन्त्रता के पश्चात् स्थापित की गई साहित्यिक– सांस्कृतिक संस्थाएं अपने उद्देश्य को छोड़ भटकाव और पतन का शिकार हो रही है। चालाकी बेईमानी स्वार्थी, संस्कृति ने इन संस्थाओं को अपनी जकड़न में ले रखा है। यदि हम अपने कल्चर को नहीं बचा पाए तो स्वार्थ रूपी वल्चर इसे अवश्य नष्ट कर देगा।"[1]

4.2.3 अनित्य – मृदुला गर्ग

अनित्य – मृदुला गर्ग का उपन्यास जो राजनीतिक अपराध बोध और मोहभंग को दर्शाता है एवम् गांधीवादी क्रांतिकारी मानसिकता की अनुभूतियाँ कराता है। मृदुला गर्ग बचपन में भगत सिंह की कहानी सुनकर रोमांचित होती थी। भगत सिंह का कहना था "जब राजनीतिक क्रान्ति से शासन शक्ति अंग्रेजों के हाथ से निकलकर हिन्दुस्तानियों के हाथों में आ जाएगी, तब हमारा लक्ष्य शासन शक्ति को उन हाथों के सुपर्द करना है जिसका लक्ष्य समाजवाद हो।" गांधीजी के हृदय में गरीब, सर्वहारा वर्ग के लिए गहरी व्यथा और संवेदना थी। अनित्य की प्रभा कहती है "एक समाज में रहने वाले लोग इस तरह क्यों बंटे कि एक वर्ग के पास इतना हो कि वह मदद करने की सामर्थ्य रखे और दूसरे वर्ग के पास कुछ न हो कि उसे मदद की जरूरत पड़े?"

मृदुला गर्ग कहती है "अनित्य में मेरा उद्देश्य गांधीवाद पर प्रहार करने का नहीं है। गांधीवादी व क्रांतिकारी, दोनों आन्दोलनों को पूरे ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखने, समझने की जरूरत है।" यह उपन्यास दर्शाता है कि

1. समझौतावादी नीतियों का जन साधारण पर क्या प्रभाव पड़ा ?
2. स्वतन्त्रता आने के बाद हमारे यहाँ की अवसरवादी मानसिकता को गढ़ने में उनकी कितनी और क्या भूमिका रही ? इस प्रकार यह उपन्यास भगत सिंह जैसे प्रेरणा स्त्रोत से प्रेरित होकर लिखा गया। अन्य किसी बड़े राजनेता के जीवन को लेकर नहीं बुना गया। यह बहुत साधारण लोगों की कहानी है। अनित्य – ऐसे पात्रों की कथा है, जो अपनी कमजोरियों के कारण ऐतिहासिक घटना क्रम में उस हद तक हिस्सा नहीं ले पाए जिस हद तक लेना चाहते थे या सोचते थे

---

1 वहीं, पृ.194

कि उन्हें लेना चाहिए पर उसके लिए खुद को माफ भी नहीं कर पाए। यह दुःखद अनुभूति है। उपन्यास की पात्र है स्वर्णा वह उनके घर पर काम करती थी। उसकी प्रति क्रियाएं तीखी, तल्ख, दो टूक होती थी। उसने वफादारी की तुलना में स्वतंत्रता को चुना। अनित्य वह पात्र है जिसका संस्कृति से मोह भंग हो चुका है। राजनीतिक सोच और सामाजिक बोध पात्रों में चेतना प्रवाह का प्रमुख अंग है। अविजित राजनीति हलचल का उल्लेख करता है –

"विजय लक्ष्मी पंडित को मैं जाकर सभापति बनाने ले आया। साइमन कमीशन के खिलाफ विजय लक्ष्मी आने से कतरा रही थी। विजय लक्ष्मी डट कर बोली। कितनी सुंदर हुआ करती थी वह उन दिनों।"[1] यह प्रसंग सुखद है। काजल–अविजित को–याद दिलाती है – "युनिवर्सिटी के तुम्हारे भाषण मुझे अब तक याद है। विजय लक्ष्मी के बाद तुम्हारा भाषण ? अहा, क्या बोले थे तुम ? तुम्हारा तो पॉलिटिक्स में जाने का पक्का इरादा था न .....। तुम्हारे पिताजी चाहते थे तुम आई.सी.एस. करो।"[2] युवा वर्ग – राजनेताओं से प्रेरणा ग्रहण करे व युवा वर्ग को सफलता मिले तो प्रसन्नता का भाव अच्छा लगता है।

चड्डा नामक पात्र – बीच–बीच में उठकर चिल्ला पड़ता था। महात्मा गांधी जिन्दाबाद! बाकी लड़के कुर्ता खींचकर बिठा देते थे – "चुप भी कर यार, गोली जब चलेगी, तब चलेगी। तुझे इतनी जल्दी क्या पड़ी है ?"[3] बग्गी में मोती लाल नेहरू आए और कहा – किस उल्लू के पट्ठे ने इन मासूम बच्चों को यहाँ बिठा रखा है। उन्होंने हुक्म दिया लड़कों को घर भिजवाओ। वे पुरानी बातें सुनकर अच्छा लगता है। काजल अविजित को 20 साल पुरानी बातों – भाषण, सत्याग्रह, भारत छोड़ों, हिन्दुस्तान हमारा है, स्वराज्य के परिवेश में लाकर खड़ा कर दिया था।[4] अविजित के पिताजी स्टूडेन्ट यूनियन से उसे इस्तीफा देने की कहते हैं गद्दारों की सूची में ग्राम की बात करते हैं तो वह कहता है – "पिताजी, आप जानते हैं, चन्द्र शेखर आजाद पर पुलिस ने मेरी आँखों के सामने गोली चलाई थी।"[5] एक देशभक्त के लिए इससे ज्यादा क्या शर्म की बात होगी ?

---

1 अनित्य, पृ.9
2 वहीं, पृ.26–27
3 वहीं, पृ.27
4 वहीं, पृ.29
5 वहीं, पृ.29–30

अविजित का दर्द

अविजित ने आई.सी.एस. की परीक्षा दी, पास हो गया। जब विदेश जाने का वक्त आया तो कलक्टर ने कहा था – लिखकर दो कि सरकार के विरूद्ध कार्यवाही में हिस्सा नहीं लोगे, इजाजत मिल जाएगी। अविजित ने कागज फाड़कर फेंक दिया तथा पिताजी से कहा – "आपको पता तो चल गया है, आपका बेटा आई.सी.एस. में आने लायक है और क्या चाहिए ? पिताजी खुश नहीं हुए अहं जरूर सन्तुष्ट हुआ।"[1]

स्वतंत्रता मिलने के बाद – नई सरकार बनी तो – दोस्तों ने राय दी। दो साल जेल भुगती है – उसे महान बलिदान का मुआवजा वसूलना चाहिए पर मना कर दिया। अनित्य कहता था – "एक दिन शहीदों का भार इस मुल्क को ले डूबेगा। पुलिस की दो लाठी खाई और शहीदों की फहरिस्त में आ गए। शहादत इतनी सस्ती नहीं होनी चाहिए।"[2] आजादी की लड़ाई लड़ने वाले लोगों की आशिक मिजाजी देखकर दुःख होता है।[3]

विदेशी हुकूमत के दमन

अविजित नियति के चक्र को विदेशी हुकूमत के दमन के रूप में स्मरण करता है। 1942 में उड़ीसा के तटवर्ती इलाके के सैकड़ों गाँव–खड़ी फसलें ब्रिटिश सरकार ने जला दी। किसानों के हल–बैल, नावे छीन ली।[4] बड़ी विकट दुःखद स्थिति रही। अविजित चर्चिल प्रधानमंत्री के ब्रिटिश पार्लियामेंट में भाषण – किसी भी कीमत पर फतह पर रोषपूर्ण टिप्पणी करता है – "गुलाम देशों के श्रम और माल से ब्रिटेन को दौलतमंद बनाने के लिए, गुलाम देश की कीमत पर फतह, एशिया के जानमाल की कुर्बानी पर फतह हिन्दुस्तानी अवाम को भूखा मारकर फतह।"[5] शब्द जोशीले पर परिणति दुःखद आँसू के अलावा क्या थी ?

जुल्म सहो या करो

अविजित कहता है कमजोर पर जुल्म सहो या करो। क्या समर्थ की सामर्थ्य इसी में है कि कमजोर पर जुल्म करे। जो सहले वही कमजोर जो कर ले वही समर्थ। वह कहता है – हमारा देश क्या इसलिए कमजोर बना कि जुल्म नहीं किया।[6] श्यामा का रोना दुःखद है।

---

1 वहीं, पृ.31
2 वहीं, पृ.31
3 वहीं, पृ.41
4 वहीं, पृ.49
5 वहीं, पृ.50
6 वहीं, पृ.50–51

शांति बनाम पागलपन

शांति की पुकार – "पागलों का प्रताप" मानना क्रान्तिकारी विचारों का समर्थन है। शांति किस कीमत पर ? औरों की कीमत पर। अपना सिर न झुके औरों का चोट कर जाए। गांधीजी का कथन – हिटलर का सामना अहिंसा से करो, युद्ध का मार्ग मत अपनाओ तो दुनिया उन्हें विक्षिप्त मानती थी। इतिहास वे ही लिखते है जिनके हाथों में ताकत होती है। सच्ची बातों का इतिहास में नहीं आना भी दुःखद स्थिति है।[1] काजल साफ कहती है – "जब हम गुलाम थे तो कानून तोड़ते थे, जेल जाते थे, यह दिखलाने को कि हमारा मन गुलाम नहीं है और आज जब हम आजाद है, हमारा मन गुलाम हो गया है।"[2] जानकर दुःख होता है।

औरत का मन बनाम जिस्म

अविजित श्यामा के प्रसंग में सोचता है तो औरत की आजादी विषयक भाव बहुत है। क्या सचमुच औरत को मैंने जिस्म समझा है ? काजल के व्यक्तित्व का आदर नहीं किया, अपने समकक्ष दिमाग उसमें पाकर उसका सम्मान नहीं किया ? दोस्त की हैसियत से उससे स्नेह नहीं किया ? बस प्यार नहीं किया। मैंने औरत को महज जिस्म नहीं समझा, कभी नहीं।[3]

सत्याग्रह बनाम शहादत

- चन्द्र शेखर आजाद पर गोलियां चली।
- अकेला आदमी इतनी गोलियां।
- गांधीजी ने आन्दोलन बन्द कर दिया।
- सत्याग्रह के मानी शहादत।
- लार्ड इरविन से समझौते की बातचीत चल रही है।[4]

गलत इतिहास रचने की स्थिति पर क्या मिलेगा दुःख के अतिरिक्त ?

चड्डा आजाद का शव मांगता है। अंग्रेज पुलिस अफसर नफरत, हिकारत व वहशीयाना गर्व से देखता है तथा सिपाही चड्डा के सिर पर बंदूक का कुंदा दे मारता है।

---

1 वहीं, पृ.51–52
2 वहीं, पृ.57
3 वहीं, पृ.60
4 वहीं, पृ.68

खून से लथपथ चड्डा अविजित की बाहों में आ गिरा, आजाद के शव के बजाय घायल चड्डा को उठाए वे लोग बोर्डिंग हाउस की तरफ लौट आए।

अविजित कहता है – कोई गड़बड़ी नहीं होनी चाहिए। चड्डा ने पूछा क्यों ? हमेशा की तरह अविजित के पास क्यों का कोई जवाब नहीं था। यह स्थिति क्या कम दुःखद है ?[1] 05.03.1931 को गांधी–इर्विन समझौता हुआ। यह विश्वासघात नहीं तो क्या है ?[2] सब खून के आंसू पीने जैसा रहा था।

गांधीजी ने अखबारों से बातचीत करते हुए कहा कि वे स्वतन्त्रता के प्रश्न पर अटल है। साइमन कमीशन का विरोध करने, डंडे खाने में हरीश कहता है – "भगत सिंह, राजगुरू और सुखदेव का जिक्र करना गांधीजी ने जरूरी नहीं समझा। कांग्रेस के सत्याग्रही जेलों से छोड़ दिए जाए। बस, सविनय अवज्ञा आन्दोलन वापस ले लिया जाएगा। उन लोगों से कोई सरोकार नहीं है जो स्वतंत्रता के लिए अपनी जान की बाजी लगा चुके हैं।"[3] जवाहर लाल नेहरू जी ने क्रान्तिकारियों के लिए कहा था – "वे उनके लिए कुछ नहीं कर सकते।"[4] क्या गांधी–नेहरू ने उन्हें अंग्रेजों से छिपते फिरने के लिए यों ही नहीं छोड़ दिया था ? जानकर किसे अच्छा लगेगा ? शायद किसे भी नहीं। यही यथार्थ सत्य था।

गांधी–नेहरू बनाम अहिंसा और आजादी

गांधी–नेहरू ने मिलकर अहिंसा का रास्ता अपनाया। समझौता करते चले गए। भले ही अहिंसा के प्रति सच्चा विश्वास पैदा न हो। गांधीजी की इस बात में कितना दम था – "भारत की जनता में हिंसा की भावना नहीं है।" गांधीजी कहते थे – "समझौता मेरे स्वभाव का अंश है।" भगत सिंह समझौता ध्येय नहीं हो, अगली लड़ाई मजबूत करने के लिए लिया गया अवकाश ही माना था। इस प्रकार अनित्य उपन्यास राजनीतिक घटनाक्रम पर भगत सिंह की क्रान्तिकारी विचारधारा से पोषित है। गांधीजी ने क्रान्तिकारी भाव की अपेक्षाएं बरती या नहीं पर ऐसी कई बातें इतिहास में सामने नहीं आई जो इतिहास लिखने वालों ने छुपा दी। यह स्थिति दुःखद ज्यादा रही। केवल आजादी मिलना ही सुखद अनुभूति मात्र रहा। यह राजनीतिक संवेदना युक्त अच्छा उपन्यास है।

---

1 वहीं, पृ.69
2 वहीं, पृ.70
3 वहीं, पृ.71
4 वहीं, पृ.71

4.2.4 एक कहानी यह भी – मन्नू भंडारी की कलम से क्रान्ति की बातों की कहानी

मन्नू भंडारी ने एक कहानी यह भी में राजनैतिक परिवेश से जुड़े संदर्भों को उभारा है। मन्नू भंडारी जब युवा होने लगी थी 46–47 का समय उन्माद भरा था– प्रभात फेरियों, हड़तालें, जुलूस, भाषण में जोश खरोश से भाग लेती थी।[1] तो सुखद लगता था।

जब पिताजी कॉलेज से मिलकर आए तो– "सारे कॉलेज की लड़कियों पर इतना रौब ? सारा कॉलेज तुम तीन लड़कियों के इशारे पर चल रहा है ? सुनकर पिता को भी गर्व होने लगा तो स्थिति सुखद बनती है।

जब मन्नू के पिताजी ने मन्नू को भाषण देते सुना व आकर तारीफ की तो पिताजी के चेहरे पर संतोष का भाव धीरे–धीरे गर्व में बदल गया पढ़कर अच्छा लगता है।[2] प्रसन्नता की बात यह थी कि – एक लड़की का बिना किसी संकोच और झिझक के धुँआधार बोलना सबको प्रभावित करने वाला था। मन्नू की तार्किक शक्ति की जीत का उदाहरण थर्ड ईयर की कक्षा को लेकर था – "यदि थर्ड ईयर बन्द करना ही था तो इसकी सूचना हमें मई तक मिल जानी चाहिए थी। जुलाई में जब हम एडमिशन लेने गए तब यह सूचना देना कहाँ तक तर्क संगत हैं...जायज है ?[3] उसका तर्क स्वीकार किया गया। यह है उनके पक्ष की जीत। किसे खुशी नहीं होगी ? सभी को होगी।

शताब्दी की सबसे बड़ी उपलब्धि

15.08.1947 को देश का स्वतंत्र होना – शताब्दी की सबसे बड़ी उपलब्धि थी। अजमेर शहर में वैसी दिवाली न कभी पहले मनी होगी न बाद में।[4] जानकर सुखात्मक भाव व्यक्त होते हैं।

देश की मिट्टी बनाम माँ से मोह

अजमेर का एक मुसलमान रंगरेज जो पाकिस्तान चला गया था ? वहाँ उसका मन नहीं लगा। वह वापस भारत आ गया और उसने कहा था – "अपनी मिट्टी को छोड़कर कोई रह सकता है क्या ? अपनी माँ को छोड़कर कोई रह सकता है क्या ?[5] जानकर–सुनकर अपने देश की मिट्टी के प्रति उमड़ा मोह, अपनत्व के भाव से मनप्रफुल्लित हो ही जाता है।

---

1 भंडारी मन्नू – एक कहानी यह भी, पृ.23
2 भंडारी मन्नू – एक कहानी यह भी, पृ.25
3 वहीं, पृ.25
4 वहीं, पृ.26
5 वहीं, पृ.27

चीनी आक्रमण – देश पर संकट

चीनी आक्रमण – आजादी के बाद देश पर आया पहला संकट। कलकत्ता में चाउ एन लाई का भव्य स्वागत हुआ था। हिन्दी चीनी भाई–भाई के नारे लगे थे। पर आघात लगा तो संकट के समय सारा देश एक जुट हो गया जिससे जो बन पड़ा दे रहा था।

औरतों की मीटिंग में सुशीला ने सोने की चारों चूड़ियाँ उतार कर दे दी। रोज कमाकर खाने वाले हाथ रिक्शा वालों ने भी पूरे दिन भर की कमाई दी। महिलाएँ रात–दिन जवानों के लिए स्वेटर बुनती रहती थी।[1] जानकर बहुत अच्छा लगने लगा।

सम्पूर्ण क्रान्ति का आन्दोलन

मन्नू भंडारी लिखती है – "जय प्रकाश नारायण का सम्पूर्ण क्रान्ति का आन्दोलन जोर पकड़ता जा रहा था। इन्दिरा गांधी व संजय के लिए भारी पड़ रहा था। इलाहबाद हाइकोर्ट के फैसले ने रायबरेली से इंदिरा गांधी का चुनाव रद्द कर दिया तो 25–26 जून की रात इमरजेन्सी लगा दी। कई नेताओं को गिरफ्तार कर जेलों में बंद कर दिया व आपातकाल की घोषणा हुई।[2] कुलमिलाकर दुःखद प्रकरण ही रहा।

भारी संख्या में गिरफ्तारियाँ, सरकार का दमन चक्र चला, आपातकाल में सबके पर कतर दिए गए, एक छोटा सा जत्था इंदिरा गांधी के दरबार में अपना स्वर मिलाने के लिए भी पहुँचा था। इन्दिरा जी के समर्थन में आप्त वचन सुनाई देते थे। अखबारों पर सेंसर का शिकंजा कसा हुआ था।[3] गाड़िया समय पर चलने लगी थी, दफ्तरों में अफसर–बाबू सीट पर समय पर हाजिर, हड़तालें खत्म सी हो गई विरोधी स्वर सब जेलों में बंद थे। जब इंदिरा गांधी आश्वस्त हो गई कि – जनता में न तो कोई विरोध है न विद्रोह तो पूरे उन्नीस महीनों के बाद – आपातकाल समाप्त करने की घोषणा की गई। जनतंत्र पर अपनी आस्था का ठप्पा लगाने चुनाव भी घोषित किए गए। इन्दिरा गांधी–संजय गांधी, सारे कांग्रेसी नेता हार गए और आजादी के बाद से ही गहरी जड़ जमाए बैठी एक छत्र राज्य करती कांग्रेस का तख्ता पलट गया।[4] राजेन्द्र यादव ने डिपार्टमेंट ऑफ कल्चर की ओर से मिली फैलोशिप (तीन हजार रूपये महीने) व मन्नू ने

---

1 वहीं, पृ.70
2 वहीं, पृ.132
3 वहीं, पृ.133
4 वहीं, पृ.135

पद्मश्री पुरस्कार के प्रस्ताव अस्वीकार कर दिए।[1] मन्नू को रघुवीर सहाय – दिनमान पत्रिका का घुटने टेकना, जे.पी. आन्दोलन मे लाठी चार्ज होना अच्छा नहीं लगा था तथा धर्मवीर भारती की कविता मुनादी अच्छी लगी थी।[2] सन् 1977 में कांग्रेस की पराजय और उसका सताच्युत होना, जनता पार्टी का सत्तासीन होना, कांग्रेस विरोधी पार्टियों का जनता पार्टी बनाना, उसमें कांग्रेस के कई दिग्गज नेता भी आकर मिल गए। जगजीवन राम जैसे दिग्गज नेता भी जनता पार्टी में मिले तो जनता के लिए उत्सव जैसा माहौल था।[3] युवा वर्ग में आक्रोश का भाव था –

- युवाओं में निराशा में लिपटा आक्रोश था
- हमने अपनी पढ़ाई–लिखाई छोड़ी,
- अपना कैरियर चौपट किया। नौकरियाँ छोड़कर अपने और अपने परिवार का भविष्य मिट्टी में मिलाया।
- इन लोगों को सत्ता में लाने के लिए, हमने अपने को बर्बाद कर दिया।
- जब हम अपनी कोई मांग/समस्या लेकर जाते हैं। तो इनके पास हमारे मिलने तक का समय नहीं है।
- सत्ता में बैठकर आज यह सरकार जो कर रही है क्या यही सब करने के लिए इन्हें सत्ता में बिठाया था।[4]

यह विवरण दुःखात्मक संवेदना की अभिव्यक्ति है।

क्रोध और घृणा से लिपटी बर्बरता

31.10.1984 को इंदिरा गांधी की हत्या हो गई। ''ऑपरेशन ब्ल्यू स्टार'' के बाद माहौल अच्छा नहीं रहा, भिंडरा वाला को इंदिरा गांधी ने ही खड़ा किया था। त्रिलोकपुरी में खून से सने, अधजले लोग, मारकाट, अजीब विडम्बना, दहशत भरे चेहरे, किस लिए ? चेहरे पर क्रोध और घृणा से लिपटी अजीब बर्बरता फैल गई।

मन्नू को सरदार से सुनना पड़ा – "अरे किस बाप की आँखों के सामने, उसके तीन–तीन जवान बेटों को साफों से बाँधकर जिन्दा जला दिया गया, उसे तुम्हारी चाय

1 वहीं, पृ.134–135
2 वहीं, पृ.136–137
3 वहीं, पृ.139
4 वहीं, पृ.139–140

सुकून देगी।" चेहरे पर न कोई दहशत, न दुख का भाव, वही पथराया चेहरा। उस पथराए चेहरे ने मुझे (मन्नु को भी) पथरा बना दिया।"[1]

सरदारों का आक्रोश दुःखद है – "तुम्ही बताओ दिल्ली कितनी बार हम उजड़ेंगे और कितनी बार बसेंगे। एक बार पंजाब से लुट पिट कर आया था, तब ये बच्चे छोटे–छोटे थे, उस समय मेरी बाहों में जोर था, खूब मेहनत मजदूरी की, बच्चों को पढ़ाया–लिखाया, शादी–ब्याह किए। काम धन्धें से लगाया पर अब ? आज तुम तीन बेवाओं और उनके छोटे–छोटे बच्चों को कौन पालेगा ?" न उसकी आँखों में कोई आसूँ था, न चेहरे पर कोई दहशत, सिर्फ एक प्रश्न था। उसका पूरा वजूद ही एक प्रश्न में बदल गया था।[2] इस प्रकार – मन्नू भंडारी की यह आत्मकथात्मक औपन्यासिक कृति राजनीति गलियारों की यात्रा कराते हुए सुखद–दुःखद अनुभूतियां कराती है।

3. धार्मिक जीवन से सम्बन्धित :

4.3.1 नीलकंठी ब्रज – इंदिरा गोस्वामी

नीलकंठी ब्रज इंदिरा गोस्वामी का उपन्यास जो विधवाओं की दारूण कथा बताकर दुःख उपजाता है। इन्दिरा गोस्वामी का यह उपन्यास "नीलकंठी ब्रज"[3] नारकीय जीवन जी रही हजारों युवा–वृद्ध विधवाओं के यातनामयी जीवन का मर्म–स्पर्शी चित्रण है। इसमें वृन्दावन के मंदिरों, उत्सवों, त्योहारों, पंड़ों–पंड़ितों, बाबाओं, यमुना तट के घाटों, परिक्रमाओं, रथ यात्राओं, पौराणिक ऐतिहासिक स्थलों, राधेस्वामी विधवाओं की गरीबी, भूख और दैहिक शोषण का विवरण है।[4] जिसे जानकर दुःख उपजता है।

उपन्यास की नायिका – सौदामिनी–युवा विधवा, ईसाई युवक के प्रेम पाश में बँधी, माता–पिता असहमत, वृन्दावन लाए, लेकिन क्या प्रेम को भूला पाना इतना आसान ? देह की अपनी आवश्यकताएँ हैं। पिता को कठोर वचन सुनाती, पंडे चरण बिहारी से पूछती है – क्या उसे देख मन में प्यार करने की इच्छा नहीं होती ? उपन्यासकार लेखिका का कथन विचारणीय है – "स्त्री की बदनामी एक ऐसे शिलालेख के समान है, जिसके जमीदोज होने पर भी लोग उसे बार–बार पढ़ने की कोशिश करते हैं।"[5] लेखिका ने धार्मिक परिवेश से जुड़े–मंदिरों में चढ़ावे के रूप में धन, वस्त्र, अन्न और आभूषणों को

1 वहीं, पृ.158–160
2 वहीं, पृ.160
3 भारतीय ज्ञानपीठ – नई दिल्ली, 2010, 140/–
4 नागर सूर्यकान्त – विधवाओं की दारूण कथा (समीक्षा) समकालीन भारतीय साहित्य, अंक 159, जनवरी–फरवरी 2012, पृ.190
5 वहीं, पृ.191

पंडितों–पुजारियों द्वारा बाजार में बेचने, मंदिरों को कुप्रबन्ध, पुजारियों के कदाचार को तल्खी से उजागर किया है जिसे जानकर दुःखद अनुभूतियाँ होती है। यह उपन्यास दर्शाता है कि कंकाल हो आई, अंधेरी कोठरियों में रहने को विवश, बूढ़ी–बीमार विधवाएँ, फटे चिथड़ों में लिपटी भीख माँगती, मंदिरों में भटकती है।

- उन्हें अपने अंतिम संस्कार की चिन्ता होती है।
- वे पाई–पाई जोड़कर कुछ रकम इकट्ठी करती है।
- दाह संस्कार करवाने वाले दलाल उस धन पर भी आँख गड़ाए रहते हैं। मृत देह पर छोटा–मोटा आभूषण–सोने में मढ़ा दाँत तक भी निकाल लेते हैं।
- युवा विधवाएँ पंडों, पुजारियों, लंपट लोगों से देह शोषण की शिकार होती है। उनका श्रम व शरीर दोनों से शोषण होता है।

4.3.2 अमावस की रात – उषा यादव

अमावस की रात – उषा यादव का उपन्यास जो धार्मिकता के नाम पर ढोंगी तांत्रिक का भंड़ाफोड़ कर सीख देता है।

यह उपन्यास – "अमावस की रात (उषा यादव)"[1] एक लोभी तांत्रिक की कथा है। जो समय से पहले धनवान होना चाहता है। अन्य व्यक्तियों का अनिष्ट कर अपने बच्चों के भाग्य को उज्ज्वल बनाना चाहता है।

इस उपन्यास के केन्द्र में एक ब्राह्मण परिवार है। पंडित श्याम सुन्दर व उसकी पत्नी मन्नों है। पंडित तंत्र विद्या जानता है। रानी के सहारे अनपढ़ लोगों पर अपनी धाक जमाता है। अशिक्षित जनता उसके प्रभाव में आ जाती है। वे स्वार्थवश लोगों की हत्या करने से भी नहीं चूकते।

पंडित अपने पिता की भी हत्या कर देता है। लेखिका ने शिक्षा के महत्व को व्यक्त किया है।[2] गरिमा – स्त्री पात्र के माध्यम से लेखिका ने स्पष्ट किया है कि मनुष्य में मानवीय गुण ही उसका रक्षाकवच होते हैं –

- गरिमा पढ़ी लिखी कामकाजी महिला है।

---

1 किताबघर, नई दिल्ली, 2007, 300/–

2 त्रिपाठी विजय नारायण मणि – अमावस की रात (समीक्षा) समकालीन साहित्य, अंक 144, जुलाई–अगस्त, 2009, पृ.207–209

- उसके परिवार के लोग शिक्षित है। वे तंत्र मंत्र जादू टोने में विश्वास नहीं करते।
- गरिमा मानवीय गुणों से भी समृद्ध है।
- अपने आर्य समाजी संस्कारों के कारण वह किसी रूढ़ि आडम्बर में नहीं पड़ती।
- किसी चीज में शक नहीं करती।
- किसी बात की छानबीन नहीं करती।
- वह सड़क पर एक बच्चे की दुर्घटना होने पर अस्पताल ले जाकर बीस हजार रूपये खर्च कर देती है।
- वह घर के सामने पेड़ टोने–टोटके के सामानों को देखकर कहती है – तंत्र–मंत्र का मुझे भय नहीं। टूटा चूल्हा–चक्की फैंक कर हमारा कोई अहित नहीं कर सकता।

लेखिका का कथन – "चिंता अगर चिता बन जाए तो आदमी को खाक बना देती है। कैसी भी चिंता हो, आदमी को अपना विवेक नहीं छोड़ना चाहिए।" हमें सीख देकर सुखद अहसास कराता है।

गरिमा का विपरीत परिस्थितियों में धैर्य से काम लेना उसे सुरक्षित रखता है तथा श्याम सुन्दर का विवेक खोना पूरे परिवार की मृत्यु के रूप में सामने आता है।

समाहार

महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में जब स्त्री–पारम्परिक रूढ़ियों को तोड़ने के लिए खड़ी होती है तो उसका संघर्ष रंग लाता है ये स्त्रियां तोड़ती है उस ढाँचें को जो उसके विकास में बाधक है। यह ढाँचा पारिवारिक, राजनैतिक और धार्मिक किसी भी प्रकार का हो सकता है।

सारे संघर्षों तकलीफों को सहते हुए भी वह अपना भविष्य संवारती है। सड़ी गली सामाजिक और आर्थिक अवरोधों को हटाकर अपने जीवन के उपादान खोजती है। उनका साहस और स्वाभिमान देखकर सम्मान सुखद अनुभूतियां होना स्वाभाविक ही होता है।

विरोध से मुकाबला करती, शिक्षित होकर खुद आर्थिक स्वावलम्बन का आधार बनाती है तो कहीं जब यंत्रणा–शोषण को झेलती है तो दुःख के भाव गहन होने लगते हैं।

महिला उपन्यासकारों ने जीवन के संघर्षों और उलझनों को उभारते हुए स्त्री का राह बनाना सराहा है। जीवन में संघर्ष बहुरंगी है। असामान्य परिवेश से साक्षात्कार होता है। क्यों पुरुष आबादी का आधा सच समझ नहीं पाता है ? क्यों अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए संघर्ष करने वाली स्त्री को मान नहीं दे पाता ? औरत ने अपने भविष्य को थामकर अपनी मुक्ति की घोषणा की है। समाज पर पड़ने वाले प्रभाव को देखा परखा है। हर औरत घर–परिवार समाज को सजाने, सँवारने, सहेजने की कोशिशें तो करती है लेकिन कितनी सफल हो पाती है ? कितनी सुरक्षित रहती है ? यह स्थिति विचारणीय रही है।

पराश्रित पीढ़ी की पराजित होती स्त्री भी आने वाली पीढ़ी को सजग रहने, अपने पैरों पर खड़े होने का संदेश देती है।

क्या विश्व बाजार में स्त्री सुरक्षित रह पाई ? वस्तु में तब्दील होती देह का कितना मान–सम्मान ? छीना जाता स्त्रीत्व, देह पर निशान, क्या संदेश देते हैं ? प्रश्न यह है कि क्यों स्त्री को समाज हाशिए पर धकेल देता है ?

मन्नू भंडारी राजनीतिक परिदृश्य से जुड़कर अपनी पहचान बनाती है तो अनित्य की मृदुला गर्ग स्त्री अस्मिता को गर्व का अहसास कराती है। नूर जहीर औरत की आजादी के सवालों की गुत्थियाँ सुलझाने की कोशिशें अपने पात्रों के माध्यम से करती है तो अच्छा लगता है। हर हाल में औरत की आजादी का सपना पूरा होना चाहिए। औरत को अमीरों के दुनिया में रहकर भी नाइंसाफी से लड़ना होगा खुद को बचाना होगा। केशरमाँ प्रतिरोध करे, डटी रहे तभी बचेगा स्त्रीत्व। ज्योत्स्ना मिलन यह जानती है और व्यक्त भी करती है। प्रेम में छली जाने पर भी नहीं हटती है निर्मला भुराड़िया ने रजस्वला की मनोदशा को देखा परखा है। कोई भी औरत लड़कियाँ संतान रूप में दहेज के साथ लेकर ससुराल नहीं आती है फिर क्यों ? सहन करने पड़ते है ताने, यंत्रणाएँ और शोषण के क्षण ? आस्था और विश्वास के बावजूद स्त्री का मरना दुःखद है।

चाक की संगीता जैसी स्त्री सभी नहीं होती है रंजीत के साथ खट्टे–मीठे अनुभवों से गुजरते हुए शिक्षा के लोक में श्रीधर के माध्यम से प्रवेश कर जीवन को सुखद बनाना

चाहती है। दुक्खम–सुक्खम की पृष्ठभूमि में सोचना पड़ेगा कि लड़की का जन्म क्यों मातममय हो जाता है ?

ममता कालिया ने साहित्य कला संस्कृति में पनपते भ्रष्टाचार को समाप्त करने की आकांक्षा व्यक्त कर समाज का शोधन करने की भावनाएं व्यक्त की है नासिरा शर्मा शाल्मली के माध्यम से नारी मुक्ति की पहल करने में पीछे नहीं रहती। पिता से सवाल–जवाब पति से टक्कर लेने की हिम्मत कभी न कभी तो स्त्री को ही करनी होगी।

इन्दिरा गोस्वामी ने वृंदावन के अन्दर विधवाओं की दुर्गति तथा धार्मिक पाखंड का पर्दाफाश किया है यही स्थिति अमावस की रात में भी तांत्रिक के माध्यम से उजागर होती है।

अनित्य में स्त्री समझौता वादी अवसर वादी लोगों से प्रेरणा नहीं ले पाती। उनकी प्रेरणा में क्रान्ति रचती बसती है। जिसका स्त्री विमर्श की दृष्टि से कोई विकल्प नहीं है।

समाज में चाँदी का जूता कब तक चलता छलता रहेगा ? यह प्रश्न चिन्ता का है चिन्तन के लिए है।

इस प्रकार महिला उपन्यासकारों ने स्त्री के तेज को, उसकी ऊर्जा को, शिक्षित बुद्धि को, संघर्ष की चेतना को, मुक्ति की कामना को पूरी रचनात्मकता के साथ स्वीकार ही नहीं किया अपितु महत्ता भी प्रदान की है जो समाज में परिवर्तन की राहें खोदकर आगे बढ़ने का सुखद संकेत देती है।

किन्नर प्रकरण दुःखद है करूणा जनक है। फिर भी स्त्री ने अपने दम पर अपनी राहें खुद गढ़ी है जो सुखद है।

पंचम् अध्याय

महिला उपन्यासकारों के कथा साहित्य में स्त्री मुक्ति के लिए संघर्ष

1. प्रमुख महिला कथाकार एवं कहानी कृतित्व स्त्री मुक्ति के संदर्भ में
2. आर्थिक मुक्ति के लिए संघर्ष
3. सामाजिक रूढ़ियों से मुक्ति के लिए संघर्ष
4. सांस्कृतिक क्षेत्र में मुक्ति के लिए संघर्ष
5. शैक्षिक क्षेत्र में पदार्पण एवं अधुनातन
6. वैचारिक संघर्ष
7. समाहार

पंचम् अध्याय

महिला उपन्यासकारों के कथा साहित्य में स्त्री मुक्ति के लिए संघर्ष

5.1 प्रमुख महिला कथाकार एवं कहानी कृतित्व–स्त्री मुक्ति के संदर्भ में

महिला उपन्यासकारों ने एक कहानीकार के रूप में कथा–साहित्य में अपनी गहरी पैठ स्थापित की है। इन लेखिकाओं की कहानियों में स्त्री जीवन के विविध पक्षों का उद्‌घाटन हुआ है। ये कहानियाँ स्वातंत्र्योत्तर भारत की नई पीढ़ी के सामने आज की जिंदगी की अनगढ़ता, क्रूरता, विद्रूपता, भ्रष्टाचार, अनैतिकता, दाम्पत्य जीवन में बनते–बिगड़ते रिश्तों को चित्रित करती है।

अधिकांश लेखिकाओं के कथा संसार में नारी जीवन ही केन्द्र में रहा है जिसमें वर्तमान जीवन की भयावहता, संघर्षपरायणता को यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया गया है। महिला लेखिकाओं की कहानियों का प्रमुख विषय – पारिवारिक सम्बन्धों का वर्तमान रूप एवं नारी मुक्ति के संदर्भ–स्त्री विमर्श के परिप्रेक्ष्य में ही रहा है।

प्रमुख महिला कथाकारों में – ममता कालिया, मृदुला गर्ग, सुधा अरोड़ा, मालती जोशी, जय श्रीराय, मनीषा कुलश्रेष्ठ, गीताजंलीश्री, चित्रा मुद्‌गल, सुधा ओम ढींगरा, इन्दिरा गोस्वामी, तुलसी देवी तिवारी, मुक्ता, नीलाक्षी सिंह अल्पना मिश्र इत्यादि रही है।

इन कथाकारों की प्रतिनिधि कहानियों की चर्चित कृतियां इस प्रकार हैः–

क्र.सं.	कहानीकार	प्रतिनिधि कहानी संग्रह	प्रकाशन वर्ष	प्रकाशक
1	ममता कालिया	छुटकारा	1969	
		एक अद्‌द औरत	1975	
		सीट नम्बर छह	1976	
		प्रतिदिन	1983	
		उसका यौवन	1985	

		जाँच अभी जारी है	1989	
		चर्चित कहानियाँ	1995	
		बोलने वाली औरत	1998	
		मुखौटा	2003	
		निर्मोही	2004	
		थिएटर रोड के कौवे	2006	
		पच्चीस साल की लड़की	2006	
		दस प्रतिनिधि कहानियाँ	2008	
2	महाश्वेता देवी	पचास कहानियाँ	2015	राधा कृष्ण प्रकाशन
3	अमृता प्रीतम	सात सौ बीस कदम	2000	भारतीय ज्ञानपीठ
4	सूर्यबाला	गौरा गुणवंती	2005	ज्ञान पीठ
5	रोहिणी अग्रवाल	आओ माँ हम परी हो जाएँ	2012	सामयिक प्रकाशन
6	मृदुला गर्ग	संगति–विसंगति (दो खंड) 1973–2003 तक की सम्पूर्ण कहानियाँ		10
		संकलित कहानियाँ	2011	नेशनल बुक ट्रस्ट
		प्रतिनिधि कहानियाँ	2013	राजकमल पेपर बैक्स
		हर हाल बेगाने	2014	राजपाल
7	मालती जोशी	जीने की राह		साक्षी प्रकाशन दिल्ली
		पूजा के फूल		

		विरासत		
		मन ना भये दस बीस	2013	
		बाबुल का घर		
		आनन्दी		
		अपने आँगन की छाँव		
		एक और देवदास		
		विश्वास गाथा		
8	जय श्रीराय	तुम्हें छू लूं जरा	2012	सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली 300
9	मनीषा कुलश्रेष्ठ	कठपुतलियाँ, गन्धर्व गाथा	2012	सामयिक प्रकाशन
10	गीतांजलि श्री	यहाँ हाथी रहते है	2012	राजकमल प्रकाशन
11	चित्रा मृद्गल	बयान		भारतीय ज्ञानपीठ
12	सुधा ओम ढींगरा	सब कुछ और था	2017	शिवना प्रकाशन सिहोर
13	इन्दिरा गोस्वामी	लाल नदी	2004	(भारतीय ज्ञानपीठ)
14	तुलसी देवी तिवारी	सदर बाजार	2008	वैभव प्रकाशन, छतीसगढ़,
15	मुक्ता	सीढ़ियों का बाजार	2006	भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
16	नीलाक्षी सिंह	परिंदे का इंतजार	2005	–"–
17	अल्पना मिश्र	भीतर का वक्त	2006	–"–

5.1.1 ममता कालिया

ममता कालिया ने – **"एक अद्द औरत"** में 6 कहानियाँ पाठकों को सौंपी है। इन कहानियों में युवा वर्ग की मानसिकता कॉलेज के दिनों में हड़ताल को मनोरंजन बनाने वाले लड़कों के गिरते नैतिक मूल्य, पारिवारिक जीवन की प्रताड़नाएं, प्रताड़ित नारी की स्थिति, बेरोजगार महिला की मानसिक उलझनों को उजागर किया है। पति–पत्नी के संबंधों की व्यापकता, भ्रष्ट राजनीति, इत्यादि को लड़के, साक्ष्य वाली, बसंत सिर्फ एक तारीख में महत्व दिया है।

"सीट नम्बर छह" में 13 कहानियाँ है जो नारी जीवन की विभिन्न मनोदशाओं के साथ–साथ पारिवारिक समस्याओं को सूक्ष्मता से प्रदर्शित करती है। प्रेम सम्बन्धों का परिवर्तित रूप, मोह भंग, प्रेम विवाह में असफल दाम्पत्य जीवन, नारी शोषण, अलगाव, दरार, जीवन की वास्तविकता के कटु सत्य एवं यंत्रणा का यथार्थ चित्रण–सीट नम्बर छह, फर्क नहीं, लगभग प्रेमिका, निवेदन, जितना तुम्हारा हूँ, बातचीत बेकार है में मिलता है।"

"प्रतिदिन" की आठों कहानियाँ नारी जीवन से सम्बन्धित है जो मध्यम वर्गीय परिवार का दायरा उपस्थित करती है। घुटन में जीने वाली शिक्षित नारी की छटपटाहट का चित्रण, आर्थिक संघर्षों से जूझती नौकरी पेशा नारी, काली साड़ी, आपकी छोटी लड़की, एक जीनियस की प्रेमकथा, तोहमत आदि में पाई जाती है।

"उसका यौवन" की 13 कहानियाँ – आर्थिक सामाजिक व नैतिक विषयों पर प्रकाश डालती है। कामकाजी नारी का संघर्ष, कुंठा, तनाव, दहेज समस्या, पुरुष का अहंकार और उच्चता बोध, बेरोजगारी से ग्रसित प्रशिक्षित नवयुवकों की मानसिकता का चित्रण, उसका यौवन, नई दुनिया अपने शहर की बत्तियां, आहार, पच्चीस साल की लड़की राजू में किया गया है।

"जाँच अभी जारी है" की 16 कहानियाँ – वर्तमान जीवन के गिरते नैतिक मूल्यों का अंकन करती है। भ्रष्ट अकर्मण्य सरकार, विषम सामाजिक परिस्थितियाँ मूल्यहीनता, वर्तमान व्यवस्था की भयावहता, तनाव, एकाकी संघर्ष–नारी की छटपटाहट उसका

शारीरिक–मानसिक शोषण–सेमिनार, उमस, जाँच अभी जारी है, रजत जयंती में रेखांकित योग्य है।

"चर्चित कहानियाँ" में 19 कहानियाँ है। समाज, घर, परिवार देश की विडम्बनाओं, विषमताओं, अंतर्विरोधों को उजागर करती इन कहानियों में लैला मजनू, माँ सेमिनार आदि खासी चर्चित है।

"बोलने वाली औरत" की 13 कहानियों के केन्द्र में नारी जीवन की वर्तमान समस्याएं, जटिलताएं, धार्मिक आडम्बर, ऊँच नीच का जातीय भेदभाव, बोलने वाली औरत, मेलाव, लकी, खिड़की–रोशनी की मार के माध्यम से उद्घाटित हुआ है।

"मुखौटा" की 18 कहानियाँ – नारी जीवन से साक्षात्कार कराती है। विवाहित–अविवाहित प्रौढ़ नारी, युवक–युवतियों की सम विषम स्थितियाँ, जातिगत समस्याओं में रिश्तों में उपेक्षित व्यवहार को चिरकुमारी, परदेस, एक रंग कर्मी की उदासी, मुखौटा में प्रदर्शित किया गया है।

"निर्मोही" की 17 कहानियाँ – अपने अनुभव की तीव्रता के साथ प्रस्तुत की गई है। वर्तमान जीवन का करुण रुदन, इक्कीसवीं सदी के अमानवीय सत्य, विसंगति और विवाद–निर्मोही, सुलेमान, ऐसा ही था वह दिल्ली, वह मिली थी बस में, व्यक्त हुआ है। "थिएटर रोड के कौवे" की 26 कहानियाँ विषाद के साथ कहीं कुछ खो जाने छूट जाने का अहसास कराती है। उसका जाना, चोरी–सूनी, छोटे गुरु, खुशकिस्मत आदि के केन्द्र में नारी जीवन का यथार्थ ही है।

"पच्चीस साल की लड़की" की 12 कहानियाँ जिनमें – अविवाहित, नौकरी पेशा नारी की समस्याएँ रेखांकित हुई है। विवाह पूर्व का द्वन्द्व–संघर्ष उजागर करती नारी के प्रति लेखिका की सहानुभूति विशेष ध्यान देने योग्य है कौए और कोलकाता, एक अकेला दुख आदि प्रतिनिधि कहानियाँ है।

"दस प्रतिनिधि कहानियाँ" अपने आसपास को लेकर लिखी गई है। दिल्ली, सुलेमान, छुटकारा, पीठ बोहनी में यथार्थ को झूलने, झेलते देखने की अनुभूतियाँ है।

गुस्सा, प्यार, शिकायतें, परेशानियों का अंकन है। लड़कियों का बदलता परिवेश उजागर हुआ है।

इस प्रकार – ममता कालिया ने सभ्य सुशिक्षित, नौकरी पेशा, विवाहित स्त्री के रूप में समाज की कुरूपता का स्पर्श, नारी जीवन के विभिन्न पीड़ादायक यथार्थ को उजागर करने के रूप में किया है।

5.1.2 मृदुला गर्ग

मृदुला गर्ग की कहानियों में – गहरी सामाजिक, संवेदनशीलता, समय और समाज की विडम्बनाएं, प्रकृति–संस्कृति के संकट की पहचान, सच कहने का साहस मिलता है।

भारतीय स्त्री के जीवन से जुड़ा सत्य–बोध, साधारण–असाधारण रूप में, रूपक–प्रतीक, व्यंग्य–विनोद के साथ अनावृत हुआ है इनकी कहानियों में – जिन्दगी को देखने–दिखाने के साथ। स्त्री की पराधीनता पीड़ा, आत्म संघर्ष, सामाजिक संवेदनशीलता, स्वतंत्रता की चिन्ता, चेतना और कोशिश की अभिव्यक्तियाँ खुलकर अभिव्यक्त होती है। पुरुषों के व्यवहार की विसंगतियां, विडम्बनाएं, पाखंडों को भी अनावृत किया गया है। उसमें स्त्री दृष्टि की सक्रियता है।

डैफोडिल जल रहे हैं, वह मैं ही थी, तुक, मेरे देश की मिट्टी, में स्त्री की बेबसी, यातना, अर्न्तद्वन्द की अभिव्यक्ति हुई। डैफोडिल जल रहे हैं में मृत्यु से जिंदगी का, सौन्दर्य से आतंक का, यथार्थ से भ्रम का द्वन्द्व है। जिन्दगी की सुन्दरता में विश्वास है। "वह मैं ही थी" उस औरत की कहानी है जिसका पति एक कस्बे में सीमेंट के कारखाने में मजदूर है। कारखाने में उड़ने वाला सीमेंट हवा में साँस फैलाकर बीमार करता है। न अस्पताल न डॉक्टर। गाँव से आई गर्भवती महिला की चिंता, आशंका, बीमारी, मौत को उजागर करती इस कहानी में हर उस औरत की दारुण व्यथा व्यक्त हुई है जो अपने वर्ग और स्थान से तोड़कर दूसरी जगह फेंक दी जाती है।

मृदुला की कहानियों में वर्णित स्त्री–केवल एक वर्ग, समुदाय या क्षेत्र तक सीमित नहीं रहती। वे अनेक वर्गों, समुदायों, क्षेत्रों की स्त्रियों के जीवन संघर्ष को देखती और दिखाती है। तुक–एक मध्यवर्गीय पत्नी के आत्म–संघर्ष की, वेदना की, बेचैनी की कहानी है। मीरा का पति नरेश बैंक में चीफ एकाउंटेंट है जो महौवाकांक्षी– आत्म मुग्ध है। वह चाहता है पत्नी उसके साथ ताश खेले। ताश के खेल से अनभिज्ञ पत्नी की देह से वह

ताश की तरह खेलता है। विजेता–पराजित का दर्ज भाव क्रूरता का बोध लिए मीरा स्त्री बार–बार मरती है।

"मीरा नाची" के माध्यम से एक स्त्री की स्वतन्त्रता की खोज की गई है। "मेरे देश की मिट्टी अहा" में एक ऐसी औरत को उभारा गया है जो एक ही जीवन में हिंदू और मुसलमान बनती हुई दोनों धर्मों और समाज में स्त्री की दुर्दशा का अनुभव करती है। जब वह हिंदू थी तब उसका नाम लल्ली था और जब मुसलमान बनी तब वह लैला हो गई।

लैला बनते ही निकाह के समय जब उससे उसकी रजामंदी पूछी गई तब वह खुश हुई क्योंकि जब तक वह लल्ली थी तब तक कभी भी किसी ने किसी बात के लिए रजामंदी नहीं पूछी थी। लेकिन लैला की खुशी तब गायब हो गई जब उसे मालूम हुआ कि – उसके शौहर की पहली बीबी मौजूद है। इस कहानी से यह जाहिर होता है कि – औरत चाहे हिन्दू हो चाहे मुसलमान, उसका जीवन अपमान और हिंसा की राहों से ही गुजरता है।

"छत पर दस्तक" कहानी में नलिनी नाम की स्त्री अमेरिका प्रवास में भारतीयों से मिलकर पाती है कि – इस देश में भरा पूरा जवान आदमी मिनट भर में हिन्दुस्तानी से अमेरिकन बन जाता है। माँ–बाप की नागरिकता, सदियों की विरासत, खून और नस्ल, सब धरे रह जाते हैं। आदमी बिना गर्भ में आए बिना मदद या परवरिश, नया जन्म ले लेता है। शरीर का चोला तक नहीं उतारता। उत्तर आधुनिक जीवन का सच – "अकेलेपन और अंधेरे का खौफ राबर्ट और नलिनी को ही नहीं औरों को भी है" में व्यक्त हुआ है।

"शहर के नाम" – स्त्री मुक्ति या स्वतंत्रता की कहानी है। कहानी की नायिका कहती है – "मेरे पैरों मे नाल नहीं ठुकी, मैं खुले मैदान में दौड़ सकती हूँ। अपना रास्ता चुन सकती हूँ। रेस के ट्रेक पर दौड़ना लाजिमी नहीं बना सकता कोई मेरे लिए। मैं आजाद रखूंगी खुद को, उन लोगों के साथ रहने के लिए, जो रेस में शरीक होने लायक नहीं है।" मृदुला गर्ग की प्रतिनिधि कहानियों में "हरि बिन्दी" स्त्री व स्वयं चेतना की कहानी है। जहाँ औरत अपने आपका जश्न स्वयं मना रही है, अपने आपके साथ कितनी कारा विहीन, वर्जना विहीन और तनाव विहीन सार्थकता से लबरेज है। हरी बिन्दी के कन्ट्रास्ट का प्रतीक उसके निजत्व के रदीफ को कायनात से जोड़ उसके अपने होने की तुक को बिठा देता है।

"साठ साल की औरत" – सुरभि घोष, अंदर से सोलहवें साल की हसरतों को जीती हुई युवती, उसकी इक्कीस साल पहले के अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनार में शिरकत करने आए – डॉ. चन्द्रशेखर से मुलाकात होती है। जहाँ वे एक गिरजाघर में घूमने जाते हैं। इमारत की सीढ़ियों को चढ़ते–वर्जनापूर्ण दृष्टिकोण, बाँहे फैलाकर चन्द्र को समेटना, चन्द्र का बच्चे की तरह सीने में दुबक जाना–वर्जनाएँ, परम्पराएँ सब ध्वस्त, देह–विदेह का एकाकार रूप। प्रेम का बहुत ही गहरा चरम दृश्य। व्यक्तिगत प्रेम से उठकर शाश्वत विश्व प्रेम से जुड़ाव है।

"समागम" कहानी की नायिका–अपनी युवा बेटी की संदेहास्पद मृत्यु से मन–शान्ति को तलाशती हरिद्वार की हर की पैड़ी पर बैठी–नौ बरस की उम्र में आजादी की शाम देखते हुए कोई बूढ़ा भीड़ के पैरों तले कुचलकर मरता हुआ कोई उसकी चीख नहीं सुनता। यहाँ गांधी की मृत्यु का प्रतीक बनता है। उन्मादित अंधी भीड़। बूढ़े पिता की गोद में अधेड़ बेटे की मौत, बेटी को याद करते हुए माँ का फूट फूटकर रोना एक विलाप है जो आधी अधूरी आजादी से सह–सम्बन्ध बनाता है। "ग्लेशियर से" की नायिका मिसेज दत्त (शादी से पूर्व–उषा भटनागर), अपने अतीत को वर्तमान में खोजने की चेष्टा करती है। ताजीवास ग्लेशियर नारी की गतिमयता व निरन्तरता का मंथन कराता है, जीवंत अतीत से जुड़ने की कामना है, पर मुक्ति न अतीत में है व वर्तमान में न भविष्य में सिर्फ अपने खुद को वर्तमान में तलाशते हुए जीवन जीते चले जाने में है। यह कहानी छटपटाती, विडम्बना का संत्रास झेलती नारी की कहानी है एवं जीवन को तलाशने, अस्मिता को जीते चले जाने की प्रक्रिया की तलाश भी है।

खुशकिस्मत एक औरत की कहानी – जो पति के साथ बेटे – बहू के पास आती है पति को पुत्र शोक के दबाव के कारण पैरालिसीस का दौरा पड़ता है और बहू के उपेक्षापूर्ण आते ही व्यवहार के चलते वह अपाहिज पति को हवाई जहाज द्वारा लेकर घर लौट आती है। वह दीवाली के दिन पहले भगवान को प्यारा हो जाता है। यहां मृत्यु मुक्ति का दूत बनती है। एकाकी पन की निष्ठुरता महत्वपूर्ण है। इस प्रकार इनकी कहानियाँ उच्च वर्ग की मानसिकता की भी बखिया उधेड़ती, निर्मम व स्वार्थीपन को दर्शाती, नारी के अपने जीवन के निर्णय लेती, स्त्री विमर्श की दृष्टि से विशेष महत्व रखती है।

5.1.3 मालती जोशी

मालती जोशी ने दाम्पत्य व पारिवारिक समस्याओं को उनके लेखन में उभारा है। परम्परा का निर्वाह करते हुए आधुनिकता से समन्वय इनकी विशिष्टता है। इनके लगभग 29 कहानी संग्रह प्रकाशित है जिनमें चर्चित कृतियां – जीने की राह, पूजा के फूल, विरासत, मन ना भये दस बीस, बाबुल का घर, आनन्दी, अपने आँगन की छाँव, एक घर हो सपनों का, महकते रिश्ते, एक और देवदास, विश्वास गाथा इत्यादि है। लड़की की सगाई उसी शहर में होती है तो ससुराल वाले उसके इधर उधर आने जाने पर बंदिशें लगाना चाहते है तब – "मन ना भये दस–बीस" की दीदी कहती है – उनसे कहिएगा, आपके घर पहुंच जाऊँ तब सात तालों में बंद करके रखे, पर अभी से इतनी बंदिशें क्यों ?"[1] पापा भी साफ कह देते हैं – "इस घर में किसी के आने जाने पर प्रतिबंध नहीं है। कम से कम मेरा तो नहीं है। तुम्हारे घर आएगी रेखा, तो तुम अपने साँचे में ढाल लेना।"[2] कमाने वाली औरत अपने पति को समझती है – साधु महाराज।[3] वह स्वयं को पैसा कमाने की मशीन समझती है। कामकाजी औरत की तरह उसकी भी अपनी परेशानियाँ है – गोद के बच्चों तक को छोड़कर जाना।"[4] मालती ने "जिज्जी" के माध्यम से कच्ची उम्र में अक्षम्य अपराध होने, बहुत तेज दवाई से तीन दिन तक मछली की तरह छटपटाने, बदनामी के डर से डॉक्टर को नहीं बुलाने, मौत के मुँह में जाने तथा उसके अपनी मौत नहीं मरकर हत्या होने को व्यक्त किया है।[5] यह हर युवा लड़की को नसीहत है बिना सोचे – समझे कोई कदम नहीं उठाने की।

मालती बताती है कि माँ ही नहीं पिता भी बालकों से पूरा स्नेह रखते हैं – "जानती हो बेटे, तुम लोगों को अकेला छोड़ने का मेरा मन नहीं होता, दुनिया के सभी लोग तो सज्जन नहीं है। तुम लोग अभी कितनी नासमझ हो।"[6]

शिखा–अपनी बहिन रेखा को छद्‌मनाम व आदर्श पति के बारे में बताती है उसमें परम्परा व आधुनिकता का पुट है। "छद्‌मनाम – स्नेहदान, रूप की गरिमा से इतना अभिभूत हो जाएगा कि कभी तुम पर अपना अधिकार नहीं जमा पाएगा। उसके बिना शर्त समर्पण से तुम बहुत जल्दी ऊब जाओगी। खीझ उठोगी। आदर्श पति–जो अपनी पत्नी

---

1 जोशी मालती – मन ना भये दस–बीस, पृ.7–8, साक्षी प्रकाशन दिल्ली 110032, 2013, ISBN-81-86265-57-0
2 वहीं, पृ.8–9
3 वहीं, पृ.11
4 वहीं, पृ.13
5 वहीं, पृ.14
6 वहीं, पृ.15

से हाथ भर ऊँचा हो, उसे सदा अपनी नाक के नीचे रखे, प्यार में हो या तकरार में, उसका पलड़ा सदा भारी रहे। अपने समर्थ कन्धों पर वह पत्नी की सुरक्षा का, सुख–सुविधा का, भरण–पोषण का भार उठा सके।"[1]

रेखा के मौसेरे जेठ व उसकी रूसी पत्नी मास्को से आए थे। वे उसे देखने आने वाले थे इस पर रेखा कहती है – "मेरा अच्छा खासा तमाशा बना रखा है इन लोगों ने। हर तीसरे दिन कोई चला आ रहा है। खानदान न हुआ, मठालिया सल्तनत हो गया।" रेखा का भाई कहता है – "बहुत ऊँची उड़ान भरी है माँ आपने। निभाते–निभाते दम फूल जाएगा।" तो माँ की पीड़ा मुखरित होती है – "उसे किसी भट्टी में फेक दूं ? जिन्दगी भर जलती रहेगी मेरी तरह ?"[2] परिवार की आर्थिक स्थिति की एक झलक 5 रूपये के दो लिफाफे, महीने की 22 तारीख को इतनी रकम भी भारी पड़ रही थी। सारा बजट गड़बड़ाया जा रहा था, पर मजबूरी थी – के माध्यम से व्यक्त होता है।[3] यह कहानी स्त्री प्रेम की अभिव्यक्ति भी है – प्रेम कभी मध्य मार्ग नहीं अपनाता[4] प्रेम अपनी जगह है, करुणा अपनी जगह[5] मैं चुपचाप जलती रहूंगी पर किसी दया की भीख मुझे मंजूर नहीं।[6] मैं अपने प्यार को यथार्थ के कर थपेड़ों से बचाना चाहती हूँ। मेरे मन के तहखाने में इसे सुरक्षित रहने दे।[7]

जब शादी के बाद कोई स्त्री–ससुराल से लम्बे समय पश्चात् पीहर आती है तथा भरपूर स्नेह पाती है तो खुश होना स्वाभाविक लगता है। "नैहर छूटो जाय" में ऐसी ही स्थिति की अभिव्यक्ति इस प्रकार हुई है – "इकलौता भाई मेरी एक–एक इच्छा को पूरी करने के लिए भाग रहा था। दोनों भतीजे अपनी किलकारियों से मेरा मन पुलकित कर रहे थे। रीता मामी तो बेचारी बिछी जा रही थी।"[8] पीहर आकर बचपन की कई बातें माँ–बाप के नहीं रहने पर अधूरी रह जाती है – "जब से माँ नहीं रही, कई बातें अनकही रह गई है। रीता भाभी से तो यह सब कहने में मजा ही नहीं आता। यह बेचारी तो मेरे अतीत के बारे में कल्पना भी नहीं कर सकती।"[9] रज्जो को अपने बचपन का घर देखकर सुख मिलता है तो भाई को दिखाकर। बचपन के लोगों से मिलना– रामू दादा, पंडिताइन

---

1 वहीं, पृ.18
2 वहीं, पृ.19
3 वहीं, पृ.20
4 वहीं, पृ.30
5 वहीं, पृ.31
6 वहीं, पृ.32
7 वहीं, पृ.32
8 वहीं – नैहर घूटो जाय, पृ.35
9 वहीं, पृ.37

मौसी, माथुर चाची इत्यादि ऐसे ही पात्र है।[1] "कन्यादान" कहानी–पारिवारिक बँटवारे को लेकर, बड़े भाई द्वारा छोटे भाई की बच्ची के सम्बन्ध को लेकर कन्यादान के खर्च की चिन्ता को लेकर लिखी गई संवेदनात्मक अच्छी कहानी है।

लड़की की शादी की उम्र को लेकर आधुनिक दृष्टिकोण "आजकल तो पच्चीस साल पहले कोई लड़कियों की शादी की बात सोचता भी नहीं"[2] से व्यक्त होती है। सुम्मी लड़की – अपनी शादी की चिंता को लेकर जब माँ–बाप को परेशान देखती है तो कहती है "माँ तुम्हें कसम है जो तुमने किसी से मेरी शादी के लिए कहा। मैं कुँवारी रह जाऊँगी। तुम मेरे लिए चिंता मत करो।"[3] पिता जो आर्थिक दृष्टि से असहाय है वह दहेज की चिन्ता करते हुए कहता है। "जाकर देख आने से ही सबकुछ हो जाएगा ? और उन लोगों ने मुँह फाड़कर कुछ माँगा तो क्या करूं ? घर लौट आऊँ या नदी में डुबकी लगा जाऊँ ?"[4] माँ के रूप में एक स्त्री (पत्नी) बेटी के विवाह को लेकर चिन्तित होते हुए सोचने को विवश हो जाती है –

- क्या पाप किया था मैंने जो जिन्दगी भर इस अकर्मण्य आदमी के पल्ले बँध गई थी ?
- गरीबी से मुझे डर नहीं लगता। अपने पति का साथ हो तो झोंपड़ी भी अच्छी लगती है। नमक रोटी में भी स्वाद मिलता है।
- दसवीं तक पढ़ी हुई थी मैं। गृहस्थी का बोझ उठाने के लिए नौकरी भी कर सकती थी मैं।
- दु:ख का बोझ अगर बाँट लिया जाए तो इतना भारी भी नहीं लगता।
- इन्होंने जिंदगी भर दूसरों को कोसा ही है। दद्दू को उन्होंने ठग लिया, मेरे आते ही लक्ष्मी उनसे रूठ गई, बच्चों को वे अपने साथ भूख और बीमारी के अलावा कुछ नहीं लाए।
- जीवन में एक तो ऐसा काम करके दिखाते कि मैं गर्व से सिर उठाकर चलती।[5] शादी–ब्याह बातों से नहीं होते "सिर्फ पैसे की तंगी के कारण लड़की को ज्यादा दिन तक घर में बिठाकर तो नहीं रख सकते।

1 वहीं, पृ.38
2 वहीं – कन्यादान, पृ.41
3 वहीं, पृ.45
4 वहीं, पृ.48
5 वहीं, पृ.49

- अगर तुम सोचते हो कि कोई नारियल सुपारी के साथ तुम्हारी बेटी को ब्याह कर ले जाएगा, तो भइये हिन्दुस्तान में अभी पचासों साल तक वह दिन नहीं आएगा।"[1]

इस प्रकार यह कहानी कन्यादान में दहेज की समस्या को लेकर लिखी गई आर्थिक विश्लेषण करती मध्यम वर्ग की मजबूरियों पर केन्द्रित अच्छी कहानी है। "घर" कहानी में स्त्री प्रवासी पति के कारण विरहिणी की पीड़ा भुगतती है – बच्चा माँ की गोद में दुबकते हुए पूछता है – पापा कब आएंगे मम्मी ?

क्या पता कब आएंगे ? मैं तो इतना बोर हो गई हूं। कहीं चलो न मम्मी। कहाँ चलेंगे बेटा ? स्वर हताश था।[2] "उफान" कहानी में विवाह पूर्व सम्बन्धों का देश है। माँजी हरीश को बताती है। छाया का कॉलेज के किसी लड़के से प्रेम हो गया था। दोनों ने भागने की भी योजना बना ली थी। छाया तो स्टेशन पर पहुँच भी गई थी पर लड़का ऐन मौके पर हिम्मत हार गया और समय रहते छाया को घर लौटाया जा सका था। तभी न इतनी दूर जाके ब्याही है लड़की।[3] हरीश साफ–साफ कहता है। "छाया ने ही खुद पत्र लिखकर मुझे सारी बातें बताई थी। मैं तो उनकी ईमानदारी का कायल हूँ। इस अभागे देश की लड़की के लिए मैं सोचता हूँ यह बहुत बड़ी बात है। यह भी सोचो अम्मा, कोई डरपोक व्यक्ति अगर उसे समय पर धोखा दे गया तो इसमें उसका क्या दोष ? किसी और की नालायकी की सजा वह क्यों उठाए?

यहाँ पर हरीश पुरुष होकर भी स्त्री के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखता है। जब कि हरीश की माँ–ही हरीश की बहू छाया की दुश्मन होती जाती है। वह – लड़के से कहती है – "बस तू ही तो रह गया था, न्याय करने के लिए। धन्य है रे लड़के ?" हरीश समझदारी से काम लेता है – और कहता है – चिन्ता मत करो अम्मा। जब तक तुम नहीं कहोगी, मैं उसे यहाँ नहीं लाऊँगा। तुमने मेरे लिए जिन्दगी में बहुत दुःख उठाए हैं। अब यह एक और दुःख अनचाही बहू के साथ रहने का दुःख, मैं तुम्हें नहीं दूँगा।

माँ सोचती रही कुलक्षणी लड़की के लिए लड़का उसका पराया हो गया। वह मुँह से कुछ कहता नहीं, उन्हें किसी तरह शिकायत का मौका नहीं देता। उनकी सुख सुविधा का ख्याल रखता है। हारी–बीमारी में सेवा टहल में कोई कसर उठाकर नहीं रखता है। व्रत उपवास पर फल–फूल ले आता है तीज त्योहारों पर्वों पर मिठाई, दान दक्षिणा का प्रबन्ध करना नहीं भूलता पर माँ होकर भी वह क्या इतना नहीं समझती कि वह भीतर ही

---

1 वहीं, पृ.50
2 वहीं, पृ.56 (घर)
3 वहीं – उफान, पृ.61

भीतर उनसे कह गया है।[1] कभी–कभी माँ सोचती है। "लगता है सारा शेष, सारा अभिमान ताक पर रखकर कह दें, जा, ले आ बहू को। मेरा क्या है ? एक कोने में पड़ी रहूँगी ठाकुर जी को लेकर। तुम राजा रानी आराम से रहो।"[2]

इसी कहानी की एक और स्त्री पात्र कान्ता है वह बड़े घर की बेटी होकर नौकरी करना चाहती है। उसका पति तीन साल के लिए अमेरिका गया है। वह पीहर वाले गाँव में नौकरी न करके कहीं बाहर चाहती है। लड़की का मेहमान की तरह पीहर में आना ही ठीक रहता है। उसकी माँ कहती है – "तू तो कल अपने घर चली जाएगी, मुझे तो इन्हीं बहुओं से निर्वाह करना है। मैं क्यों बुरी बनूं ? कान्ता की अपनी पीड़ाएँ है – मेरे बच्चों के हिस्से में वह काढा आता है चाय का ससुराल में ही रह जाती तो अच्छा था। इतनी बड़ी नाक ले आई थी, अब किस मुँह से जाऊँ ?[3]

यह कहानी पत्नी – माँ – बेटी के पीहर ससुराल में बनते बिगड़ते रिश्तों की संवेदनात्मक अच्छी एवं प्रभावी कहानी है। "यथार्थ से आगे" कहानी में प्रेम विवाह का विषाद जन्म वातावरण अंकित है – "हम लोग–सामाजिक–मानसिक किसी भी धरातल पर समकक्ष नहीं थे। केवल प्रेम का क्षणिक आवेग ही हमें बाँधे हुए था। सबका विरोध मोल लेकर जिस नींव पर हमने दाम्पत्य की नींव डाली थी, शादी के तुरन्त बाद ही वह घुसने लगी। अपने परिवार का, परिवेश का, विछोह–दोनों को ही सहन न हो सका।

प्रेम का पहला उफान खत्म होते ही, गिद्दों की तरह, एक–दूसरे की कमजोरियों को, घावों को नापने लगे। बबलू के जन्म से भी इस खाई को भरा नहीं जा सकता था।[4] यह कहानी पति–पत्नी, पिता–पुत्र के बीच पसरते अन्तराल को भी प्रकट करती है।

"उसने नहीं कहा" कहानी में प्रमोद के पिता – क्लर्क से सेवा निवृत – पेशेवर जो अपना समय गुजारने के लिए हम उम्र लोगों के साथ समय बिताते हैं, घर पर चाय नाश्ता कराते हैं। जिसे प्रमोद की बहू शोभा पसंद नहीं करती। बाबूजी को उनकी पत्नी की यादें आ जाती है – "मेरे घर में तो कोई लेडी थी ही नहीं। एक सीधी सादी घरेलू औरत थी। इसलिए नहीं जानता था कि परेशानी क्या होती है ? अच्छा किया बेटे तुमने बता दिया।"[5]

बाबूजी अपनी पत्नी की यादों को ताजा करते हुए अपने बेटे से कह ही देते हैं – "मैं जानता हूँ कि बेटे, मेरी गृहस्थी एक मामूली से क्लर्क की गृहस्थी थी पर तुम्हारी

---

1 वहीं, पृ.62
2 वहीं, पृ.63
3 वहीं – यथार्थ से आगे, पृ.70
4 वहीं, पृ.62
5 वहीं – उसने नहीं कहा, पृ.79

माँ ने राजा रईसों की सी शान दे दी थी। साक्षात् लक्ष्मी का रूप थी वह। मुझे मालूम है कि उसके लिए रोज–रोज नई साड़ियाँ मैं नहीं जुटा सका। पर घर आई हर बहन – बेटी नई चूनर के साथ ही विदा हुई है। अपनी जिन्दगी चाहे उसने एक ऊनी कपड़े में गुजार दी पर तुम्हारे चाचा लोग शादी होने तक उसी के हाथ के स्वेटर पहनते रहे। घर में हम लोग चाहे जैसा भी खाते–पहनते रहे हों, पर आने वाला मेहमान तृप्त होकर ही लौटा है। लोग गृहिणी का मन देखकर ही देहरी चढ़ते हैं। नहीं तो क्या चाय होटलों में नहीं मिलती ?[1]

इस कहानी में नारी के त्यागमयी स्वरूप की सराहना की गई है। शोभायात्रा व पुनरागमनामय् अपेक्षाकृत लक्ष्मी (40 पृष्ठों की) कहानियाँ है। इस प्रकार मालती जोशी की कहानियों में स्त्री जीवन की विभिन्न स्थितियों, मनोदशाओं, विडम्बनाओं, यंत्रणाओं का सूक्ष्म चित्रण हुआ है। दाम्पत्य भाव की कई परतें इनकी कहानियों में उधड़ती चली जाती है। नारी तू एक तेरे रूप अनेक काली स्थितियाँ इनकी प्रमुख विशेषता रही है।

5.1.4 महाश्वेता देवी

महाश्वेता देवी की पचास कहानियाँ – राधा कृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली से 2015 में (दो खंडों में) प्रकाशित है। प्रत्येक खंड का मूल्य 750 रूपए है। दीवाना, खोईमाला और ठाकुर वट की कहानी, शिकार, तत्काल–बाढ़, साँझ सकाल की माँ में नारी मन की पीड़ा, प्रेम के अधिकार से उसे वंचित करना पुरुष और समाज द्वारा अनवरत उस पर अत्याचार करना, प्रमुखता से व्यक्त हुआ है।

दीवान, खोईमाला और ठाकुर वट की कहानी में ब्राह्मण कन्या खोईमाला व एक मांझी पुत्र गोलक का निर्दोष प्रेम है। दोनों प्रेम को एक दूसरे के सामने व्यक्त नहीं कर पाते। खोईमाला का विवाह, उसके लोभी नाना जो संवेदनहीन संन्यासी है, एक वृद्ध के साथ छह वर्ष की आयु में करवा देते हैं। उसका पति उसे कभी अपने यहाँ नहीं ले जाता। जब वह मरणासन्न होता है तभी उसे सेवा–टहल के लिए एक दलाल पुरोहित के माध्यम से बुलवा लेता है। उसकी माँ उसे भेजना नहीं चाहती, पर उसे भेजना पड़ता है। वृद्ध की मृत्यु पर रिश्तेदार खोईमाला को उसकी चिता के साथ जिंदा जलाकर उसे सती का पुण्य देना चाहते हैं। वह कहती है मैंने गोलक के अलावा कभी किसी पुरुष के बारे में सोचा ही नहीं है। वह दरवाजा खोलकर गोलक की तलाश में निकल पड़ती है।

1 वहीं, पृ.80

संयोगवश गोलक उसे लेने आ जाता है। गोलक की नाव पर खोईमाला बैठकर उससे कहती है "चलो दूर देश में चलें, वहीं सुख से रहेंगे। गोलक व खोईमाला गाँव की सीमा पर पहुँच कर नाव को छोड़ देते हैं, नाव उलट जाती है, दोनों बहने लगते हैं फिर गरीबी के मारे, गाँव की लड़कियों को जाल में फँसाकर बंजारिनों द्वारा हाट में बेच देने और संन्यासी बने व्यक्ति की संवेदनहीनता प्रकट होती है।

महाश्वेता देवी – आराम कुर्सी की लेखिका नहीं है। जीवन की कीचड़ माटी में आपादमस्तक निमग्न रचनाकार है। वे अपनी कहानियों में समाज रूपी शव की चीरफाड़ करती है। आदिवासियों, अन्य पतित समाज पर लिखती है। उनकी कहानियों में – नारी मन की पीड़ा, प्रेम के अधिकार से संचित होती स्त्री, का अंकन है साँझ सकाल की माँ–गर्भ धारिणी माँ कैसे बन गई ? सूरज उगने से पहले माँ पुकार लेना, फिर सूरज डूबे तभी माँ कहना विडम्बना है। सिंधुबाला में मनुदासी लड़कियों को बेचने का काम करती है।

इनकी हर कहानी एक जैविक रचना होती है। उनके पात्र चलते – फिरते इन्सान होते हैं। अतः इनकी कहानियों को विश्व स्तर पर रखा जा सकता है। इनकी चर्चित प्रतिनिधि कहानियों में जगन्नाथ का रथ, स्तनदायिनी, नमक, बीज, रूदाली, गिरिबाला, मोहनपुर की रूपकथा, गंध, कवि पत्नी, डाइन प्रमुख है।

5.1.5 अमृता प्रीतम

अमृता प्रीतम का कहानी संग्रह – "सात सौ बीस कदम" है।[1] "जंगली बूटी" की नायिका–अंगूरी–अनछुई खुशबू जिसे किताब पढ़ने से पाप लगता है। प्रेम करने से भी पाप लगता है। वह समझती है "जब कोई आदमी किसी छोकरी को कुछ खिला देता है, तो वह उससे प्रेम करने लग जाती है। प्रेम की आँच अंगूरी को अपनी गिरफ्त में ले लेती है।" "गलियाना का खत" में नायिका की खूबसूरती का वर्णन –

नाम – फूल की महक सी एक औरत

कद – उसका माथा तारों से छूता है।

बाल का रंग – धरती के रंग जैसा।

आँखों में रंग – आसमान के रंग जैसा

---

1 भारतीय ज्ञानपीठ, 2000, रूपए 185/–

पहचान का निशान – उसके होठों पर जिन्दगी की प्यास है और उम्र के रोम–रोम पर सपनों का बौर पड़ा हुआ है। ऐसी खूबसूरती – जब फौजियों के जुल्म का शिकार होती है तब सवाल उठता है "इस धरती में उस फूल को आने का अधिकार क्यों नहीं दिया जाता जिसका नाम औरत है ? "न जाने कौन रंग" गीतों में सजी कहानी है। इसमें रात के अंधेरे में बेटी से बलात्कार का प्रयास करने वाला बाप कहता है "मैं दिन की रोशनी में तुम्हें अपना चेहरा नहीं दिखा सकता बेटी।"

बेटी भी माँ की शक्ल की समानता के आधार पर या बीस साल बाद बाप से मिलने को न्याय संगत कारण मानकर बाप को माफ कर दे ? लेकिन शब्दों का उलझाव – बेटी पर बाप द्वारा बलात्कार के खूनी रंग को धो नहीं सकता। अन्य प्रेम कहानियों में – जारी का कफन, धन्नों, वह आदमी, सजदा प्रमुख है।[1]

5.1.6 सूर्यबाला

सूर्यबाला का कहानी संग्रह "गौरा गुणवंती" भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित है। गौरा–एक अनाथ लड़की जो परिस्थितियों से विवश होकर अपनी बीमार माँ को छोड़कर शहर में भाई–भाभी के पास रहती है। बीमार ताई के अलावा कोई उससे सीधे मुँह बात तक नहीं करती? वह ताई की सेवा सुश्रुषा करती है। ताई उसे आशीर्वाद देती है "राजरानी होगी, हीरे मोती से लदी" एक दिन रायसाहब की पत्नी ने अपने बेटे के लिए गुणवंती गौरा का हाथ माँग लिया। जिसके लिए भाभी कहती थी "उसके लिए तो चपरासी भी नहीं जुटेगा।" रायसाहब के बेटे से ब्याही। ताई का आशीर्वाद फला व सच साबित हुआ।

"अठारह वर्ष बाद" एक किशोर लड़के को होस्टल भेजने के कारण दुखी होती माँ की कहानी है। वह कहती है "पति के बाद दूसरा पति, प्रेमी के बाद दूसरा प्रेमी तो ग्राह्य होता है किन्तु बेटे के बाद कोई दूसरा बेटा क्या कोई माँ स्वीकार कर पाई है ?

"कौमुदी एक प्रश्न" में पारम्परिक ढंग से शादी के लिए बनाए गए रीति रिवाजों पर सवाल खड़ा करके एक गोरे सुयोग्य और सुदर्शन युवक से कोर्ट मैरिज करती है। वह उम्मीद करती है कि बार–बार के दिखावे से उसे मुक्ति मिलेगी तथा कोई उसे बदसूरत, बदशक्ल, बैरोनक कहकर मुँह बिचकाकर अस्वीकार नहीं करेगा।

"कब्जा" एक निरीह, अशक्त और बीमारी से कृशकाय पति और उसकी सेवा करती पत्नी के रिश्तों की कहानी है। पति जो कभी दबंग, खुशमिजाज था, वह आज

---

1 मुक्ता, कहानी का लंबा सफर–स.भा.सा. अंक 93, जनवरी–फरवरी–2001, पृ.167–168

सूखा कंकाल भर रह गया है। फिर भी जब उसका अशक्त हाथ पत्नी की पीठ पर पड़ता है तो वह अब भी वजनदार लगता है। उसे लगता है – कि जैसे– उसे पति की काया पर फिर कब्जा मिल गया है। "मौज" कहानी में कामकाजी बहू–बेटे अपने समय में कभी राजरानी रही सासूमाँ का भरपूर फायदा उठाते हैं। वह अपने माइग्रेन, घुटनों, गर्दन या पीठ की अकड़न की बात जबान पर नहीं पाती, बस, चुपचाप घर की जिम्मेदारी सँभाले रहती हैं।" एक स्त्री के कारनामे "कहानी एक मितभाषी मृदुभाषी सुदर्शन पति की बौद्धिक पत्नी के बीच के प्रसंगों पर आधारित है। पत्नी पति की चाय में चम्मच भर कालीमिर्च की बुरूनी झोंक देती है कि अब तो वे गुस्सा हो पर वे "इट्स आल राइट" कहकर टाल देते है। उसे लगता है कि "अपने पति के देवत्व को संभालने की शऊर भी नहीं है मुझमें ?" स्त्री के ऐसे कारनामों के बावजूद पति को कभी ऊँची आवाज में किसी ने बोलते नहीं सुना। यहाँ पर स्त्री बुद्धिमती ही नहीं है, बौद्धिक भी है और पति का ठंडा, निस्पृह, बाहरी, स्थूल व्यवहार उसको उचाट देता है।

तमाम सम्पन्नता और सुविधाओं के बावजूद वह उस बौद्धिक स्त्री को ऐसे कारनामे करने पर उकसाता है फिर भी कभी न कोई तूफान आता है, न बिजली कड़कती, न बादल, न बरसात। अंत में स्त्री ग्लानि से भरी ऐसी चाय बना लाती है और चुपचाप अपने देवता समान पति के साथ पी लेती है। इस प्रकार सूर्यबाला की इन कहानियों में विचार तत्व प्रमुख है। पाठक उद्वेलित होता है। लेखिका पुरखों से चली आ रही रीतियों, रिवाजों, कुरीतियों की चीर फाड़ करती है एवं व्यावहारिक सोच प्रस्तुत करती है। स्त्री कभी विद्रोह करती है तो कभी वह सहनशील बन जाती है परन्तु जीवन से विडम्बनाओं को झेलती है जो सोचने को विवश करता है।

5.1.7 रोहिणी अग्रवाल

रोहिणी अग्रवाल का कहानी संग्रह – "आओ माँ! हम परी हो जाएँ"[1] में 10 कहानियाँ है।

इन कहानियों में भारतीय समाज में स्त्री की दोयम दर्जे से उभरी चिंता और सरोकारों की अभिव्यक्ति मिलती हैं।[2] "आत्मजा" शीर्षक से लिखी गई कहानी में एक ऐसी स्त्री का चित्रण है, जो समाज द्वारा स्त्रियों के लिए स्थापित मानदंडों को अस्वीकार करती है और उसके साहसिक कार्य से सभी असहज हो जाते हैं। उसका पति, विद्यार्थी,

---

1 सामयिक प्रकाशन – 2012, रूपए 250/–

2 सत्यकाम – स्त्री विमर्श को निचोड़ती कहानियाँ। स.भा.सा. अंक 168, जुलाई–अगस्त 2013, पृ. 226–228

बेटे–बेटी, सबसे ज्यादा प्रभाव पति पर पड़ता है, जो अपनी पत्नी की हरकतों से परेशान है। उसे लगता है कि वह अपनी पत्नी के समक्ष क्लीव हो गया है।

मिसेज अलका नंदा अपने को पाने और समाज से जुड़ने की फिराक में निरन्तर अपना विस्तार और उड़ान भरती रहती है। लेखिका ने मिसेज नन्दा के मार्फत स्त्री सशक्तिकरण का कथा निरूपण किया है। भारतीय परिवारों में स्त्रियों की खास स्थिति का चित्रण – चिड़ियाँ, बेटी पराई नहीं होती पापा, तथा आओ माँ! हम परी हो जाएँ – तीनों कहानियों में मिलता है एवं स्त्री विमर्श तथा स्त्री समाज की कहानियाँ बन जाती है। बेटी और पत्नी के प्रति पुरुष का दृष्टिकोण उभारती इन कहानियों में पुरुष की क्रूरता को सभी जगह दर्शाया है।

माँ–बाप दोनों बेटी का कन्यादान करने के बाद–बेटी का कुछ भी स्वीकारने में असमर्थता व्यक्त करते हैं। चाहे बेटी का दिल ही क्यों न टूट जाए। आओ माँ हम परी हो जाएँ – एक बच्ची के माध्यम से उसके सपनों को चकनाचूर होने की कहानी है। चिड़ियाँ बेबस अबला की चीत्कार है। कंजकें स्त्री लिंग निर्माण की प्रक्रिया का अवलोकन है। यह स्पष्ट किया जाता है कि – लड़की लड़की कैसे बनाई जाती है। "क्या हम तीनों फैमिली नहीं हो सकती" – एक पुरुष के अत्याचार की कहानी है। रोहिणी अग्रवाल ने स्त्री के विविध रूपों – पत्नी, संघर्ष करती स्त्री, लहूलुहान होती स्त्री, कामकाजी स्त्री, बेटी के रूप में स्त्री, अपना अस्तित्व खोजती स्त्री, सब कुछ हासिल करने के बावजूद अपने को, लक्ष्य विहीन मानने वाली स्त्री पर कहानियाँ लिखी है।

लेखिका की इस प्रकार की रचनाओं पर प्रश्न उठता है कि – क्या पुरुष इतने गए गुजरे हैं कि स्त्रियों की भावनाएँ समझते ही नहीं? क्या यह केवल स्त्री विमर्श रचनाकार का काल्पनिक रचाव मात्र तो नहीं है ? क्या पुरुष को कठघरे में खड़ा कर, स्त्री पात्र को शोषित –दमित दिखाना सच के एक पहलू पर ज्यादा वजन डालना नहीं है ? यह कौनसा सच है जिसमें स्त्रियों का सब अच्छा ही अच्छा है और पुरुष में तमाम खराबियाँ हैं। लेखिका से संतुलित न्यायोचित लेखन की अपेक्षा से इन्कार नहीं किया जा सकता।

5.1.8 मनीषा कुलश्रेष्ठ

मनीषा कुलश्रेष्ठ का कहानी संग्रह – "कठपुतलियाँ"[1] लीक से हटकर है।[2] लेखिका ने – "कठपुतलियाँ" कहानी में निम्नवर्गीय स्त्री का प्रश्न – आर्थिक व सामाजिक संदर्भों में उठाया है। कहानी में युवती सुगना की शादी अपंग अधेड़ रामकिशन से कर दी जाती है। सुगना की आकांक्षा एवं राम किशन की अक्षमता के बीच न पटने वाली दूरी है। सुगना अपनी अल्हड़ चाहना में खोई रहती है। "अपनी देह गन्ध से बौराती, अपने मन में संसर्ग का साथी चुनती, अनचाहे रिश्ते की डोरों में उलझती, उसके पहले मंगेतर–जौगेंदर से शारीरिक सम्पर्क में आकर गर्भवती हो जाती है।

इस पर, पंचायत बैठती है जो हाथ पर गर्म ईंट रखकर अग्नि परीक्षा का फैसला देती है। उसका पति खास किस्म का तेल लगाकर उसके हाथ पर मलवाता है ताकि उसके हाथों पर फफोले न पड़े। वह ससम्मान बच जाए। सुगना भी प्रेमी के साथ भागने के बजाय परिवार को चुनती है। कहानी पारिवारिकता को एक मूल्य के रूप में रखती है साथ ही स्त्री की विडम्बनात्मक स्थिति का भी उद्घाटन करती है। इस कहानी में सुगना के सामने प्रश्न है – परिवार – पति का प्रेम, प्रेमी का प्रेम कठिन आर्थिक जीवन।

युवा मन की देह जनित आकांक्षा एवं कर्तव्य उसके सामने संकीर्ण मानसिकता व न्याय का सामंती स्वरूप है। वह संघर्ष को चुनती है। कुरजाँ स्त्री प्रश्न पर लिखी गई कहानी सामंती कुचक्र व सामाजिक संकीर्णता के बीच अकेली औरत की नियति को सामने रखती है। लोकतंत्र में भी सामंती झलक – रावले वाले – गाँव के आम जन से मिलने पर नजराना स्वीकार करते हैं। खम्मा घणी हुकुम कहते हुए ग्रामीण झुककर दुहरे हो जाते हैं। रावले वालों की गर्दन अभिमान से अकड़ी रहती है।

जींवसर गाँव के जमींदार के यहाँ कुरजाँ का पति काम करने आता है। वह गायब हो जाता है। गाँव में यह खबर फैला दी जाती है कि कुरजाँ डाकण है। कुरजाँ टोने–टोटके कर अपना जीवन यापन करती है। गाँव में आई हर आपदा के लिए उसे जिम्मेदार ठहराया जाता है।

एक सामूहिक बाल विवाह में बासी माँस परोसने पर बीमारी होने के कारण भी उसे ही जिम्मेदार बताया जाता है। उसे मारा पीटा जाता है। वह गाँव छोड़ने के लिए बाध्य हो जाती है। रंग रूप रस–गंध धार्मिक स्थलों पर विधवाओं के शोषण की कहानी

---

1 भारतीय ज्ञानपीठ – नई दिल्ली, 2008, 120/–

2 राजीव कुमार – लीक से हटकर, स.भा.सा. अंक 138, पृ.199–201

है। इस प्रकार मनीषा ने बताया है कि सामाजिक आर्थिक संरचना स्त्रियों के मार्ग में रोड़े है। सुगना आर्थिक कारणों से अपंग से ब्याही जाती है। कुरजाँ भी आर्थिक कारणों से पति को खोती है।

गन्धर्व गाथा

गन्धर्व गाथा मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियों का संग्रह है।[1] "गंधर्व गाथा" कहानी में नायक–नायिका स्मृतियों के बीहड़ में जीने को अभिशप्त है। चेतन के लिए थोड़ा भी बहुत है और जड़ के लिए बहुत भी कुछ नहीं है। इन थोड़े से पलों को दुबारा निराकार तौर पर जीने की आत्म छलना ही गन्धर्व गाथा है। "कुरजाँ" एक ऐसी घूमन्तू जाति की नारी की कहानी है जिसे डायन घोषित कर दिया जाता है। बाड़मेर के एक रेगिस्तानी इलाके में अपने पुत्र के साथ रहने वाली ताश के पन्ने से भविष्य पढ़ना भी जानती है। अंध विश्वास की शिकार यह नारी, तबादले पर आए उस बिन ब्याहे मास्टर के प्रेम को अधूरा छोड़कर, एक दिन अपने पुत्र को लेकर वहाँ से चली जाती है। पूरी कहानी पर गहन वेदना की छाया पसरी रहती है। ऐडोनिस का रक्त, लिली के फूल व मेरा ईश्वर यानी में प्रेम का स्वरूप है। कालिंदी एक ऐसी औरत की कहानी है जो जीवन को अपनी शर्तों पर जीती है। "खरपतवार" प्रेम से प्रताड़ित, त्रासदी झेलती नारी की कहानी है। नारी का चिरंतन सत्य – "जिसकी हमें जरूरत नहीं, हम उन्हें उखाड़ फेंकते हैं। खरपतवार वे अनचाहे बच्चे हैं, जिन्हें कोख उगल देती है। जो अक्सर अस्पताल के पिछवाड़े अधबने फेंक दिए जाते हैं और उन्हें कुत्ते चाव से खाते है।

इस प्रकार ये कहानियाँ घटना विन्यास, पात्रों के गठन, परिवेश, मौसम के चित्रण के बहाने नारी मन के चित्र उभारने में संवेदनात्मक मार्मिक अंकन करती है।

5.1.9 गीतांजलिश्री

गीतांजलिश्री का कहानी संग्रह – "यहाँ हाथी रहते थे"[2] में आतंक, दहशत का असर है। कहानियों के कथ्य में बाबरी मस्जिद का ढहाया जाना, गोधरा कांड, गुजरात का नर संहार, मुजफ्फरनगर के दंगे प्रमुख हैं। भारतीय समाज का अंधविश्वास, धर्म के नाम पर, साम्राज्यवाद खड़े करने वालों, राजनीतिज्ञों, पूंजीवादियों की साँठ–साँठ को, इस

---

1 सामयिक प्रकाशन – 2012, 300/– की समीक्षा, द्विवेदी रमा शंकर – स.भा.सा. अंक 179, मई–जून 2015, पृ.178–180

2 राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 2012, रूपए 300/–

सच के साथ सामने रखा गया है कि यह व्यक्ति, समाज राष्ट्र किसी के हक में नहीं है।[1] गीतांजलि "होलिका दहन" में लिखती है – "आज किसी को भी होलिका बनाकर समाप्त किया जा सकता है ? सारा देश होलिका दहन जैसा दिख रहा है।" "इति" जीवन की कटु सच्चाइयों को कटुता से उघाड़ती हैं। माँ की मृत्यु को उनके सामान के बँटवारे के अवसर में तब्दील हो जाने के अवसाद पूर्ण, जुगुप्सा पैदा करने वाली स्थिति का बयान है।

"मैंने अपने आपको भागते हुए देखा" में सामंती संस्कारों से जूझना और उसके उबरने या व्यक्तित्व में छिपी दुविधा को प्रस्तुत किया गया है। शहरी जीवन का चित्रण–चक्कर घिन्नी में है, "इतना आसमान" में कलाकार आतंक के साए में जीने को अभिशप्त है (तसलीना नसरीन का प्रभाव), बूझे तो जाने में एक औरत के अपना रास्ता ढूँढने की अभिव्यक्ति है।

लौटती आहत, मार्च, माँ और साकुरा, बुलडोजर, थकान कहानियाँ – स्त्री के नजरिए से संसार को देखती है। रिश्तों और स्त्री की खुदगर्जी, पति–पत्नी के सम्बन्ध, माँ–बेटे के रिश्ते, हर जगह स्त्री होती है। लेखिका ने स्त्री का आत्मविश्वास, उल्लंघन अस्मिता को विशेष महत्व प्रदान किया है। जीवन को नए कलेवर में परोसती इन कहानियों की स्त्री का आत्मविश्वास बचाए रखना, बनाए रखना तथा अपनी अस्मिता का पग–पग पर अहसास सराहनीय है। "अनुगूंज" भी गीतांजलि का कहानी संग्रह है।[2] "प्राइवेट लाइफ" की नायिका की लड़ाई उन अपनों से है जो जबरन उस पर चले आ रहे मूल्य और विचार थोपना चाहते हैं।

लड़की को कहा जाता है कि "लड़की अपने पैरों पर खड़ी हो जाए, आर्थिक रूप से समर्थ हो तो सब ठीक हो जाता है। लेकिन नौकरी करती वह नायिका अपनी मर्जी से चल नहीं सकती। उसे बने–बनाए साँचे में इज्जत से जीना होगा क्योंकि यही अच्छे घरों की रीत है। कहानी बताती है कि – इस समाज में उस जैसी लड़की की पसंद–नापसंद का कोई अर्थ नहीं।

यह लड़की खामोश नहीं रहती, प्रतिरोध करती है – "जिसे आप इज्जत समझते हैं उसे मैं अपनी सबसे बड़ी बेइज्जती मांनती हूँ।" यह लड़की – न कुछ छिपाना चाहती है न ही खुद को गुनाहगार समझना चाहती है। वह मानती है उसकी दिनचर्या तय करने वाला और कोई नहीं होगा। वह अपने विचारों व सामर्थ्य के साथ खड़ी होती है।

---

1 सत्यकाम – नए कलेवर में परोसी गई कहानियाँ–स.भा.सा. अंक 173, मई–जून 2014, पृ. 206–207

2 राजकमल प्रकाशन–2006, 150/–

स्त्री एक नया समय शुरू करती है। उसकी तर्क शक्ति में उसका आत्मविश्वास भरा व्यक्तित्व झलकता है जो पुरानी सोच से एकदम बाहर है।

"बेल–पत्र" की कथा हमारे दिमाग में बैठे उस कीड़े की पहचान कराती है जो इन्सान को हिन्दू–मुसलमान में तब्दील कर देता है। यह कहानी प्रश्न उठाती है क्यों स्त्री का अपना कोई वजूद नहीं होता? क्यों उसका वही मजहब हो जाना चाहिए जो पति बन गए पुरुष का है? स्त्री का कोई निजत्व क्यों नहीं स्वीकार किया जाता ? दूसरों का सम्मान करने के बावजूद फातिमा की घुटन का यही कारण है। स्त्री के पक्ष में चुनौतियों से टकराहट – अपने लिए जगह खोजते हुए पहचान की माँग करते हुए।

क्यों उससे उस जैसा होना छीना जा रहा है ? जगदीश काका कहते हैं – "बदलाव के लिए जो कुछ देना पड़े दो।" फातिमा क्यों विवश होती है यह कहने के लिए – "कितना भी विचारशील क्यों न हो जाए, पुरुष सत्तात्मक समाज में उसकी हैसियत रहेगी दलित सरीखी, जब तक बदलाव का चक्र पूरा नहीं हो जाता।"

"पीला सूरज" की नायिका सोचती है "जिनेवा की अन्तर्राष्ट्रीय इमारतों पर, मेरे पुश्तैनी घर पर, उन झोंपड़ों पर सूरज कब उगेगा ?" यादों के सहारे बीते दिनों में उतरने की दृष्टि "सफेद गुड़हल" में है। स्त्री की मन स्थिति "तिनके" में है। वह पूछती है – प्रभुत्व पुरुष का ही क्यों बना रहे ? प्रश्न यह है – "जिसने चलना सीख लिया हो, उससे यह कहना कि – जब समाज बदलेगा तब चलना, क्या मायने रखता है ?" घर तो घर है, यहाँ होता है। इसी में लड़ना–जीना है। बस खुद को मारकर, दबाकर क्यों जिए कोई ? स्त्री हो, तब भी क्यों ?"

"अनुगूंज" कहानी में–पति–पत्नी के बीच की चुहल–शरारत अंतरंगता के बावजूद – पति की बाँहों में स्वयं को बेहद सुरक्षित महसूस पत्नी जो बराबर का सहयोग देती, आनन्द केलि में उतरती है, लेकिन – उसके जीवन में बराबरी नदारद है। वह घर में कैद एक चिड़िया हो जाती है। पति की सलाह के मुताबिक उसे घर में ही पढ़ना – लिखना है। क्यों?

इनकी इन कहानियों में स्त्री मन की अनेक परतें विभिन्न उपादानों के जरिए खुलती है। नायिका के खालीपन का अहसास व्यक्त होता हैं। जीवन की अनुभूतियों का सूक्ष्मता से अंकन हुआ है। वैचारिक संघर्ष की उर्जा की प्रमुखता से सामने रखा गया है। नारी द्वारा जीवन जीने की वकालत की गई है। ये स्त्री – पुरुष के बीच से ऊपजी कहानियाँ है। स्त्री पुरुष के बीच विश्वास का अभाव तनाव का मुख्य कारण होता है।[1]

---

1 दर्पण महेश – देर तक बनी रहती है। स.भा.सा. अंक 132, जुलाई – अगस्त 2007, पृ. 210–2014

5.1.10 चित्रा– मुद्‌गल

चित्रा मुद्‌गल का लघु कथा संग्रह "बयान"[1] चित्रा जी का लेखकीय व्यक्तित्व पूरी क्षमता के साथ उनकी लघु कथाओं में अभिव्यक्त हुआ है। कथ्य को एक स्फोट की तरह व्यक्त करने में उनकी लघु कथाएँ सक्षम हैं। शब्दों में जितना व्यक्त होता है उससे अधिक संकेतित होता है और रचना देर तक पाठक को अपनी गिरफ्त में लिए रहती है। चित्रा जी लिखती है– "लघु कथा जब भी जन्मी कौंध सी जन्मी। कौंध के साथ ही उसने अपना चुनाव रचा रचाव स्वयं रचा। मैंने उसे दर्ज भर कर लिया।"[2]

डोमिन काकी सम्बोधन न कर सिर्फ डोमिन कहने पर दादी लड़की को थप्पड़ मारती है किंतु उसी डोमिन काकी को बालिका द्वारा छू दिए जाने पर दादी की संवेदना कपूर की भाँति उड़ जाती है और लड़की को एक थप्पड़ और रसीद कर देती है। "राक्षस" लघुकथा में पिता अपने युवा बेटे को शराब पीने के कारण उसे राक्षस कहते हैं तथा घर से निकाल देते हैं।

किन्तु बॉस के आने पर स्वयं शराब मंगवाते है। लड़के द्वारा भोलेपन में पूछने पर – "क्या साहब राक्षस है ?" पिता उसे एक चाँटा जड़ देते हैं। बॉस अन्नदाता है, राक्षस कैसे हो सकते है ?

"नसीहत" में सुधारवादी मानसिकता की पोल खोली गई है। वाचिका– एक भिखारी लड़के को नसीहत देती है– ईमानदारी और मेहनत से काम करने का वादा करो तो कौन नहीं रखेगा ? घरेलू नौकरों की कमी तो हर घर में है।"

लड़के द्वारा काम मांगने पर उसका जवाब – "मेरे पास पहले से ही एक नौकर है। तुम्हें रखकर क्या करूंगी ? हाँ यह लो पाँच रूपये कुछ धंधा कर लेना। बूट पॉलिस या रूमाल – उमाल बेचने का। छोटी मोटी चीजें बहुत से बच्चे ट्रेनों में बेचते हैं। छद्‌म संवेदना उजागर होती है। "बाजार" में धन कमाने की लालसा है। नर्सिंग होम का मालिक कहता है – उद्‌घाटन के बहाने हमें प्रचार की जरूरत है। अतः वे ऐसी हस्ती को आमंत्रित करता है जिसका नाम सुनकर लोग उमड़ पड़े।

"व्यावहारिकता" की बाई मालकिन से माँगकर कपड़े ले जाती है। मालकिन यह सोचकर सन्तुष्ट होती है कि कपड़े किसी के पहनने के काम आएँगे किन्तु वह यह देखकर ठगी रह जाती है कि उनके द्वारा दिए गए कपड़े के बदले बाई ने बरतन ले लिया था। बरतन वाली उसके सामने गट्ठर खोलकर कहती है – "अब्बी – अब्बी मैं

---

1 भारतीय ज्ञान पीठ, नई दिल्ली, 2004, 70/–

2 वहीं, पृ.80

इतना कपड़ा पर आपका पिच्छू झोंपड़पट्टी में एक बाई को रोट्ला (रोटी) का डिब्बा दे के आया।"

"मिट्टी" में मृत्यु के सन्निकट पहुँची सास को बहू गाजे–बाजे के साथ उसकी मिट्टी उठाने का प्रलोभन देकर, उनके द्वारा गाड़े गए गहनों का स्थान पूछती है। जिस समय वृद्धा की साँस निकलती है, पूरा घर दूध हड्ड़ी के नीचे की जगह खोदने में व्यस्त है। सास की दयनीयता के बरबस बहू की कटूक्तियाँ वृद्धा के प्रति उपजी करूणा को द्विगुणित कर देती हैं।

इस प्रकार ये लघु कथाएँ मध्यम वर्ग, निम्न वर्ग की सांस्कृतिक परम्पराओं और मजबूरियों को व्यक्त करती है। अधिकांश लघुकथाओं में तटस्थ भाव है। दम तोड़ती मानवीय सम्वेदना की अभिव्यक्ति ही प्रमुख रही है। अनेक विसंगतियाँ उजागर होती है। मानवीय सम्बन्धों में उपजे स्नेह को वाणी दी गई है। "दूध घर के मर्द पीते हैं।" कहकर – लेखिका ने उस वातावरण को जीवंत बना दिया है, जहाँ लिंग आधारित भेदभाव की शिकार महिलाएँ होती है।

आदि–अनादि

आदि अनादि – तीन खंडों में प्रकाशित[1] कहानियाँ है जो गहरे सरोकारों से उपजी हैं।[2] इन कहानियों में भारतीय समाज के विभिन्न वर्गों और स्तरों के जीवन के बीच गहरी आत्मीयता के साथ रचाव है। गाँव, देहात, महानगरों की झुग्गी झोंपड़ियों और सम्पन्न बंगलों, फ्लेटों, दफ्तर–कारखानों के पात्र हैं।

दाने दाने को तरसते बच्चे, दम तोड़ते बच्चे, अपने तन मन को असहनीय यातना में झोंककर बच्चों का जीवन बचा पाने में असमर्थ माताएँ, पत्नी, बच्चों का शोषण करते नर पशु, अभाव और सामाजिक संबंधों के बीच पिसते मध्यवर्गीय स्त्री–पुरुष, ग्रामीण संस्कारों के साथ शहरों में कमाने वाले बेटों के साथ अपनी जड़ों के साथ उखड़े वृद्धजन, भरे पूरे परिवार के बावजूद वृद्धाश्रम में मौत की बाट जोहते वृद्धजन, झाड़ू–पौछा, चौका–बर्तन कर परिवार चलाती बदहाल स्त्रियाँ, अपराधजीवी मवाली, लेखक–पत्रकार–संपादक के रूप में संघर्ष करते बुद्धिजीवी–सभी वर्गों के पात्र है जो पाठक को संवेदनात्मक रूप से झंकृत करते हैं।

1 सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, प्रत्येक 700/–
2 वहीं, पृ.80

स्त्रियाँ जिनमें घर से दफ्तर तक हाँफती युवतियाँ प्रौढ़ा होने पर पति के व्यभिचार भाव का दंश झेलती सुहागिनें, माँ–बाप की लाड़ली होने के बावजूद दोनों के बीच शीतयुद्ध का हथियार बनी बच्ची, किशोरी, युवती, युद्ध के मोर्चे पर शहीद हुए अधिकारी की विधवा के माध्यम से लेखिका पाठकों को चकित, द्रवित, उत्तेजित, मुग्ध करती हैं। 'दुलहिन' कहानी ग्रामीण पृष्ठभूमि में एक शिक्षित युवक और प्रौढ़ा माँ के बीच के तनाव को रचती है। बेटा अपनी पत्नी के गर्भ को लेकर चिंतित है। गर्भपात की मनोदशा का इसमें टकराव चिंतन है।

"दशरथ को वनवास" पिता–पुत्र के मनोभाव व्यक्त करती है। मुम्बई की झोंपड़ पट्टियों के अभाव, संघर्ष, पुरुष शराबी, कामचोर, अपराधी तो स्त्री–अभाव के साथ पतियों के अत्याचार झेलती है। "कंचुल" की कमला प्रेम में धोखा खाती है। जब अपनी बेटी को युवक के प्रेम में देखती है तो माँ कहती है – "तेरे का सादी बनाने को सरना के साथ ? तो जल्दी बना, ठैरा काय को ? पईसा नई होएगा, तो मेरे से ले, पन जल्दी कर सादी, देर नई मंगता, भरोसा नई तेरा, कभी मुलक को चला गया तो वापस नहीं आएगा, भैया लोगों का ऐतबार नहीं तेरे को।"

"त्रिशंकु" का किशोर बंडू–शराबी बाप से माँ को पिटते देखता है तो खून खौल उठता है। बाप ने रखैल रख छोड़ा है। बंडू गुंडों के हाथ पड़कर ब्लैक में सिनेमा के टिकिट बेचता है। जेल जाता है। लौटकर माँ के सुख के लिए कुछ करना चाहता है सब पड़ौसन से पता चलता है कि माँ किसी और मर्द के साथ चली गई है।

मोट्या के पैसे काटने, मार खाने पर भी मेम साहब उसके पक्ष में नहीं बोलती। प्रीति पति की क्रूरता झेलती नौकरी करने को अभिशप्त है। चौतरफा आक्रमण झेलकर भी वह अपनी आत्मशक्ति के बल पर लड़ती है। "अपनी वापसी" में शकुन्तला अपने पति और जवान होती हुई बेटी से अति आधुनिकता के कारण लहूलुहान होती है। "रूना आ रही है" मैं अत्याधुनिक जीवन शैली पर पाश्चात्य प्रभाव का अंकन है। माता–पिता भाई–बहिन के बीच खुलापन मर्यादाएँ लाँघता है।

पति से अलग होकर, बच्चे को अपने साथ रखने के लिए दृढ़ संकल्प युवती की कहानी – "शून्य" है। "लाक्षागृह" विवाह की उम्र से आगे निकल चुकी युवती को स्वार्थ प्रेरित प्रेम में फँसाने वाले धूर्त के जाल में फँसने – निकलने की कहानी है।

"अग्नि रेखा" की मनु पति के प्यार में आकंठ डूबती है। अपने बच्चे के प्रति वैमनस्य देखकर पत्नी–पति के विषय में सोचती है। निशीथ प्रतिदिन काठ क्यों होता जा

रहा है ? किसी सूखे तने सा काठ ? जिसकी छाती में खुदे कोटर में निवास करते पक्षियों से काई सरोकार नहीं। तन मन से मग्न असमय वृद्ध हो गयी स्त्री ।

"भग्न कंदील सी काठी में तीलियों का ढाँचा मात्र" लगती है। घर, परिवार, बच्चा, पति, नौकरानी सामाजिक रिश्तों को संभालती वृद्धा सोचती है – "भागा–दौड़ी की चकिया में मुट्ठी–मुट्ठी अनाज सी पिसती और अपने पिसने की नीयति में निचुड़ती उसे राई–रत्ती आभास नहीं हुआ कि कोई उसके अधिकार क्षेत्र और सुख संसार में सेंध लगा रहा।"

माँ–बाप, भाई से – बहादुर बेटी बनने की घुट्टी पीकर बड़ी हुई युवती आक्रामक कामांध को परास्त कर घर लौटती है तो बदले हुए परिजन उसे घर में बंद रहने को विवश करते हैं। झूठ सिखाते हैं कि वह लोगों से कह दे – उसके साथ कोई घटना नहीं हुई।

बेटी सोचती है – उनकी छुअन अब कपड़े उतार चुकी है। "अभी भी" की शिल्पा– कुछ ही दिन पति सुख भोगकर विधवा हो जाती है। उसके सास–ससुर अतिरेक में उसे दूसरे बेटे की बहू बना लेते हैं। धीरे–धीरे रहस्य खुलता है – उसके पति के मिले पैसे किसी अन्य के पास न चले जाए इसलिए प्रेम का अभिनय किया गया। जब पैसे वसूलने के लिए उसे यातना दी जाने लगी तब पुलिस के साथ आए पिता से उसने कहा था– "अभी भी मुझे यहाँ से ले चलो तो मैं बच सकती हूँ।"

"पछाँहवाली" में विधवा अपने जेठ से अपनी बेटी को पढ़ाने का अधिकार माँगती है तो उसकी हत्या कर अफवाह फैला दी जाती है कि उसे लकड़बग्गा उठाकर ले गया। यह कहानी जान देकर भी बेटी की शिक्षा की अनिवार्यता को दर्शाती है। इस प्रकार– चित्रा मुद्गल की कहानियों में– स्त्रियों के संघर्ष की दुर्लभ दस्तावेजों जैसी स्थितियाँ उजागर होती है। आधुनिक शिक्षा सम्पन्न भद्र लोक स्त्री को दुर्बल बनाए रखने की कोशिशें करता है उसे बताया गया है। दोहरे मानदंडों और दकियानूसी के विचारों वाले समाज में स्त्री की कोई सुरक्षित वापसी बनेगी ? इस पर विचार किया गया है। महानगरों व गाँवों कस्बों की स्त्री केन्द्रित व्यथाएँ है। सांस्कृतिक सन्दर्भों की तलाश है। संयुक्त परिवारों के टूटने व बचाने का प्रत्यक्षीकरण है।

5.1.11 सुधा ओम ढींगरा

सुधा ओम ढींगरा का कहानी संग्रह – "सब कुछ और था"[1] में 11 कहानियाँ है। "अनुगूंज" में सच और झूठ के बीच निर्णय लेने में फँसी हुई कथा नायिका मनप्रीत का अन्तर्द्वन्द्व है। जब एक तरफ परिवार हो और दूसरी तरफ सच तो निर्णय लेने में ऊहापोह स्वाभाविक है।

"सच कुछ और था" दाम्पत्य जीवन के उजले पानी के अन्दर जमी तलछट पर रोशनी डालती है। भारत–अमरीका के बीच की जमीन पर दोनों देशों के साझा समय में घटित होती इस कहानी में एक हत्या को केन्द्र में रखा गया है। हत्या की पड़ताल करती हुई कहानी धीरे–धीरे दाम्पत्य के अंदर खानों में जमी हुई धूल को उजागर करती है। "पासवर्ड" तकनीकी दुनिया को केन्द्र में रखकर, तन्वी के बहाने, अपने समय के काले सच को उजागर करती है। तलाश जारी है में दो संस्कृतियों की पड़ताल, विकल्प में नैतिकता, शुचिता पर नए सिरे से विचार, विष बीज में बलात्कारी मनोदशा का चित्रण, तथा काश ऐसा होता उम्र के उत्तरार्द्ध में अकेलेपन की कहानी है।[2]

क्यों ब्याही परदेश पत्र शैली में सात समंदर पार जा चुकी बेटी का अपनी माँ को लिखा गया पत्र, संवेदना के धरातल पर निर्माण करता है। और आँसू टपकते रहे भावात्मक कहानी है। बेघर में रंजना के माध्यम से चुभते सवालों की कहानी है। स्त्री का सवाल उसका घर कौनसा है? कोई है भी अथवा नहीं ? इस प्रकार यह कहानियाँ अपने तरीके से समय से मुठभेड़ करती है। सरोकारों के साथ पाठकों को जोड़ती है व पाठकों को सतरंगे संसार की यात्रा भी कराती है।

5.1.12 इन्दिरा गोस्वामी

इन्दिरा गोस्वामी की कहानियों का संग्रह – "लाल नदी" है जिसमें प्रत्येक कहानी मानवीय पीड़ा का दस्तावेज है। आज का महिला लेखन आत्मपीड़न की अभिव्यक्ति है। "देवी पीठ का रक्त" में मंदिर, पूजा पाठ, बलि आदि के चित्र, कामाख्या धाम के पुजारी अघोरदेव, भगवती की पुत्री पद्मा प्रिया की व्यथा – बलि पशु की व्यथा से भिन्न नहीं है।

---

1 शिवना प्रकाशन – सीहोर म.प्र. 2017, 250/–

2 दुबे पुष्पा – दो देशों के बीच घूमती कहानियाँ, स.भा.सा. अंक 196, मार्च–अप्रैल 2018, पृ. 208–209

इसमें पीठ पर सफेद दाग के कारण ससुराल द्वारा पद्मा प्रिया को त्यागा जाता है। वह माता–पिता के लिए बोझ बन जाती है। सहेली लावण्या अपनी बहन के विवाह में उसके पति भुवनेश्वर से उसे मिलाती है। भुवनेश्वर का आना जाना प्रारम्भ हो जाता है। पद्मा गर्भवती हो जाती है। भुवनेश्वर सबके सामने स्वीकार करता है कि गर्भ उसका है किन्तु पद्मा उसे सच्चाई से अवगत कराती है कि गर्भ शंकर देव का है। जिस पति द्वारा त्याग दिए जाने पर वह अभिशप्त जीवनयापन करने के लिए वह बाध्य होती है उसके विश्वास को खंडित कर वह पूर्ण प्रतिशोध लेती है। इस कहानी में धर्मकांड से जुड़े पड़े, पुजारियों का नैतिक पतन भी दर्शाया गया है।

"संस्कार" कहानी में – गाँव का पुजारी कृष्णकांत दो बार विवाह कर चुके पीतांबर महाजन को, दो बेटियों की माँ, विधवा दमयंती से विवाह करवाने का प्रलोभन देता है और समय–समय पर पैसे ऐंठता है। पुजारी के चरित्र का दोहरापन इस कथन से उजागर होता है – "इस लड़की ने तो बंगरा ब्राह्मणों की नाक कटवा दी। विधवाओं के लिए तो विधान बना है। इसने उसकी रेड़ मारकर रख दी।" दमयंती दो बेटियों के भरण–पोषण के लिए वेश्याओं सा जीवन व्यतीत करती है किन्तु जाति का खोखलापन व दम पीताम्बर महाजन को विवाह की अनुमति नहीं देता।

"एक अविस्मरणीय यात्रा" में हैबर नामक युवक के द्वारा आतंकवाद का चित्रण हुआ है। सैनिक स्थानीय लड़कियों से प्रेम का नाटक कर उनका जीवन बर्बाद करते हैं। "अरे गंदी कुतिया एक भारतीय सिपाही से प्रेम रचाती है। थू–थू।" "भिक्षा पात्र" की फूलेश्वरी का जीवन एक सैनिक के कारण ही नाटकीय बन जाता है। बूढ़ी औरत जुमकी का फूलेश्वरी को कथन "इन्हीं सैनिकों की वजह से भीखू कुम्हार की बेटी पेट से हो गई थी।

"खाली संदूक" में दैहिक शोषण का अंकन है। तरादोई जिसका ट्रक चालक पति जेल काट रहा है। अपनी तथा बेटियों की परवरिश के लिए हैबर की भोग्या बनने को बाध्य है। इस कहानी में श्मशान घाट में जीवन यापन करने वालों का वर्णन है। श्मशान जैसे स्थान पर देह व्यापार की घटना जुगुप्सा उत्पन्न करती है।

"दूर से दीखती यमुना" प्रेम की आदिम भूख के आधार पर लिखी गई कहानी है। कथा वाचिका सोचती है – "प्रेम की आदिम चाहत को आधुनिक शिक्षा और सभ्यता कभी बदल नहीं सकते, माता–पिता के आत्म सम्मान के पिंजरे में न जाने कितनी प्यार के पलों की चाहत में घायल मासूम सी लड़कियाँ कैद है।

दुनिया के तमाम व्यवहारों को संस्कार से सजाया संवारा जा सकता है, किन्तु प्रेम के मामले में यह सब व्यावहारिक नहीं है। सुनंदा प्रेम की परिभाषा – "शादी के बन्धन से कसा हुआ प्रेम सत्य नहीं है। प्रेम तो अपने आप हो जाता है। प्रेम में कोई नियम या विवशता नहीं होनी चाहिए।" समाज प्रेम की अनुमति नहीं देता। प्रेम की बलि – जाति के नाम पर, धर्म के नाम पर, वर्ग के नाम पर होती ही रही है।

द्वारिका और उसकी बंदूक में दीवान की बेटी नीची जाति के लड़के से प्रेम करती है। दीवान द्वारिका की सहायता से उसे मार्ग से हटाता है। पशु कहानी में गूँगे शहबुद्धीन की व्यथा न बोलने के कारण है। इस प्रकार लाल नदी की कहानियाँ – असम के सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन की ऐतिहासिक प्रस्तुतियाँ करती है। जीवन के विविध पहलुओं से परिचित कराती है। आम जनता के दुख दर्द के साथ रीति रिवाज अंधविश्वासों, मान्यताओं से परिचित कराती है। महानगरों की भयावहता से परिचित कराती है। स्त्री की जीवन गत त्रासदियाँ उजागर करती है। बाजारवाद फैशन विज्ञापन स्त्री विमर्श इन कहानियों के केन्द्र में रहा है। बड़े सरोकारों से जुड़ी इन कहानियों को पढ़ना अपने अनुभव के क्षितिज का विस्तार है।[1]

5.1.13 जय श्री राय

जय श्री राय का कहानी संग्रह – "तुम्हें छू लूँ जरा" में 17 कहानियाँ है। कुछ कहानियों की पृष्ठभूमि गोवा की धरती रही है। इन कहानियों में लेखिका – स्त्री पुरुष सम्बन्धों की तलाश करती है। "एक रात" में शादी, प्रेम और सुहागरात के मायने से परे – एक मानसिक–आत्मिक प्रेम की तलाश में भटकती स्त्री की मनोदशा को प्रस्तुत किया गया है। "एक पुरुष के अहंकार की जय और स्त्री की पराजय का उत्सव उस दिन सनातन गुलामों ने खूब मनाया था।"

स्त्री मन मांसल प्रेम से ऊपर उठकर क्या सोचता है ? यह इस कथन से स्पष्ट होता है "हम औरतों के लिए यह जिस्म ही अधिकतर पिंजरा बन जाता है, चाहती हूँ। इस देह से आगे भी कोई आए वहाँ, जहाँ पशुता की सीमा समाप्त करने इंसान इंसान बनता है। अपनी रूहों के बीच से यह तन की माटी हटाना चाहती हूं, यह हमें एक–दूसरे तक पहुंचने नहीं देती।"

---

1 लाल नदी – इन्दिरा गोस्वामी, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली 2004, 150/– की समीक्षा – विद्या सिंह – लाल नदी के साथ–साथ चलते हुए – स.भा.सा. अंक 125, मई–जून 2006, पृ. 194–196

कहानी की नायिका मंदिरा नायक से कठोर प्रश्न करती है – "किस – किस के मृत सपनों पर, तुम लोगों के कागजी राज प्रासाद खड़े होते हैं? जीवन की विडम्बनाओं को नकद करके तुम लोग अपनी आजीविका चलाते हो, कागज की जमीन पर लफ्जों के व्यापारी हो, नपुंसक बुद्धिजीवी। कहीं यह अहसास तुम्हें रात के किसी पहर जगाता है, सच कहो ?" "माँ" कहानी – महानगरीय पृष्ठभूमि पर आधारित है। गाँव से आई माँ–महानगरीय जीवन शैली के सामने, बहू की शान और शौकत और बेटे की दयनीय स्थिति के बाद सम्बन्धों से सजगता के साथ मोहभंग को दर्शाया गया है।

"हम जीवन" में दया कुढ़ती है – "हमारी आधी संस्कृति तो पुर्तगाली नष्ट कर गए। अब बची हुई आधी ये सैलानी खत्म कर देंगे। जो रूप टी.वी. में दिखता है, कैलेंडर में छपता है, वह हमारा गोवा है क्या ? पूरब का रोम, चल हट, हम दूसरों से ज्यादा हिन्दुस्तानी है, नाच, अंग्रेजी बोली, रहन–सहन, गिने–चुनों का ऊपरी दिखावा होगा, गोवा की आत्मा नहीं।" दया की कुंठा, उत्तर आधुनिक जीवन, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों व बाजार वाद की विकृतियों, विसंगतियों व फैलते सांस्कृतिक प्रदूषण के विरोध में उपजी है।

"बेटी बेचवा" कहानी में – "बेटियाँ कितनी जल्दी बड़ी हो जाती है।" वाक्य में बबुनी के टटके फूल जैसे चेहरे की ओर देखते हुए करेज में जैसे कुछ काँटे सा बिंधा था – अहसास पीड़ा की अभिव्यक्ति है।[1]

5.1.14 तुलसी देवी तिवारी

तुलसी देवी तिवारी – छत्तीसगढ़ का कहानी संग्रह – "सदर बाजार"[2] में 11 कहानियाँ है।

इन कहानियों में लेखिका – हमारी जड़बद्ध, रूढ़िबद्ध परम्पराओं पर प्रश्न चिह्न लगाती है। मानव मूल्यों के साथ संवेदना की तलाश करती है। सामाजिकता का सामूहिक दर्शन कराती है। आचरण का भंडाफोड़ करते हुए समाज का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करती है। वैयक्तिक सामाजिक रिश्तों का आख्यान दर्शाते हुए, स्त्री मुक्ति एवं स्त्रोत की पड़ताल कर सामाजिक विडम्बना का पक्ष प्रस्तुत करती है। "नीलकंठ" कहानी – हमारे समाज के जड़बद्ध स्वरूप को व्यक्त करते हुए शंका के कठघरे में खड़ा कर आध्यात्मिक मुक्ति का पाठ रचती है।[3] भिरात – मातृहीन मेघावी

---

1 श्रीवास्तव मेनका – बंद सीढ़ियों में उलझी गलियाँ, स.भा.सा. अंक 175, सितम्बर–अक्टूबर–2014, पृ.206–208

2 वैभव प्रकाशन – रायपुर – छत्तीसगढ़, 2008, 125/–

3 सिंह जयपाल – जीवन स्पर्श, स.भा.सा. अंक 154, मार्च अप्रैल 2011, पृ.2012–213

ब्राह्मण युवक – चिता द्वारा विजातीय स्त्री से विवाह करने के कारण समाज से बाहर कर दिया जाता है।

कालांतर में शिव भक्त के रूप में ख्याति पाता है नील कंठ के नाम से साधु बनकर सारे संसार के सुख–दुःख में शामिल होता है। यह कहानी विवाह संस्था के विजातीय सम्बन्धों की पड़ताल करती है। "सदर दरवाजा" सांकेतिक रूप में सामंती दरवाजा है। सामंती दरवाजे में समाज के निम्न वर्ग का प्रवेश निषिद्ध है। इस कहानी की केन्द्रीय पात्र मीरा – अविवाहित स्त्री है जो वृद्धाश्रम के प्रति समर्पित है। इस कहानी में – समाज में सामाजिक रिश्तों का लोप। रिश्तों की गर्माहट में कमी। अभिजात्य वर्ग की रागिनी वर्मा का वृद्धाश्रम में जीवन जीने की विवशता का मार्मिक चित्रण है। भाग्य–भारतीय किसान की त्रासदी, पाप अनजाने में बहुरूपिए समाज की विडम्बना, लाजवंती शंका के कारण सम्बन्धों की खटास, को दर्शाती है। इस प्रकार – तुलसी देवी तिवारी की कहानियाँ – ग्राम्य जीवन का आख्यान प्रस्तुत करती है। समय की सच्चाईयों को उजागर करती है। जीवन स्पर्श का अहसास कराती है। चुप्पी तोड़ने की कोशिश की जरूरत को दर्शाती है।

5.1.15 मुक्ता

मुक्ता का कहनी संग्रह – "सीढ़ियों का बाजार"[1] में 11 कहानियाँ है जिनमें आज की स्त्रियों की समस्याओं को समेटने–पहचानने की कोशिशें हैं।[2] इन सारी कहानियों में पुरुष समाज–उपेक्षित, स्त्री दमनकर्ता, प्रताड़क, शोषक रूप में है। "पोखर वैतरणी" में केशव अपनी भाभी आशा का दैहिक शोषण करता है एवं आर्थिक शोषण भी। वह फिक्स डिपॉजिट के एक कागज पर हस्ताक्षर कराने के लिए आशा को मारता – पीटता नजर आता है।

"जनम दुख" में कैलाश यादव मिथिलेश का दैहिक शोषण करता है। जब मिथिलेश उसके मन के खिलाफ कोई काम करती है तो वह कह देता है– "तो तुम अब मेरी जोरु बनने का ख्वाब देख रही हो? अपनी जात के भीतर रहो।" यह कहानी दर्शाती है नारी प्रताड़ना के पीछे पुरुष समाज की मानसिकता है। पढ़ लिख जाने के बाद भी व्यक्ति के अंदर जो अर्थ लिप्सा, बेईमानी, भ्रष्टता है वह नष्ट नहीं होती। हरिजन परिवार की लड़की मुनिया मिथिलेश कुमारी पढ़ लिखकर गाँव के मेटरनिटी सेंटर में नौकरी

---

1 भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली 2006, 90/–

2 सुरेन्द्र तिवारी – सीढ़ियों का बाजार, स.भा.सा. अंक 133, सितम्बर–अक्टूबर 2007, पृ.150–152

करने लगती है। वह वहाँ तमाम हथकंडे अपनाती है जिससे मरीजों से ज्यादा से ज्यादा पैसा बटोरा जा सके। मजबूर और लाचार लोगों को वह खुलकर लूटती है।

कैलाश यादव

उसके कामों में मददगार होता है। उसे ठुकरा देता है। उसकी जाति की पहचान उसे करा देता है। तब उसका भ्रम टूट जाता है। वह कहती है। हमने बचपन से ठाकुर ब्राह्मण की संगत की। बड़कन की तरह बनना चाहा। सारा गाँव हमें मेम साहब कहता है लेकिन आज उसे एक बाबा समझाता है बड़कन की संगत से कुछ नहीं होने वाला। अपनी जात पर अभिमान करना सीखना होगा। हमारा सुराज हमारे अंदर से आएगा। औरत को अब जागना होगा। "संगमरमर की सड़क पर" कहानी में प्रेम के अलग–अलग रंग है स्वच्छन्दता भी तो प्रेम में जान देना जैसी है। जैनी पाश्चात्य सभ्यता में पली बढ़ी युवती है जिसके लिए प्रेम सिर्फ सेक्स का नाम है। किसी भी मर्द के साथ रह लेना उसके लिए एक सहज स्वाभाविक कार्य है।

जब वह नवीन–भारतीय युवक के प्रेम में पड़ती है तब उसे समझ में आता है कि "प्रेम का अर्थ सिर्फ शरीर नहीं होता।" वह अपने पूर्व के सम्बन्धों के कारण स्वयं को नवीन के अयोग्य मानती है। उसके शादी के प्रस्ताव को ठुकराती है। उससे दूर चली जाती है। उसके गम में नवीन नशे में डूब जाता है व नवीन की मौत हो जाती है। पन्द्रह वर्ष पश्चात् जैनी की मुलाकात रूममेट से होती है तो वहाँ चर्च के रूप में जैनी नजर आती है और कहती है – "मैं बार–बार यही सोचती रही कि नवीन मुझे किसी और रूप में स्वीकार कर ले।"

मैं मछली बन जाऊँ वह समुद्र। मैं नन्हीं तितली, वह छायादार वृक्ष। मैं प्यासी कबूतरी वह आकाश। बस में जैनी न रहूँ। प्रतिपल मैंने नवीन में लय होना चाहा, लेकिन यह शरीर बाधा बना रहा। अब तो यही संतोष है कि वह सुखी बना रहे, उसका परिवार उन्नति करें। रूममेट साहब! मैं कह नहीं पाती कि वह उसे बताए कि नवीन अब इस दुनिया में नहीं रहा। आँच में एक शोषित – प्रताड़ित नारी का विद्रोह है। "मंडलावाली" में धार्मिक – सामाजिक रीतियों – कुरीतियों पर प्रहार है। बढ़ते धार्मिक आडम्बरों की ओर संकेत है –

सिरोहावाली कहती है भागवत कथा, राम कथा तो सूनी थी बहू। ये चक्रधारी बच्चू की कथा क्या होवे है ? हमारे जमाने में रामायणी लोगों का नाम भी कोई न जाने था ...। इतना तामझाम। इतना दिखावा हमारे जमाने में न था। दुर्गापूजा के नाम डाकुओं

की तरह उगाही हौवे है आजकल। जितनी शोभा यात्राएँ, जितने जुलूस बढ़े, उतनी मारकाट, खून खराबा, जोर जुलुम बढ़े। हमारे जमाने में ऐसा न था।"

"सीढ़ियों का बाजार" कहानी में बाजार वाद का प्रभाव है। जहाँ फ्लैट की दीवारों पर माँ के चित्र की जगह बाँस की सीढ़ी का होना ज्यादा आवश्यक माना जाता है क्योंकि सीढ़ी का उपयोग है माँ का नहीं। कथा नायिका रमला कहती है – "पता नहीं कैसे मिसेज सक्सेना ने मुझे सीढ़ी बना लिया। मेरे ही कान्टैक्ट्स का फायदा उठाकर उसने अपना प्रमोशन करा लिया। यही है आज के मशीनी युग का सच।"

इस प्रकार मुक्ता की कहानियाँ–सिद्ध करती है –

- नारी शोषण का जो रूप है वह पारिवारिक ही नहीं, धार्मिक और सामाजिक भी है।
- सामाजिक स्थितियाँ इतनी जटिल है कि चाहकर भी व्यक्ति न तो अपना स्वतंत्र विकास कर पाता है, न ही अनेक तरह की विसंगतियों से अपना बचाव कर पाता है।
- बच्चों, अपंगों, वृद्धों, विधवाओं के संरक्षण के नाम पर आज न जाने कितनी संस्थाएं सिर्फ अपना उल्लू सीधा कर रही है।

मुक्ता की कहानियों की स्त्रियाँ मात्र पीड़ा और छटपटाहाट झेलती हो ऐसा नहीं है, वे विवश नहीं है, सूर्य को सम्बोधित करती स्त्रियाँ है।

5.1.16 नीलाक्षी सिंह

नीलाक्षी सिंह का कहानी संग्रह – "परिंदे का इंतजार सा कुछ"[1] नई पीढ़ी, नई सोच, नई उम्र तथा युवा चेतना की कहानियाँ है।[2] 11 कहानियों के इस संग्रह में लेखिका की टकराहट सुनाई देती है – उपभोक्तावादी संस्कृति के बाजारवाद से, साम्प्रदायिकता व आतंकवाद से, स्त्री चेतना विमर्श के पक्ष में, भारतीय समाज के जातीय समीकरणों से, युवा पीढ़ी के प्रेम सम्बन्धों के अवरोधों से तथा नयी पीढ़ी का युवा मानसिकता का सहज साक्षात्कार प्रस्तुत करती है।

"प्रतियोगी" कहानी में पूरे देश के बाजारवाद की गिरफ्त में आने का वर्णन है। देसी बाजार, देसी ढंग पुराने पड़ते गए, छक्कन प्रसाद एंड संस, फास्ट फूड सेंटर का

---

1 भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली 2005, 150/–

2 सिंह पुष्पपाल–युवा चेतना की कहानियाँ, स.भा.सा. अंक 127, सितम्बर–अक्टूबर 2006, पृ. 141–145

प्रतीक बन गया। बमशंकर भंडार और छक्कन प्रसाद एंड संस में प्रतियोगिता से एक दूसरे को पछाड़ने का माद्दा आया। नया मध्यम वर्ग खूब कमाने और खर्च करने का चरित्र रखता है।

"मनुष्य के आँसू" में शहीद की विधवा स्त्री के शोक का केश करके उस पर म्यूजिक एलबम बनाया जाता है। हर चीज को स्त्री देह के इर्द–गिर्द विज्ञापित कर परोसा जाता है। छोटे राजा साहब की बड़ी प्रॉडक्शन कम्पनी "जो लौट के फिर ना आए" शीर्षक से हाल ही में युद्ध में वीरगति प्राप्त हुई शहीद की स्मृति में एलबम बनाती है। यह बताती है कि हर चीज का बाजारीकरण किया जा सकता है।

नीलाक्षी सिंह की इन कहानियों में युवा वर्ग की मानसिकता इस प्रकार प्रकट होती है – उन्होंने अभी तक अपने बौद्धिक पिछड़ेपन और रैंप पर कदम से कदम न मिला पाने पर घोर ग्लानि का अनुभव किया। पहले अब उस तीसरे पात्र तक पहुँचा जाए जो एंट्री मारने के लिए बेहाल है। स्त्री ने सदमें से उबरकर जिंदगी में आगे की तरफ ऊचककर झांकने की कोशिश की। ट्राय की हेलन, सुख–दुःख के आँसू बिखराती, सीढ़ियाँ पार करती, चौखट लाँघती विदा हो गई। दो सौ अस्सी के लगभग मादा मुंड़ो के केशों को शैंपू से चमकाया गया।

बाबरी मस्जिद प्रकरण को – "परिंदे का इंतजार सा कुछ" में साम्प्रदायिकता की मानसिकता के साथ विश्लेषित किया गया है। "फूल" कहानी–जम्मू कश्मीर के आतंकवाद पर है जिसमें भारतीय टीम (क्रिकेट) के उपकप्तान राठौड़ का अपहरण कर भारत सरकार से अपने 24 साथियों की रिहाई की शर्त आतंकवादियों ने रखी है।

स्त्री चेतना से जुड़ी कहानियों में – "उस बरस के मौसम" में – एक गूँगी लड़की के इंटरनेट युगीन प्रेम को चित्रित करते हुए स्त्री चेतना के प्रश्न उठाए जो दूसरी औरत के संदर्भ में स्त्री की स्थिति प्रेम में देह का महत्व किस सीमा तक ? तथा "रंग महल में नाची मीरा" में स्त्री स्वातंत्र्य की कहानियाँ है। इस प्रकार नीलाक्षी सिंह की कहानियाँ – पूर्णतटस्थ स्थिति से विश्लेषण कर समस्याओं की जड़ तक पहुँचने की कोशिशें उस हद तक करती है जहाँ स्त्री इन्सान की तरह जीना चाहती हैं। वे विषय की व्यापकता को नए आयाम देती हैं। स्त्री विमर्श के मुद्दे को बोझिल नहीं बनाती अपितु अपने समय से सीधे टकराने का साहस दिखाती है।

5.1.17 अल्पना मिश्रा

अल्पना मिश्रा[1] की कहानियों का संग्रह – "भीतर का वक्त" स्त्री हौंसलों का दस्तावेज है। इनमें संघर्ष शील स्त्री दिखाई देती है। इन कहानियों में स्त्री – पालतू स्त्री से भिन्न है। वर्तमान स्थिति से तालमेल बिठाने वाली, परिवर्तित परिवेश के अनुकूल स्वयं को ढालने वाली, अपनी जगह बनाने, अपने हिस्से की जिंदगी को, पाने के अथक व अनवरत प्रयत्न करने वाली है। "मैं" कहानी में स्त्री स्वयं को परम्परागत छवि के अनुकूल ढालने के प्रयत्न में लगातार स्वयं के मन को मारती रहती है लेकिन अपनी आत्म चेतना लगातार उसकी उपस्थिति बनाए रखती है। यह चेतना उसे त्रस्त–ग्रस्त बनाए रखती है। उसकी येन–केन–प्रकारेण बनी रहने वाली जिजीविषा उसके समक्ष अस्मिता के सवाल उठाती रहती है।

कावेरी से सिमरन बनी, रंजना से सुलोचना बनी स्त्री क्या सचमुच बदल जाती है ? क्या कभी अपने मूल अस्तित्व की चेतना उसके भीतर नहीं उठती ? ऐसे सवाल लगातार, आत्म मंथन को प्रेरित करते हैं। औरत का सपना, आकाँक्षाऐं, उम्मीदों की अभिव्यक्ति इस कहानी में हुई है। "भय" कहानी में गर्भावस्था से उत्पन्न शंकाओं, देह स्थितियों के अनुभव और अनुभूतियों, उससे जुड़ी ढेरों सामाजिक धारणाओं, परिस्थितियों, सोच, स्त्री के आचरण और उसका अन्तर्मन इत्यादि को अत्याधिक सूक्ष्म व विश्वसनीय तरीके से प्रस्तुत किया गया है।

"दीदी की डायरी" में स्त्री के प्रति समाज और परिवार में पलने वाली उपेक्षा और विद्रोह को उभारा गया है। पूरी कहानी में स्त्री देह और जीवन से जुड़ी अनेक बातें, विडम्बनाएँ, स्थितियाँ, शंकाएँ, प्रश्न उभारे गए है। किस प्रकार माताएँ, बेटियों के लिए, सामाजिक जीवन में, उनकी दोयम दर्जे की भूमिका के लिए, एक छिपा प्रशिक्षण चलाती है, फिर भी उन्हें प्रताड़नाओं अनर्थकारी दबावों के त्रासद परिणामों से नहीं बचा पाती। "कथा के गैर जरूरी प्रदेश में" – लेखिका ने स्त्री–पुरुष के लिए सामाजिक मानदंडों, दायित्वों, अधिकारों के असमान और अन्यायपूर्ण विभाजन और उसके परिणमों को अंकित किया है। "अंधेरी सुरंग के टेढ़े–मेढ़े अक्षर" में परिवार को सन्तुष्ट रखने की आजीवन चेष्टारत स्त्री के मन में दबाई हुई निजता और आकांक्षा का कारुणिक रूप – एक मरणासन्न वृद्धा के माध्यम से रेखांकित हुआ है।

---

1 मिश्र अल्पना – "भीतर का वक्त" भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2006, रूपए 50/– की समीक्षा कुहू चानना द्वारा – हिन्दी कहानी में नई आमद शीर्षक से – स.भा.सा. अंक 129, जनवरी फरवरी, 2007, पृ.194–197

"बेतरतीब" कहानी वृद्ध दम्पति के संबंधों का लेखा–जोखा करती है जो उनके दाम्पत्य के प्रारम्भ से लेकर आज तक पहुँचती है एवं नई पुरानी सारी कड़वाहटों को संजो लेती है। गत जीवन के मृदु अनुभव और आज उनका अभाव, महसूस करती स्त्री, बदलते युग में विगत ही रक्षाशील मान्यता के घेरे को तोड़कर बाहर आई है। माता–पिता के वैवाहिक जीवन के कष्टप्रद स्मृतिजन्य भय ने लड़कियों को विवाह से विमुख कर दिया है। "भीतर का वक्त" – आज की स्त्री के संघर्ष की द्रावक स्थितियों का नए सिरे से परिचय कराती है। उनकी कमजोरियों, शक्ति सम्बन्धों का टूटना, नए सम्बन्धों से गुजरकर जीने की जरूरत के रूप में रेखांकित हुआ है।

इस प्रकार–अल्पना मिश्र की कहानियों में

- आज की प्रश्न करती स्त्री के माध्यम से, समाज के विभेदकारी, असंवेदन शील, अतर्कसंगत स्वरूप का उद्‌घाटन हुआ है।
- जगत का गैर जिम्मेदार चरित्र और स्वभाव पत्नी द्वारा निरन्तर आर्थिक–सामाजिक, दैहिक सहयोग करते जाने के बावजूद निरन्तर तिरस्कार झेलना, कुंठा, असंतोष उजागर होता है।
- पुरुष की काम चेतना का अप्रिय अनुभव करने वाली अरुंधति–पति के संग के बावजूद अपनी देह को क्यों अनछुआ महसूस करती है ? क्यों, उसका पति के साथ तालमेल नहीं बैठ पाता और क्यों उसे देह की सन्तुष्टि नहीं मिलती ? कुंठित पति का निरन्तर आक्षेप करना क्यों उसके व्यक्तित्व में अकेलेपन का अहसास कराता है ?
- इन कहानियों में स्त्री के प्रति तिरस्कार, अन्याय का उद्‌घाटन हुआ है। कारुणिकता का चरम अवस्था तक निरुपण हुआ है।
- क्या यही है हमारा समाज और हम ? कौन – कब सोचेगा ?

स्त्री की छवि में होता बदलाव

आज स्त्री की छवि में होता बदलाव लगातार परिवर्तन को रेखांकित करने लगा है। आज स्त्री बॉयकट कराती है, स्लीवलेस ब्लाउज पहनती है हम आश्चर्य चकित नहीं होते हैं। आठवें दशक तक का विवाह बंधन–लिव इन रिलेशनशिप में बदलने लगा है। स्त्री ने – अधिक से अधिक आत्मविश्वासी, आत्म निर्भर बनकर पुरुष की सत्ता को चुनौती देना प्रारम्भ किया है।

कविता महाजन के अनुसार – "अपना कैरियर, गृहस्थी, पति, घर, बच्चे, परिवार सभी को समेटती, घर को घर बनाए रखती स्त्री, निरन्तर परिस्थितियों के साथ, पुरुष–पिता, पति, पुत्र से गढ़जोड़ बिठाती आगे बढ़ रही है। वह संघर्ष करती है पर उसके काम की कद्र क्यों नहीं होती ?"

गौरी देशपांडे के अनुसार – "काल सेंटर" चलाती, पढ़ी–लिखी आधुनिक स्त्री, शहरी वातावरण से हजारों मील दूर रहकर भी, देहात में, पैतृक परम्परा, रुढ़ि परम्पराओं में जकड़ी, सुख–दुःख–व्यथा, वेदनाओं की गठरी कंधे पर लादे क्यों रात–दिन रपट रही है ?

दादी, नानी, परदादी की सीख लेकर आगे बढ़ती स्त्री – अपने परिवार से अलग नहीं हो सकती। परिवार से अपने को नहीं काटती। न अपने से परिवार को कटने देती है।

विभावरी शिरूरकर ने स्त्री के स्वरूप में परिवर्तन को – घर की चार दीवारी से बाहर निकलने। मनुष्य के रुप में स्थान पाने का प्रयत्न करने। स्त्री के मूल्य मापन की आवश्यकता का अनुभव करने। विद्रोह कर झंडा थामने का रूप उभारा है। कमल देसाई ने स्त्री मन में उठते हुए सवालों के साथ ही स्त्रियों की मानसिकता, मासिक धर्म की मानसिक दशा एवं वर्जनाएं, वैचारिक व भावात्मक बदलाव को उभारा है।

आज की स्त्री सोचती है –

यह कार्य करे या न करे ? करने से लाभ क्या है ? किसके लिए करें? किसका फायदा होगा ? अब वह – आत्मनिष्ठ बन स्वयं निर्णय लेती है। पुरुष सत्ता को झिड़कती है। निज मन को हुँकार देती अपने प्रति ईमानदार है। आजादी को हासिल करती है। वह पुरुष के गुण–दोषों, उसके भले–बुरे के रुप में परखती है फिर स्वीकार करती है। बुद्धिवादी व रोमानी तौर पर सबल है। उसमें छिछोरपन नहीं है। किसी भी प्रकार की उद्दंडता, उच्छृंखलता अथवा उजड़ापन नहीं है। स्त्री–पुरुष सम्बन्ध व सेक्स के बारे में स्पष्ट धारणा रखती है। वह सोचती है – मैं भी एक इन्सान हूं। जब तक मेरे भीतर का इन्सान जीवंत है, तब तक दया, माया, स्नेह, प्रेम, सद्भाव, सहानुभूति, समानानुभूति स्त्री–पुरुष के प्रति, पुरुष का स्त्री के प्रति आकर्षण तो बना रहेगा। वह निडर होकर जवाब भी देती है। किसी के कहने सुनने की परवाह नहीं करती। स्त्री का पीड़ित, शोषित, प्रताड़ित, लांछित, अपमानित, अवहेलित, तिरस्कृत स्वरूप अब उसे हार न मानने की स्थिति में खड़ा करता है। यथार्थवादी बनाता है।

बहते ग्लेशियर–संतोष श्रीवास्तव, शहर में अकेली लड़की–उर्मिला शिरीष, परिणति–दीप्ति कुलश्रेष्ठ, इक्कीसवीं सदी का लड़का–क्षमा शर्मा महिला कथाकारों की कहानियाँ है।[1] जो अपने समय से मुठभेड़ के बाद एक नई और ज्यादा खुली आजाद औरत के लिए जमीन तैयार करती कहानियों के संग्रह है। इनमें स्त्री को माननीय संवेदना की, अस्मिता की एक ऐसी इकाई के रुप में परखा गया है जिसमें आत्मिक बल और साहस अधिक है।

दाह संस्कार (संतोष श्रीवास्तव) में पति के पटरी से अलग हो जाने पर, वह उसके आगे गिड़गिड़ाती नहीं है, बल्कि बीते हुए रिश्ते का दाह संस्कार करके एक नई जिन्दगी जीने के लिए आगे बढ़ जाती है।

"मछली" में स्त्री को पति द्वारा भोग वासना का एक यन्त्र या मछली समझे जाने पर वह उसे निर्भयता से ठुकराकर अपने साहस का परिचय देती है।

बहते ग्लेशियर – एक नई बनती हुई औरत की कथा है जो पुराने जर्जर अतीत और धोखों से सबक लेकर एक नई और मजबूत राह पर आ गई है। प्रभा जो बचपन में चुन्नी हुआ करती थी, समीर उस पर पैर रखता हुआ आगे निकल गया अपनी सफलता की राह पर। वही समीर प्रभा के सामने फिर उपस्थित होता है जब वह – एक नए शहर में व्याख्याता हो गई है। उसके पास अपना छोटा सा क्वार्टर व एक सुखभरा जीवन है। प्रभा आत्म सम्मान से समीर को कहती है – "जाओ मुझे अकेला छोड़ दो। क्यों छलना चाहते हो मुझे दोबारा ?"

"सैलाब" कहानी में जसबीर को उसके बेटे व बहू बाढ़ में डूबने के लिए छोड़ जाते हैं और उसे बचाता है उस गाँव का रहीम। यह कहानी आधुनिकता के उस सैलाब की कहानी है जिसमें रिश्ते बेमानी होते जा रहे हैं।

शहर में अकेली लड़की–उर्मिला शिरीष की 8 कहानियों का संग्रह है।

"शहर में अकेली लड़की" कहानी स्त्री की उस यन्त्रणा को कहती है जिसमें किसी स्त्री का अकेले रहना हजार अफवाहों को जन्म देता है। दीदी–जो ससुराल में भयानक यातनाएँ झेल रही किसी तरह जिंदा लौट आई है वह अपनी थीसिस पूरा करने की चिन्ता में है। "झूलानट" में एक नौकरी पेशा स्त्री का सच्चा दुख है जो लगातार घर और दफ्तर के बीच एक झूला सा झूलती रहती है। उसकी चिन्ताओं का कोई अंत नहीं

---

1 ये कहानी संग्रह – यात्री प्रकाशन दिल्ली, 1999, पारुल प्रकाशन दिल्ली, 1998, राजस्थानी ग्रन्थागार जोधपुर, 1999 व सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली–1999 में प्रकाशित हुए है।

है। वह अपनी चिन्ताओं में नितान्त अकेली है। पति सिर्फ पुरुष होने के नाते आसानी से मुक्ति पा लेता है।

"वानप्रस्थ" में एक बूढ़ी और असहाय स्त्री का दर्द है जिसके लिए बेटा–बहू सभी पराए हो जाते हैं। परिणति दीप्ति कुलश्रेष्ठ की 11 कहानियों का संग्रह है। इक्कीसवीं सदी का लड़का–क्षमा शर्मा की कहानियों का संग्रह है। अनोखी साक्षी – स्नेह ठाकुर जी 12 कहानियों का संग्रह है जिनमें कामकाजी महिलाओं का संघर्ष तथा जीवन के विविध पहलू है। "नारी मन" में एक कामकाजी महिला के माँ बनने के बाद की जीवन शैली का विवेचन है।

यह कहानी दफ्तर से छुट्टी लेने बच्चे के जन्म के बाद देखभाल करने दुबारा काम पर जाने में बच्चे की चिंता महानगरीय बोध को उभारती है। अनोखा साथी एक मासूम बच्ची के अपने पालतू कुत्ते के साथ खोने की कहानी है। अंध विश्वासी धर्मान्धता में उद्देश्य लोगों की सेवा करना नहीं, शराब पीकर मौज मस्ती करना रह गया है।

पराया या अपना एक ऐसे दम्पति की कहानी है जो अनाथ बच्चों को अपने परिवार में शामिल कर लेते हैं और उन्हें बेहतर जिंदगी देने के लिए अपनी सुविधाओं में कटौती करते हैं।

दुर्घटना या प्रारब्ध कहानी में एक औरत जो विदेश में बसती है अपने बीमार पिता को देखने भारत आती है और नई दिल्ली से लखनऊ के बीच यात्रा की कठिनाइयों को अनुभव करती है। अकेली महिला को भारत में कई खतरों का सामना करना पड़ता है। निकम्मापन सफल विवाह की कुंजी है में पति के निकम्मेपन के कारण पत्नी जली कटी सुनाने का अंकन है। इस प्रकार स्नेह ठाकुर ने इन कहानियों में अकेली महिलाओं, कामकाजी दम्पतियों के जीवन में आने वाली मुश्किलों का चित्रण किया है।[1]

1. आर्थिक मुक्ति के लिए संघर्ष

आर्थिक जगत – पुरुषों का अधिकार क्षेत्र माना जाता रहा है, लेकिन जब से स्त्री विमर्श पैरोकारों ने महिला को आर्थिक दृष्टि से आत्म निर्भर बनाने – बनने में पहल की है, स्त्री भी पुरुष की तरह उतनी ही जिम्मेदारियाँ उठाने व सोचने लगी हैं अब औरत भी कमाती है, खर्च करती है तथा पैसा बचाने की न सिर्फ सोचती है अपितु बचाती भी है।

---

1 नवराज प्रकाश, दिल्ली, 2010, 400/–

चित्रा मुद्गल की कहानी "आँगन की चिड़ियाँ"[1] में दीवू दिव्या–आर्थिक पक्ष पर नए सिरे से विचार करती है तथा "लिव इन रिलेशनशिप" की जीवनशैली अपनाकर स्वयं को परिवर्तन की राह पर आगे बढ़ाती है। पाठक जी – आर्थिक पक्ष पर काफी जागरूक व संवेदनशील है। सेवा निवृति के बाद घरेलू उपयोग की सामान – "कैंटीन में घरेलू जरूरतों की चीजें किफायती दामों पर मिल जाती हैं" सोचते हैं। वे आश्वस्त हैं – "छठा पे कमीशन आ रहा है। लागू होते ही हाथ सिकोड़ने से काफी राहत मिलेगी।" वे अभी से गुणा–भाग करने में व्यस्त हो जाते हैं। जब से लागू होगा, पिछले बकाया की तगड़ी रकम हाथ में आएगी। दीवू के ब्याह – लगन की चिन्ता से मुक्त है।

जब दीवू – गुड़गाँव से फोन करके कहती है कि – "जिन तीन लड़कियों के साथ वह साझे का फ्लैट लेकर रह रही है, उनके साथ अब उनका निर्वाह संभव नहीं" वह स्पष्ट सोचती है क्यों सहूं उनकी ज्यादतियाँ? क्यों झेलू उसके (शोमनी) ऐब ? छह हजार अपने हिस्से का दे रही हूँ हर महीने, दस हजार और मिलाकर अपना अलग घर न ले लूं ? माँ दबी जबान से असहमति जताती है – "अकेले रहने और तीन के संग रहने में कई है दीवारे" ही ऐब की बात तो सुन लो जब चार जने मिलकर रहते हैं तो उन्हें एक–दूसरे के छोटे–मोटे ऐब तो झेलने ही पड़ते हैं। हमने भी झेलें हैं।

दीवू अपनी माँ को मुँहफट शब्दों में कह देती है – "माँ बाहर किराए का मकान लेकर रहना तुम्हारे लिए संभव नहीं था। नानाजी की हैसियत भी तो संभव नहीं थी।" माँ दीवू–दिव्या की बातों में उलझ जाती है घर की टूटन से छीपी हुई बच्ची है। महानगर का अकेलापन अब कौनसा, रूपधर लता सा चिपक जाएगा कहना मुश्किल है। माँ छतीस साल पुराने गद्दे को घुनकवा कर नए खोल के साथ वापस भरवाने को लेकर खर्चे का हिसाब लगाती है। माँ यह सोचकर राहत अनुभव करती है कि – "अपनी परेशानियों का समाधान बच्चे अब स्वयं खोजने लगे हैं।"

दीवू डेढ़ महीने बाद बताती है – "दो शयन कक्षों वाला एक छोटा सा फ्लैट किराए पर ले लिया है। अग्रिम दे चुकी है वह।" अठारह हजार किराए की रकम है। माँ को बेटी का निर्णय ठीक लगता है नहीं झेलना होगा उसे औरों की मर्जी। उसका सोचना गलत भी नहीं लग रहा। हम लोग आते जाते रहेंगे उसके पास।

दीवू की एम.बी.ए. पास करते ही अमरीकन सॉफ्टवेयर कम्पनी में साढ़े तीन लाख रुपए सालाना में नौकरी लग जाती है। एक साल का प्रोबेशन पीरियड है।[2] दीवू खुद

---

1 स.भा.सा. अंक 157, सितम्बर–अक्टूबर 2011, पृ.89–102
2 वहीं, पृ.93

बताती है कि – आई.एम.टी. के सहपाठी–विकी ने (विवेक साहनी) फ्लैट तलाशने में बहुत मदद की, यह जर्मन फर्म में गुड़गाँव है। योग्यता प्राप्त लड़की आर्थिक जगत की ऊँचाईयों को छूती अपनी सफलता का अहसास और इजहार करती है। अगले हफ्ते वह एक नई अन्य विदेशी कम्पनी ज्वाईन करने जा रही है। साढ़े बारह लाख रुपए साल का पैकेज है। नई कम्पनी जे.जे.जे. ज्वाईन करते ही उसे एक प्रशिक्षण के तहत जेनेवा जाना है। जेनेवा से सवा महीने बाद लौटना होगा।[1]

दीवू जेनेवा से प्रशिक्षण पूरा करके लौटने से पहले हांगकांग, आस्ट्रेलिया, अमेरीका की यात्रा कर लेती हैं। चित्रा मुद्‌गल इस कथन से यह दर्शाती है कि "अर्थ जगत में अपने पैरों पर खड़ी आज की पढ़ी लिखी युवती अपने निर्णय स्वयं लेने लगी है।" दीवू का एक पाँव हवाई जहाज में ही बना रहता है।[2]

पाठक जी बेटी के ब्याह का गणित बिठाते हैं "उनके हिस्से के गाँव की छह बीघा जमीन के नौ लाख बनते है। सिक्स पे कमीशन की रकम व नौ लाख से दीवू के भँवरों की चिन्ता से उन्हें मुक्ति मिलेगी।"[3] चित्रा की इस कहानी में दीवू–दिव्या–आर्थिक दृष्टि से समायोजन बिठाते हुए बिना फेरों के साथ रहने का निश्चय कर लेते हैं।[4] और सोचते है – माँ तुम आ गई हा तो हमारे सम्बन्धों पर अब मुहर लग जाएगी। चित्रा मुद्‌गल बिना फेरे साथ रहने की स्थिति के रूप में अपना आर्थिक–सामाजिक समाधान इस कहानी के द्वारा प्रस्तुत करती है।

सूर्य बाला की कहानी – "सप्ताहांत का ब्रेकफास्ट" में आर्थिक दृष्टि से सम्पन्नता का वातावरण अमेरिका में रह रहे बेटे–बहू से व्यक्त होता है – घर में हीटिंग सिस्टम, स्वचालित रिमोट, डिजिटल एल्बम पर सरकती तस्वीरें, चारों तरफ सुविधा, सम्पन्नता, प्रचुरता और समृद्धि है।[5] है पर जिन्दगी की भागम भाग तो है ही – बेटा कहता है – "पापा–मम्मी, प्लीज आप लोग ठीक से ब्रेकफास्ट कर लीजिए। फ्रूट्स भी हैं फ्रिज में जूस भी। मैं चलता हूँ – ओ.के.।"[6] बहू लेपटाप लिए सीढ़ियाँ उतर जाती है और सामने रह जाते हैं – "टेबल पर दुनिया की बेहतरीन क्राकरी की प्लेटें और प्याले, कुछ खाए, कुछ अनखाए, कुछ पूरी तरह खाली।" सूर्य बाला – विदेशी बेटे – बहू के साथ लेडी हेल्प मैक्सिकन लेडी के रूप में, ताशा के रूप में आधुनिक आर्थिक समृद्धि की झलक

---

1 वहीं, पृ.95
2 वहीं, पृ.95
3 वहीं, पृ.97
4 वहीं, पृ.102
5 सूर्यबाला – "सप्ताहांत का ब्रेकफास्ट", वहीं पृ.111–114
6 वहीं, पृ.114

प्रस्तुत करती है। दौड़ भाग के बीच चलते जीवन का अंकन भी समायोजन के रूप में उभरता है।

चित्रा – पढ़ी लिखी लड़की (बहू) का लेडी हेल्प के माध्यम से बच्चों को संभालने का समाधान भी प्रस्तुत करती है। यहाँ पर मुक्ति है पर संघर्ष तो जारी रहता है – समय के साथ। कुसुम अंसल की कहानी – "दास्ताने कबूतर" में सड़क के फुटपाथ पर एक बच्चे के जन्म की घटना को आर्थिक विपन्नता के रूप में देखा जा सकता है – पता है फिर क्या हुआ ? जब उस लड़की से और नहीं सहा गया तो उसने हारकर अपने पैर फैला दिए। उसकी मैलीफटी सलवार पर एक नन्हा सा बच्चा फिसलकर आ गिरा।[1] अंसल का प्रश्न क्या ऐसे ही बच्चे पैदा हो सकते हैं सड़क पर ? प्रश्न है – तुम्हारे रोने से क्या होगा ? क्या इंसानों की दुनिया में ईमान को ग्रहण लग गया है ? क्या ऐसा ही होता है इंसान का जमीर ?[2]

सुषमा मुनीन्द्र की कहानी – "न मौका है न दस्तूर" एक ब्राह्मण परिवार की कहानी है जिसे आर्थिक संघर्ष के दौर से गुजरना पड़ता है। बैलदार की कोई जात नहीं होती जो उसकी जात पंडित ब्राह्मण जान जाता वह काम पर नहीं रखता। जाति न बताना ही इस आर्थिक संघर्ष से मुक्ति का उपाय है। राधिका रमण अमौधा का ब्राह्मण परिवार – नलिन के लिए वैवाहिक प्रस्ताव आया तो वह प्रसन्न नहीं आहत हुआ। हमारे पास तरीके का खाना कपड़ा नहीं है। कौन बेवकूफ अपनी लड़की देना चाहता है ? बाबू ब्राह्मणों को दुल्हन भले ही मिल जाए रोजगार नहीं मिलता।[3]

नतिन की इच्छा के विपरीत लीला से शादी हो गई। लीला पढ़ी लिखी स्नातक थी – "हमारे लिए एक दो कायदे का कमरा नहीं है, लेकिन तुम्हें शादी की बड़ी जल्दी थी।"[4] सीता रमण को लीला की नौकरी करने की मंशा खानदान को बट्टा लगाने जैसी बात लगी। बेरोजगारी – आर्थिक जगत से जुड़ी समस्या है । पाय लागी न कहो, यह हम लोगों के ब्राह्मण होने के घमंड को बढ़ा देती है। हमारे परिवार की दशा जानते ही हो। खेती, किसानी, पुरोहिताई से अब पेट नहीं चलता। हम लोगों को नौकरी चाहिए जो मिल नहीं रही।[5]

---

1 स.भा.सा. 156, जुलाई–अगस्त 2011, पृ.163
2 वहीं, पृ.164
3 सुषमा मुनीन्द्र – न मौका है न दस्तूर, स.भा.सा. अंक 179 – मई–जून 2015, पृ.58–68 (पृ. 39)
4 वहीं, पृ.59
5 वहीं, पृ.60

लीला शहर जाकर आँगनबाड़ी में नौकरी करने लगती है और नलिन किराने की दुकान पर बनिए के यहाँ सामान तोलता है। एक ग्राहक महिला कहती है – "सेठ तुम अपने कर्मचारियों को इस तरह अपमानित करते हो? काम तो यह ठीक कर रहा है। मैं ऐसी दुकान में नहीं आऊँगी जहाँ इन्सान को इन्सान नहीं समझा जाता।"[1] सेठ उसे काम से निकाल देता है। फिर वह नोन स्टीक बर्तनों की सेल्समेनशिप करता है। डोर–टू–डोर जाकर लेकिन डीलर ने काम से हटा दिया नलिन तुम्हारे पास धीरज, सक्रियता और अड़ियल भाव नहीं है। डोर–टू–डोर एप्रोच बनाने के लिए, ग्राहक को रिझाने के लिए बहुत मेहनत करनी पड़ती है। तुमसे नहीं होगा।"[2]

उसके बाद दद्दू के साथ बेलदारी करने जाता है। जहाँ पर मिस्त्री सेठुओं से हँसकर बातें ज्यादा करता है काम पर ध्यान नहीं देता। सेठुआ कहती है – इस गोरे को देखें कितना गुस्सा करता है। नलिन कह देता है – मैं मिस्त्री जैसा दीवाना नहीं हूँ। मिस्त्री को अपनी पोजीशन कमजोर लगती है – बेलदार तुम ठाकुरों की तरह बात–बात पर काहे तमतमा जाते हो? ठाकुर की औलाद लगते हो। पूछना अपनी महतारी से।[3] इस पर वह वहाँ से भी काम से हाथ धोने को विवश होता है। वह मिस्त्री से कहता है – मैं ब्राह्मण हूँ। अमौधा में मेरे खानदान की इज्जत हैं। दद्दू कहते हैं – "ये तो कहते हैं दद्दू मेरी पहचान किसी को न बताया करो। लोग सहानुभूति से देखते हैं या हिकारत से – कि ब्राह्मणों के इतने बुरे दिन आ गए बेलदारी करने लगे है।"[4]

ज्योत्स्ना मिलन की कहानी – "कुसमा धर्मराज" में आर्थिक तंत्र की कमजोरियाँ, स्त्री का अमातृत्व, दहेज का अभाव आदि का चित्रण है। आर्थिक कमजोरी व्यक्ति को कसूरवार घोषित कर देता है। कुसमा का यही कसूर था – वह गरीब घर की थी । वह सम्पन्न घर से नहीं आई थी। बहुत कुछ लेकर नहीं आई थी। वह लगभग खाली हाथ आई थी। शादी के छः सात साल तक उसके कोई बच्चा नहीं हुआ था।[5]

जब उसकी सास ने धर्मराज को कहा – "सुन तो धर्मा इसको ले जाकर छोड़ आ अपने घर। इसमें रखा ही क्या है, न देखने की न सुनने की ऊपर से फटी तक नहीं।"[6] धर्मा ने अम्मा को जवाब इस तरह से दिया। अपने घर में ही तो है यहाँ। अब

---

1 वहीं, पृ.61
2 वहीं, पृ.63
3 वहीं, पृ.65
4 वहीं, पृ.65
5 कुसमा धर्मराज कहानी – ज्योत्स्ना मिलन स.भा.सा. अंक 158, नवम्बर–दिसम्बर 2011, पृ. 53–63
6 वहीं, पृ.54

और कौन से घर छोड़ आऊँ इसे ? ब्याह कर लाया था कि नहीं इसे ? कहीं से उठाकर तो लाया नहीं था कि फिर वहीं छोड़ आऊँ। इसके फरवे न फरवे में कसूर इसी का है।

यह किसने कह दिया ? क्या जाने मेरी वजह से न फरी हो।[1] जब पति औरत का साथ दे तो समस्याएँ ज्यादा नहीं सताती। एक दिन धर्मराज ने अपनी अम्मा से कह ही दिया। अम्मारी बहुत हो गया अब और नहीं। लो लिए जा रहा हूँ कुसमा को अपन घर। अब तो खुश ? चैन से रहो अब"[2] और दोनों लगभग खाली हाथ शहर में आ गए। धर्मराज काम करने लगा और कुसमा पाँच घरों में खाना बनाने का काम करने लगी।

यह कहानी बताती है कि आर्थिक तंगी से काम करके ही निपटा जा सकता है – काम कोई भी हो –ओहो कुसमा। अब इसमें सोचना क्या है ? मैं हिसाब किताब रखने का काम जानता हूँ इसलिए किसी दफ्तर में हिसाब किताब का काम करता हूँ। तुम खाना पकाना जानती हो तो खाना पकाओ। खाना पकाना भी तो एक काम है। किसी भी दूसरे काम की तरह। फिर काम तो काम ही है। इसमें क्या बुराई है ?[3]

काम करना कोई बुरी बात नहीं मानता। चोरी चकारी तो नहीं करती। जब लोगों को पता चलता है कि पैसे कमाती हो तो सब फालतू की बातें करना बंद हो जाता है। घरों में खाना पकाने वाली कुसमा उसके गाँव की सरपंच भी थी। उसने गाँव के विकास के लिए कई कार्य करवाए।

कुसमा – स्वयं के लिए मकान बनवाने से पहले गाँव के विकास के लिए काम करवाती है क्योंकि लोगों ने उस पर भरोसा करके वोट दिया था। इसलिए यह कहानी दर्शाती है कि आर्थिक कष्ट के संकटों से मुक्ति पाने के लिए कार्य करना चाहिए। लेखिका ने संघर्ष मुक्ति का उपाय दो पैसा ईमानदारी से कमाना ही समस्या का समाधान बताया है।

2. सामाजिक रूढ़ियों से मुक्ति के लिए संघर्ष

स्त्री के सामने कई संकट है। क्या स्त्री को पत्नी रूप में खाने–पीने रहने की जगह मात्र से सन्तुष्ट हो जाना चाहिए ? माँग में सिंदूर के अलावा कौन सा सुख चाहिए ? क्या स्त्री बाहर के सुख व भीतर के सुख में अन्तर करना छोड़ ही दे ?

---

1 वहीं, पृ.54
2 वहीं, पृ.55
3 वहीं, पृ.60

"कितना मुश्किल होता है किसी के दुख को अपने दुख जैसा समझना।" आशा पांडेय चबूतरे का सच कहानी[1] में यह कथन व्यक्त करती है। उर्मिला अपने ससुराल को जानती है – कई वर्षों तक सास के कहे – अनकहे भावों को पढ़ती रहने के कारण, पति से पोर–पोर परिचित होने के कारण – जहाँ विरोध का एक भी शब्द नहीं सहा जाता के व्यवहार के कारण।

उर्मिला दूसरा विवाह करने की सामाजिक रूढ़ि से त्रस्त न हो इसीलिए उसके हृदय में लावा फूटा। ससुर से अपनी कमियों को जानना चाहा, सास के आगे गिड़गिड़ाई। रघुवीर सिंह को सोचने के लिए उसके पक्ष में नहीं कर पाई। क्या कमी है मेरे मैं का भी उत्तर नहीं ढूँढ पाई। निस्सहाय अवस्था में उर्मिला–की पथराई आँखें क्यों है ? क्यों रोना छोड़ दिया ? क्यों कर दी गई घर से बेदखल ? समाज में पुरुष का अधिकार वाला सोच–स्त्री को कुछ नहीं समझना, पैर की जूती समझना–एक रूढ़ि है। पतित कहकर–ठुकराना, सती–कहकर महिमा मंडित करना भी रूढ़िगत संस्कार है। संतान न होना भी स्त्री पर आरोप मढ़ने को–सामाजिक रूढ़ि है। सास–ससुर के सामने घूँघट निकाल कर रहना, न बोलना भी सामाजिक रूढ़िगत रिवाज है सामने बोलना बदजबानी मानना भी इससे अलग नहीं है।

इन रूढ़ियों के विरूद्ध तनकर खड़ी होती है उर्मिला –

- लड़कियों की पढ़ाई–लिखाई की तरफ ध्यान नहीं देने,
- घर की बहुओं को दबाकर रखने, सास द्वारा गालियां सुनाने,
- पति का मिजाज गर्म रहने, संतान न होने पर दूसरा विवाह करने, झूठा चारित्रिक लांछन लगाकर प्रताड़ित करने के विरूद्ध।

उर्मिला को जब दुश्चरित्रा कहकर घर से निकाला जाता है तो उसका आक्रोश बढ़ जाता है और वह – डर, भय लज्जा संकोच से भरी होकर भी अपनी आंतरिक चुभन और कसक के कारण अलग साबित होती है। अन्याय के विरोध में खड़ी होती है। वह कहती है – अगर दंड देना है तो अपने बेटे को दो, जो मुझे असहाय छोड़कर भाग आया। उसका सोचना गलत निकला कि – "उसका पति रघुवीर सिंह पछताकर किसी दिन आएगा तथा अपनी गलती स्वीकार करेगा।" वह स्वप्न, इच्छाऐं, उम्मीदें, सबसे बढ़कर अपना स्वाभिमान मानती है, उसे पगली समझा जाता है। उसकी भाषा दो

---

1 स.भा.सा. अंक 138, जुलाई–अगस्त 2008, पृ.55

टूक–तीखी होती जाती है जैसे – "पति द्वारा छोड़ी गई औरत, इतनी भी कमजोर नहीं होती कि हर कोई हमदर्दी दिखाकर भुनाना चाहे।"

जब उसका पति – उस पर गंदी जबान में बोलता है कि – खाली बाल्टी लिए यार के इंतजार में बैठी हो, पूछ रही हो कैसी चोरी ? तो वह ईंट का जवाब पत्थर जैसा ही देती है "खबरदार जबान संभालकर बात करो, मैं किसी का भी इंतजार करूं, तुमसे मतलब ?" यहाँ पर वह डरपोक भीरू नहीं निडर व मुँहतोड़ जवाब देने वाली साहसी स्त्री है। वह फुफकार कर कहती है – "चुप्प, मैं कहती हूँ बिल्कुल चुप्प, बदनामी की फिक्र तुम्हें हो गई? तुम्हें? गिद्दों के बीच मुझे छोड़ आए थे तब नहीं हुई तुम्हारी बदनामी? सालों से दूसरों के घरों की चाकरी कर रही हूँ, तब नहीं होती तुम्हारी बदनामी ? तुम कौन होते हो मुझे रोकने वाले ? दूसरी शादी कर चुके हो, किस रिश्ते से अधिकार जमा रहे हो ? मैं क्या करती हूँ क्या नहीं करती हूँ, इसका हिसाब तुम रखोगे ? तुम ? मुझमें क्या सोचने, समझने की शक्ति नहीं है ?

लेकिन समाज का घेरा बहुत कठोर है वह लड़ती तो है पर कठोर घेरे को तोड़ नहीं पाती है। दो बाल्टी पानी भर देने की सजा रघुबीर बिहारी को बहुत बुरा मारकर देता है। उसे सही पागल कहकर पीपल के पास चबूतरा बनवाकर झूठी शान का डंका पीटा जाता है। खानदान का दबदबा कायम रखा जाता है। उर्मिला का चरित्र – सामाजिक रूढ़ियों से टक्कर लेकर उन्हें तोड़ने की कोशिश वाला स्त्री पात्र चरित्र है। जो यह भी सिद्ध करता है कि – असफलता ही सफलता की कुंजी है।

कृष्ण कुमार आशू की एक कहानी "बेटियाँ" शीर्षक से[1] "बेटियाँ पिता को कमजोर नहीं बनाती, अपितु वे तो शक्ति का वह अजस्त्र स्त्रोत है जो पूरे परिवार को गरिमा से भर देता है।[2] यहाँ पर कुसुम का कथन रेखांकित योग्य है – "जीवन में आप कभी नहीं हारे। अगर इस बार हार गए तो आप, मैं और मम्मी क्या जीते जी मर नहीं जाएँगे ? जो सुषमा के साथ हुआ, वह मेरे साथ होता तो भी क्या आप बयान देने से पहले इतना विचलित होते ?"[3] यहाँ बेटी सामाजिक रूढ़ि से टक्कर लेने की प्रेरणा देती है।

महाश्वेता देवी की कहानी – "कृष्णद्वादशी" की वणिक वधू माधवी का पति सायन सूदूर पूर्वी क्षेत्रों में व्यापार के लिए जाता है। वह सायन के आगमन की प्रार्थना के लिए गंगा तट पर फूल तुलसीदल दीप अर्पित कर प्रार्थना करती है। राजा का साला कुमार दत्त घात लगाकर स्त्रीत्व को हरण करने की कुचेष्टा करता है। राजसभा में

---

1 कृष्ण कुमार आशू – बेटियाँ स.भा.सा. अंक 133, सितम्बर–अक्टूबर 2007, पृ.133–136

2 वहीं, पृ.136

3 वहीं, पृ.136

माधवी न्याय मांगती है – जीत जनसत्ता की होती है। सभासदगण – आप सभी मेरूदंडहीन पौरुषहीन है। माधवी ने आप सभी को निरावरण कर दिया है। आज इस देश का शासक व उसकी स्तुति गाने वाले नपुंसक हो गए हैं। इस राज्य का ध्वंस होगा ? वंश के भाग्य का सूर्य अस्त होने वाला है?[1] केवल किवंदती में भी एक स्वतंत्र चेता स्त्री का प्रचलित व्यवस्थाओं के प्रति प्रतिरोध व्यक्त होता है।[2]

मंजुला राणा अपनी कहानी – "जयघोष" में बेटी के जन्म के परम्परागत रूढ़िवादी संस्कारों को तोड़ती हुई कहती है – अरी बावली! औरत तो घर का आँगन होती है। बेटियाँ वैदिक ऋचाएं है। माँ ने तो हमें कभी भाई समझा ही नहीं।"[3]

माँ एक स्त्री होती है और वह बेटी – स्त्री रूप की पीड़ा को जानकर आधुनिक विचारों से जोड़कर समझाती है – "मरजानियों पढ़ लो। मैं दिन भर तुम्हारे लिए ही तो खटती रहती हूँ। अगर नहीं पढ़ोगी तो तुम्हारा बाप तुम्हें ब्याह देगा। फिर खटना मेरी तरह चूल्हे–चौके में।"[4] हमेशा बेटियों में अपनी परछाई देखने वाली माँ को बेटा "सफेद हाथी" लगता है। उन्हें तो हर कीमत पर पालना ही हैं।

पुराने जमाने में स्त्री को – दिन भर घर और घर का काम, बच्चे बनाने की मशीन माना जाता था। बस पढ़ना ही इस सामाजिक रूढ़िगत सोच से मुक्ति है। कई बार पिता–पति बने व्यक्ति को यह अहसास ही नहीं होता कि – औरत को रोटी और कपड़े के अलावा भी कुछ चाहिए। उन्हें तो वंश चलाना था पर अंदर के खालीपन को माँ की आँखों में देखा जा सकता था।"[5] सामाजिक रूढ़ियाँ शारीरिक अंतरंगता को स्थान देती है और मानसिक अंतरंगता को बिसराने भूल जाने की नसीहत लेकिन क्या वास्तव में ऐसा हो पाता है ? का उत्तर मंजुला राणा नहीं के रूप में देती हुई लिखती है –

- राख में दबी चिनगारी कभी तो अपनी चमक छोड़ ही देती है।
- उम्र के चालीसवें पायदान पर नीलाभ का माँ के जीवन में दोबारा प्रवेश हुआ।
- अब तक वह चार बच्चों की माँ बन चुकी थी।
- उसे अपने गाँव की पगडंडी बहुत याद आती थी।
- अचानक उसे एक साथी मिल गया।
- जिसकी उसे जरूरत भी थी।

---

1 स.भा.सा. 98 मई–जून, 1991, पृ.196–197
2 वहीं, पृ.197
3 मंजुला राणा – जयघोष स.भा.सा. अंक 187, सितम्बर–अक्टूबर 2016, पृ.108–111
4 वहीं, पृ.108
5 वहीं, पृ.109

- दोनों में बस मानसिक अंतरंगता थी।"[1]

नीलाभ के आते ही –

- माँ की बेचैनी बढ़ जाती थी।
- वह चाय चढ़ा देती थी
- बेटियों को पुकार कर जाओ बैठक में चाय दे आओ
- पल्लू में बंधी रेजगारी से बगल की खोली से बिस्कुट का पैकेट मँगवा कर रख लेती थी।
- अपने हिस्से का हलवा ढक कर रख देती थी।

अनुपमा (माँ) के पति ने –

- अंतिम समय में गंगाजली का धर्म निभाया।
- नाम गोत्र जाति सब दी सिर्फ प्यार ही तो नहीं दिया।
- चार–चार बच्चों की जननी होने का गौरव क्या कम है ?[2]

इस कहानी में तमाम सामाजिक रूढ़ियाँ टूट जाती है – एक बेटा अपनी माँ के प्रेमी नीलाभ से मिलकर एक नई स्वीकारोक्ति देता है –

नलिन सीधा मंदाकिनी तट पहुँचा। उसने पीछे से जकड़कर नीलाभ को झकझोरा। दोनों एक दूसरे से लिपटकर रोने लगे। एक ने अपनी माँ खोई थी तो दूसरे ने अपनी जिंदगी। एक बेटे ने प्रेम को स्वीकारोक्ति दी। नलिन ने उसके पैर पकड़ लिए और कहा – "मैं आपको कोई सम्बोधन तो नहीं दे सकता पर आप मेरे लिए मेरी माँ जितने ही प्यारे है। आखिर आप मेरी माँ की जिन्दगी थे।" दोनों ने अपनी अपनी भावनाओं को शब्द दिए और उसी जगह अंजलि बाँधकर खड़े रहे। नलिन ने उसके चेहरे पर विजय की आभा देखी और कहा – "मैं तुम्हें इस तरह टूटने नहीं दूंगा। तुम्हें जिंदा रखना अब मेरे जीवन का उद्देश्य है। मुझे भी तो अपनी माँ को सच्ची श्रद्धांजलि देनी है।" प्रेमी इस तरह नहीं टूटते, अब तुम्हें मेरे लिए जीना है।

नीलाभ एक वाक्य भी शायद कह नहीं पाया जो कहना चाहता था – "अनुपमा देखो! तुम्हारे बेटे ने हमारे प्यार को जिंदा रखा है। यही हम दोनों का जय घोष है।"[3] इस प्रकार मंजुला राणा – प्यार के जय घोष को जिंदा रखकर सामाजिक रूढ़ियों से मुक्ति का मार्ग दर्शाती है। ज्योत्स्ना मिलन की कहानी – कुसमा धर्मराज में

---

1 वहीं, पृ.109
2 वहीं, पृ.110
3 वहीं, पृ.111

सामाजिक रूढ़ि स्त्री का अमातृत्व पर दोष स्त्री के माथे ही मढ़ने पर चोट है। उसका पति – धर्मराज कहता है – "इसके फरवे – न फरवे में कसूर इसी का है, यह किसने कह दिया ? क्या जाने मेरी वजह से न फरी हो ?"[1]

सुषमा मुनीन्द्र की कहानी – "कभी खुद पे, कभी हालात पे रोना आया"[2] में लिव इन रिलेशनशिप का विचार छोटे शहरों में नहीं आया बदनामी हो जाती है।[3] यह विवाह विरोधी विचार है – शादी करके न पति स्वतन्त्र रह सकता है न पत्नी।[4] सहजीवन एक सम्बन्ध है रिश्ता नहीं। लोग आजाद रहने के ख्याल से इस पद्धति में रहना शुरू करते है।[5]

मनस्वी कहती –

- यार मैं तुमसे शादी करना चाहती हूँ।
- मजाक अच्छा कर लेती हो।
- सीरियस हूँ।

कितनी एनर्जेटिक लगती हो। शादी के बाद सूरत लटक जाएगी। सामाजिक हैसियत का तुम तो अपनी आजादी नहीं खोना चाहती थी। शादी के बाद भी आजादी रह सकती है। इतना अच्छा हमारा सम्बन्ध चल रहा है। शादी जैसी बात का अर्थ का अनर्थ मत करो मनस्वी।[6] ऐसे विचार सामाजिक रूढ़ियों को तोड़ने वालों के मन में आते हैं क्योंकि –

पति–पत्नी विपरीत स्वभाव के होते हैं। न हो पर एक स्वभाव के नहीं होते। एक दूसरे के स्वभाव में विरोधी बाते ढूँढते हैं। एक दिन वे सचमुच विरोधी स्वभाव वाले हो जाते हैं। उन्हें एक – दूसरे की बात काटने की लत पड़ जाती है।[7] सामाजिक रिश्ते निभाना आसान नहीं होते। मैं सरकारी नौकरी में हूँ। दो शादी नहीं कर सकता। नाम्या को तलाक दे दो।[8] सामाजिक रिश्तों में पति–पत्नी विश्वास का रिश्ता है – एक बारगी लगा परिवार में रहना अनुकूल है। वह सिर्फ परिवार के रिश्तों की कड़ी नहीं सामाजिक पारिवारिक संदर्भों की मजबूत कड़ी है।

---

1 ज्योत्स्ना मिलन – कुसमा धर्मराज – स.भा.सा. अंक 158, पृ.54
2 सुषमा मुनीन्द्र – कभी खुद पे, कभी हालात पे रोना आया, स.भा.सा., अंक 197, मई–जून 2018, पृ.48–62
3 वहीं, पृ.49
4 वहीं, पृ.50
5 वहीं, पृ.53–54
6 वहीं, पृ.54
7 वहीं, पृ.54
8 वहीं, पृ.54–55

लेखिका स्पष्ट करती है कि लिव इन रिलेशन बनाने से पहले सोचना चाहिए कि बदनामी होती है। शादी का बन्धन पवित्रता व अलग होता है।[1] एक स्थिति पर परिवार की आवश्यकता का अहसास होने लगता है। तुम क्या हो मनस्वी ? नाम्या से मुझे छीना। अब उसका हक छीनना चाहती हो। उस बेचारी को मेरी पत्नी तो रहने दो।[2]

मनस्वी को लगता है मर्दों की फितरत होती है, खुद पर आरोप नहीं लगने देते। कह देते मैं मर्यादा पुरुषोत्तम हूँ, मैं दूर से प्रणाम कर लेती।[3] यह कहानी बताती है कि प्रत्येक को सोच समझ कर कार्य करना चाहिए। सामाजिक रूढ़ियों को तोड़ना न तो इतना आसान है न सरल उलझने बढ़ती है बिना बिचारे कार्य करने पर हीनता आती है पछतावा होता है। मुकदमेबाजी पुलिस कार्यवाही सारी स्थिति विवेकहीन, दुविधाग्रस्त न चीरव न रोना, बेवफा आवाज और आंसू बेईमान। सामाजिक रूढ़ियों से संघर्ष में विवेकहीनता कष्टप्रद होती है भारतीय परिस्थितियों में सहजीवन उपयुक्त नहीं है। लेखिका का यह निर्णायक बोध ही ज्यादा सही है।

3. सांस्कृतिक क्षेत्र में मुक्ति के लिए संघर्ष

शादी–ब्याह निकाह सब वैवाहिक संस्थाओं से जुड़े हैं। मुस्लिम परिवारों में निकाह एक धार्मिक एवं सांस्कृतिक संस्कार माना जाता है। स्त्री – अपनी संतान को उसका वाजिबहक दिलवाने के लिए किसी भी हद तक संघर्ष कर सकती है। आमतौर पर विषम जातियों पर आरोप–प्रत्यारोप लगाना चलता रहता है लेकिन – मृदुला श्रीवास्तव की कहानी – "काश ? पंडोरी न होती"[4] में ऐसा नहीं है। स्त्री स्त्री की पक्षधर है अथवा दुश्मन ? मुसलमान स्त्री की मुसलमान सहायता करता है अथवा ठगी ? जुल्म के लिए हिन्दुस्तान– पाकिस्तान होना अधिक महत्व रखता है या इन्सान के कर्म ? इन सबका खुलासा इसमें हुआ है।

कहानी में जस्टिस शारदा, सलमा, पंडोरी आदि स्त्री पात्र है।

जस्टिस शारदा कहती है – "सचमुच सलमा! तुम मुझसे ज्यादा बहादुर निकली। जो मैं न कर पाई, तुमने कर दिखाया।" सलमा ने कहा था – "मैं अपनी बच्ची को उसका हक दिलवाने के लिए कुछ भी कर सकती हूँ जज साहिबा कुछ भी।" उसका नाम था सलमा बेगम। पाकिस्तान की सलमा। वह पंडोरी दरिया में पार करती तैरती

---

1 वहीं, पृ.56
2 वहीं, पृ.56
3 वहीं, पृ.56
4 स.भा.सा. अंक 183, जनवरी–फरवरी 2016, पृ.86–97

हिन्दुस्तान की सीमा में आ जाती है ? पकड़ी जाती है। जेल में बंद होती है। उस पर भारतीय सीमा में अनाधिकृत रूप से प्रवेश करने के आरोप में मुकदमा चलता है। उसे पाकिस्तानी जासूस मानकर यातनाएं दी जाती है।

पाकिस्तान के कब्जे वाले – कश्मीर के अल्बोवाला गाँव की सलमा – का निकाह – अम्बंदवाला गाँव के मुहम्मद युनूस से हुआ था। तीन महीने बाद सास–पति के सितम सहती, विक्षप्तावस्था की हालत में पंडोरी की तरह बढ़ गई। वह डूबकर मरने के बजाय तैरती भारत की सीमा में प्रवेश कर गई। भारतीय सैनिकों द्वारा गिरफ्तार कर ली गई। जस्टिस शारदा को – सलमा का वाक्य – "मारो कुत्ते, मारो, मुझे और मारो। औरत जात को तुम्हारे मुल्क में मारा ही जाता है तो मारो मुझे।"[1] जस्टिस शारदा सलमा की चीखों को महसूस करती है। एक अन्य स्त्री पात्र पंडोरी – सात वर्षीय मुस्लिम लड़की, मासूम, सूखा चेहरा, बड़ी–बड़ी आँखें, आँखों के नीचे काले गहरे गड्ढे। सिर पर कस रकर बाँधी दो चोटियाँ, उस पर बँधे लाल रिबन के दो बड़े बड़े फूल।

मिलिट्री अस्पताल में संवाद – क्या नाम है तेरा ? सलमा बेगम, यहाँ किसने भेजा है तुझे ? किसी ने नहीं। तुम लोग क्या पूछ रहे हो। मुझे कुछ पता नहीं। चुप कर साली। मुझे पता है तू पाकिस्तानी जासूस है। बोल किसने भेजा है तुझे ? यहाँ जासूसी करने के लिए ? तुम्हारे देश के कठमुल्ले हमारी औरतों को चीर–चीर कर रख देते हैं। तू ठीक हो जा ? फिर देख, हम कैसे तुझसे सच उगलवाते हैं।[2] औरत सलमा अपनी पीड़ा का बयान करती–करती बेहोश हो जाती है– मारो कुत्तो मारो, अरे सुअरों मारना ही था तो बचाया क्यों ? कह तो दिया नहीं हूँ मैं पाकिस्तान जासूस ? खुदा के लिए इतना कहर न बरपाओ। मुझे मेरे वतन वापिस भेज दो। मैं तुम्हारी मिन्नतें करती हूँ। रोते रोते वह पति सास द्वारा ढहाए गए जुल्मों सितम की कहानी – गर्म सलाखों के काले दाग दिखाती – बेहोश हो जाती है। जस्टिस शारदा के सामने उसकी स्थितियाँ घूम जाती है – भारत की सीमा में अवैध रूप से प्रवेश करने का जुर्म। न्यायिक हिरासत – जेल की सलाखें। पन्द्रह महीने की सजा 500 रूपए जुर्माना, न भरने पर अतिरिक्त तीन महीनों की और सजा। उसने जेल भुगती सजा काटी।

जस्टिस शारदा – स्त्री पात्र

सुबह कहाँ हुई उसके जीवन में ?

अंधकार उसके अपने जीवन का पर्याय बनकर रह गया।

1 वहीं, पृ.88
2 वहीं, पृ.89

क्या वह सलमा सा दुःख नहीं झेल चुकी है ?

पचपन की उम्र में सत्तर दिखती है।[1]

सलमा ने कहा था – "मर्द सब एक जैसे होते हैं जज साहिबा, मर्द चाहे पाकिस्तान का हो या हिन्दुस्तान का, औरत भी एक जैसी होती है। चाहे मेरे जैसी आठवीं फेल या आपके जैसी बड़ी–बड़ी डिग्रियों वाली।"[2] जस्टिस शारदा के जीवन में आया था पाकिस्तानी पर्यटक–अजहर –

छात्रावास के बाहर देखना, होटल में चंद मुलाकातें, अंगूठी बदलना, सब कुछ दे बैठना, बीज का अंकुरित होना। पाकिस्तान लौट जाना। पैरों तले जमीन खिसकना। दूसरी तरफ – जेल वार्डन शरीफूद्दीन पुंछ के सूनरन कोट का सिपाही था वह – सिपाहियों की जमात पर कलंक था।

- कितने खत भेजे तूने कोई लेने आया तुझे ? अगर तू वहाँ किसी भी तरह पहुँच भी गई तो तेरा खसम तुझे रखेगा क्या ? वह सलमा द्वारा अपने पति को पोस्ट करने के लिए दिए गए खत अपनी जेब में रख लेता था। वह रात में आ धमका सलमा की कोठरी में। "अगर तूने जरा सा भी मुँह खोला तो।" उसने सलमा पर बदचलनी का आरोप लगाया। अम्मी के शब्द – "गुनाह जमीं नहीं करती इंसान करते है। बुरा इंसान तो किसी भी जमीं पर हो सकता है।" याद आ गए।[3]

सलमा – रोना चाहती थी पर महिला कांस्टेबल की आवाज – "खबरदार चिल्लाई तो खाल उधेड़ दूंगी।" चुपकरा देती थी। यह कहानी न्याय के संस्कार के लिए संघर्ष की कहानी है। सलमा की बेटी पंडोरी। सलमा शरीफूद्दीन की हत्या कर देती है वह न सिर्फ धोखेबाज है अपितु बलात्कारी भी है। सलमा द्वारा उसकी हत्या मुक्ति का संघर्ष है। जस्टिस शारदा सोचती है काश – सलमा को उसकी सरहद तक वापिस भिजवा पाना इसका समाधान होता। काश पंडोरी भी सलमा के साथ जा पाती।

जस्टिस शारदा सलमा को गोद में ले लेती है। गोद लेना माँ का संस्कार है। उसे पंडोरी पाकिस्तानी नहीं हिन्दुस्तानी लगती है।[4] मृदुला श्रीवास्तव की यह कहानी – न्याय व मातृत्व के संस्कारों की स्त्री के प्रेम की संस्कारों की कहानी है। मिट्टी की गंध के संस्कारों की कहानी है जो संघर्ष से मुक्ति की राह तलाशती है। राजी सेठ की

---

1 वहीं, पृ.56
2 वहीं, पृ.90
3 वहीं, पृ.91
4 वहीं, पृ.97

कहानी – "किसे कहते है विदेश" संस्कारों के साथ अपनी व पराई धरती के अनुभवों व संघर्ष की कहानी है। अपने देश में रोटी बनाकर खिलाना एक संस्कार है –

मेहनत क्या है रोटी पकाने में ?

यह बातें क्या कभी सुनी होगी देश में ?

दस व्यक्ति भी आ जुटें तो रोटी पकती है।

और विदेश में – रोटी बेलने की मेहनत बचाने को चावल पुलाव बनता है। मेहनत बेदाम नहीं बिकती यहाँ।[1] जब माँ अपने बेटे से कहती है – "शादी तो अपने मन से की थी न तुम दोनों ने ?" इस रवि का दो टूक उत्तर तुम इस पचड़े से परे नहीं रह सकती ? यह भी संस्कारों का संघर्ष है। रवि की माँ – अपने संस्कारवश सोचती है बेटे की बहू के बारे में –

एक उत्सव की तरह सौंपेगी – पूरे विसर्जन भाव से उसके हाथों से मेवेवाली खीर बनवाएगी। उसकी झोली में डाल देगी अपना सारा सुख। सौंप देगी अपना वंश दर वंश संचित सतित्व।[2]

लेकिन यह सच नहीं सच है –

- कैथरिन। अमेरिकी स्पेनिश दम्पति की संतान
- पिता नीलाम्बर पत्नी शकुन का बेटा रवि उसकी बहू
- स्वतंत्रता सेनानी हरिवल्लभ मल्होत्रा व शांता देवी की पतोहू। बनारस नगरी में काठ के नक्काशी दार दरवाजों वाली ध्वस्त खड़ी हवेली के स्वामी देवकी नन्दन के परपोते की आत्मीया।

  नीलाम्बर – संस्कारों के कारण कैथी को काली लकीर खींचने वाली कहते हैं, जानती हो जैसे आई थी वैसी चली भी जाएगी। एक काली लकीर मकान पर खींच जाएगी। पुराने वक्त में चोरों को जिस मकान में चोरी करनी होती थी, उस पर काली लकीर खींच जाया करते थे।[3] पिता अपने संस्कार वश विवश है यह कहने को – मैं एक कानी कौड़ी भी नहीं देने वाला साले को, दफन कर दूँगा या आँगन में रख कर आग लगा दूंगा सारी दौलत।

---

1 स.भा.सा. 185, मई–जून 2016, पृ.53

2 वहीं, पृ.56

3 वहीं, पृ.57

शकुन माँ थी रवि की – वह रवि के पास चली आई – पति की इच्छा की अवहेलना करके। सन्नाटे से भरी चकाचौंध के बीच सारे वैभव के बीच दरिद्र मन को देखने परत दर परत उदासी, रवि का मुस्काराया चेहरा देखती है।

देश–विदेश दो प्रकारों के संस्कारों की सीमा है – देह की उठान से क्या होता है ? देह के बढ़ने से क्या मन बदल जाते हैं ? बदल सकते हैं? बर्फ की चिन्दियों की तरह शब्द मन ही मन झरते हैं सीमाएं खींच देते हैं।[1] विदेश में रिश्ते – खोखले लगते हैं – दीवारें हिला देते हैं मन तक नहीं पहुँचते, दीवारें मिलती है चेहरे नहीं दिखते। काठ के फर्श पर पैरों की आहट मिलती है पर कोई तस्वीर नहीं बनती।[2] विदेशी धरती पर नहीं है अपनेपन के संस्कार। केवल परायेपन का अहसास हैं। यह भूखंड भी पराया अपना देश ही नहीं यहाँ तो कैसी राष्ट्रीयता? कैसी नागरिकता ? कुछ भी होता रहे आसपास – भीतर कहीं पत्ता नहीं हिलता। कोई जिम्मेदारी नहीं कोई जवाबदेही नहीं तो करूणा भी नहीं। दया माया भी नहीं। मनुष्यता भी नहीं। कठोरता बची रहती है बटोरने की। बाहर से पल पल ताकतवर होता आदमी भीतर से छलनी होता है।[3]

राजी सेठ इस छलावे के संस्कारों से वैचारिक संघर्ष दर्शाती मुक्ति की आकांक्षा का रचाव करती है –

- इन घरों में कौनसे लोग कैसे रहते होंगें ?
- इनकी क्या दिनचर्या होती होगी ?

कैसी रसोईयाँ, कैसे शयनकक्ष, कैसे आवासी होंगे ?

- इन घरों में बसी दादियों को क्या लड़के की पूजा खींचकर मंदिर में ले जाती होगी ?
- क्या इन घरों में पिता अपने पुत्र की खुशी के लिए इतने लालायित रहते होंगे ?
- इन घरों की धड़कन कौन–कौन से केन्द्रों में बसी है ?[4] यही सब सोच – वह जान पाई – कौनसा होता है अपना देश[5] में व्यक्त होता है जो विदेशी संस्कारों से विमुख होकर देश की तरफ उन्मुक्त करता है मुक्ति की कामना के साथ।

पिता–पुत्र का ममत्व स्नेह के संस्कार मधु कांकरिया की कहानी – सुनो वत्स सुनो में मिलते हैं – पिता पुत्र से कहता हैं – "थोड़ी देर आराम कर ले बेटा, बाद में धूप

---

1 वहीं, पृ.58
2 वहीं, पृ.60
3 वहीं, पृ.91
4 वहीं, पृ.59
5 वहीं, पृ.60

हलकी पड़ जाएगी तब ठीक कर लेना गाड़ी को।" लेकिन पुत्र नहीं सुनता चुप रहिए न मुझे अपना काम करने दीजिए। पिता – ग्यारह महीने के छोटे बच्चे को उठा कर धूप में लिटाता है तो समझ में आता है – पिता का कथन – "तुम एक सेकिंड के लिए भी अपने बेटे को इस चिलचिलाती धूप में नहीं देख सकते और पिछले घंटेभर से देख रहा हूँ।"[1] विदेशी संस्कार अलग है – 75 साल का बूढ़ा भी अपनी गाड़ी आप चलाता है। स्टेयरिंग पर हाथ काँपते है, हिम्मत नहीं काँपती। 80 साल की बूढ़ी भी अपने लिए खरीददारी करती है। अपना खाना आप पकाती है। 18 साल का बच्चा आत्मनिर्भर हो जाता है[2] लेकिन हमारे यही गीत लोरी दुआओं के संस्कार है।

विदेशी संस्कार – अलग शैली दर्शाते हैं – तुम क्यों मेहनत करती हो अम्मा आया कर देगी। अम्मा उसे छोड़ो हम है न। तुम्हें लगता है खाँसी से तुम्हारे बच्चे को इन्फेक्शन हो जाएगा। बच्चे को नहलाने का कार्य प्रशिक्षित आया करेगी। वहाँ चारों तरफ अकेलापन है खामोशियाँ है। अब – बच्चे को गोद में उठाना – हाथों में कीटाणु होने का खतरा व बच्चे के नाक को पोंछने में टीसू पेपर का प्रयोग होने लगा है। पहले इतना प्रदूषण कहाँ था ? शायद पहले डर नहीं था, बड़ों के प्रति अविश्वास भी नहीं था – अब है। मधु कांकरिया की इस कहानी में पुराने संस्कारों में अविश्वास व आधुनिकता का प्रभाव – संघर्ष की स्थिति बनती है।

इस प्रकार इन महिला कहानीकारों की कहानियों में पुराने संस्कारों के प्रति अनास्था बोध भी झलकता है। आधुनिकता का प्रभाव – परिवार के बड़े बुजुर्गों में अविश्वास को अभिव्यक्ति करता है। विवाह जैसे संस्कार बेमानी हो गए। लिव इनरिलेशन्स हावी होने लगा।

सब भाग रहे हैं मुक्ति की तरफ – जहाँ अकेलापन है। अहसास में कहीं आत्मीयता नहीं है, संस्कारों का संघर्ष है, स्त्री स्वतन्त्रता व मुक्ति की राह ढूंढने लगी है। बालक के काजल लगाना भी कार्बन डाईऑक्साइड का इन्फेक्शन होने को व्यक्त करता है। बच्चा माँ के स्थान पर आया को सौंपा जाता है, क्योंकि वह प्रशिक्षित है। माँ व दादी को प्रशिक्षण के अभाव के कारण बच्चे से दूर रखना आज की स्त्री की अवधारणा बन चुकी है।

---

1 मधु कांकरिया सुनो वत्स सुनो, वहीं पृ.67
2 वहीं, पृ.68

4. शैक्षिक क्षेत्र में पर्दापण एवं अधुनातन वैचारिक संघर्ष

आज का दौर शिक्षा का युग है। शैक्षिक क्षेत्र में बहुत अधिक उन्नति एवं प्रगति करने के कारण नई पीढ़ी विदेशों में नौकरी करने लगी है। आधुनिकता के प्रभाव के कारण अब इन नवयुवकों को माता–पिता पुराने विचारों वाले लगते हैं। उनके प्रति अविश्वास भाव बढ़ा है। वे माता–पिता दादा–दादी को इस योग्य भी नहीं मानते कि वह बच्चों की देखभाल भी कर सके। मधु कांकरिया की कहानी – 'सुनो वत्स सुनो' में बेटी अपनी माँ को भी उसके बच्चे से दूर रखना पसंद करती है तथा कई तरह की सावधानियाँ बरतने को कहती है।

पुत्र का कथन देखें – "अम्मा धीरे बोलो" उसे आदेश लगता है और माँ ने उस नन्हें से अधिक बोलना ही छोड़ दिया। जाने कितने गीत और लोरी उसने कंठस्थ कर लिए थे – नन्हें के आगमन की खबर सुनकर। वे सब अब शायद ही कभी गाए जाएंगे।"[1] जो खामोशी का अभ्यस्त नहीं, उसे इतनी सघन खामोशी निगल लेती है। नन्हें के तेल मालिश करने जाती माँ को उसका बेटा टोकता व रोकता है – "तुम क्यों मेहनत करोगी अम्मा, आया कर देगी।" जब माँ अपने बेटे के मन के भावों को भाँप नहीं पाती और कहती है – "अरे इसमें क्या मेहनत, यह तो मेरा चाव है – सपना है।" तो पुत्र का स्वर सख्त हो जाता है। – "अम्मा मैंने मना किया है ना।"

जब बच्चे को उबटन लगाकर अनचाहे बाल उगने से रोकना चाहती है माँ, तब पुत्र को लगता है कि – यह काम प्रशिक्षित आया उससे कहीं ज्यादा अच्छे ढंग से कर सकती है शायद तुम उसका अहसान नहीं लेना चाहते या फिर तुम्हें डर था कि तुम्हारी माँ की हलकी सी खाँसी से उसे इंफेक्शन न हो जाए ? वह स्पष्ट दो टूक कह देता है – अम्मा, उसकी चिंता छोड़ दो, हम है ना।"

एक बार – उत्साह के अतिरेक में उसने नन्हें को बाहर से आते ही गोद में उठाकर चूम लिया तो पुत्र ने माँ को इस भाव से देखा कि – "जैसे उसने कोई अपराध कर डाला हो, उसके हाथों को कीटाणु रहित करने के लिए तुमने कोई द्रव उसकी हथेलियों पर डाला और उसे सख्त हिदायत दी कि – "आईंदा वह जब भी नन्हें को छुए हथेलियों को इसी प्रकार साफ कर छुए।" एक बार जब उसने अपनी धुली हुई साफ साड़ी के पल्लू से नन्हें का नाक – मुँह पौंछ दिया तो भी तुम्हारे ललाट पर तीन सलवटें पड़ गई और तुमने टिसू पेपर तुम्हारी माँ के आगे कर दिया – "इससे पोंछो अम्मा।" उसने कहा भी था – "मैंने चार–चार बच्चों को बिना नर्स की सहायता के पाला था और

---

1 स.भा.सा. अंक 185, पृ.68

उन्हें हमेशा स्वस्थ रखा था।" तो तुम्हारा जवाब था – "पहले इतना प्रदूषण कहाँ था अम्मा।"

उसने कहा – "पहले इतना डर नहीं था और बड़ों के प्रति अविश्वास भी। पर जवाब सुनने का समय कहाँ था तुम्हारे पास।" जब एक बार नन्हें की आँख में कीच आ गई, उसकी दोनों पलकें हल्के सी चिपक गई। तुम दोनों घबरा गए – यह क्या हुआ ? आँख में यह कैसा इन्फेक्शन ?" "कुछ नहीं यह आँख की कीचड़ है। गुलाब जल डालो कल तक ठीक हो जाएगा।"

"लेकिन तुम दोनों को कहाँ उसका विश्वास। तुम गाड़ी ले भागे–भागे नेत्र चिकित्सक के पास गए। तुम्हें उसके अनुभवों व बच्चों से सम्बन्धित उसकी चिकित्सा पर कोई विश्वास ही नहीं था।"[1] इस वैचारिक संघर्ष में माँ को अहसास होता है कि – व्यर्थता बोध का, अजनबीयत का, अनुपयोगी हो तो जाने का मारक अहसास।

अम्मा – मैंने दफ्तर से महीने भर की छुट्टी ले ली है, किसलिए ? नन्हें के लिए। अपनी जिम्मेदारी निभाने के लिए। जमाना बदल गया । अब वो जमाना नहीं कि जलवा पूजन के पहले पुरुष सौर में प्रवेश न करे। पर एक नन्हें के लिए माँ – एक आया और दादी भी कम पड़े और पिता को अवकाश लेना पड़े – वह भी महीने भर के लिए।[2] दो पीढ़ियों का वैचारिक संघर्ष इस तरह व्यक्त किया है मधु कांकरिया ने –

"काश तुम समझ पाते कि तुम जिसे महज अपनी जिम्मेदारी कह रहे थे, वह परिवार का साझा सुख था जिस पर हमारा भी हक बनता था।" नन्हें को हमसे जुदा करना नई कोपल को पेड़ से जुदा करने जैसा था। तुमने अपनी माँ को ताक पर रख दिया। बीते साल के गणेश – लक्ष्मी की तरह। वह हर सुबह उठती, इस उम्मीद से कि – शायद आज उसे कुछ करने को मिल जाए और हर शाम वह बोरियत और अपमान की चादर ओढ़कर सो जाती।[3] आज की पढ़ी लिखी युवा पीढ़ी – आत्म निर्भरता का राग अलापती है, माँ की ममता में कील ठोक देती है।

अकेले का अकेलापन फिर भी सहन होता है, लेकिन किसी के साथ रहकर भी अकेलापन भुगतना पड़े तो उसकी मार असहाय होती है। उसमें अपमान की मार भी शामिल हो जाती है। दिन के 24 घंटे में 24 मिनिट भी तुम अपने कमरे से बाहर नहीं निकलते। निकलते तो भी अपनी अम्मा के ऊपर एक उड़ती सी नजर डालकर तुम वह जा – वह जा ? अपनेपन और आत्म सम्मान के बिना तो पैरों के नीचे के फूल भी चुभते हैं।

---

1 स.भा.सा. अंक 185, पृ.69
2 वहीं, पृ.70
3 वहीं, पृ.70

मधु कांकरिया ने अतिरिक्त भोजन को फेंकने व नन्हें के ललाट पर काजल का दिठौना लगाने की इन दो घटनाओं के सहारे भी शैक्षिक वर्ग के पुरानी पीढ़ी से वैचारिक संघर्ष को अभिव्यक्त किया है। उस दिन रविवार को पाँच सात लोगों की पार्टी चलती रही। खाना बना – बीस पच्चीस लोगों का उस अतिरिक्त भोजन को न किसी को देते न बाँटते। "अम्मा चिंदी सी बर्बादी और सड़े अन्न पर दिमाग मत खराबकरो, बड़ा सोचो।"

अम्मा सोचती रही – खाने की बर्बादी को रोकने से बड़ा सोचना और क्या हो सकता है ? अन्न की बर्बादी उसकी नजरों में महापाप था। अम्मा ने नन्हें को काजल लगा दिया। उन्नत ललाट पर काजल का दिठौना। तुम फूट पड़े – "अम्मा, दुनिया भर में मौसम बदल रहा है, कब बदलेगा हमारे घर का मौसम ?"[1]

इस संघर्ष से मुक्ति की राह की अभिव्यक्ति कहानीकार द्वारा सशक्त शब्दों में की गई है –

- "बीस दिन बीतने से पहले ही उसकी मोह – ममता सब बीत गए।
- साँप की तरह उसने भी रिश्तों की सारी कैंचुल उतार फेंकी।
- जिस मन में बसती थी प्रेम और लगाव की पीड़ा, खाली कर दिया उस मन को।
- शायद यही है बूढ़ा होना निरंतर खाली करते जाना खुद को अब घोंसला खाली है।"[2]

यह कहानी बताती है कि आज की पीढ़ी ने अपने बच्चे पर उसके माँ–बाप के हक से वंचित कर दिया उन्हीं का सर्वाधिकार समझ लिया। वह – उनके अलावा सबको अछूत समझते हैं किसी का हस्तक्षेप पसंद नहीं करते। आज की पीढ़ी की यह आत्मनिर्भरता उनकी दृष्टि से अपनी पीठ थपथपा सकती है कि तुम और तुम्हारे बच्चे के बीच कोई नहीं आया आ सकेगा। परन्तु यह कैसी आत्म निर्भरता जो दूसरों को उसकी ममता से वंचित कर दे। यह निजता की परिधि इतनी संकीर्ण हो गई है कि दो के अलावा तीसरे का प्रवेश भी स्वीकार्य नहीं है।

ऐसी स्थितियां पुराने लोगों को सोचने के लिए विवश करती है कि – "काश तुम कुछ सफल होते, कम समृद्ध होते, कम आत्म निर्भर होते, कम प्रतिभाशाली होते, कम आत्मविश्वासी होते, थोड़े हमारे जैसे होते ?"[3]

पुरानी पीढ़ी फिर भी केवल प्रार्थना ही कर सकती है –

- प्रेम की इस विराटता पर अपनी लघुता मत थोपो।

---

1 वहीं, पृ.71
2 वहीं, पृ.71
3 वहीं, पृ.73

- अपनी जिंदगी को इतना बंद, आत्मकेन्द्रित और शुष्कमत बना डालो कि बच्चा बड़ों की दुनिया देखकर बड़े होने से ही डरने लगे।
- अहसास की इन रूकी हुई हवाओं को बहने दो।
- तुम देखोगे कि दुनिया कितनी सुन्दर है।

राजी सेठ की कहानी – "किसे कहते हैं विदेश" विदेश में रहता बेटा रवि कहता है – "कैथी इज ए टेरिफिक पार्टनर मॉ लाइफ वुड बी लाइक लिविंग इन हेवन।"[1] रवि टी.वी. देखते हुए माँ को झकझोर देता है – "कपड़े बदल लो माँ, आराम से अपने बिस्तर पर सोओ!" रवि का कहने का भाव यह था – "जिस जगह पर वह लेटी थीं, वह जगह कैथी की थी। कैथी नहीं भी है तो यह जगह उसकी है। बिस्तर के दांई ओर का खालीपन भी कैथी का है, उतना ही जितना भरापन कैथी का।"[2]

राजी सेठ ने विदेश का अहसास इस प्रकार व्यक्त किया एकाएक गुम हो जाने को कहते है – विदेश ? क्या अपने और अपने ही लिए जीने मरने की खींचतान का नाम है परदेस ? यहाँ जो रहता है एक व्यक्ति बनकर रहता है। एक पर्सन, वह किसी का बेटा, पोता, परपोता नहीं होता यहाँ। एक मैं एक बुनी जाती पीढ़ी की पहचान नहीं यहाँ।[3]

कुल मिलाकर पुरानी पीढ़ी के लिए अपनापन और नयी पीढ़ी के लिए परायापन का अहसास है देश – विदेश। मधु कांकरिया की कहानी "जलकुंभी" एक स्त्री पात्र प्रणीता को लेकर लिखी गई है। मधु कांकरिया लिखती है – "जब अपनी यूरोप यात्रा के दौरान नीदरलैंड की राजधानी एक्सहार्डर्म में तीन दिनों के लिए इनके घर ठहरी थी तब वहीं प्रणीता मुझे मिली थी। प्रणीता के बारे में लेखिका की अभिव्यक्तियाँ इस प्रकार रही – वह आधी हिन्दुस्तानी थी। जरूर उसके माँ बाप में से कोई एक भारतीय मूल का होगा। इंडियन हार्डवेयर में यूरोपियन सॉफ्टवेयर अजीब कोम्बीनेशन।

प्रणीता की भारतीय स्त्रियों के बारे में धारणाएँ – "ब्रह्म, आत्मा और परमात्मा को लीन रहने वाला भारत यौनिक पवित्रता का देश है। वहाँ की स्त्रियाँ बहुत शरीफ शर्मीली और ढकी–ढकी रहती है। हमारी स्त्रियों की तरह उधड़ी नहीं होती। उनकी सारी रंगीनियाँ परदे के पीछे होती है।[4]

---

1 वहीं, पृ.56
2 वहीं, पृ.58
3 वहीं, पृ.59–60
4 मधु कांकरिया "जलकुंभी" – स.भा.सा. अंक 179, मई–जून 2015, पृ.31–44 (पृ.32)

प्रणीता का भारत से सम्बन्ध

प्रणीता का जन्म नागपुर के किसी सरकारी अस्पताल में हुआ था। जन्म के दस दिन बाद उसकी माँ उसे एक बास्केट में डालकर अस्पताल के चाइल्ड केयर हाउस में छोड़ गई।

उस बास्केट में उसका जन्म सर्टीफिकेट भी नत्थी किया हुआ था।

उसका धर्म	हिन्दू
माँ का नाम	सूर्यबाला
पिता का नाम	(खाली कॉलम था)

उसी अस्पताल के कर्मचारियों ने उसका नाम प्रणीता रखा था।

प्रणीता हर साल – मुम्बई के चरनी रोड स्थित अनाथालय – बाल आनन्द के बच्चों के साथ कुछ महीने बिताने जाती है।

क्योंकि छः महीने बाद प्रणीता को मुम्बई के चरनी रोड स्थित बाल आनन्द में भेज दिया गया था। जहाँ से पौने दो साल बाद एक्सटर्डम के एक फर्नाडीज दम्पती ने उसे गोद लिया था। उन्होंने बेटी की तरह प्रणीता को पाला पोसा था। वह प्राइवेट अस्पताल में सीनियर नर्स है। बूंद–बूंद पैसा बचाती है। सारी बचत बाल आनन्द के बच्चों पर तथा अपनी माँ को ढूंढ़ने में खर्च करती है।[1] प्रणीता अपनी माँ के बारे में – कुँवारी माँ (एक सामाजिक कलंक) के कारण उसने फेंका हो, परिवार पुत्र चाहता हो और वह कन्या थी इसलिए फेंका हो या माँ रेडी हो जिसे खुद को उसके बाप का नाम मालूम नहीं हो।[2] वह माँ को लेकर गहन सोचती है कौन थी वह ? कैसी थी ? कैसा था उनका जीवन ? क्या रही होगी उनकी मजबूरी ? जो उन्हें मुझे फेंकना पड़ा ? वह भी भारत जैसे देश में। जहाँ माँ–बाप बच्चों के लिए ही जीते और मरते हैं। जहाँ बच्चे माँ के लिए मथुरा वृन्दावन होते हैं।[3]

मधु काँकरिया प्रणीता को समझाना चाहती है – उसी स्त्री की जिसे माँ–पिता की जानकारी नहीं हो फर्नांडीस दम्पति – पिता ने कहा था – क्या फर्क पड़ता है तुम कहाँ से आए हो। देखना यह है कि तुम कहाँ पहुँचे हो ? महर्षि वेदव्यास ने दुर्योधन के मुँह से कहलवाया था नदियों, वीरों, ऋषियों के उद्‌गम नहीं देखे जाते। जीवन संयोग

1 वहीं, पृ.33
2 वहीं, पृ.34
3 वहीं, पृ.37

का दूसरा नाम है। हमें अपनी इच्छा के बिना ही जीवन जीने के लिए धकेल दिया जाता है। क्या यह हमारे हाथ में है कि हम अपने जन्म का समय, परिस्थिति, स्थान या माँ–बाप तय करें ? अपनी जड़ों को लेकर तुम परेशान मत हो – प्रणीता। तुम जलकुंभी की तरह बनो, जो जहां होती है वहीं अपनी जड़ें फैला लेती है।

मधु कांकरिया की इस कहानी में प्रणीता को माँ मिल जाती है परन्तु वह उसकी बेटी से आँख नहीं मिला पाती प्रणीता को लगता है – वह उसकी बेटी नहीं लज्जा थी। इस कहानी के द्वारा – यह कथन – "भारतीय स्त्री भूख और मौत से भी ज्यादा इज्जत खोने से डरती है।" पढ़े लिखे शिक्षित वर्ग ने हालातों से समझौता करना सीख लिया है। यही सच है कि जीवन में कुछ खाली जगह ऐसी होती है जो कभी नहीं भरी जाती।

समाहार

महिला कहानीकारों ने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज में प्रचलित सड़ी गली मान्यताओं और रूढ़ियों के विरुद्ध आवाजें उठाई है। विषयवस्तु भावना एवं परिस्थितियों का ब्यौरा प्रस्तुत करती ये कहानियाँ एक तरफ भावनाओं की ईमानदार प्रस्तुतियाँ है तो दूसरी तरफ मध्यम वर्ग की स्त्रियों की अनदेखी, अनकही वर्जनाओं, कुंठाओं तथा संघर्षों को भी ध्वनित करती है। घर परिवार से जुड़ी बातों में औरत साझा करे या न करे, करे तो कहाँ तक ? किस सीमा तक ? उसकी बातों का निर्णायक माना जाए या नहीं? अब तक क्या हुआ ? इत्यादि सवाल बहुत नुकीले हैं।

अपने जीवन के बारे में फैसले खुद लेती औरत पत्नी, माँ–बेटी–सास– दादी बनकर घर–परिवार में रह रहे, नौकरी की रस्सा–कस्सी में घिसती टूटती रहे, अपना लहू – पसीना बहाए फिर भी शोषित दोयम दर्जे की ही कहलाए। यह कहाँ तक उचित है ?

जो स्त्री सबकुछ सहकर भी घर परिवार को व्यवस्थित करती है अपने प्रेम को बलिवेदी पर चढ़ाकर सामाजिक कर्तव्यों का निर्वाह करती है वह चार–चार बच्चों की माँ बनकर भी अपनी भावनाओं को अव्यक्त ही रखकर मर जाती है। ऐसी स्थिति में उसका बेटा डायरी के आधार पर बिना कोई नाम दिए। अपनी स्वर्गीय माँ की भावनाओं का सम्मान करते हुए टूटते मन को बचाना चाहता है।

दूसरी तरफ लीव इन रिलेशन ने विवाह जैसी सामाजिक संस्था के विरोध में अपने स्वर तेज कर दिए। बदनामी का डर सब कुछ करने से पहले क्यों नहीं सताता।

क्यों दुराग्रह के कारण तलाक पुलिस कार्यवाही दुविधाग्रस्त स्थितियाँ बनती है ? क्यों होता है विवेकहीनता का अहसास।

इन कहानियों में एक और ज्वलन्त समस्या कुँवारी माँ का भी उठाया गया। कुँवारी माँ बनने के कारण बच्ची होने पर उसका त्याग करना – अस्पताल के चाइल्ड केअर में छोड़कर अनाथालय तक पहुँचना फिर बच्ची को गोद लेने से आगे प्रणिता जैसी युवती को अपनी माँ की बनाम जड़ों की तलाश जारी रखने की मानसिकता व्यक्त होती है। लम्बी तलाश के बाद माँ मिलती है तो भी सम्बन्धों व पहचान को नकारती है लज्जावश सब कुछ छुपाकर पलायन कर जाती है।

आज की शिक्षा का युवा वर्ग पर इतना अधिक प्रभाव पड़ने लगा है कि वह अपने माता–पिता को भी अपने बच्चे से दूर रखना चाहते हैं। बच्चे को प्रशिक्षित आया अच्छी तरह सँभालेगी। अम्मा तुम चिन्ता छोड़ो हम ना – कथन अपने से बड़ों पर अविश्वास को व्यक्त करता है।

आज की युवा पीढ़ी यह भी भूल जाती है कि परिवार में आने वाला नन्हा बच्चा परिवार का साझा सुख होता था। विवाह में जाति बन्धन बेमानी है। रवि और कैथ का अन्तर्जातीय विवाह तनाव का निमंत्रण है फिर भी उसमें जीने की विवशता आज के समय को रेखांकित है। स्त्री नौकरी का घर परिवार के बीच सामंजस्य बिठाती बिठाती बड़ी हो जाती है। पढ़ी लिखी परिवार की थोथी खोखली मर्यादाओं, वर्जनाओं को लाँघकर काम करना चाहती है उसे आँगनबाड़ी में काम करना घरों में जाकर खाना पकाना जैसे कार्यों में भी कोई झिझक नहीं होती है। वह गाँव की सरपंच बनकर गाँव के विकास के कार्यों में रूचि लेती है तो ब्राह्मण वर्ग के व्यक्ति को आर्थिक संघर्षों के चलते बेलदारी करने के लिए विवश होना पड़ता है।

आज स्त्री स्वयं के प्रति शोषण का पुरजोर विरोध करने लगी है तथा निर्णय लेने लगी है। स्त्री अपने हक में किसी का दबाव सहन नहीं करती, प्रतिरोध भी करती है।

स्त्री पति–परिवार की ज्यादतियों से घुटकारा पाना चाहती है तो दूसरी तरफ सरकारी तन्त्र भी उस पर जुल्म ढहाने में पीछे नहीं रहता। उस पर जासूसी करने का आरोप लगाया जाता है। शहाबुद्दीन जैसे हैवानियत को साथ लेकर जीने वाले जेल की कोठरी में बंद सलमा को नहीं छोड़ते और ऊपर से बदचलनी का आरोप लगाकर यंत्रणाओं में डूबो देते हैं। स्त्री को सुख नहीं मिलता है।

आज की पीढ़ी आत्म निर्भरता का राग अलापती है। आत्म निर्भर बनकर भी पढ़–लिखकर भी जस्टिस शारदा जैसी स्त्री ठगी जाती है। संस्कारों के प्रति विश्वास, अकेलापन, अविश्वास, ऊब तथा निराशा के साथ सुखात्मक–दुखात्मक पलों की अनुभूतियाँ, आर्थिक संघर्ष, सामाजिक रूढ़ियों से टक्कर सांस्कृतिक विकृतियों को व्यक्त करने लगी है।

इस प्रकार इन वर्णित कहानियों के आधार पर कहा जा सकता है कि पति–पत्नी के सम्बन्धों में अहम का त्याग। स्त्री का साहसी निडर होना। संघर्ष करने में आत्म–विश्वास का परिचय देना। परम्परागत रूढ़ियों मान्यताओं से विद्रोह करना। उदासी निरीह स्थितियों के घेरों को तोड़ने की लगातार कोशिशें करना। उम्मीदों के आकाश में उन्मुक्त विचरण करने का अहसास पालना। भीतरी अकेलापन, परायापन के बीच जीवन से समायोजन बिठाना इत्यादि भावों का समावेश हुआ है।

षष्ठम् अध्याय

महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में भाषा एवं शिल्प संरचना का विश्लेषण परिदृश्य

1. मनोविश्लेषणात्मक
2. व्यंग्यात्मक
3. विवेचनात्मक–विचारात्मक प्रतीकात्मक
4. भावात्मक–आलोचनात्मक
5. शब्द भण्डार विश्लेषण का परिदृश्य
    - तत्सम् – तद्भव – देशज् – विदेशी शब्द
    - आंचलिक शब्दावली
    - महिला उपन्यासकारों द्वारा हिन्दी उपन्यासों में प्रतीक, संकेत चित्र एवं ध्वनि मूलक बिम्ब विधान का प्रयोग

समाहार

षष्ठम् अध्याय

महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में भाषा एवं शिल्प संरचना का विश्लेषण परिदृश्य

महिला उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में जहाँ एक तरफ–स्त्री विमर्श के ज्वलन्त मुद्दे उठाए हैं, वहीं पर भाषा–शिल्प–शैली की दृष्टि से भी अभिनव प्रयोग किये हैं। इनका विश्लेषण मनोविश्लेषणात्मक, व्यंग्यात्मक, विवेचनात्मक, विचारात्मक, प्रतीकात्मक, भावात्मक एवं आलोचात्मक दृष्टि से किया जाना अपेक्षित है।

मनोविश्लेषणात्मक विश्लेषण

मनोविज्ञान का चित्रण प्रेमचन्द के उपन्यासों से ही प्रारम्भ हो गया था, किन्तु आलोचकों ने प्रेमचन्द के मनोविज्ञान को उतना महत्त्व नहीं दिया जितना उनके सामाजिक यथार्थ को ? महिला उपन्यासकारों ने पात्रों का वर्णन करते हुए उनसे जुड़े मन्तव्यों के उद्‌घाटन पर विशेष महत्त्व प्रदान किया है। इन्होंने व्यक्ति के अचेतन की अपेक्षा चेतन स्वरूप को प्रधानता दी है। इसलिए पात्रों का निश्चित व्यक्तित्व दिखाई देता है। यद्यपि इनका व्यक्तित्व समय और परिस्थितियों को देखते हुए नई–नई छायाएँ ग्रहण करता रहता है। किन्तु सारे परिवर्तनों में चेतन संगति तो रहती ही है।

मनोविश्लेषण मूलतः मनोविज्ञान पर आधारित होता है। मनोविश्लेषण का मस्तिष्क के चेतन, उप चेतन, और अवचेतन तीन विभाग कर अवचेतन को विशेष महत्त्व प्रदान करता है। यही अवचेतन हमारे 1. व्यक्तित्व 2. कार्यकलाप 3. नैतिक आचार का निर्माण और नियन्ता होता है। चेतन के द्वारा हमें सामाजिक करबंधों का बोध प्राप्त होता है। अवचेतन–छिपा हुआ, विस्तृत व शक्तिशाली होता है। अवचेतन को चेतन का निर्धारक कहा जा सकता है। मनुष्य पर जो कुछ ऊपर दिखता है तथा अनाभिव्यक्त है वह भी परोक्ष रूप से अचेतन द्वारा नियंत्रित और प्रभावित होता है। अवचेतन में दमित वासनाएँ होती है। हीनता को जन्म देती है। इनकी प्रकृति अपरिष्कृत व उद्‌दण्ड होती है। स्वार्थी होती है। हिस्टीरिया, नर्वसनेस, उन्माद, प्रेत बाधाओं को जन्म देती है। इन प्रक्रियाओं को प्रकाश में लाकर दूर कर देने पर ये बीमारियाँ छूट जाती है। जो कि वासनाओं के निरन्तर दमन से उत्पन्न होती है। फ्रायड का विचार है कि "चेतन की सारी वस्तुएँ अचेतन के परिशोधित तत्वों को अवश्य किसी न किसी मात्रा में धारण किए रहती है। उनके अनुसार

1. मनुष्य के विचार–विश्वासों पर लागू होते हैं।

2. नारी सौन्दर्य के प्रति रूचिपूर्ण विश्वास जगाते हैं।

3. प्रकृति और आवेग को संचालित करते हैं।

एडलर का मानना है कि व्यक्ति संसार में कमजोर, महत्वहीन, असहाय रूप में आता है। वह प्रकृति से लड़ने में असमर्थ होता है। भोजन–वस्त्र–शरण के कारण अभिभूत होता है। हीनता का अनुभव करता है। हीनता की क्षतिपूर्ति करने के लिए अपने वातावरण को प्रभावित करना चाहता है। अपनी तरफ ध्यान आकर्षित करने के लिए साथियों की प्रशंसा करता है। कल्पना की भी शरण लेता है। वह उन लोगों पर भी रोब जताने का प्रयास करने से अवसर मिलने पर नहीं चुकता जो लोग उस पर हँस चुके हैं। लोक, वित्त और पुत्र तीनों एषणाओं का इसमें समावेश होता है। इस प्रकार महिला उपन्यासकारों ने अपने अपने ढंग से अचेतन–चेतन को भी, समर्थ–प्रेरक और महत्त्वपूर्ण माना है। आत्मरति का सुख, मूत्र त्याग करते समय, शरीर के भागों में बाल साफ करते समय, बिस्तर को देखकर, चरित्रों की सृष्टि की है। कई बार पात्र स्वीकृत मूल्यों, यथार्थ के स्तरों को अस्वीकृत कर नए सिरे से जीवन सत्यों व मूल्यों के बारे में सोचने को बाध्य करते हैं। मानव चरित्रों के स्वीकृत प्रतिमानों को खंडित कर, उनके भीतर स्थित नंगी वास्तविकताओं को अनावृत करते हैं। स्त्री का आत्म बोध, उसका अदम्य आत्मविश्वास, उज्ज्वलता का प्रकाश नए आयाम खोलता है। स्त्री बलात्कार से मुक्त होना चाहती है। मातृत्व सुख से वंचित होकर भी वह निराश नहीं होती बच्चे को गोद लेती है। महिला उपन्यासकारों के पात्र यह कहते हैं कि महत्त्वपूर्ण यह नहीं है कि वह कहाँ से आई है ? महत्वपूर्ण यह है कि वहाँ कहाँ आई है ? स्त्री के भीतर प्रबल संघर्ष की इच्छा को जगाना ही उसके व्यक्तित्त्व का मनोविश्लेषण है। वह कहती है कि तुझसे पैसा नहीं मांगती अपना पेट खुद भर लूंगी। मुझे तो सानिध्य चाहिए। आज स्त्रीपात्र समस्त सुलभ सीमाओं में संघर्ष करती हुई संघर्ष को समाज के वास्तविक धरातल पर प्रतिष्ठित करती है तथा अपने पति से पृथक स्वयं का कारोबार प्रारम्भ करती है। वह जान गयी है कि जिसके पास जितनी अधिक शक्तियां होंगी वह उतनी ही बड़ी समर्थवान हो पाएगी। उसका व्यक्तित्व उतना ही ऊँचा समझा जाएगा। निःसन्देह महिला उपन्यासकारों ने ऐसे अविस्मरणीय, प्रभावशाली, सशक्त नायिका पात्रों की सृष्टि की है, जो हर चुनौती को झेलकर भी अविस्मरणीय बने रहते हैं। आज स्त्री पात्रों ने पुरूषवादी मिथकों को तोड़ा है तथा यह सिद्ध कर दिखाया है कि बेटी, स्त्री भी घर परिवार चलाकर मां बाप को पाल सकती है। उनका उत्तरदायित्व बेटों की तरह निभा सकती है।

उषा प्रियंवदा के दोनों उपन्यास –रुकोगी नहीं राधिका, पचपन खम्भे लाल दीवारें में अति आधुनिक पढ़ी लिखी स्त्री स्वतंत्र निर्णय लेने की शक्ति के बावजूद बेबसी और सामाजिक बिखराव में स्वयं को पाती है। आपका बंटी में मन्नू भण्डारी कहती है कि हम अपने अपने स्वार्थों को लेकर ही सोचते रहे। बन्टी पुत्र को लेकर सोचा ही नहीं। तलाक की समस्या में बच्चे की स्थिति हीनता युक्त हो जाती है। जीवन में अनिश्चितता को उतारा गया है। बच्चे का मनोविज्ञान और उसके बिम्ब जगह जगह आरोपित किये गये हैं। बच्चे का आक्रोश, बेबसी और मूक वेदना की बहुत ही सही अभिव्यक्ति की गई है। बच्चे का मां बाप विहीन स्थिति में देखना– मनोवैज्ञानिक विश्लेषण है। महायोग में भी राजनीति के सम्माननीय दुश्चक्र में पिसते हुए आम आदमी का अंकन है।

कृष्णा से बही नारी की बेबसी के बीच,, ऊर्जा यौन साहसिकता का स्पर्श करती है। डार से बिछड़ी में भावुकता के चित्र है। दुर्भाग्य–पीड़ा है। मित्रों मरजानी में उद्दाम के काम पिपासा के संदर्भ में साहसिक चरित्र है। यही काम मूलक साहसिकता 'सूरजमूखी अंधेरे के' में और बढ़ गई है। जिन्दगीनामा में सही, गलत, पठनीय अपठनीय–जीवन चित्रण है। ममता कालिया के बेघर में उन्मुकता और यथार्थ का तेज मिजात, यौन व संग कावरा में अधिक खुलापन घटित होता है। यारों के यार में यौन अवयवों का प्रयोग भोग की अवधारणा सूरजमूखी अंधेरे के में भी देखी जा सकती है।

अन्य उपन्यासों में शशि प्रभा शास्त्री–सीढ़ियाँ, मंजुल भगत–अनारो, मेहरुन्निसा परवेज– उसका घर, मृदुला गर्ग–अनित्य, निरुपमा सेवती–मेरा नरक अपना है, सुनील जैन–बिन्दु, सूर्य बाला– मेरे सन्धिपत्र, कुसुम अंसल–अपनी अपनी यात्रा, नासिरा शर्मा–शाल्मली, सात नदियाँ एक समुद्र, चन्द्रकान्ता– अपने अपने कोर्णाक, राजी सेठ तत्सम, मैत्रेयी पुष्पा – चाक, चित्रा मुद्गल – एक जमीन अपनी इत्यादि में मनोविश्लेषण प्रभावी रूप से हुआ है। यौन समस्याएँ केन्द्र में है। नारी का सामाजिक व आर्थिक सम्मान प्रमुख मुद्दा है। उसके हिस्से की धूप, चित्तकोबरा में चटख यौन चित्र है। अनित्य में शहीद भगत सिंह की कथा को केन्द्र में रखकर सघन सामाजिक और राजनीतिक यथार्थ की यात्रा है। शाल्मली व सात नदियाँ एक समुन्दर के केन्द्र में क्रांति है। धूप आती है में झोंपड़पट्टी जीवन की गहरी व्यथा है।

व्यंग्यात्मक :

महिला लेखिकाओं ने अनेक स्थलों पर अपने उपन्यासों में विभिन्न पात्रों के माध्यम से व्यंग्यात्मक स्थितियों की सृष्टि की है। ये व्यंग्य पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक क्षेत्रों से संबंधित होकर व्यक्तिगत स्तर पर चारित्रिक व सामाजिक

समूहगत भी हुए हैं। इनका ध्येय विकृतियों के भावों को तिरोहित करना एवं पुनः स्वस्थ सही वातावरण निर्मित करना, आत्मसृष्टि प्राप्त करना है। अनित्य–मृदुला गर्ग में श्यामा फोन करके दफ्तर से बुलाती है जल्दी आओ, मेरा दिल डूबा जा रहा है। डॉक्टर कहता है किसमें मिसेज बंसल–यहाँ तो कोई परिवार नहीं है। किसमें डूब रहा है आपका दिल ? यह व्यंग्य हास्य मिश्रित है। अंकल प्रभा पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं ''तेरे भेजे में कूड़ा भरा है फिर तु फर्स्ट डिवीजन में कैसे पास हो जाती है (पृ.11) अविजित का संगीता को कथन – ''मैं कभी सोच भी नहीं सकता था तुम बिना प्यार किये सिर्फ पैसों के लिए शादी कर सकती हो ?'' (पृ.15) अनित्य का कथन व्यंग्यात्मक है ''पुलिस की दो लाठी खाई और शहीदों की फेहरिस्त में आ गए'' (पृ.31) ममता कालिया बेघर में मुंबई की जिंदगी पर व्यंग्य करती है – ''बम्बई जैसे शहर में मौत होना कितना आसान है ? (पृ.68) परमजीत भी कहता है – ये साड़ियाँ इनके शरीर पर झण्डों की तरह लगेगी या कफन की तरह ? (पृ. 73) परमजीत संजीवनी का झूठे पकड़े जाने पर व्यंग्य करती है – ''चेहरा तो इन्द्रधनुष विज्ञापन की दुनिया खर्च और बिक्री की दुनिया है। (पृ. 38) आज का युवा विचार रखता है – ''पापा मेरे लिए शहर महत्वपूर्ण नहीं है, कैरियर है (पृ. 40) पिता द्वारा प्रस्तुत शब्द ''त्रिपथगा'' प्रतीकात्मक है – उनके बेटे के व्यक्तित्व में भौतिकवाद, अध्यात्मिक और यर्थाथवाद की कैसी त्रिपथगा बह रही थी (पृ.46) अभिषेक का कथन पटरी बदलना रेलों के लिए सुगम होता है, जिंदगी के लिए नहीं (पृ.49) तथा पवन का–'' मॉ स्टैला मेरी बिजनेस पार्टनर, लाइफ पार्टनर, रूम पार्टनर तीनां है यहाँ विचार व विवेचना दोनों हैं। (पृ. 51) ''बेघर'' में भयमुक्ति की कामना है। बंबई का अर्थ था – समृद्ध, फिल्म और लड़कियाँ (पृ. 25) परमजीत की बम्बई के जीवन की विवेचना इस प्रकार है – ''अक्सर समृद्ध और सड़क समानान्तर चलते और उनके बीच सिर्फ मुंडेर भर फासला होता जैसा कस्बों में एक घर और दूसरे घर की छत में होता है (पृ.35), आम तौर पर औरतें रसोई में रहना पसंद करती है और पकते खाने की गंध उसे भी अच्छी लगती है। (पृ.52) संजीवनी की एक अपनी ''उदास दुनिया'' (प्रतीक) है जिसे वह बेच नहीं सकता (पृ.67) महानगरों में रहने की जगह की विवेचना इस प्रकार की गई है ''केकी ने उसे नया घर तलाश करने को कह दिया तो वह बेघर हो जाएगा। इतने लंबे चौडे शहर में वह कहाँ जाएगा ? (पृ.71) परमजीत संजीवनी पर अपनत्व जताते हुए कहता है – ये होठ भी मेरे हैं, आँखें भी मेरी हैं, गाल भी मेरे हैं, ठोडी भी मेरी है (पृ.92) में वासना का अतिरेक है।

''अतीत'' में चिल्ला कर कहने से नाटक सच नहीं बन सकता (पृ.5) सिर दर्द तो बहाना है – स्पर्श को महसूस करने के लिए (पृ.12–13) किसी भी मर्द से प्यार की खातिर शादी मत करो (पृ.15) शहादत इतनी सस्ती नहीं होनी चाहिए (पृ.31) विचारात्मक है तो रंजना – ''रेगिस्तान में बह रहे ठंडे पानी का श्रोता (पृ.36) प्रतीक है। आजादी की लड़ाई लड़ने वाले तमाम लोग इतने आशिक मिजाज क्यों है ? (पृ.41) में विवेचना है। तथा स्वामी हमको लेने आयेगा और हम इधर पड़ा रहेगा, पैसा का खातिर, धिक्कार है हम पर एक विचार है।(पृ.48) क्या समर्थ की सामर्थ्य इसी में है कि कमजोर पर जुल्म करे (पृ.50) हमारा देश क्या इसलिए कमजोर बना, क्योंकि जुल्म नहीं किया (पृ.51) इतिहास वे लिखते हैं जिनके हाथो में ताकत होती है (पृ.52) काजल की विवेचना महत्वपूर्ण है – ''जब हम गुलाम थे तो कानून तोड़ते थे, जेल जाते थे, हो रहा है और बोल ऐसे रही है। जैसे घर से फोन आया है (पृ.76) दौड में राजुल अभिषेक को व्यंग्य के लहजे में कहती है – ''हिन्दुस्तानी मर्द को शादी के सारे सुख चाहिए बस जिम्मेदारी नहीं चाहिए (पृ.28) रेखा अपने बेटे को व्यंग्य में स्टैला को लेकर कहती है ''मैने तो ऐसी कोई लडकी नहीं देखी जो शादी के पहले ही पति के घर में रहने लगे। (पृ.52) राकेश को उसकी माँ व्यंग्य में कहती है – सेटेलाईट और इंटरनेट से तुम लोगों का दाम्पत्य बनेगा (पृ.65) इसी प्रकार मिसेज सोनी का व्यंग्य रेखांकित योग्य है – ''बाजार में सब चीज मोल मिल जाती है बच्चे नहीं मिलते (पृ.82)

महिला उपन्यासकारों के व्यंग्य के उत्तरआधुनिकता, भूमण्डलीकरण, बाजारवाद, फैशन व कम्प्यूटर क्रान्ति तथा सामाजिक–आर्थिक राजनीतिक विसंगतियाँ, प्रधान नहीं है।

विवेचनात्मक, विचारात्मक एवं प्रतीकात्मक

बहुमुखी प्रतिभा की धनी महिला उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में विवेचनात्मक एवं विचारात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। इसके लिए सशक्त प्रतीक एवं बिम्ब विधान का उपयोग किया है।

ममता कालिया लिखती है – ''बीसवीं सदी का सीधा सादा खरीददार एक चतुर उपभोक्ता बन गया। जिन युवा प्रतिभाओं ने यह कमान सँभाली, उन्होंने कार्य क्षेत्र में तो, खूब कामयाबी पाई, पर मानवीय संबंधों के समीकरण उनसे कहीं ज्यादा तो खींच गए, तो ही ढ़ीले पड़ गए। दौड इन प्रभावों और तनावों को पहचान कराता है। दौड़ में उपभोक्ताओं का संसार है (पृ.10) पता नहीं जैन धर्म का प्रभाव था या गांधीवाद का, गुजरात में मांस और अंडे की दुकानें, मुश्किल से देखने में आती है (पृ.13) में विवेचनात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है। विचारात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है।

विचारात्मक दृष्टिकोण से अपने घर और शहर से बाहर आदमी हर रोज एक नया सबक सीखता है (पृ.14) महत्वपूर्ण है। तरकारियाँ विश्व बाजार की जिन्स बनती जा रही है। (पृ. 17–18) में भूमंडलीकरण का प्रभाव है। घर से दूर बैठे पवन के लिए माता–पिता और भाई उसके एलबम की तस्वीरें हैं (पृ.25) प्रतीक की दृष्टि से कंपनी की कर्मभूमि ने उसे इस युग का अभिमन्यु बना दिया है। (पृ.25) रेखांकित योग्य है। पल्स रेट (एस.टी.डी. काल्स में) टाइम इज मनी घर से बात करने में भी महाजनी दिखाना (पृ.26) महत्वपूर्ण विचारात्मक विवेचना है। राहुल ''कोपेज'' को अच्छी जगह नहीं मानता क्योंकि वहाँ पर सौन्दर्य उपचार की जड़ में गलत धंधे होते हैं। (पृ.34) विज्ञापन झूठ बोलते हैं। जनता को बेवकूफ बनाते हैं भी ऐसी ही उक्तियां हैं। यह दिखाने के लिए कि हमारा मन गुलाम नहीं हैं और आज जब आजाद है हमारा मन गुलाम हो गया है (पृ.57) समझौतावादी राजनीति में अवसर हावी होते हैं। ''जिसने सवाल पूछने का अधिकार किसी और के हवाले कर दिया हो, उसके पास जवाब होगा भी कैसे ? (पृ.69) गांधीजी के विचार–क्रान्ति चाहे सशस्त्र हो या अहिंसात्मक सफल तभी हो सकती है जब पूरे हिन्दुस्तान में फैल सके (पृ.74) क्रान्ति एक प्रतीक है – क्रान्ति से हमारा अभिप्राय समाज की वर्तमान प्रणाली और वर्तमान संगठन को पूरी तरह उखाड फेंकना है (पृ.81) अविजित कहता है कि युद्ध के दौरान व्यक्ति नहीं, कर्तव्य निभाने वाला पुर्जा भर होता है (पृ.101) इत्यादि महत्वपूर्ण है।

कठगुलाब स्त्री की त्रासदी का कथन है। असीमा कहती है – ''किसी की दया मत स्वीकारो, अपने पर भरोसा रखो (पृ.20) एक विचार है। प्रतीक विधान सशक्त है।

– पेड़ पूरी तरह नंगा नहीं होता।

– जितनी सज–धजता के साथ पेड़ श्रृंगार करता है उतनी ही क्रुरता के साथ उसे निवर्सन भी किया जाता है।

– बर्फ उसकी नग्नता को सफद चादर से ढक देती है (पृ.32)

वह ऐसे झपट पड़ा जैसे कीड़े पर छिपकली (पृ.51) भी एक प्रतीक है। कितना सुंदर विचार है – ''नग्नता केवल देह की नहीं होती। रूहानी नंगापन बर्दाश्त करना कहीं ज्यादा मुश्किल होता है। (पृ.60) मृदुला गर्ग ने सशक्त बिम्ब विधान का प्रयोग किया है। ''जितना मैं उस चाहत को ग्रंथों के इमारती बोझ तले दबाती चली गई, उतना ही वह जमीन मे भीतर फूलती–फलती गयी। चूल–चूल पोली हुई इमारत को एक दिन गिरना ही था। वह गिरी और मुझे चाहत से सरोबार अकेला छोड़ गई।'' (पृ.79) जानती हो। मारियन – यह उपन्यास हमारा मानस पुत्र है (पृ.93) जैसे ही यह उपन्यास छपकर

आएगा हम एक और बच्चा बनाएंगें (पृ.95) यहाँ बुमन आफ द अर्थ भी सांकेतिक है। जेल्डा फिट जैरल्ड के शब्द – विचारात्मक है –

''हर औरत में जुल्म उठाने की ऐसी महारत देखी जा सकती है, कि सोफिस्टिकेटेड से सोफिस्टिकेटेड औरत भी कहीं न कहीं, एक मामूली किसान की तरह कलपती पायी जाती है (पृ.97) यह एक विवेचना है – ''मुक्त औरतों के संसर्ग में रहने के बावजूद मैं मर्द को सूअर में तब्दील करने में सफल न हो सकी(पृ.101) है विच्युअल गर्भपात की बीमारी ज्यादातर कामकाजी और खासकर फेमिनिस्ट औरतों को होती है (पृ.105)

औरत के बारे में यह महत्वपूर्ण है –

– औरत, औरत के साथ अन्याय क्यों करती है ?

– क्या उसके मूल में पुरूष ईर्ष्या नहीं होती ? क्या वह पुरूष होना चाहती है, दूसरी स्त्रियों पर अपने उधार के पौरूष का रोब जमाने लगती है

– औरत होना एक विडम्बना जन्म लेगी, औरत तेरा नाम विडम्बना है (पृ.113)

– मेरे सिद्धान्त मुझे ऐसे पति से एक पैसा लेने की इजाजत नहीं देते, जो किसी और का पति बन चुका है। (पृ.167) लेखिका का दूसरा नाम – चित्त की एकगुणा बताते हुए पहली शर्त धीरज बताती है जो विवेचना है (पृ.175) मां बिस्तर पर ऐसे गिरी जैसे हवा के तेज झोंके से हैरान सीधा तना पेड गिरता है (पृ.201) औरतें सोचती है घर से बाहर निकलकर नौकरी कर लेने से वह पुरूष से प्रतियोगिता जीत लेगी (पृ.214) असीम कहती है इस देश में औरत या माँ है या पैर की जूती। इनसे काम करवाने के लिए इनकी अम्मा बनना जरूरी है क्या ? सब पैसे का खेल है। (पृ.256)

मैं और मैं में माधवी का कथन – ''मुझे पाखंड और आडम्बर से सख्त नफरत है। (पृ.11) आत्महत्या हमारे अंदर संवेदन को जन्म देती है विक्षोभ ने नहीं (पृ.10) आदर्श पति की आदर्श पत्नी बने रहने में दो चार दिन से अधिक संतोष नहीं मिलता (पृ.16), नफरत के मोक्ष से मढी देह को समर्पण की आग से झोंक देने में जो आत्मपीड़न है, आध्यपीड़न में जो आध्यात्मिक परितृप्ति है उसे स्त्री ही जान सकती है (पृ.55) सच्चा प्रेम केवल इकतरफा होता है (पृ.66) इसी प्रकार चित्तकोबरा, चाक, निर्मोही, टेसू की कहानियाँ रसीदी टिकट अन्या से अनन्या, गुड़िया भीतर गुड़िया तथा एक कहानी ये भी इत्यादि में कई स्थल विचारात्मक, एवं प्रतीकात्मक स्वरूप में प्रस्तुत किए गए हैं जो उपन्यासों का शिल्प सौष्ठव की दृष्टि से प्राण तत्व है।

भावात्मक आलोचनात्मक

महिला उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में पात्रों का विन्यास करते समय अनेक स्थलों पर भावात्मक एवं आलोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाया है।

चित्तकोबरा में भावात्मक अनुभूतियां विशिष्ट है–

मैं भी पागल हूँ। वही तो है वे। बच्चा भी। वह भी। चांद पर।

नीली रोशनी के घेरे से झांककर उसने मुझे देखा है। जब भी चाँद के चारों तरफ घेरा होता है। नीली रोशनी का वह मुझे याद करता है। एक महान आत्मा जन्म लेती है। आत्मा तो महान होती ही है। एक आत्मा जन्म लेती है मेरे अन्दर (पृ.12) इसी प्रकार प्रेम विषयक भावुकता–

प्रेम परोपकार नहीं होता। जो प्रेमी बलिदान चाहे वह प्रेमी नहीं होता।

बलिदान के बाद प्रेम–प्रेम नहीं रहता, परोपकार बन जाता है। (पृ.42) औरत की शराब के साथ भावात्मकता– रेखांकित योग्य है– मैं सचमुच पीना चाहती हूँ। इतनी की धुत हो जाऊँ। मैं जानना चाहती हूँ कि लोग शराब क्यों पीते हैं? धुत होकर मैं क्या करूंगी (पृ.49) वासनात्मक क्रियाकलापों में तृप्ति का विचार– मैंने उसे छाती से सटा लिया, उसके होंठ वक्ष से लगा दिए हैं। उसकी मुट्ठियां बंध गई है। मेरा उरोज उसने जी जान लगाकर थाम लिया है। अब वह सन्तुष्ट तृप्त है। (पृ.60)

विवाह के बन्धन में मेरा विश्वास नहीं है, में आलोचनात्मक अभिव्यक्ति है। (पृ.89) औरत अपनी देह को लेकर भावुक हो ही जाती है। कपड़े उतारकर मैंनें अपने शरीर को परखा, वाकई मेरा शरीर अभी जवान है, शायद सुन्दर भी। शरीर का सौन्दर्य जवानी से होता है। मैंने अपने शरीर को धोना शुरू किया। मैं अपने शरीर को उसी मनोयोग और व्यस्तता से साफ कर रही हूँ। जैसे महेश हर रविवार को अगले हफ्ते के इस्तेमाल के लिए अपनी गाड़ी धोता है। महेश से कहीं ज्यादा सतर्क हूँ मैं । ऑपरेशन से पहले मरीज की सफाई करती नर्स की तरह। रेजर से ब्लेड लगाकर मैंने अपनी देह के तमाम बाल साफ कर दिए। (96)

नारी की देह में उरोज का विशेष महत्व होता है जो उसके भावात्मक विचारों के अनुभवों से जोड़ता है। महेश के हाथ मेरे उरोज को मसल रहे हैं। मैं वह साज हूँ जिस पर उसकी अंगुलियां रियाज करती है। अगर मेरा शरीर उरोज होता, एक ही दीर्घकाय, विशाल, गुदगुदा उरोज, ग्लोब की तरह। महेश उस पर पसर जाता। उसके हाथ पाँव होंठ एक साथ उससे खेलते, उसे मसलते, उसे चूमता महेश के हाथों की अंगुलियों के

नीचे वह प्यानों की तरह बज उठता। उन्मुक्त संगीत से कमरा गुंज जाता है। मैं बस एक विशाल उरोज होती (पृ.97)

एक कहानी यह भी में मन्नू भंडारी ने भावात्मक सम्बन्धों को बखूबी प्रकट किया है– लेखन – स्त्री–पुरूष–तलाक इत्यादि को लेकर आलोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाया है। वह लिखती है– हर स्तर पर संकट थे, कष्ट थे, समस्याएं थी, नसों को चटका देने वाले आघात थे, पर उनके साथ लगातार लिखना भी था। (पृ.13) मन्नु भंडारी–राजेन्द्र यादव के रिश्ते पेड़ पौधों के साथ विचारात्मक किन्तु अनुभव परक महत्वपूर्ण है। कलम और शब्द के साथ रिश्ता टूटते चले जाने की प्रक्रिया में कैसे जिन्दगी के साथ भी मेरा रिश्ता टूटता चला गया, कैसे मैं सबसे कटी छँटी अपने में ही सिमटती सिकुड़ती चली गई।

— इन पत्तियों को तो अब झड़ना ही होगा। इनसे मोह रखकर अब काम नहीं चलेगा क्योंकि ये अब जान नहीं देने वाले इस पौधे को, अब तो जड़ को देखना होगा।
— जो रेशे सड़े गले थे, जिन्होंने पौधे की जीवन शक्ति को कुन्द कर दिया था, उन्हें बड़ी निर्ममता से उसने तोड़ फेंका (पृ.14)
— तो क्या अपने को पुनर्जीवित करने के लिए मैं भी अपनी जड़ों की ओर लौटूं, सारे सड़े गले रेशों को उखाड़कर, उन रेशों को देखूं–परखूं, सहेज–संवार, जिनकी जीवन शक्ति ही मुझे यहां तक लाई ?
— आज की स्थितियों में, नए सन्दर्भो की मांग करती आपके सामने आ खड़ी होगी, एक चुनौती बनकर एक बार पूरी निष्ठा और ईमानदारी के साथ इन सबसे जुड़कर देखा तो जाए। कौन जाने, इन ढूंढ जैसी टहनियों में भी कुछ अंकुरित होने की प्रक्रिया शुरू हो जाए (पृ.15)

यहाँ आलोचनात्मक दृष्टिकोण दृष्टय है।

मन्नू भंडारी माँ के लिए विचार रखती है उन्होंने जिन्दगी भर अपने लिए कुछ मांगा नहीं, चाहा नहीं, केवल दिया ही दिया (पृ.19) वह स्वयं के बारे में भी सोचती है नायिकाओं के साथ जीने की जगह नायिका बनकर जीना ज्यादा अच्छा लगा (पृ.22) पिता के बारे में कथन ''पिताजी के चेहरे का सन्तोष धीरे–धीरे गर्व में बदलता जा रहा था। एक लड़की का बिना किसी संकोच और झिझक के यों धुआँधार बोलते चले जाना है। इसके मूल में रहा होगा।'' (पृ.25) स्वतन्त्रता प्राप्ति पर अजमेर शहर के बारे में विचार ''अजमेर शहर में वैसी दीवाली न पहले कभी मनी होगी न बाद में'' (पृ.25) तथा

मुसलमान बाबा का वापस भारत लौट आने पर भाव अपनी मिट्टी को छोडकर कोई रह सकता है क्या ? क्या अपनी माँ को छोडकर कोई रह सकता है क्या ? (पृ.27) इसी प्रकार मीरा विषयक दृष्टिकोण राजस्थान के राजमहलों में जहां स्त्री की अंगुली तक दिखाना वर्जित है वहां साधु सन्तों के बीच बैठकर मंजीरें बजाती, नाचती गाती मेरे से भी अधिक कोई क्रान्तिकारी हो सकता है भला ? (पृ. 28–29) इस प्रकार लगभग सभी उपन्यासों में महिला उपन्यासकारों ने विचारात्मक आलोचनात्मक दृष्टिकोण प्रचुर मात्रा में अपनाया है।

शब्द भण्डार :–

तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी एवं आंचलित शब्दों का प्रयोग

महिला उपन्यासकरों ने अपने उपन्यासों में जहाँ पर एक तरफ खड़ी बोली–हिन्दी भाषा का प्रयोग किया है वहीं पर मानक शब्दावली के साथ–साथ तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी एवं आंचलिक शब्दावली के प्रयोग में पूरी उन्मुकता, उदारता एवं विशाल दृष्टिकोण का प्रयोग प्रचुरता के साथ किया है। ममता कालिया ने बेघर में आर्थिक उदारीकरण, व्यापार प्रबंधन, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों, बाजारवाद, उपभोक्तावाद का प्रयोग किया है। शुद्धिकरण, प्रदुषण, संयंत्र हुआ है। 'बेघर' में कौमार्य की अग्निपरीक्षा शारीरिक सम्बन्ध परम्परागत नियमों से परिचालित, स्वस्थ, सहज और रूचि सम्पन्न, आकांक्षाओं की तृप्ति की इच्छावस्तु, व्यथा कथा, प्रेमाभिव्यक्ति चमत्कृत, नर्म त्वचा का स्वाद, रेशमी बालों का स्पर्श इत्यादि शब्दावली प्रयुक्त हुई है। जो प्रभावशाली है।

मृदुला गर्ग चित्तकोबरा में भाग्यशाली, निर्वाक महान आत्मा चांद से उतरेगी, नीली रोशनी के घेरे, बेखबर, आत्म विभोर, संगीत की धुन से बिंधे, प्रतिवाद, मेथड़ एक्टिंग के लिए पागलपन सायों में घिरा निपट अकेला इंसान, ठाठे मारते समुद्र के बीच निर्जन रेतीले टापू पर वह अकेला खड़ा, बांहें कितनी सुडौल और सशक्त तथा मैत्रेयी पुष्पा ने उसके उपन्यासों में गर्मिणी उजियारा, प्राकृतिक लीला, समाधिस्थ, शील सतीत्व, स्वर तरंग, करूण रोदन, गुडहल के फूल सी लाल आंखें सरसों सी फूली देह, औरत की नंगी देह आंखों के सामने अध कुचली नागिन सी छटपटाती रही (सभी चाक) तथा गुड़िया भीतर गुड़िया में सुलहनामा, अन्तर्यामी, विवाहित जीवन की कसौटी, प्यार की कसम, भविष्य की दिशाएँ, ज्ञान की परिभाषा, सभ्यता का दरवाजा, राजमार्ग परामर्श में मंत्री की सेवा में नित दासी है, भोजन में माता सम, शयन समय रम्भा–सी है, सुरसा में पलने वाली भावना, उच्चारण का अक्षर, भद्र समाज का भूत, सावधानियों की कतारें, कैम्पों की दुनिया–भूखों नंगों और बीमारों की जमातें, सुख सुविधाओं की गुलाम इत्यादि

का प्रयोग किया है। प्रभा खेतान ने अन्या से अनन्या तक में सती को प्रणाम, व्यापारिक बुद्धि, विवाहित व्यक्ति से एक कुँवारी लड़की कभी प्रेम नहीं करती, देह का व्यापार नहीं करती, बरगद की छांव, सुरक्षा के प्रतीक, जिन्दगी का पड़ाव, पेड़ ऊँची डालियों को छूता झूला, पश्चिम की हवा, पतली कमर में मोतियों की करधनी, अनाथ बचपन, मेरा घर उजाड़ने वालों तुम भी तड़प तड़प कर मरोगे, स्त्री होना अम्मा की नजर में पाप है, एक दिन देख लेना गंगा का पानी लाल हो जाएगा तुम्हारे लहू से, सामाजिक क्रांति के बदले अब औद्योगिक क्रांति की जरूरत है इत्यादि शब्दावली वाक्यांश प्रयोग विचारों की दृष्टि से प्रभावोत्पादक है।

विदेशी शब्दावली

ममता कालिया ने दौड़ में एम.बी.ए., कैरियरिज्म, जेरोक्स मशीन, यूनो कॉन्ट्रेक्ट, जम्पस, एशियन पेंट्स, एरिया, टाइम जोन, ट्रांसफार्मर, पोस्ट आफिस, चैप्टर, यूनीफार्म, मार्केटिंग, यूनिट, पिजा हट, काउंटर, मैनूकार्ड एप्रिशियेट, डिश, आई.आई.एम. सनशाईन प्रोग्राम, डीलर्स कमीशन बाई मॉड, पाश्चराइज्ड, सर्विस, इंडस्ट्री, फ्लैट, स्टियरिंग कंट्रोल्स इत्यादि शब्द प्रयुक्त किये हैं। 'बेघर' में प्ले ब्वॉय, बोल्डनेस, वेन मेन किल, सिनिरियो ऑफ मेसक्यूलिन वायलेंस, मॉडल, चेरिटीबेल्ट, हेयर कटिंग सैलून, रिजेक्ट पैडर रोड़नेपियन सी रोड़ अफोर्ड, टाइपराइटर, टेलीफोन, लिफ्ट, ऐजेंट, केबिन, पाइप इत्यादि शब्द काम में लिये हैं। मृदुला गर्ग चित्तकोबरा में पसर्व, पार्टनर डांसिंग, कॉस्टेल्स एण्ड डिनर, काराडयली इन्वाइट टू यू काक्टेल्स एण्ड डिनर, राक ऑफ जिबराल्टर, ड्रेमेटिक क्लब, एमेच्योर, स्विमिंग पुल, हैंग ओवर, फार गाड्स सेक शट अप एण्ड लेट मी लव, कम्युनिस्ट, जीसस क्राइस्ट, यूरोप, लेडीज क्लब प्रयुक्त हुए हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में ट्यूबवेल, टेलीविजन, कलक्टर, बी.डी.ओ पॉवर, स्कूल, एम.एस.सी. (एजी), हाई कोर्ट में अपील, प्रभा खेतान ने अन्या से अनन्या तक में डॉक्टर, डायरी, लिस्ट, नार्थ साउथ बैग, आर्डर, पासपोर्ट, वालेट, जैक्सन, हाइट, मिस्ट्रेस, बास्टर्ड, मिनट, बिजनेस पार्टनर, एक्सपोर्ट, ब्यूटी थेरेपी का कोर्स, हॉलीवुड, ब्यूटी पार्लर, डयन मिक महिला, अफेयर, बेसमेंट, आस्सेस्ड, हिस्टिरिक, मॉट्रियल, मिलिट्री बेरक, साइक्रियाट्री, एपीयरेंस इज नाट रियलीटी, कामरेड, बर्न स्टैंडर्ड, गैस्टकीन, विलियन्स, ब्रैथवैट, इंडियन फैन, रैकिट एण्ड कोलमैन, इलेक्ट्रोनिक्स, सिमोन द बोउवार का सेकेंड सेक्स, प्रोफेसर वाइस चांसलर, बैंक की क्लर्की, कम्युनिस्टों को सरकारी नौकरी पॉलिटीकल, साइंस जैसे शब्दों का प्रयोग किया है।

कठगुलाब में मृदुला गर्ग पॉवर हाउस, फैक्ट्री के मैनेजर, पाइप, ओक्सफोर्ड, प्रोजेक्ट माई डियर, हॉस्टल, स्कॉलरशिप, एडमिशन, होम साइंस, फीस, फोक्स, अलमारी, फोटो ग्राफर, बास्टन युनिवर्सिटी, असिस्टेंटशिप, स्टाइण्ड मेपल, शुगर, कैन्कामैगस हाइवे, रूट नम्बर, न्यू हैम्पशेयर, वर्क शेयर, क्रिसमस, टाइफायड, सेक्स सम्बन्ध, रिकार्ड, स्टोर, वीक एण्ड, पार्टी, स्पेशल, सैंडविच, ब्रेम ब्रैड, मिनरल वाटर, स्वेटर इत्यादि शब्द दैनिक जीवन की भाषा से जुड़े हुए प्रयोग में लिए हैं।

उर्दू के शब्द

ममता कालिया ने दौड़ में सबक, लज्जत, कतरनें, मुश्किल, बेशुमार, बेवकूफियाँ, जिन्स, बेघर में बर्दाश्त, तकलीफ, कदर, पेचीदा, गुम्बदाकार, पेश करना, मिजाज रखा, अक्सर, इर्द–गिर्द, तंदूर, कीमेवाले परॉठें, आबोहवा, हम वतनी, गुसलखाने इत्यादि का प्रयोग किया है। ममता कालिया उर्दू शब्दों से परहेज नहीं करती अखबार, दफ्तर, गोश्त, पन्ना, नतीजे, संकाय, महसूस इत्यादि सामान्य बात है। मृदुला गर्ग चित्तकोबरा में हमसफर, आगोश, पनाह, मुकाम, कोख, अक्स, आईना, बहशी कारनामें, हैरान, धूप से लबरेज, रोखी, तसल्ली, कायरता, करंट, रेतीले, कंगारो के गर्भ में, नाखूनों से रेगिस्तान की रेत उँडेलना, मजलूम बस्तियाँ इत्यादि काम में लिये हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने कुर्बान, आहिस्ता, पुरखा, सिलसिला, बवंडर, मार्फत, उतावलापन, गवाही, मुकदमा, बेईमान, फौज, खानदान, बिरादरी का रिवाज, फिलरी से ऐलान, नरक, मशक, छिड़काव, काबिल, शिनाख्त, नफा नुकसान, ढोंग, बेगुनाह औरत, चौकन्ना तथा मृदुला गर्ग ने कठगुलाब में परेशान, खुशी से पागल, तराशा गुलाब, दिमाग, साख, दबी जबान में उलाहना, अजीब मनहूस पेड़, बदतमीजी, बेशर्म, दाखिला, हाथखर्च, फादृश मजाक, दरिन्दे के शिकंजे, जिस्म, गनीमत, जेहन पर थकान, बदन टूट रहा, इन्तकाम का वक्त, बुत परस्ती, फितरत, दिक्कत, आदमकद आइने, कब्रिस्तान, खोजबीन, शख्सियत, दस्तूर, जश्न का मौसम, खुदकुशी करने का मेरा जमीर मुझे क्यों नहीं उकसाता? क्या एक बेहतर जिन्दगी का ख्वाब, देखना एक बुजदिली है? नजदीकी रिश्तेदार, आख्तियार, शीश, खासतौर, गुसलखाने, दहशत, शजुफा, शोर–शराबा इत्यादि ऐसे शब्दों का खुलकर प्रयोग किया जो दैनिक जीवन में बोले जाते हैं। कृष्णा अग्निहोत्री ने टेसू की कहानियाँ में अनाथालय, झुर्रियाँ, बाहुपाश, हौसला, परोसते समय, हमराही, गिरोह, नजरिया, मायनों, बर्दाश्त, जिन्दा जिस्म, मैं मरे रास्तों में चलती लाश, रूँआसी, परछाइयों, खूंखार, अव्वल, नरगिस–मधुर पर दीवानी, खामोशी, भाईजान, खामोश परी को शीशे में उतार सको,

बेरूखी, कश्मकश, हमउम्र, बुलन्द हौसला, मुहल्ला, हुजूम, कसाई की बछिया सा, मर्जी, आवारागर्दी, खर्च की कंजूसी जैसा शब्द प्रयोग सहज है जो अखरता नहीं है।

देशज शब्दावली एवं आंचलिक शब्दावली

ममता कालिया ने दौड़ में म्याऊँ–म्याऊँ, दुड़िया, छाड़े (अविवाहित) बेघर में लीले दी हट्टी, बग्गूमत, भूतते, बिगड़ता, मैत्रेयी पुष्पा ने उसके उपन्यासों में खेरापतिन, परोहित ताई, अकाल मौत की वियता, सीता मईया, गबरू जबान, घर की आबरू, घिय बेटी की देह में घना की तरह नहीं घड़ी रहती, भैमाता महतारी, असवारी, ढोर, चलियो, बचाइयो, असनान, बैयर घी का मटका, आदमी की आंच पर भस्म उसी को होना है, आ बैल मुझे मार–कहावत, बिटौर, भईया, बकौल, छोरा की नार (गर्दन) निपूती होकर बिसूरती रहना, दंयैत (दैव्य) गुहार करूं, बैयर वाली पर हमला, पुरूष बली नहीं होत है समै होत बलवान, भीलन, लूटी गोपिका, वही अर्जुन वही बान, घरवार, परालाया, खेती करे बंज को धावै, ऐसौ डूबै फर न पावै, जांघिया, इगलास विदा की बेला बड़ी निठूर, अपनी ताई की आज्ञा मानना खूंटा के पडरा, बिसैले जिनवर, छोटी गाय, खैयडों की परम्परा कथा राजा पिरथम की, विघम पडै तो परलय हो, चंदा की चांदनि मोरिला, रैन उजियारा, दूर देसी बात है पुरिख नारी से हीन, सत्रह विस्वे इस्तरी, पुरिख है बिस्वे तीन, गांव की लुगाई तो सरण मं थेगरी लगती है, मेहमन्टा (मेहमान) पेरी आंखों के अगारी पूरे पुरिख होकर ठाड़े हो गये। पूरी मरदानी को हाथ फैर फैरकर चेतन्न किया चिड़ी तोय चमड़िया भावे, सावन महिना रंडुआ रौवे सुन सुन बिछियन की झनकार, बेबात ही चीर का सांप क्यों बना रहे हो–कहावत, मेरी बहन तो बैरियों के बीच ऐसे लग रही है जैसे दांतों के बीच जीभ, दुती लगाई किसी की सगी नहीं होती, रंडी उस खटीक के मूल पर जान दे रही है, बास्टन बनता है भडुआ, (सभी चाक से) तथा गुडिया भीतर गुडिया कुम्हलानी, जौ पिय के मन नहिं भायी, मतवाली नार ठुमक–ठुमककर चली जाए, लरिका लैबे के मिसन लंगर मो ढिंग आय, गयौ अचानग अंगुरी छाती छैल छभाय, बाबा तुम यौं हारे रे, बेटा बारौ जीत गयौ, लाटी मेरे गुन हारे रे कि, जब से तैने जनम लयौ इत्यादि ग्रामीण आंचलिक परिवेश देशज शब्दावली में प्रयुक्त हुआ है। इस प्रकार– महिला उपन्यासकारों की भाषा में शब्दावली का झपक–विशद स्वरूप दृष्टज होता है। बहुभाषिकता लिए हुए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर से ठेठ देहात तक ग्रामीण आंचलिक शब्दावली से सम्पन्न भाषा सरल साज परन्तु प्रभावोत्पादक व साहित्यिक मर्म को छूती हुई है।

बिम्ब विधान

साहित्य के क्षेत्र में कल्पना शक्ति के महत्व की प्रतिष्ठापना का श्रेय स्वच्छन्दतावादी रचनाओं को दिया जाता है। यह पाश्चात्य काव्यशास्त्रियों की देन है। पाश्चात्य साहित्य में अरस्तू ने अनुकृति सिद्धांत के स्थान पर कल्पना शक्ति को प्रतिष्ठित किया कल्पना शक्ति का अपना महत्त्व है। इसके प्रमुख कार्य हैं–

1. विषयवस्तु का यथार्थ एवं चेतना स्तर पर प्रस्तुतीकरण।
2. विषयवस्तु की स्पष्ट व अनुभूति पर काव्य–व्याख्या।
3. नयी विषयवस्तु की कल्पना, नयी घटनाओं, तथ्यों, पात्रों का सृजन।
4. देश, काल, वातावरण, व्यक्ति सम्बन्धों से मुक्ति प्राप्त कर नवीन कल्पना की अद्भावना।
5. विषयवस्तु का सहृदय द्वारा आत्मसात करना।

कल्पना में सूक्ष्म भावों को बिम्ब के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। कल्पना ही बिम्ब के रूप में मूर्तित होती है। बिम्बों के माध्यम से कल्पना का प्रस्तुतीकरण किया जाता है। बिम्ब से कथन की नयी भंगिमा आती है। बिम्ब से साध्य व साधन माना गया है। बिम्ब से चारूता एवं अर्थ माननीय बढ़ता है।[1] बिम्ब और प्रतीक की प्रतिष्ठा ने काव्य सौष्ठव का गुण विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।[2] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल अप्रस्तुत विधान को विमान पथ मानते है।[3] बिम्ब विधान कला का क्रियापस है जो कल्पना से उपस्थित होता है। जब बिम्ब बार बार प्रस्तुत होता है तो प्रतीकों का निर्माण मध्यस्थ है।[4]

1. बिम्ब कल्पना और प्रतीक का मध्यस्थ है।
2. बिम्ब शब्द गर्मी चित्र है। उपमान अर्थगर्मी विन्यास है।
3. बिम्ब कोई भी मानसिक व्यापार विचार घटना अलंकार दो वस्तुओं की तुलना कुछ भी हो सकता है।
4. बिम्ब अंग्रेजी के 'इमेज' का हिन्दी रूपान्तर है। इमेज का अर्थ मूर्त रूप प्रदान करना, चित्रबद्ध करना, प्रतिच्छायित करना, प्रतिबिम्बित करना आदि बताया गया है।[5]

---

1 अवतरे शंकर देव – हिन्दी साहित्य में काव्य रूपों के विविध प्रयोग
2 विमल–डॉ कुमार– सैन्दर्य शास्त्र के तथ्य पृ. 201
3 शुक्ल रामचन्द्र – त्रिवेणी पृ. 75 – 76
4 कालरिन – ऑन इमेजिनेरान – पृ. 92
5 शार्टर– आक्सफार्ड इंगलिश डिक्शनरी भाग

5. बिम्ब का किसी पदार्थ की या व्यक्ति की प्रतिकृति, मानसिक प्रतिबिम्ब, कल्पना अथवा समृति में उपस्थित चित्र, जिसका यथुष होना अनिवार्य नहीं है।[1]

6. बिम्ब मन में उपस्थित चित्र होते हैं।[2]

7. हिन्दी विश्व कोश में किसी व्यक्ति या वस्तु के प्रतिबिम्ब(4), सजीव या निर्जीव की प्रतिछाया, मानस प्रतिमा का पर्याय कहा गया है।

अतः "बिम्ब भावमुक्ति शब्द चित्र होते हैं, इनके मूल में रागतत्व, निहित होता है, जो सर्जनात्मक, कल्पना से निर्मित होते हैं।"(6)

सी.एफ एन्पजियन ने बिम्ब को लघु शब्द चित्र,(7) लिविस ने सुन्दर,(8) एस.के. लेंगर ने आध्यात्मिक तार्किक सत्यों तक पहूँचने का माध्यम,(9) कालरिन ने वासना तथा आवेग से जुड़ा होने की अनिवार्यता(10) तथा टी.ई. ह्यूमस ने सज्जा का उपकरण कहा है। अतः पाश्चात्य दृष्टि से

1. बिम्ब श्ब्द चित्र है।
2. सर्जक की अभिव्यक्तियों की शक्तिशाली अभिव्यक्ति है।
3. सर्जक की केन्द्रिय संवेदनाओं का अमूर्त चित्र है।

भारतीय विद्वानों में केदार नाथ सिंह ने कल्पना शब्द चित्र,(11) नगेन्द्र ने शब्दों द्वारा निर्मित मानस छवि,(12) डॉ. गोविन्द द्विवेदी ने केन्द्रिय संवेदना युक्त आधार(1) नरेन्द्र मोहन ने– चित्रात्मकता, एन्द्रियता, साम्य सौन्दर्य को आधार स्वरूप ग्रहण करना।(2) दर्शाया है। डॉ. रामदर्शमिश्र के अनुसार बिम्ब भाषा का गुण है – बिम्ब में कार्य, दृश्य, पात्र जितने स्पष्ट होंगे, चित्र विन्यास उतना ही स्थूल गोचर विषय होगा व भाव संसार सहज होगा।(3) प्रत्येक बिम्ब में चित्रगुण की प्रधानता, चित्रात्मकता अनिवार्य होती है। बिम्ब के लक्षण संवेदनाओं का पुंज, भावानुभूति, केन्द्रिय ग्राह्यता, चित्रात्मकता, शब्दमत अभिव्यक्ति, मानसिक भावों का उद्वेलन, सौन्दर्यानुभूति की रागात्मकता प्रतीक उपमा उपमान रूपक से निकटता, काव्यात्मक राग की उपज होती है।(4) बिम्ब के तत्व–1. भाव 2. आवेग 3. अनुभुति 4. केन्द्रियता 5. कल्पना होते हैं।(5)

डॉ. कैलाश वाजपेयी के अनुसार बिम्ब दृश्य, अलंकृत, वस्तु, सान्द्र, भव एवं विकृत(6) तथा केदार नाथ सिंह के अनुसार–

1 विमल–डॉ कुमार– सैन्दर्य शास्त्र के तत्व पृ. 201
2 विमल–डॉ कुमार– सैन्दर्य शास्त्र के तत्व पृ. 201

1. अलंकरण प्रधान, 2. उदात्त, 3. संवेदनात्मक, 4. वस्तु प्रधान, 5. धनात्मक, 6. विस्तार, 7. नाद प्रधान (संगीतात्मक)[7] एवं डॉ. नगेन्द्र ने– 1. लक्षित–उपलक्षित, 2. सरल–संश्लिष्ट, 3. खण्डित–समाकलित, 4. वस्तुपरक–स्वच्छन्द,[8] और डॉ. शम्भु नाथ चतुर्वेदी ने– 1. ऐन्द्रिय 2. मानस बिम्ब में वर्गीकृत किया है।[9] उपन्यासों के परिप्रेक्ष्य में बिम्ब विधान में प्रतीक, संकेत, चित्र एवं ध्वनि मूलक बिम्बों की विवेचना का विनम्र प्रयास किया जा रहा है।

संकेत, चित्र एवं ध्वनि मूलक बिम्ब विधान का प्रयोग

महिला उपन्यासकारों एवं कहानीकारों द्वारा अपने कथा साहित्य में सशक्त बिम्ब विधान का प्रयोग किया गया है। इन बिम्ब प्रयोगों में प्रतीक मूलक, संकेत मूलक, चित्रमूलक एवं ध्वनि मूलक बिम्ब प्रयुक्त हुए हैं। महिला वर्ग के इर्द गिर्द होने से वासना एवं आवेग की विविध वर्गी व्यंजना की प्रचुरता स्वाभाविक रूप से पाई गई है। मृदुला गर्ग ने कठगुलाब में – कठगुलाब का भौतिक प्रयोग किया है घर में बगीचा, इस बगीचे के एक कोने में कठगुलाब की झाडी उगाई गई। नमिता के पिताजी का कोई दोस्त हैदराबाद में 'वुडरोज' के दो फूल लेकर आया था।

नमिता ने तोड़े तो बीच में से कोट के बटन जितने बड़े, सख्त दो काले बीज निकले। माली ने उन्हें पत्थर कहा कितना सख्त ? ये भला कैसे उगेंगे। भरा बीज उसमें डाले तीन चार दिन में पिलपिले हो गए। बगीचे के एक कोने की मिट्टी हटा उसमें दबा दिए। लहलहाकर झाड़ी फूटी तो सब दंग रह गए। हरे पत्तों के बीच कलियाँ आनी शूरू हो गई। भूरे काठ के गुलाब के फूल खिले। भूरे रंग का काठ से तराशा हुआ गुलाब, पंखुड़ियों के बीच से ताकती पुतलीवाली आंख। कठफोडवा ने चोंच घुसेड दी थी। आंख के भीतर नमिता के लिए याद रहा

"झूमकर खिलता कठगुलाब, फूल पत्तों से भरी घूल, नितिन को पोसती झाड़ी की झौपड़ी, कठगुलाब की पूंजी। कुछ गुलाब कूड़ा बन गए लकडी की तराशी कलाकृतियों की तरह सदाबहार"[1]

यहाँ पर भावुकता, गृहविरह, स्मृति दोष, अतीत को झाड़ना, बहारता बहुत सुन्दर प्रतीक बन गया। त्रिया चरित्र इस्तेमाल करके देखो दबंग से दबंग आदमी काठ का उल्लू बन सकता है। इनका गुलाबों की तरह।[2] स्मिता का कहाँ था अपना घर ? वह कठगुलाब की झाड़ी ? क्यों मरी उसकी माँ? नमिता से ज्यादा वह खुद अशान्त थी।

जीजा किसी कठफोडवा से कम था – आंख में चोंच घुसाने वाले नाटे मोटे जवान लड़के को तीन पेग व्हिस्की के पिलाकर कहता है – "यह मेरी साली है स्मिता, क्या चीज है यार, घर में रहती है तो समझो, लार टपकती रहती है अपनी, साली आधी घरवाली"(1) तब जाकर उसका काईयाँपन समझ में आता है। जीजाजी का फौलादी पंजा–साली के दुहरी हुई देह के नीचे–हथेली– उसका वक्ष दबाये थी। स्मिता ने सिसकी भरी तो नमिता ने कहा– "अरे छोडो इसे क्यों तंग कर रहे हैं।"

"बाग कब्रगाह बना"(2) यहाँ पर जितनी सजधज से पेड़ का श्रृंगार होता है, उतनी ही क्रुरता से उसका निर्वसन, बर्फ उसकी नग्नता को सफेद चादर से ढक देती है। जिस्म ही नहीं चेहरा, आंखें, सिर सब मूंद जाते हैं – ठोस "काफिन" उसमें कोई रोम, छिद्र सुराख नहीं होते। मृदुला गर्ग का बिम्ब सांकेतिक व चित्रात्मक है।

एक अन्य प्रतीक "ड्रेकुला"– कोई भी भेष बदलकर जिस्म का खून चूसता, उसका अक्स आईने में नहीं उभरेगा। जब तक चेतोगे, उसके दाँत तुम्हारी गर्दन में गड़ चुके होंगे, वह तुम्हारा खून चूस रहा होगा।(3) स्मिता का जीजा ड्रेकुला ही लगता है। ये प्रतीक दर्शाते हैं – "माँ बाप के सेक्स सम्बन्धों का बच्चों पर दूरगामी प्रभाव पड़ता है।(4) वह ऐसे झपट पड़ा जैसे कीड़े पर मछली(5) एक संकेत है। स्मिता "एब्यूज्ड विमन" – लांछित, प्रताड़ित, बलात्कृत एवं पिटी हुई औरत का प्रतीक पड़ा है।(6) बरसों तक सहते रहने के कारण पीड़ा की आफत पड़ गई है। उपन्यास के "मानस पुत्र" मानना भी एक संकेतिक प्रतीक है।(7) उपन्यासों के शीर्षक नाइट आफद जेस्टर, वुमन आफद अर्थ भी प्रतीकात्मक है।

मन्नू भण्डारी "एक कहानी यह भी"– में उज्जैन आकर बगीचे में एक गमले में लगे पेड़ से स्वयं की तुलना करती है तो प्रतीक चित्रात्मक बन जाता है। इन पत्तियों को तो अब झड़ना ही होगा।(3) यहाँ पत्तियाँ जिन्हें झड़ना है वह राजेन्द्र यादव के सम्बन्ध का प्रतीक है जिनसे मोह रखकर काम नहीं चलेगा। राजेन्द्र यादव के साथ मन्नू भण्डारी के सम्बन्धों के रेशो–मिट्टी –जिन्होंने जीवन शक्ति को केन्द्र कर दिया था, बड़ी निर्ममता से तोड़ फेंका (तलाक ले लिया) दुबारा जड़ों की तरह लोटना–स्वयं के विश्वास व जीवन की तरफ सोचना है।(1) नए सन्दर्भों की चुनौती झेलना है।

मन्नू भण्डारी की कहानियाँ वास्तविक घटनाओं, पात्रों पर आधारित थी कील और कसक, यही सच है ऐसे ही प्रतीकात्मक शीर्षक है। दो लड़कियों के बीच बटा मन

का द्वन्द्व रजनीगन्धा में उभरा।[2] ऐसा ही एक प्रतीक समझकर जिन्दगी है जहाँ एक छत के नीचे, अपनी अपनी अलग जिन्दगी। समानान्तर बिना एक दूसरे हस्तक्षेप के।[3] बाद में शीर्षक प्रतीकात्मक बना– एक दुनिया समानान्तर[4] मन्नू लिखती है – "मेरे पास एक ही हथियार था," और आज उसे कबूल करने में मुझे कोई संकोच भी नहीं है कि उसमें छुरी कांटे उग आए थे।" कितना सटीक चित्रात्मक व वर्ण्यात्मक बिम्ब विधान है।[5] ग्यारह सपनों का देश– अलग अलग शहरों में रहने वाले लेखकों द्वारा लिखा गया प्रयोगात्मक उपन्यास– भी सशक्त बिम्बात्मक कल्पना प्रधान चित्र है।[6] कृष्णा अग्निहोत्री ने "टेसू की कहानियाँ" उपन्यास में सीता व मधुर के बीच की लड़ाईयाँ जिसमें सपने– नई पीढ़ी की शुरूआत, जो अशांत, निस्पंद, हिसांत्मक वातावरण में (ग्रीष्म में) टेसू के फूल–खिलेंगे –के समान है।[7] बहुत सुन्दर बिम्ब विधान है जो चित्रात्मक है।

सीता का जीवन "अंधेरी कोठरी में कैद" जहाँ चेहरे का पीलापन पति की नापसंदगी, ब्याहकर भी अनब्याही सबकुछ प्रतीकात्मक।[8] "औरत–काठ की गुड़िया", बहुत सारी बिम्ब– आलिंगन पाश में बंधी चुपचाप पड़ी, न सहयोग करती, न विरोध वेचारी लकडी (काठ) क्या बोले ?[9]

मृदुला गर्ग के चित्तकोबरा में चित्रात्मक है – चांद के चारों तरफ का घेरा, नीली रोशनी का,[10] टपसे दो बूंद पानी मेरे सिर पर टपक गया।[11] में ध्वनि मूलकता है। रोते रोते मुस्कुरा दो में संकेत है।[12] उसकी आंखें भूरी नहीं हरी है। अंगूरी, नहीं पूरी तरह हरी वे नहीं हैं।[13]

ठाठें मारते समुद्र के बीच निर्जन रेतीले टापू पर वह अकेला खड़ा है।[1] रॉक ऑफ जिबाल्टर (छोटे बड़े भारतीय शहरों में रहने वाली प्रशिक्षित बुद्धिमान स्त्री की समस्याएँ बगीचे में उगते फूलों पर फैला।[2] कैनवास चित्रात्मक है। महेश के हाथों की अंगुलियों के नीचे प्यानों की तरह बजता शरीर– ध्वन्यात्मकता व चित्रात्मकता का कल्पना मिश्रित सशक्त बिम्ब विधान है।[3] जो संगीतात्मकता से युक्त है। देह मिलन–एक गड्डे को भर देने की उत्कृष्ट लालसा[4] में सांकेतिकता है। पत्र का प्रतीकात्मक साक्ष्य सुन्दर है –

नीले लिफाफे ने पंख फडफडाए। उड़कर कुछ दूर, उन ढेर सारी चिड़ियों से अलग आ पड़ा। कितनी जानी पहचानी फड़फड़ाहट है यह। पिंजरे का दरवाजा हठात् खुल जाने पर ऐसे ही पंख फड़फड़ाता है उदास पक्षी। आकाश को छूने की तैयारी में।[5]

इसी प्रकार सांकेतिकता का अंकन – "समुद्री पानी की वह अजीब सलोनी गंध, जो बदबू है, न खुशबू, बस एक बू है, जिसकी मैं महिनों मुंतजिर रहती हूँ, अगर कहीं है तो मेरे अपने जेहन में।[6] "ध्वन्यात्मकता व संकेत मूलक समन्वय युक्त बिम्ब अद्‌भुत है।" चलते हुए आदमी के लिए इंतजार करना आसान है।

पर ठहरे हुए आदमी के लिए ? रोज उसी कमरे की खिड़की के आगे
सूरज उगता है। रोज तेज धूप का नन्हा खरगोश, डरा–सिमटा,
उसी बरामदे के कोने में, दुबका रहता है।
सूरज डूबने से बहुत पहले, निश्चित मृत्यु के डर से कांपकर,
अपनी खेह में जा घुसता है। रोज रात का अंधेरा उसी कमरे
के कोने में कालिख पोतता है। रोज उसी बिस्तर पर सिसकियाँ
पैदा होने से पहले दम तोड़ दिया करती है।"[7]

ध्वन्यात्मक का बिम्ब– "तेज सिर घुनता संगीत, क्रुर निष्ठुर, धर–धम– धम, धिक–धिक–धिक, धिन, धिन, धिन। एक सुर उठता है, फर्श पर गिरता है। प्रतिध्वनि नहीं होती, फौरन दूसरा सुर उस पर टूट पड़ता है।"[8] नाचने का चित्रात्मक बिम्ब अनुभव है – "जगमग विशाल कमरा, खचाखच भरा नंगे इंसानों से भरा। नंगे बदन। नंगे चेहरे। बदन से टकराते बदन। किसी बात पर कपड़ा नहीं। न्योन बत्तियों के नीचे नीला खुदगर्ज उजला बदन का हर गुमढ़ उजागर। चेहरे का हर कटाव नश्वर से तराशा। चिरा–कटा। करीने से सजा। बौराए–बोखलाए बदन नाच रहे हैं।[1] एक नाचता शरीर दूसरे से टकरा जाता है तो फौरन झटका खाकर अलग हो जाता है। किसी चेहरे पर शिकन नहीं मुस्कराहट नहीं, भाव नहीं। बस आंखों में एकाग्रता है, कान चौकन्ने हैं।

प्रभा खेतान का कथन – क्या यही है पढ़ने लिखने का लाभ– खूंटे से बंध जाना। यही है स्त्री की नियति? उसका जीवन? "में सांकेतिक चित्र है।[2] डॉक्टर डी का प्यार" एक उड़ता हुआ पाखी" (वह कभी एक डाल पर बैठ नहीं सकता।[3]
रेगिस्तान मं उड़ती चिड़िया का बिम्ब चित्रात्मकता से मुक्त है –

खून से सनी रेत, बारूद का धुंआ, सूत का दरिया,
हरे पत्तों की छांव में बैठा सैनिक, रेतीली जमीन को,
रौंदते कतार बद्ध टैंक, ओलो की तरह टपाटप बरसते बम,
पलेन, काले, अंधेरे में अनार की रोशनी की तरह फुटती मिसाइलें"

चाक में औरत घी का मटका, गांव की लुगाई, सरग में थेगरी लगाने (हौसला), भूखे जानवर की तरह देखना, औरत के आंसू, अजगरी कसाव, सरसों की फूटी देह, गुडहल के फूल सी आंखे औरत की नंगी देह, अध कुचली नागिन सी छटपटाती, बधिया, की रीत, (झूलानट में) इत्यादि प्रतीक बिम्ब विधान को सशक्त बनाते हैं।

काम और प्रेम परक प्रतीक व बिम्ब उषा प्रियंवदा व मृदुला गर्ग की कहानियों में भी खूब मिलते हैं। जो मानवीय संवेदनाओं के जीवन्त चित्रण युक्त है। शेष यात्रा–दाम्पत्य सूत्र से आबद्ध है। जो परस्पर सम्बन्ध दर्शाती है। झूठा दर्पण में ऊब व असमायोजन है। चांदनी में बर्फ–स्त्री पुरूष की यौन स्थिति को उभारता है। एक निष्ठा में सम्बन्धों का ठंडापन है। प्रतिध्वनियों में बासु का अहं आहत होता है। कितना बड़ा झूठ में कामातुरता व यौन तुष्टि का अभाव है। ट्रिप में दैहिक सुख की तुष्टि ही प्रधानता है। सागर पार का संगीत में कुंठा ग्रस्तता है। उषा प्रियंवदा का बिम्ब विधान स्वच्छन्द काम प्रेम युक्त अधिक है। पचपन खम्भे लाल दीवारें में प्रेम– यौन की दमित भावनाएँ है जिम्मेदारियों में स्वयं के जीवन को बंधक बनाना है। नहीं नील अब तुम जाओ में शरीर की पुकार है। रुकोगी नहीं राधिका में मुक्त यौन सम्बन्धों के लिए अपराध भाव का अभाव है। सम्बन्ध में श्यामला का सर्जन के साथ बगैर विवाह दूसरी औरत के रूप में प्रवेश है। दृष्टिदोष में श्रृंगार परक चंचलता है। विचलती हुई बर्फ और मछलियाँ में प्रेम सम्बन्ध ईर्ष्या–अपराध के प्रतीकार्थ है। नारी की असफलता है। प्रेम की असफलता, एकाकीपन, यौन विकृतियाँ छुट्टी का दिन में जीवन का सूनापन, नींद में एकाकीपन तथा मृदुला गर्ग सेक्स को प्रेम की राह का पड़ाव मानकर चित्रण करती है। अनित्य में दाम्पत्य सम्बन्धों में संवाद हीनता, दैहिक विकल्प की तलाश, उसके हिस्से की धूप में दाम्पत्य जीवन में असहजता, चित्तकोबरा में देह धर्म के पालक के प्रतीक बिम्ब चित्रण है।

समाहार

महिला उपन्यासकारों ने सिद्ध कर दिया है कि प्रत्येक बिम्ब में चित्रगुण की प्रधानता होने के कारण चित्रात्मकता अनिवार्य होती है। बिम्ब सहज संवेद होते हैं जबकि चित्र चाक्षुष। यहाँ पर संवेदना और चित्र का समन्वय पक्ष उजागर हुआ है। यह केवल

इंद्रिय का वर्ण, स्पर्श, गंध, श्रवण गंध नहीं मनोगत भावों से मुक्ति भी है। इसमें कल्पना तत्व प्रधान रहा है।

बिम्ब किसी वस्तु का संवेग चित्र होता है जबकि प्रतीक किसी वस्तु के रूप–गुण आदि की विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करता है। महिला उपन्यासकारों ने भक्ति व वस्तुगत समन्वयात्मक दृष्टि को अपनाया है।

बिम्ब प्रतीक की विकसित अवस्था के रूप में प्रयोग किया गया है। इन बिम्बों के प्रयोग में कल्पनात्मकता ने उपन्यासों में काव्यत्व की चारूता का प्रतिपादन किया है। कल्पना से सृजित बिम्ब विधान लेखनीय शक्ति–प्रतिभा कौशलता के साथ प्रस्तुत हुआ है। बिम्ब सृजन के माध्यम से जो रसानुभूति हुई हैं उसमें काम प्रेम वासना का आवेग अदृश्य नहीं रखा जा सका, उसका सहज–स्वाभाविक प्रस्फुटन हुआ है। यह कार्य अनुभूतियों का जीवन्त सम्प्रेषण करने में सफल रहा है। ऐसा लगता है अनुभूतियों को लाइव टेलीकॉस्ट किया जा रहा है। इन उपन्यासों में बिम्ब विधान प्राणतत्व के रूप में ग्रहण किया गया है। चित्र, झंकार सब अनुपम और अद्वितीय है। इनमें भाव–आधारशिला है। संवेदना का बाहुल्य है। आवेगपूर्ण अंगों की अनुभूतियाँ हैं। जिनमें कल्पना यथार्थ का तालमेल है। ऐन्द्रियात्मक बोध दृश्यमान है। ध्वनिमूलक सांकेतिकता अनिवार्यतः प्रयुक्त हुआ है। इनका स्त्रोत महिला जीवन है। मानस को झकझोर देने वाला बिम्ब विधान महिला उपन्यासकारों ने प्रयुक्त किया है जो महत्त्वपूर्ण उद्देश्य के रूप में रेखांकित योग्य है।

सप्तम् अध्याय

उपसंहार

''नारी आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में महिला उपन्यासकारों की भूमिका'' विषयक प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में नारी आन्दोलन की परम्परा को रेखांकित किया गया है। इसमें परम्परा की विवेचना के दो आयाम– पाश्चात्य दृष्टिकोण एवं भारतीय दृष्टिकोण के परिदृश्य का विवेचन जमीनी जुड़ाव के साथ प्रस्तुत किया गया है। यह तो स्पष्ट है कि नारी आन्दोलन की अवधारणा पश्चिमी देशों की देन है, जिसे आधी दुनिया की गुलामी, अमीर–गरीब हर जाति की जकड़ी हुई महिला ने अनुभव किया, इन आन्दोलनों ने उसे उजागर किया है, जिसके कारण स्त्री चेतना जाग्रत हुई नारी अस्मिता पर नए तरीकों से सोचा जाने लगा। भारत में स्त्री एकदम खुलकर विरोधी नहीं हुई, उसने निजी स्वतंत्रता को स्वयं की जिन्दगी के निर्णय लेने में अहम् भूमिका के रूप में स्वीकार किया। वह घर – परिवार – समाज से विलग नहीं हुई, स्वावलम्बन– शिक्षा – आत्मनिर्भरता – अस्मिता पर बार–बार विचार कर सुरक्षात्मक रूप से आगे बढ़ी। पाश्चात्य देह स्वतंत्रता के फतवे से दूरी अधिक बनाए रखी।

भारत में स्त्री को पुरुष के समान सम्मान, अधिकार मिले इसकी लड़ाई लड़ी गई, उसने अपनी असाधारण प्रतिभा का परिचय हौसला, हिम्मत बुनियादी संघर्ष के साथ प्रस्तुत किया। पुरुष की सत्ता उसकी आँख की किरकिरी तो बनी पर उसने संघर्ष की चुनौतियों को भुलकर अपना रास्ता खुद बनाया। स्वयं को दासता, हीनता से ऊपर उठाया है।

द्वितीय अध्याय में नारी आन्दोलन विषयक चर्चित पुस्तकों का परिदृश्य प्रस्तुत किया गया है, नारी आन्दोलन का सूत्रपात 'द सब्जेक्ट ऑफ विमेन'– जॉन स्टुअर्ट मिल, 'द फीमेल युनक'– जर्मेन ग्रीयर तथा ''द सेकेंड सेक्स''– सीमोन द बोउवार से होता है। भारत में इन पुस्तकों के अनुवाद के आधार पर चहल–पहल होने लगी, और रेखा कस्तवार ने स्त्री चिन्तन की चुनौतियाँ, नासिरा शर्मा ने औरत के लिए औरत, मृणाल पाण्डे ने परिधि पर स्त्री, मृदुला गर्ग ने चुकते नहीं सवाल, राज किशोर ने स्त्री के लिए जगह, आशा रानी व्होरा ने नारी शोषण आईने और आयाम, जगदीश चतुर्वेदी ने स्त्रीवादी

साहित्य विमर्श जैसी पुस्तकों के द्वारा नारी आन्दोलन को बलवती, सुदृढ़ बनाया व आगे बढ़ाया है। इन चर्चित पुस्तकों के अतिरिक्त स्त्री विमर्श केन्द्रित अन्य जिन कृतियों की संक्षिप्त, सूत्रात्मक किन्तु संश्लिष्ट एवं सार्थक विवेचना की गई है उनमें–देह की राजनीति से देश की राजनीति तक (मृणाल पाण्डे), बंद गलियों के विरूद्ध (मृणाल पाण्डे व क्षमा शर्मा) औरत होने की सजा (अरविन्द जैन), औरत के हक में (तसलीमा नसरीन), दुर्ग द्वार पर दस्तक (कात्यायनी), नारी के पक्ष में (सरला माहेश्वरी), स्त्रीत्व का मानचित्र (अनामिका), स्त्री का समय (क्षमा शर्मा), हौवा की बेटी (दिव्या जैन), स्त्री देह विमर्श (सुधीर पचौरी), इक्कीसवीं सदी की ओर (सुमन कृष्ण कांत), संघर्ष के बीच (इलीना सेन), जीवन की तनी डोर पर ये स्त्रीयां (नीलम कुलश्रेष्ठ), तथा स्त्री संघर्ष का इतिहास (राधा कुमार) इत्यादि प्रमुख है।

इन लेखिकाओं–लेखकों ने नारीवादी विमर्श, नारी चिन्तन को व्यापक, विस्तृत फलक पर बहुआयामी दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत किया है। इस विमर्श में जहाँ एक तरफ ऐतिहासिक दृष्टि है, वहीं पर परम्परा की बेड़ियों को तोड़ने की कोशिशे हैं, आन्दोलन है, संघर्ष है, चुनौतियां है। यहाँ यह भी स्पष्ट किया गया है कि स्त्री पुरुष के बीच सत्ता अस्तित्व को लेकर खींचतान है, नारी का सुरक्षा भाव है जिसका स्त्रोत घर–परिवार–समाज, पति–संतान होता है। नारी देह से मुक्ति के नाम पर मुक्ति के मार्ग पर खुला बाजार है जहाँ पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियां नारी सौन्दर्य के नाम पर अपनी लालच की आँखे गड़ाकर उसे देह की मंडी बनाना चाहती है। उत्पादों को बेचना चाहती है।

कतिपय प्रश्नों को रेखांकित किया गया है– क्या फ्री सेक्स उसे पति परिवार बच्चे से अलग कर पाएगा? क्या वह सब बन्धनों को तोड़ेगी? तो फिर कहाँ, किसके बीच रहेगी? महिला लेखिकाओं ने दोनों सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलुओं को छुआ है। किसी भी पक्ष को अनदेखा नहीं किया है। पत्रकारिता, मीडिया, सौन्दर्य, स्वास्थ्य, शिक्षा–व्यवसाय के क्षेत्रों में घरेलू नारी अपनी सीमाओं का परित्याग करके आगे बढ़ी है। अपनी पहचान बनाने में सफल रही है।

अध्याय तृतीय में प्रमुख महिला उपन्यासकार एवं उनकी चर्चित कृतियों की विवेचना को लेकर प्रस्तुत है। इसमें प्रतिनिधि रूप में प्रमुख महिला उपन्यासकारों में उषा प्रियंवदा–रुकोगी नहीं राधिका, पचपन खम्भे लाल दीवारें, कान्ता भारती–रेत की मछली, कृष्णा सोबती–मित्रों मरजानी, सूरजमुखी अंधेरे के, कृष्णा अग्निहोत्री–बात एक औरत की,

टेसू की टहनियाँ, मन्नू भण्डारी—अपका बंटी, महाभोज, एक कहानी यह भी, ममता कालिया—बेघर, दौड़ प्रभा खेतान—छिन्नमस्ता, अन्या से अनन्या तक, गीतांजली श्री आई, क्षमा शर्मा—परछाई, अन्नपूर्णा, चित्रा मुद्गल—आवां, मृदुला गर्ग—चित्तकोबरा, अनित्य, मैं और मैं, कठगुलाब, मैत्रेयी पुष्पा का चाक, बेतवा बहती रही, इदन्नमम्, अल्मा कबूतरी, झूला नट, गुड़िया भीतर गुड़िया, निरुपमासेवती —पतझड़ की आवाजें, मणिकामोहनी—पारो ने कहा था तथा शिवानी—चौदह फेरे की कथा विषयवस्तु परक विवेचनाएं नारी परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत की गई है।

ये कृतियां स्त्री विमर्श के लिए सुरक्षित है, नारीत्व चित्रण, अनुभव, दुःख, सुख में हमदर्द, होकर पीड़ाओं के सरोकारों से जुड़कर अभिव्यक्त करती है। स्त्री ने पुरुष को कर्ता की भूमिका देने से इंकार किया है। नारी ने स्त्री देह के दमन का विविध रूपों में प्रखर विरोध किया है। कई लेखिकाएं पुरुषों के लिए प्रतिरोध का नहीं, सहयोग का रास्ता चाहती है, तथा उन्हें खारिज नहीं करती। स्त्री पात्रों के माध्यम से यथार्थ परक विवेचनाएं, न्याय की माँग, मुक्ति संघर्ष की महत्ता का प्रतिपादन किया है। अनछुए अनजाने पक्ष को छूकर पीड़ा जगत को व्यक्त किया गया है। काम वासना, प्रेम, आवेग का विशुद्ध विवेचन उभारा गया है। यौन चित्रण, आर्थिक आत्मनिर्भरता, शिक्षा की माँग, विकल्पों की तलाश, स्वावलम्बन इत्यादि प्रमुख रहे हैं। स्त्री का संघर्ष नारी को चेतना देता है तथा खुद की पहचान कराता है। स्त्री विमर्श के सरोकार स्वयं चेती हुई स्त्री के लिए अधिक रहे हैं। विसंगतियों पर प्रहार करके नारी ने समस्याओं के समाधान की दिशा में विकल्पों की तलाश में पहल की है। बांझपन से मुक्ति, साहित्य रचना धर्मिता के विकल्प के रूप में बच्चे को गोद लेने के रूप में प्रस्तुत हुई है। यह उम्मीद जताई है कि भविष्य स्त्री सशक्तिकरण को लेकर सुखद रहेगा। इन लेखिकाओं ने स्त्री की मुक्ति को पुरुष की वर्चस्ववादी सत्ता से मुक्ति के रूप में नए सिरे से परिभाषित व विवेचित किया है।

अध्याय चतुर्थ— नारी आन्दोलन से सम्बन्धित उपन्यासों में सुखात्मक एवं दुखात्मक संवेदना पर केन्द्रित रखा गया है, जिसमें पारिवारिक, राजनैतिक एवं धार्मिक जीवन से सम्बन्धित दृष्टिकोण का वस्तुनिष्ठ विवेचन, मूल्यांकन किया गया है। पारिवारिक जीवन खंड में अपना खुदा—एक औरत (नूर जहीर), केशरमाँ (ज्योत्स्ना मिलन), साथ चलते हुए (जय श्री राय), ओब्जेक्शन मी लार्ड (निर्मला भराड़िया), उर्मिला का दीया

(सतीश बिरथरे), खानाबदोशी ख्वाहिशें (जयंती रंगनाथन), चाक (मैत्रेयी पुष्पा), शाल्मली (नासिरा शर्मा), क्योंकि औरत ने प्यार किया (जेबा रशीद), सही नाप के जूते (लता शर्मा), अन्हियारे तलछट में चमका (अल्पना मिश्र), फरिश्ते निकले (मैत्रेयी पुष्पा), पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा (चित्रा मुद्गल) व राजनीति खंड में दुक्खम–सुक्खम, कल्चर वल्चर (ममता कालिया), अनित्य–मृदुला गर्ग, एक कहानी यह भी–मन्नु भंडारी तथा धार्मिक खंड में नीलकंठी बृज (इन्दिरा गोस्वामी), अमावस की रात (उषा यादव) को लेकर विश्लेषण प्रस्तुत है।

महिला लेखिकाओं ने स्त्री की पारम्परिक रूढ़ियों को तोड़ने के लिए खड़ी होने, संघर्ष करने का जिक्र किया है। जो ढांचे उसके विकास के मार्ग में बंधक है, उन्हे तोड़ना ही होगा दर्शाया है। स्त्री सारे संघर्षों को सहकर भी अपना भविष्य संवारती है। अवरोधों को हटाती है। साहस और स्वाभिमान से विकल्प तलाशती–तराशती है। विरोध से मुकाबला करना, शिक्षित होना, स्वावलम्बी बनना, आत्मविश्वास का परिचय देना, सुख–दुःख की अभिव्यक्ति करना जीवन का पर्याय बना है।

महिला उपन्यासकारों ने जीवन के संघर्षों और उलझनों को उभारते हुए स्त्री का राह बनाना सराहा है। जीवन में संघर्ष बहुरंगी है, असामान्य परिवेश से साक्षात्कार होता है। अस्तित्व व अस्मिता के लिए स्त्री को सम्मान कैसे, कब, किसके द्वारा मिलेगा? मुक्ति की घोषणा कब तक? कितनी सफलता? विश्व बाजार में कितनी सुरक्षा? कौन–कौन से खतरे? सब बेबाक कलम चलाई गई है।

अध्याय पंचम्– महिला उपन्यासकारों के कथा साहित्य में स्त्री मुक्ति के लिए संघर्ष को लेकर प्रस्तुत किया गया है। इसमें प्रमुख महिला कथाकार एवं कहानी कृतित्व को स्त्री मुक्ति के सन्दर्भ में, आर्थिक मुक्ति के लिए संघर्ष, सामाजिक रूढ़ियों से मुक्ति के लिए संघर्ष, सांस्कृतिक क्षेत्र में मुक्ति के लिए संघर्ष, शैक्षिक क्षेत्र में पदार्पण एवं अधुनातन वैचारिक संघर्ष को लेकर एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाया गया है। ममता कालिया की–एक अद्द औरत 6 कहानियां, प्रतिदिन की 8 कहानियां, उसका यौवन की 13 कहानियां, जांच अभी जारी है कि 16, चर्चित कहानियां, 19, बोलने वाली औरत की 13, मुखौटा की 18, निर्मोही की 17, पच्चीस साल की लड़की की 12 कहानियों की पड़ताल की गई है। इनमें सभ्य, सुशिक्षित, नौकरी पेशा, विवाहित–अविवाहित स्त्री की पीड़ादायक कथा–व्यथा अंकित है।

मृदुला गर्ग की डैफोडिल जल रहे हैं, वह मैं ही थी, तुक, मेरे देश की मिट्टी में स्त्री की बेबसी, यातना, अन्तर्द्वन्द्व की अभिव्यक्ति है। आधुनिक दाम्पत्य पर प्राचीन मान्यताओं का संस्कारगत प्रभाव, पितृसत्तात्मक समाज में वैयक्तिक स्वतंत्रता, दाम्पत्य जीवन में असमायोजन, असन्तुष्ट दाम्पत्य जीवन में यौन अतृप्ति, असहजता का अनुभव, सम्बन्धों की यांत्रिकता, कठोर आलिंगन का कसाव, तलाक की त्रासदी, जायज यौनाचार सम्बन्ध, देह धर्म का निर्वहन, काम इच्छाओं की तृप्ति, एकरसता की ऊब, शरीर और आत्मा की अलग–अलग वृतियां, ठहरे हुए क्षणों की अनुभूतियां अंकित है। मालती जोशी, मनीषा कुलश्रेष्ठ, गीतांजलि श्री, चित्रा मुद्गल इत्यादि की कहानियों को लेकर नारी मन की विगत को प्रस्तुत किया गया है। इन कहानियों में सड़ी गली मान्यताओं के विरूद्ध आवाजें उठाई गई है। भावनाओं की ईमानदार प्रस्तुतियाँ, मध्यम वर्ग में स्त्री की अनदेखी, कुंठाए, वर्जनाएं, संघर्ष, अपने फैसले खुद लेना, संघर्ष करना, प्रेम की बलिवेदी, उत्तरदायित्व निर्वहन, अतृप्ति, अंसतोष, भावनाओं का आवेग, कुंवारी माँ की समस्या, गर्भपात, बलात्कार, नौकरी पेशा स्थितियां इत्यादि का विशुद्ध विवेचन एवं मूल्यांकन किया गया है।

अध्याय षष्ठम् में महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में भाषा, एवं शिल्प सरंचना का विश्लेषण परिदृश्य अंकित किया गया है, जिसमें मनोविश्लेषणात्मक, व्यंग्यात्मक, विवेचनात्मक, विचारात्मक, प्रतीकात्मक, भावात्मक, आलोचनात्मक सूत्र संकेत मात्र है। शब्द भंडार की दृष्टि से तत्सम्, तद्भव, देशज, विदेशी, एवं आंचलिक शब्दावली की मात्रबानगी को प्रस्तुत किया जा सका है। साथ ही बिम्ब विधान में प्रतीक, संकेत, चित्र, एवं ध्वनिमूलक बिम्ब विधान का उल्लेख भी हुआ है, जो एक प्रवृति दर्शाता है।

कठिनाईयाँ एवं सीमांकन

उपन्यास– विस्तृत क्षेत्र है, उसमें महिला उपन्यासकार भी विशालता के लिए प्रसिद्ध है। लब्ध प्रतिष्ठित महिला उपन्यासकारों व उनकी कृतियों का भंडार विशुद्ध, विस्तृत व व्यापक है। प्रत्येक का विवेचन शोध प्रबन्ध की सीमाओं में लाना गागर में सागर को समाने जैसा कृत्य होगा। शोध प्रविधि में न्यादर्श चयन प्रविधि को अपनाते हुए सीमांकन किया गया । यह मात्र एक चावल देखना कि चावल पका या नहीं जैसा ही कार्य है।

मुझे इस बात को ईमानदारी के साथ स्वीकार करना भी अच्छा लग रहा है कि मैं एक रूपये में से एक पैसा ही देख परख पाई हूँ। विशाल सागर में से एक बूंद को लेकर सोचना ''मैंने सागर को पा लिया'' से क्या ज्यादा होगा? मेरा यह कार्य।

यहाँ पर केवल असन्तोष नहीं है। अपने कार्य का संतोष भाव भी है। ''प्रतिनिधि रचनाकार और प्रतिनिधि कृतियाँ'' से गुजरने का, अपनी सामर्थ्य से जो कुछ जैसा भी बन पड़ा कर गुजरने का। प्रत्येक रचनाकार पर अनेक कोण से अनेक शोध प्रबन्ध लिखे जा सकते है, इस विपुल सम्भावना के सच को मैं स्वीकार करती हूँ। किन्तु यह भी मेरे लिए अत्यन्त संतोष की सुखद अनुभूति है, कि मैंने यह कार्य पूर्ण ईमानदारी के साथ मौलिक रूप से किया है, जो असाध्य है फिर भी उपलब्धि परक है। जिसका मूल्यांकन सुधिजन करेगें। सम्पूर्ण समाहार शोध प्रबन्ध के प्रदेय के रूप में नारी आन्दोलन महत्वपूर्ण है। नारी की भूमिकाएं महत्वपूर्ण है। उनका कृतित्व आलोचनात्मक कृतियां, उपन्यास, कहानियां महत्वपूर्ण है। कथा महिला उपन्यासकारों ने–

(1) नारी की चेतना को जाग्रत किया है, उसे झकझोरा है तथा सक्रिय बनाया है।

(2) नारी ने अपनी स्थिति, नियति को देखा, परखा तथा सोचा है।

(3) समाज में स्वयं की स्थिति को बेहतर सुदृढ़ बनाया है।

(4) संकटों से मुक्ति पाने के लिए बेहतर विकल्पों की तलाश की है।

(5) स्वयं के जीवन को सँवारने आगे बनने के लिए शिक्षा, स्वावलम्बन, संस्कार, संघर्ष के क्षेत्रों में पहचान बनाकर स्वयं को सुरक्षा सम्मान प्रदान किया है।

नारी जीवन के विविध चित्र, मनोगत भावभूमि को प्रस्तुत कर नारी विमर्श को सार्थकता प्रदान की है। महिला उपन्यासकारों ने नारी को लेकर शास्त्रीय, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक दृष्टि को अपनाते हुए विशद् पक्ष प्रस्तुत किया है। काम–वासना के अर्थ में है, जो व्यक्ति के आन्तरिक, बाह्य, भौतिक सुख–संसाधनों की चाहत है। प्रेम व्यापक है। शरीर मन की वृत्ति है। स्त्री–पुरुष का समागम, यौन जनित आकर्षण, नयी मानव स्थितियों का अंकन है, जो मानवीय संवेदनाओं का जीवन्त चित्रण है।

दाम्पत्य सम्बन्ध में जहाँ एक ओर पुरुषों की मुक्त यौनाकांक्षा असहजता पैदा करती है, और स्वस्थ प्रेम में अवरोध बनती है, वहीं पर नारी की कामातुरता भी पति–पत्नी के सम्बन्धों में खोखलापन लाती है। यौन तुष्टि के लिए पत्नी का पति से इतर अन्य पुरुषों से दैहिक सम्बन्ध परस्पर प्रेम समर्पण को प्रभावित करता है, और

वैवाहिक जीवन नरकीय बनता है। रुकोगी नहीं राधिका में पितृ ग्रन्थि से ग्रस्त राधिका अपने अधेड़ पिता की जिन्दगी में नवयौवना विद्या के प्रवेश को स्वीकार नहीं करती और प्रौढ़ पत्रकार डैन के साथ चली जाती है। उषाजी की अधिकांश कृतियाँ पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित है, जहाँ प्रेम और काम को वैयक्तिक स्तर पर स्वीकार किया गया है। पचपन खम्भे लाल दीवारें में प्रेम व यौन भावना को दमित करने की विवशताएं है। अतीत ऊब और अकेलापन वाला जीवन कॉलेज की चार दीवारी के बीच बंधक बनकर रह जाता है। प्राथमिकता के निर्धारण में चूक होती है। उसके हिस्से की धूप की मनीषा पति जितेन के साथ प्रेम के अंतरंग पलों का अभाव, व्यवसाय को समर्पण के कारण यौन सम्बन्धों में औपचारिकता के साथ संवाद हीनता को महसूस करती है। सम्बन्धों की यांत्रिकता उसे मधुकर के करीब लाती है। चित्तकोबरा में विवाहेत्तर यौन सम्बन्धों का चित्रण है। प्रेमहीन सेक्स सम्बन्ध है। समर्पण शरीर की कामना तुष्टि तक रहती है। अनित्य में शरीर से इतर पति धर्म का पालन है। देह के इस्तेमाल की दरकार है। कमोवेष ऐसी ही स्थितियां सर्वत्र है जो नारी मन के भावों की व्यंजना है।

इन महिला उपन्यासकारों ने उच्च व मध्यम वर्गीय परिवारों का यथार्थ, समस्याओं का सूक्ष्मता के साथ चित्रण समाधान के रूप में विकल्पों की प्रस्तुतियां की है। सामाजिक विषमता पति–पत्नी सम्बन्ध, माता–पिता संतान के सम्बन्ध, त्रिकोणात्मक स्थितियों की त्रासदी, बलात्कार, विवाहेत्तर सम्बन्ध, कन्या भ्रूण हत्या, गर्भपात इत्यादि उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों द्वारा नारी आन्दोलनों व स्त्री विमर्श को व्यापकता प्रदान की है जो हिन्दी साहित्य का महत्वपूर्ण प्रदेय है। आनेवाला समय नारी की बेहतर स्थिति के लिए सुरक्षित व सुखद रहेगा। ऐसी आशा की जा सकती है।

शोध सारांश

नारी आन्दोलन की पृष्ठभूमि में पाश्चात्य पीठिका का अहम स्थान रहा है। **संत पाल** के शब्दों में–''पुरूष औरत के लिए नहीं बना है, औरत बनी है पुरूष के लिए।" **टर्टयूलियन** लिखते है कि "औरत तुम शैतान का दरवाजा हो। जहाँ शैतान सीधा आक्रमण करने से हिचकिचाता है, वहाँ औरत का सहारा लेकर पुरुष को मिट्टी में मिला देता है।'' **संत एम्ब्रोस** के शब्द है–''आदम को पाप के रास्ते पर हौवा ले जाती है न कि हौवा को आदम'' **संत थॉमस** के निर्णायक शब्द है– ''यह औरत की नियति है कि वह पुरूष की अधीनता में रहे, इसे परिवर्तित नहीं किया जा सकता।''[1] यह विचार स्त्री की स्वतंत्रता के लिए प्रारम्भ है। **जस्टीनियन** के संविधान में – स्त्री को पत्नी, माँ का दर्जा देकर संतान पर अधिकार, पति के मरने पर नैतिक अभिभावक माना गया था किन्तु औरत के अधिकार घटते गए।

इन महिला उपन्यासकारों ने उच्च व मध्यम वर्गीय परिवारों का यथार्थ, समस्याओं का सूक्ष्मता के साथ चित्रण समाधान के रूप में विकल्पों की प्रस्तुतियां की है। सामाजिक विषमता पति–पत्नी सम्बन्ध, माता–पिता संतान के सम्बन्ध, त्रिकोणात्मक स्थितियों की त्रासदी, बलात्कार, विवाहेत्तर सम्बन्ध, कन्या भ्रूण हत्या, गर्भपात इत्यादि उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों द्वारा नारी आन्दोलनों व स्त्री विमर्श को व्यापकता प्रदान की है जो हिन्दी साहित्य का महत्वपूर्ण प्रदेय है। आनेवाला समय नारी की बेहतर स्थिति के लिए सुरक्षित व सुखद रहेगा। ऐसी आशा की जा सकती है।

नारी मुक्ति आन्दोलन अब– ''बैक टु विमेनहुड'' के रूप में जोर पकड़ता जा रहा है। पश्चिम में नारी आन्दोलन से वहाँ पर अधिकारों की लड़ाई तो जीत ली किन्तु पुरूषों की मानसिकता में परिवर्तन अभी शेष है। पुरूष द्वारा नारी प्रताड़ना, हत्या, हिंसा, बलात्कार की घटनाएं थमी नहीं है।

दलित आन्दोलन एवं नारीवाद के मध्य सम्बन्ध स्थापित होने से दलित स्त्रियों द्वारा महिला समता सैनिक दल का गठन हुआ जिसने स्त्री की छवि को जुझारू रूप में विकसित करने पर बल दिया जिसकी समानता अमेरिका के ब्लैक मूवमेंट से की जा सकती है।[2] प्रगतिशील महिला संगठन एवं महिला समता सैनिक दलों ने महिलाओं के यौन उत्पीड़न का अपने घोषणा पत्र में उल्लेख किया– "पुरुषों ने केवल अपने यौन सुख के लिए स्त्रियों को आजादी तथा ज्ञान से वंचित रखते हुए उन्हें गुलाम बना रखा है।"

---

1 वही, पृ. 62
2 वहीं, पृ. 102

नारीवादी आन्दोलनों ने स्पष्ट किया कि –

(1) स्त्रियों को अलग से संगठित होना चाहिए।

(2) दलगत संगठनों में महिला समिति होनी चाहिए।

दहेज, हत्या एवं उत्पीड़न के विरोध में लगातार स्त्री वादी संगठन सक्रिय रहे हैं। दहेज हत्यारों के खिलाफ प्रदर्शन, रैलियों, धरना, सामाजिक दबाव, सामाजिक बहिष्कार, नुक्कड़ नाटक द्वारा जनमत तैयार किया गया व पारिवारिक मामला सार्वजनिक समस्या का रूप ले सका।

यह एक विचारणीय प्रश्न है कि – "क्या औरत का शोषण एक प्रामाणिक विषय बन सकता है ? जिसका जिक्र भारतीय समाज में स्त्री मुक्ति के प्रश्न को देह मुक्ति से बदल दिया है। सुधा अरोड़ा के अनुसार – "स्त्री विमर्श के सरोकारों ने स्त्री मुक्ति के सवाल को देह मुक्ति में बदल दिया है।"[1] स्त्री के प्रति मानवीय नजरिया अभी तक नहीं बन पाया, समकालीन साहित्य के केन्द्र में स्त्री विमर्श है।

- स्त्री का विद्रोह व क्रान्तिकारी तेवर
- स्त्री को घर की चारदीवारी को छोड़कर संघर्षरत होना
- पुरुष सत्ता की नीवें तोड़ना, बदलना तथा अपने पक्ष में संवारना
- असमानता के परिदृश्य पर नियंत्रण कर बराबरी के स्तर तक लाना

देह की आजादी में भी स्वयं की अस्मिता को सुरक्षित रखना इत्यादि मुद्दे शामिल है। कहानियों में होता है ?" धीरू बेन पटेल की प्रयाग (गुजराती) और आशापूर्णा देवी की अनावृत (बंगाली) दोनों कहानियां जूझने को रेखांकित करती है। सास हमेशा बहू के विपक्ष में बेटे के साथ खड़ी रहती है। सास का खलनायक का दर्जा कहानियों में चित्रित किया जाना अभी बाकी है। समाज सेवी महिला संगठनों का स्वर बताता है कि – "आज की नारी बेहद जागरूक है। शिक्षा के क्षेत्र में नारी ऊँचाइयों को छू रही है। बाहर की दुनियाँ बहुत बड़ी है। वह पति के गलत आचरण पर उँगली क्यों नहीं उठा पाती।[2] शशि प्रभा शास्त्री ने नारी की नियति के लिए आधुनिकता को उत्तरदायी माना है। आर्थिक सवालों ने परिवार में विघटन को जन्म दिया। पद प्रतिष्ठा की ललक ने तिकड़मबाजी और भ्रष्टाचार को प्रारम्भ किया।[3] क्या सिर्फ–ऊँचे ओहदों पर कार्यरत महिलाएं अपने

---

1 अक्सर वहीं, पृ.31

2 अरोड़ा – सुधा – आधुनिक कथा साहित्य में नारी स्वरूप और प्रतिभा, पृ.12

3 शास्त्री–शशि प्रभा – आधुनिक कथा साहित्य में नारी स्वरूप व प्रतिभा, पृ.13 संपादन – डॉ. उमाव शुक्ल, डॉ. माधुरी छेड़ा – अरविंद प्रकाशन, मुम्बई।

कार्यसेवों में बड़े–बड़े फैसलों में निर्णायक भूमिका अदा करती है ?[1] औरत को बड़ी दुनिया तक पहुँचने के लिए अपने घर की खिड़कियाँ खोलनी होगी। भारत की सभी भाषाओं में महिला रचनाकारों की एक बड़ी जमात औरत के सामाजिक सरोकारों के साथ उभरी हैं क्यों संयुक्त परिवार की औरत नीची आँखें किए हुए एक अधिकारहीन नारी का प्रतिरूप रही है ? इस पर कौन सोचेगा ?

दहेज प्रताड़ना, भ्रूण हत्या, गर्भपात झेलती स्त्री, खेती–मजदूरी में पसीना बहाती स्त्री, घर परिवार की आड़ी–तिरछी जिम्मेदारियों को संभालती स्त्री। आर्थिक रूप से आत्म निर्भर होने के बावजूद पति की लंपटता, उपेक्षा, हिंसा इत्यादि प्रमुख समस्याएं है। आज की औरत को घर व बाहर दोनों ही जगह जूझना पड़ता है। स्त्री के अस्तित्व की लड़ाई जारी है। आज की आवश्यकता महिला सशक्तिकरण है। इस प्रकार "सामाजिक क्षेत्र की दृष्टि से स्त्री विमर्श–स्त्री जागरूकता का प्रयास करने की दृष्टि से एक कारगर औजार है।"[2]

औरत अधिक ईमानदार, निष्ठावान, कर्मठ, धर्मवान, बलिदान करने को सदा तत्पर रहने वाला जीव है जिसका मुकाबला दुनिया का दूसरा प्राणी नहीं कर सकता। लेखिका ने कुंठित मानसिकता का लोप दर्शाते हुए स्त्री का ऐसा मुद्दा उठाया है जिसके चारों तरफ राजनीति, अर्थव्यवस्था, धर्मशास्त्र, कानून व्यवस्था, समाज परिवार इत्यादि विश्व स्तर पर जवाब देह नजर आते हैं। अपने लेखों में कलम चलाते हुए मृणाल पाण्डे ने महिला शरणार्थियों के मुद्दे पर समुचित चिंतन किया है।

भूख–प्यास–थकान, अकाल–महामारी–बीमारी के कारण कई बार आपदा प्रबन्धन से भी कई महिलाओं को शरणार्थी बनकर शरण लेनी पड़ती है। घरद्वार, मवेशी खेत पीछे छूट जाते, आर्थिक सामाजिक जड़ें नष्ट हो जाती, गोलियां, गालियां और भूख, पथराई आँखें, अब क्या होगा ?

राज किशोर ने प्रस्तुत पुस्तक में आज के प्रश्न के माध्यम से सम्पादक की बात को प्रस्तुत किया है – स्त्री क्या चाहती है ? के रूप में प्रस्तुत किया है तथा गंभीर चिन्तन किया है, पुरूष स्त्रियों से होड़ लेने में लगे है। स्त्री का रहस्य लोक पुरुष ने ही बनाया है। स्त्री जो कई हजार वर्षों से पराधीन है अब हर प्रकार की स्वतन्त्रता का अनुभव कर रही है लेकिन अनेक स्त्रियां यह नहीं जानती कि इस स्वतंत्रता का क्या करे?

---

1 समकालीन हिन्दी कहानी में स्त्री की सामाजिक स्थिति सुधा अरोड़ा, पृ.51 सं. रामजी तिवारी – परिदृश्य प्रकाशन मुम्बई–400002

2 वहीं, पृ.34

इधर पुरुष यह तय नहीं कर पाया कि नव स्वतंत्र स्त्री के साथ कैसे पेश आया जाए ? स्त्री को छलनामयी/रहस्यमयी बताना, एक मिथक है।[1] आज हर जगह उन बंधनों से अवगत कराया जा रहा है जो स्त्री होने के कारण उन पर स्वाभाविक रूप से लागू होते हैं। श्रीमती अलका सरावगी का सवाल है – स्वाधीन होने के बाद क्या स्त्री भी अंधी महौवाकांक्षा की उस कपट दौड़ में शामिल हो जाए, जिसका नाम आधुनिक सभ्यता है ? स्त्री बाजार में पैर रखते ही बाजारू बना दी जाती है, कौन निर्धारित करता है ?[2]

नारी आन्दोलन को लेकर कई लेखकों लेखिकाओं ने अपने विचार पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं में लेखों के माध्मय से व्यक्त किए हैं। यह नारीवादी विमर्श–नारी चिन्तन को व्यापक विस्तृत फलक पर बहुआयामी दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता है। इस विमर्श में जहाँ एक तरफ ऐतिहासिक दृष्टि है वहीं पर परम्परा की बेड़ियों को तोड़ने की कोशिशें हैं, आन्दोलन है, संघर्ष है, चुनौतियां है। स्त्री–पुरूष के बीच सत्ता अस्तित्व को लेकर खींचतान से इन्कार नहीं किया जा सकता। नारी अपनी सुरक्षा चाहती है। वह सुरक्षा पति, विवाह, परिवार समाज से प्राप्त कर अपना संघर्ष कर प्राप्त करे। नारी देह से मुक्ति के नाम पर मुक्ति के मार्ग पर चल तो पड़ती है लेकिन वहाँ खुला बाजार है उसकी देह पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियां लालच की आँखें गड़ाती है देह मंडी बन जाए फिर वह कहाँ जाए। क्या फ्री सेक्स उसे पति, परिवार, बच्चे से अलग कर पाएगा ? क्या वह सब बन्धनों को तोड़ेगी। तो फिर कहाँ किसके बीच रहेगी। क्या संस्कारों के बीच पली नारी अश्लील हो जाए। ऐसे कई सवालों को लेकर नारी आन्दोलन उभरे, स्त्री चिन्तन में मुक्ति, सुरक्षा, संघर्ष, परिवर्तन और सकारात्मक नकारात्मक पहलू सबको कलम कारों ने छुपा, किसी भी पक्ष को अनदेखा नहीं किया है। पत्रकारिता, मीडिया, सौन्दर्य, स्वास्थ्य के क्षेत्रों में नारी घरेलू सीमाओं का परित्याग कर आगे बढ़ी, अपनी सार्थक पहचान बनाने में उभरी। यही आधी आबादी का सच है। आज नारी कई अर्थो में न उपेक्षित है न शोषित, न प्रताड़ित वह है नेतृत्व प्रदायक निर्णायक, सृष्टिकर्त्ता, निर्माता, सक्रिय कार्यकर्त्ता अधिकारी और स्वयं का भाग्य स्वयं लिखने वाली, स्वयं के जीवन में फैसले स्वयं लेकर आगे बढ़ने वाली।

यह सब सम्भव हुआ– नारी विमर्श से नारी आन्दोलन से नारी की सक्रियता व जागरूकता को बदलता परिप्रेक्ष्य नारी की अस्मिता, स्थान, वजूद को नकारता नहीं

---

1 वही, पृ.5
2 वही, पृ.6

स्वीकारता है। उसे अपमानित प्रताड़ित शोषित लांछित नहीं करता प्रेम प्यार सत्कार देकर सहयोगी समझकर साथ लेकर चलता है, आगे बढ़ाता है।

आज स्त्री की भागीदारी हर क्षेत्र में महत्वपूर्ण हुई है। यह सतत् नारी विमर्श, अस्मिता का संघर्ष व नारी आन्दोलनों से अपनी सक्रियता तथा जागरूकता का ही परिणाम है। इसमें पाश्चात्य विचारों का खूब प्रभाव रहा है। समकालीन परिवेषगत चुनौतियों का सामना करती नारी की दुखद पूर्ण दशा से मुक्त करने का आह्वान हिन्दी महिला कथाकारों ने अपनी कथाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया है?

कमलेश्वर ने कहा है कि – ''एक झंडे से अनेक झंडे बनते गये। हमारी सुनहरी झंड़ियां देश के बंटवारे ने बिखेर दी। हम देखते रह गए और देश में हमारी स्त्रियां लाज खो बैठी। कोई पुरूष उनका चीर बढ़ाने नहीं आया।[1]'' नारी परदे से बाहर आ सदियों से भोगी गुलामी के विरोध में कामकाज दफ्तर खटखटाने लगी।

प्रारम्भिक उपन्यास लेखन में शैल कुमारी देवी (उमा सुंदरी), रूकमणी देवी (मेम और साहब) यशोदा देवी (सच्चा पति प्रेम) प्रियंवदा देवी (लक्ष्मी) गोपाल देवी (दयावती) गिरिजा देवी (कमला, कुसुम, कुटुम्ब, प्यारी देवी (हृदय का नाथ) ज्योतिर्मयी ठाकुर (मधुवन) तेजरानी दीक्षित (हृदय का कॉंटा) उल्लेखनीय है।"[2]

नारी के संघर्षपूर्ण मन व विभिन्न स्थितियों का चित्रण शिवानी (कृष्ण कली, चौदह फेरे) मन्नू भंडारी (आपका बंटी, महाभोज) उषा प्रियंवदा (पचपन खम्भे लाल दीवारें, रुकोगी नहीं राधिका) कृष्णा सोबती (मित्रों मरजानी, यारों के यार) शशी प्रभा शास्त्री (वीरान रास्ते, झरना, नावें, सीढ़ियां) ममता कालिया (बेघर, नरक दर नरक, दौड़) मृदुला गर्ग (चित्तकोबरा) कृष्णा अग्निहोत्री (टपरे वाले, प्रीत एक औरत की) मंजुल भगत (अनारो) निरुपमा सेवती (बंटता हुआ आदमी) चन्द्रकान्ता सोनरेक्सा (इन्सान अभी जिंदा है।) मेहरून्निसा परवेज (कोरजा) नासिरा शर्मा (पारिजात) मणिका मोहिनी (पारो ने कहा था) सूर्यबाला (मेरे संधि पत्र) मैत्रेयी पुष्पा (चाक, इदन्नमम्, गुड़िया भीतर गुड़िया) आदि प्रमुख हैं।

मन्नू भंडारी के उपन्यासों में फ्रायड, एडलर, यंग आदि का प्रभाव मन की काम इच्छाएं नैतिकता के कारण कामवासना का दमन, कुंठाओं का यथार्थ चित्रित हुआ है। आपका बंटी में बंटी सोचता है ''पंलग देखते ही फिर गन्दी गंदी बातें दिमाग में आने लगी। अंगुलियों का क्रास कितना बेकार हो जाता है ऐसे मौके पर।''[3]

---

1 गीते निहार– स्वातंत्रयोत्तर महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में यथार्थ के विभिन्न रूप, पृ.1
2 वही, 7

3 भंडारी मन्नू, आपका बंटी, पृ. 164

कृष्णा अग्निहोत्री लिखती है ''मेरी उम्र के अपने दस साल बर्बाद भी कर दिए। शेष जिंदगी तो आपकी नहीं है। मैं सोने–चाँदी के बन्धनों से मुक्त हूँ। अब मैं अपने बेटे के साथ जुल्म से हटकर, आत्म सम्मान से, आत्म निर्भर हो जी सकूंगी।"[1] रामेश्वर शुक्ल अंचल के उपन्यास की नायिका कहती है ''मैं उन औरतों में नहीं हूँ, जो व्यक्तिगत का बलिदान करती घूमती हैं जिनकी कोई मर्यादा व शील नहीं होता। जो पर पुरूष की हवा लगने से ही खराब हो जाती है। मैं पति की गुलामी को सच्चरित्रता नहीं मानती। मुझमें आत्म निर्भरता की कमी नहीं है।[2] अन्य उदाहरण भी दृष्टव्य है। उषा प्रियंवदा की राधिका कहती है–''वह उसी पुरूष के साथ विवाह करेगी जो उसे अतीत व अवगुणों के साथ स्वीकार करें।'' जीवन की सच्चाई के प्रति जागरूक होती, थोथे आदर्शवाद से मुँह मोड़ती, आज के नारी जीवन की विसंगतियों पर खुली दृष्टि डालती सेक्स के आवृत में बुरी तरह घूमती, समलैंगिक यौनाचार, रतिभाव, राष्ट्रव्यापी भ्रष्टाचार, मुक्ति के लिए लड़ती, विकृत विवाह सम्बन्धों को उजागर करती, यातना का खुला चित्रण करती इन लेखिकाओं ने गहरे यथार्थ के साथ महत्वपूर्ण लेखन किया है।

श्रीमती कान्ता भारती का "रेत की मछली" उपन्यास लेखकीय जीवन और उसके निकट परिवेश को मानवीय सन्दर्भों में रखने का प्रयास है। इस उपन्यास में नारी के दो रूप भारतीय नारी का उच्चादर्श व दुश्चरित्रता नारी नाम को कलंकित करने वाला रूप देखने को मिलता है। कुन्तल के रूप में उच्चादर्श नारी की झलक है जो पतिपरायण है, पति द्वारा दी जाने वाली यातना को सहन करती है। अपने सम्मुख पति को दूसरी स्त्री के साथ केलिक्रीडारत देखती है जो नारी की सहनशीलता की पराकष्ठा है। हालांकि वह अपने अधिकारों का हनन होते देखकर चीत्कार उठती है फिर भी पति के द्वारा क्षमा मांगने पर उसे क्षमा कर देती है। पीटे जाने पर भी पति को छोडकर पिता के साथ नहीं जाना चाहती।[3] दूसरी तरफ है मीनल जो भाई जैसे पवित्र रिश्ते की पवित्रता को भी कलंकित करती है। वह नारी दूसरी नारी का सुख, चैन, सुहाग का हरण करने वाली नारी सुलभ लज्जा का उपहास करने वाली है।[4]

मन्नू भंडारी पुरातन संस्कारों और रूढ़ियों से अपने सहज मन को सरलता से तोड़ लेती है। अपने अनुभवों के आधार पर आज की नारी की सामाजिक नियति और मानसिकता को बड़ी गहराई से उभारती है। उनका सृजन क्षेत्र अपने तीखे तेवर के

---

1 अग्निहोत्री कृष्णा, अभिषेक, पृ. 115
2 अंचल रामेश्वर शुक्ल, उल्का, पृ. 111

3 गीते निहार– पृ, 67
4 गीते निहार – पृ, 68

कारण कई सम्भावनाओं से परिपूर्ण है। नैतिक सम्बन्धों के बदलाव और उसमें पड़ने वाली सम्बन्धों की दरार को लेखिका ने अपनी विशिष्ट दृष्टि प्रदान की है। महिला होने के बावजूद स्त्री–पुरुष सम्बन्धों मे जिस प्रमाणिकता और तटस्थता का परिचय मन्नू भंडारी ने दिया वह श्लाघनीय है। इनके लेखन की कतिपय विशिष्टताएँ रेखांकित योग्य है।

ममता कालिया ने दाम्पत्य जीवन का अत्याधिक साहसी चित्रण उन्मुक्तता और यथार्थ के तेज मिजाज के साथ किया है। यौन प्रसंगों का खुला चित्रण, औदात्य और पवित्रता की टूटन, शारीरिक यौन व्यापार की नग्नता का चित्र, एक विशेषता लिए हुए हुआ है। स्त्री–पुरुष लेखन की हदबंदियों को तो तोड़ती, यह लेखिका पात्रों और उनकी जीवनगत परिस्थितियों के माध्यम से मनुष्य चरित्र को प्रामाणिकता के साथ प्रकट करती है। इनके चर्चित उपन्यास – बेघर, दौड़, नरक दर नरक, एक पत्नी के नोट्स, लड़कियाँ, प्रेम कहानी आदि है।

जब स्त्री स्वयं का व्यवसाय करना चाहती है तो, अपना पैसा बनाने की चाहत, पूँजी की बनी बनाई व्यवस्था को तोड़ने की स्थितियाँ, प्रश्न खड़े करती है। प्रिया के सामने दो में से एक विकल्प चुनना था परिवार अथवा व्यवसाय। प्रिया ने व्यवसाय चुना प्रिया को नरेन्द्र कहता है – "मैं सीरियस हूँ फिर कहता हूँ – यदि आज तुम लन्दन गई तो मेरे घर में तुम्हारी जगह नहीं। यह भी साली कोई जिन्दगी है, जब देखो तब बिजनेस, फिर सुन लो, यहाँ मत आना, आओगी तो मैं धक्के देकर बाहर निकलवा दूँगा।"[1] स्त्री को केवल विवाह के लिए बड़ा किया जाता है न कि कैरीयर के लिए। पढ़ने लिखने की उसकी अभिरुचि का कोई मूल्य नहीं। विवाह के बाजार में उसकी बौद्धिक क्षमता नहीं, उसकी चमड़ी का रंग महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा।

प्रिया की अपनी पहचान, कमजोरियाँ व विशेषताएँ है – उसका व्यक्तित्व "काली लड़की" से पहचाना जाता है। वह अनचाही बेटी है। उसके व्यक्तित्व विकास के लिए कोई अवसर नहीं। वह किसी बड़े सपने के साथ बड़ी नहीं होती परन्तु अपने लिए हमेशा रास्ते निकाल लेती है। वह स्वयं को कमजोर दब्बू मानती है। उसे दादी माँ भाई द्वारा होने वाले बलात्कार के खिलाफ आवाज उठाने से मना करती है किसी से कहना नहीं। वह जानती है चुप रहना बलात्कार से लड़ने का विकल्प नहीं है। वह भाई को आत्महत्या की धमकी देती है और बार–बार बलात्कार की यातना से मुक्ति का रास्ता खोजती है। पति के धनाढ्य परिवार में पति के नाम से जाना जाना उसे स्वीकार्य नहीं है। उच्च वर्ग के दिखावटी जीवन के मध्य वह सहज नहीं होती। वह सामन्ती परिवेश के कच्चे चिट्ठे खोलती है। जहाँ स्त्री के पास पैसा है, जेवरात हैं, महंगी पार्टियाँ है, पैसा खर्च किया जा

---

1 खेतान प्रभा – छिन्नमस्ता, पृ.14

सकता है – ब्लू फिल्में देखी जा सकती है। जेवर पहने जा सकते हैं। जेवर बेचना चाहे तो संयुक्त परिवार की सम्पति है अतः कोई सम्भावना नहीं है। निजी रूप से उसका अधिकार नहीं। उसकी अभिरुचियों का कोई सम्मान नहीं वह कपड़ों पर खर्च कर सकती है किताबों पर नहीं। गरीब नौकर तक की मदद करने का उसे हक नहीं क्योंकि वह कमाती नहीं है। यदि स्त्री कुछ करना चाहती है तो उसे कमाना होगा अथवा गुलाम की तरह पति की दया पर जीवित रहना होगा।[1]

परछाई, अन्नपूर्णा – स्त्री प्रश्नों को, कामकाजी स्त्रियों के परिप्रेक्ष्य में उठाता उपन्यास है।[2] प्रश्न यह है कि स्त्री पैसा कमाने के लिए नौकरी करती है या आत्मविश्वास के लिए।[3] स्त्री के सामने घर – बाहर स्वतन्त्रता व सुरक्षा का प्रश्न खड़ा होता है। घरेलू श्रम और आर्थिक स्वावलम्बन, घरेलू हिंसा, मानसिक व शारीरिक यौन उत्पीड़न, पुरुष का वर्चस्व के कई सवाल जिनसे कब तक स्वयं को छिपाए, मुँह चुराए, कैसे बच पाए ? स्त्री के सामने शाश्वत प्रश्न है – कैरियर का चुनाव करना। स्त्री शिक्षा व प्रशिक्षण पर खर्च, किया गया श्रम, स्त्री की प्रतिभा का व्यर्थ हो जाना, नौकरियों में महिला प्रत्याशियों के प्रति अरुचि उत्पन्न होना, इत्यादि स्थितियाँ ही अन्नूपर्णा के जीवन संघर्ष की अभिव्यक्ति बन पाता है।[4]

चित्रा मुद्गल का उपन्यास आवां –भारतीय नारी की आर्थिक विषमताओं व सामाजिक विसंगतियों को केन्द्र में रखकर लिखा गया है। वह परिवार के हक में निर्णय लेती है। स्त्रियों की अधिकार सम्पन्नता उनके जीवन में सकारात्मक रूप से प्रभावित करने लगी है। विवाह परिवार व्यवस्था में स्त्री को समुचित सम्मान और सम्पति में समान अधिकार दिए बिना वर्तमान विवाह संस्था को बचा पाना सम्भव नहीं होगा। चित्रा मुद्गल ने इस उपन्यास में परिवार के हक में स्त्री के निर्णय लेने की स्थिति को, स्त्री की अधिकारहीनता। सम्पन्नता की गति को, तथा – विवाह संस्था को बचाने के लिए स्त्री के अधिकारों व सम्मान की चर्चा सुरक्षात्मक दृष्टिकोण से की है। उसकी आँख विस्फोटक स्थिति "आगे खतरा है" पर रही है क्योंकि – परिवार–समाज और राष्ट्र से संतान का भविष्य जुड़ा हुआ है। संतान प्रभावित होती है। यथार्थ और स्वतन्त्रता के अर्थ – पित्रसत्तात्मक संस्कार, स्थिति की परम्परागत स्थिति, परिवर्तन का रेखांकन आवां के माध्यम से सम्भव हो सका है।

---

1 वही, पृ.194–197
2 वही, पृ.172
3 वही, पृ.172
4 वही, पृ.173

मृदुला गर्ग ने आर्थिक स्थिति का चित्रण करते हुए नारी अस्मिता पर प्रश्न खड़े किए है। धर्मवीर भारती की दृष्टि में "देवदारू" पेड़ जो धीरे–धीरे कमजोर पड़ता, एक दिन जड़ से उखड़कर गिर पड़ता प्रतीक है – उस संस्कारवान व्यक्तित्व का जो राष्ट्रीय संघर्ष के दौरान उभरा था। वह समझौतों के खिलाफ था। लक्ष्मी नारायण लाल की दृष्टि में यह दुविधा से आगे प्रतिशोध की सशक्त कथा है। मनोहर श्याम जोशी इसे परम्परावादी लेखन नहीं मानते। डॉ. ज्योति सिंह इसे राजनीतिक उपन्यास कहती है। लेकिन यह राजनीतिक नहीं है घटनाएं बस नाटक की तरह आ गई है। अविजित के संबंध विवाह पूर्व थे विवाहोपरांत भी प्रेम संबंध चले कारण दाम्पत्य जीवन से असन्तुष्टि। पत्नी श्यामा अतिरिक्त सौन्दर्य की स्वामिनी, अविजित दैहिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ।[1] अविजित के लिए वह नाम मात्र की पत्नी जबकि – संगीता पत्नी न होते हुए भी पत्नी की आवश्यकताओं की पूर्ति का माध्यम बनी। काजल बैनर्जी के साथ उसके विवाह पूर्व सम्बन्ध है तथा संगीता व रंजना से विवाहेत्तर सम्बन्ध।

'सही नाप के जूते' – लता शर्मा का उपन्यास जो नारी विमर्श की प्रामाणिक अभिव्यक्ति का संवेदनापरक, अहसास कराता है। लता शर्मा का यह उपन्यास[2] सही नाप के जूते उपभोक्तावाद का प्रभाव, बाजार वाद का करिश्मा पर आधारित है। यह उपन्यास कहानी है उस युवती की जो उर्मि से उर्वशी बनकर विश्व सुन्दरी का स्वप्न ही नहीं देखती, जी जान से भिड़ जाती है।[3]

उसकी माँ ही उसकी प्रेरक व गाइड है जो कहती है – "तुम्हारी देह, तुम्हारा मस्तिष्क, तुम्हारी अपनी पूंजी है। अंततः उसका निवेश होना ही है तो तुम स्वयं करो। कम से कम अस्सी प्रतिशत लाभांश तो मिलेगा।"[4] उर्वशी को पूरा भरोसा है अपनी देह पर, उसके मनचाहे उपभोग दुरूपयोग पर, "यह मेरी देह है; मैं चाहूं उपयोग करूं।" लेखिका लता शर्मा ने इस उपन्यास में– "पुरुष की सामंती प्रवृति, स्वेच्छाचारिता, पत्नी की पूंजी, उपभोग की वस्तु मानने की प्रवृति, पग–पग पर उसके शोषण को उजागर किया है।" उसकी माँ उसको बताती है।

महिला उपन्यासकारों ने जीवन के संघर्षों और उलझनों को उभारते हुए स्त्री का राह बनाना सराहा है। जीवन में संघर्ष बहुरंगी है। असामान्य परिवेश से साक्षात्कार होता है। क्यों पुरुष आबादी का आधा सच समझ नहीं पाता है ? क्यों अपने अस्तित्व और

---

1 सिंह ज्योति – मृदुला गर्ग और नारी अस्मिता का प्रश्न, पृ.88

2 भारतीय पुस्तक परिषद – 175सी पाकेट – ए मयूर विहार फेज–2, दिल्ली–2009, 300/–

3 उपाध्याय मृत्युंजय – नारी विमर्श का प्रामाणिक अभिव्यक्ति (समीक्षा) समकालीन भारतीय साहित्य, अंक 156, जुलाई–अगस्त 2011, पृ.315

4 वहीं, पृ.315

अस्मिता के लिए संघर्ष करने वाली स्त्री को मान नहीं दे पाता ? औरत ने अपने भविष्य को थामकर अपनी मुक्ति की घोषणा की है। समाज पर पड़ने वाले प्रभाव को देखा परखा है। हर औरत घर–परिवार समाज को सजाने, सँवारने, सहेजने की कोशिशें तो करती है लेकिन कितनी सफल हो पाती है ? कितनी सुरक्षित रहती है ? यह स्थिति विचारणीय रही है। पराश्रित पीढ़ी की पराजित होती स्त्री भी आने वाली पीढ़ी को सजग रहने, अपने पैरों पर खड़े होने का संदेश देती है। क्या विश्व बाजार में स्त्री सुरक्षित रह पाई ? वस्तु में तब्दील होती देह का कितना मान–सम्मान ? छीना जाता स्त्रीत्व, देह पर निशान, क्या संदेश देते है ? प्रश्न यह है कि क्यों स्त्री को समाज हाशिए पर धकेल देता है ?

मन्नू भंडारी राजनीतिक परिदृश्य से जुड़कर अपनी पहचान बनाती है तो अनित्य की मृदुला गर्ग स्त्री अस्मिता को गर्व का अहसास कराती है। नूर जहीर औरत की आजादी के सवालों की गुत्थियाँ सुलझाने की कोशिशें अपने पात्रों के माध्यम से करती है तो अच्छा लगता है। हर हाल में औरत की आजादी का सपना पूरा होना चाहिए। औरत को अमीरों के दुनिया में रहकर भी नाइंसाफी से लड़ना होगा खुद को बचाना होगा। केशरमाँ प्रतिरोध करे, डटी रहे तभी बचेगा स्त्रीत्व। ज्योत्स्ना मिलन जानती है और व्यक्त भी करती है। प्रेम में छली जाने पर भी नहीं हटती है निर्मला भुराड़िया ने रजस्वला की मनोदशा को देखा परखा है। कोई भी औरत लड़कियाँ संतान रूप में दहेज के साथ लेकर ससुराल नहीं आती है फिर क्यों ? सहन करने पड़ते है ताने, यंत्रणाएँ और शोषण के क्षण ? आस्था और विश्वास के बावजूद स्त्री को मरना दुःखद है।

चाक की संगीता जैसी स्त्री सभी नहीं होती है रंजीत के साथ खट्टे–मीठे अनुभवों से गुजरते हुए शिक्षा के लोक में श्रीधर के माध्यम से प्रवेश कर जीवन को सुखद बनाना चाहती है। दुक्खम–सुक्खम की पृष्ठभूमि में सोचना पड़ेगा कि लड़की का जन्म क्यों मातममय हो जाता है ? ममता कालिया ने साहित्य कला संस्कृति में पनपते भ्रष्टाचार को समाप्त करने की आकांक्षा व्यक्त कर समाज का शोधन करने की भावनाएं व्यक्त की है नासिरा शर्मा शाल्मली के माध्यम से नारी मुक्ति की पहल करने में पीछे नहीं रहती। पिता से सवाल–जवाब पति से टक्कर लेने की हिम्मत कभी न कभी तो स्त्री को ही करनी होगी। इन्दिरा गोस्वामी ने वृंदावन के अन्दर विधवाओं की दुर्गति तथा धार्मिक पाखंड का पर्दाफाश किया है यही स्थिति अमावस की रात में भी तांत्रिक के माध्यम से उजागर होती है। अनित्य में स्त्री समझौता वादी अवसर वादी लोगों से प्रेरणा नहीं ले पाती। उनकी प्रेरणा में क्रान्ति रचती वसती है। जिसका स्त्री विमर्श की दृष्टि से कोई विकल्प नहीं है।

समाज में चाँदी का जूता कब तक चलता छलता रहेगा ? यह प्रश्न चिन्ता का है चिन्तन के लिए है। इस प्रकार महिला उपन्यासकारों ने स्त्री के तेज को, उसकी ऊर्जा को, शिक्षित बुद्धि को, संघर्ष की चेतना को, मुक्ति की कामना को पूरी रचनात्मकता के साथ स्वीकार ही नहीं किया अपितु महत्ता भी प्रदान की है जो समाज में परिवर्तन की राहें खोदकर आगे बढ़ने का सुखद संकेत देती है। किन्नर प्रकरण दुःखद है करूणा जनक है। फिर भी स्त्री ने अपने दम पर अपनी राहे खुद गढ़ी है जो सुखद है।

"कब्जा" एक निरीह, अशक्त और बीमारी से कृशकाय पति और उसकी सेवा करती पत्नी के रिश्तों की कहानी है। पति जो कभी दबंग, खुशमिजाज था, वह आज सूखा कंकाल भर रह गया है। फिर भी जब उसका अशक्त हाथ पत्नी की पीठ पर पड़ता है तो वह अब भी वजनदार लगता है। उसे लगता है – कि जैसे– उसे पति की काया पर फिर कब्जा मिल गया है। "मौज" कहानी में कामकाजी बहू–बेटे अपने समय में कभी राजरानी रही सासूमाँ का भरपूर फायदा उठाते हैं। वह अपने माइग्रेन, घुटनों, गर्दन या पीठ की अकड़न की बात जबान पर नहीं पाती, बस, चुपचाप घर की जिम्मेदारी सँभाले रहती हैं।" एक स्त्री के कारनामे "कहानी एक मितभाषी मृदुभाषी सुदर्शन पति की बौद्धिक पत्नी के बीच के प्रसंगों पर आधारित है। पत्नी पति की चाय में चम्मच भर कालीमिर्च की बुरूनी झोंक देती है कि अब तो वे गुस्सा हो पर वे "इट्स आल राइट" कहकर टाल देते है। उसे लगता है कि "अपने पति के देवत्व को संभालने की शऊर भी नहीं है मुझमें ?" स्त्री के ऐसे कारनामों के बावजूद पति को कभी ऊँची आवाज में किसी ने बोलते नहीं सुना। यहाँ पर स्त्री बुद्धिमती ही नहीं है, बौद्धिक भी है और पति का ठंडा, निस्पृह, बाहरी, स्थूल व्यवहार उसको उचाट देता है।

इस प्रकार प्रस्तुत शोध प्रबंध में समग्र अध्यायों का परिस्थितियों के अनुरूप लेखिकाओं के उपन्यासों में उत्पन्न वैचारिक भिन्नता बेकारी, बेरोजगारी एवं दाम्पत्य जीवन में उत्पन्न कटुता विवाहेत्तर सम्बन्ध, तलाक, भ्रूण हत्या, बलात्कार जैसे गंभीर विषयों पर किये गये विचारों का उन्मेष तथाकथित समाज के ठेकेदारों पर किये गये व्यंग्यों का विस्तृत विवेचन कर प्रस्तुत शोध प्रबंध को नवीन स्वरूप में आकार देने का विनम्र प्रयास किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

क्र.सं.	पुस्तक	लेखक	प्रकाशक	वर्ष
1.	अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य	राजेन्द्र यादव, अर्चना वर्मा	राजकमल प्रकाश	2001
2.	आदमी की निगाह में औरत	राजेन्द्र यादव	राजकमल प्रकाशन	2001
3.	अश्लीलता का हमला	राजकिशोर	वाणी प्रकाश	1998
4.	उठो अन्नपूर्णा साथ चले	उषा महाजन	हिमाचल पु.म. नई दिल्ली	1998
5.	औरत होने की सजा	अरविन्द जैन	राजकमल	1999
6.	औरत अस्तित्व और अस्मिता	अरविन्द जैन	सारांश प्रकाशन	2000
7.	औरत के लिए औरत	नासिरा शर्मा	सामयिक	2003
8.	इक्कीसवीं सदी की ओर	सुमन कृष्णकांत	राजकमल	2001
9.	श्रृंखला की कड़ियाँ	महादेवी वर्मा	राधा कृष्ण	1995
10.	कामकाजी भारतीय नारी	प्रमिला कपूर	राजपाल	1976
11.	चुकते नहीं सवाल	मृदुला गर्ग	सामयिक	2002
12.	नारी प्रश्न	सरला माहेश्वरी	राधाकृष्ण	1998
13.	न्याय क्षेत्रे – अन्याय क्षेत्रे	अरविन्द जैन	राजकमल	2002
14.	परिधि पर स्त्री	मृणाल पांडे	राधाकृष्ण	1996
15.	बंद गलियों के विरुद्ध	मृणाल पांडे क्षमा शर्मा	राजकमल	2001
16.	भारतीय स्त्री	प्रतिभा जैन	रजत–दिल्ली	1980
17.	विद्रोही स्त्री	मधु बी.जोशी	राजकमल	2001
18.	स्त्री की पराधीनता	जॉन स्टुअर्ट मिल प्रगति सक्सेना	राजकमल	2002
19.	स्त्रीवादी साहित्य विमर्श	जगदीश्वर चतुर्वेदी	अनामिका	2000
20.	स्त्रीत्व का मानचित्र	अनामिका	सारांश	1999
21.	स्त्री उपेक्षिता	प्रभा खेतान	हिन्द पाकैट	1998
22.	स्वागत है बेटी	विभा देवसरे	मेघा बुक्स	2002

23.	स्त्रीवादी विमर्श, समाज और साहित्य	क्षमा शर्मा	राजकमल	2002
24.	स्त्री देह के विमर्श	सुधीर पचौरी	आत्माराम	2000
25.	स्त्री के लिए जगह	राजकिशोर	वाणी	1994
26.	स्त्री परम्परा और आधुनिकता	राजकिशोर	वाणी	1999
27.	हिन्दी के उपन्यासकारों की मानवीय संवेदनाएँ	उषा यादव	राधाकृष्ण	1999
28.	हिन्दी उपन्यासों में रूढ़ि मुक्त नारी	राजरानी शर्मा	साहित्य मण्डल	1989
29.	हिन्दी उपन्यास और दलित नारी	कुसुम मेघवाल	संघी जयपुर	1991
30.	हम सभ्य औरतें	मनीषा कुलश्रेष्ठ	सामयिक	2002
31.	रंग ढंग	मृदुला गर्ग	विद्या विहार	1985
32.	भारतीय नारी अस्मिता की पहचान	उषा शुक्ला	लोक भारती इलाहबाद	1984
33.	भारतीय नारी दशा और पहचान	उषा शुक्ला	लोक भारती इलाहबाद	1984
34.	भारतीय नारी दशा और दिशा	आशा रानी व्होरा	नेशनल	1986
35.	भारतीय महिला लेखिकाओं से साक्षात्कार	रणवीर सांगा	जगतराम एंड सन्स दिल्ली	
36.	भारतीय समाज में नारी महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में बदलते सामाजिक संदर्भ	मीरा देसाई शीलप्रभा वर्मा	मैकमिलन विद्याविहार कानपुर	1982 1987
37.	वर्तमान हिन्दी कथा लेखन और दाम्पत्य जीवन	साधना अग्रवाल	वाणी	1995
38.	हिन्दी उपन्यासों में कामकाजी महिलाएं	रोहिणी अग्रवाल	दिनमान प्रकाशन	1992
39.	हिन्दी उपन्यासों में नारी	शैल चतुर्वेदी	विभू–प्रकाशन सातिबावक	1977

40.	हिन्दी उपन्यासों में नारी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण	विमल सहस्त्र दुबे	पुस्तक संस्थान कानपुर	1977
41.	आधुनिक हिन्दी कहानी में नारी की भूमिका	सुशीला मित्तल	अनुपमा प्रकाशन मुम्बई	1994
42.	एक जमीन अपनी नई सदी की पहचान	चित्रा मुद्गल	राजकमल	2000
43.	श्रेष्ठ महिला कथाकार	ममता कालिया	लोकभारती इलाहबाद	2002
44.	प्राचीन भारतीय साहित्य में नारी	गजानन शर्मा	रचना प्रकाशन इलाहबाद	1971
45.	स्त्री विमर्श	ऋचा शर्मा	म.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन सतना	2009
46.	हिन्दी उपन्यास एवं कहानी साहित्य	विनोद कुमार नागर	गरिमा प्रकाशन मुरादाबाद	1992
47.	हिन्दी उपन्यास में यथार्थवाद	त्रिभुवन सिंह	हिन्दी प्रचारक संस्थान वाराणसी	1965
48.	हिन्दी उपन्यास उपलब्धियाँ	लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय	राधाकृष्ण	1969
49.	हिन्दी उपन्यास	शिवनारायण श्रीवास्तव	सरस्वती मंदिर काशी	1967
50.	हिन्दी उपन्यासों का शिल्प विधान	प्रदीप कुमार शर्मा	अक्षय प्रकाशन कानपुर	1990
51.	हिन्दी उपन्यास का शिल्पगत विगत	उषा सक्सेना	शोध साहित्य संस्थान इलाहबाद	1972

उपन्यास

1.	आवां	चित्रा मुद्गल	सामयिक	1999
2.	कठगुलाब	मृदुला गर्ग	भारतीय ज्ञानपीठ	1998
3.	छिन्नमस्ता	प्रभा खेतान	राजकमल	1991
4.	परछाई, अन्नपूर्णा	क्षमा शर्मा	नवराज	1996
5.	माई	गीतांजलि श्री	राजकमल	1993
6.	आपका बंटी	मन्नू भंडारी	अक्षर	1982
7.	इदन्नमम्	मैत्रेयी पुष्पा	किताबघर	1996
8.	ऐ लड़की	कृष्णा सोबती	राजकमल	1999
9.	चाक	मैत्रेयी पुष्पा	राजकमल	1997
10.	झूला नट	मैत्रेयी पुष्पा	राजकमल	1999
11.	बेतवा बहती रही	मैत्रेयी पुष्पा	राजकमल	2006
12.	बेघर	ममता कालिया	राजकमल	1991
13.	मित्रो मरजानी	कृष्णा सोबती	राजकमल	1979
14.	सूरज मुखी अंधेरे के	कृष्णा सोबती	राजकमल	1974
15.	शेष कादम्बरी	अलका सरावगी	राजकमल	2001
16.	गुड़िया भीतर गुड़िया	मैत्रेयी पुष्पा	राजकमल	2012
17.	अन्या से अनन्या	प्रभा खेतान	राजकमल	2010
18.	मैं और मैं	मृदुला गर्ग	राजकमल	2013
19.	अनित्य	मृदुला गर्ग	राजकमल	2013
20.	एक कहानी यह भी	मन्नू भण्डारी	राधा कृष्ण	2011
21.	चित्तकोबरा	मृदुला गर्ग	राजकमल	2013
22.	टेसू की कहानियाँ	कृष्णा अग्निहोत्री	नेशनल	2014
23.	रुकोगी नहीं राधिका	उषा प्रियंवदा	राजकमल	2000
24.	पचपन खम्भे लाल दीवारें	उषा प्रियंवदा	राजकमल	2009
25.	रेत की मछली	कांता भारती	लोक भारती	2008
26.	महाभोज	मन्नू भंडारी	राधाकृष्णन	1997
27.	अपना खुदा एक औरत	नूर जहीर	हार्परकोलिन्स	2011

28.	साथ चलते हुए	जय श्रीराय	सामयिक	2013
29.	ओब्जेक्शन मी लार्ड	निर्मला भुराड़िया	सामयिक	2010
30.	खानाबदोश ख्वाहिशें	जयंति रंगनाथन	सामयिक	2000
31.	शाल्मली	नासिरा शर्मा	किताबघर	1994
32.	क्योंकि औरत ने प्यार किया	जेबारशीद	पुस्तक बाजार	2009
33.	सही नाप के जूते	लता शर्मा	भारतीय पुस्तक परिषद	2009
34.	अन्हियारे तलछट में चमका	अल्पना मिश्र	किताबघर	
35.	फरिश्ते निकले	मैत्रेयी पुष्पा	राजकमल	2014
36.	पोस्ट बाक्स नं.203 नाला सोपारा	चित्रा मुद्गल	सामयिक पेपर बैक्स	2016
37.	दुक्खम सुक्खम	ममता कालिया	भारतीय ज्ञानपीठ	2011
38.	कल्चर वल्चर	ममता कालिया	किताबघर	2017
39.	नीलकंठी ब्रज	इन्दिरा गोस्वामी	भारतीय ज्ञानपीठ	2010
40.	अमावस की रात	उषा यादव	किताबघर दरियागंज	2008
41.	उसके हिस्से की धूप	मृदुला गर्ग	राजकमल	1987
42.	वंशज	मृदुला गर्ग	नेशनल पब्लिशिंग हाउस	1999
43.	छिन्नमस्ता	मृदुला गर्ग	राजकमल	2006

कहानी संग्रह

1.	सात सौ बीस कदम	अमृता प्रीतम	भारतीय ज्ञानपीठ	2001
2.	गौरा गुणवंती	सूर्यबाला	भारतीय ज्ञानपीठ	2010
3.	आओ माँ हम परी हो जाएँ	रोहिणी अग्रवाल	सामयिक प्रकाशन	2012
4.	सम्पूर्ण कहानियाँ	मृदुला गर्ग	प्रभात प्रकाशन	2018
5.	मन ना भये दस बीस	मालती शर्मा	प्रभात प्रकाशन	1981
6.	तुम्हें छू लूं जरा	जय श्रीराय	सामयिक प्रकाशन	2012

7.	गन्धर्व गाथा	मनीषा कुलश्रेष्ठ	सामयिक प्रकाशन	2012
8.	यहाँ हाथी रहते थे	गीतांजलि श्री	राजकमल प्रकाशन	2012
9.	बयान	चित्रा मुद्गल	भारतीय ज्ञानपीठ	2004
10.	सच कुछ और था	सुधा ओम ढींगरा	शिवना प्रकाशन	2017
11.	लाल नदी	इन्दिरा गोस्वामी	भारतीय ज्ञानपीठ	2004
12.	परिंदे का इन्तजार सा कुछ	नीलाक्षी सिंह	भारतीय ज्ञानपीठ	2006
13.	भीतर का वक्त	अल्पना मिश्र	भारतीय ज्ञानपीठ	2006
14.	शहर में अकेली लड़की	उर्मिला शिरीष	राजकमल प्रकाशन	
15.	पारिजात	नासिरा शर्मा	किताबघर प्रकाशन	2012
16.	इक्कीसवीं सदी का लड़का	क्षमा शर्मा	सामयिक प्रकाशन	1999
17.	कितने कैद	मृदुला गर्ग	इन्द्रप्रस्थ	1975
18.	टुकड़ा टुकड़ा आदमी	मृदुला गर्ग	नेशनल	1996
19.	डेफोडिल जल रहे हैं	मृदुला गर्ग	अक्षर	1978
20.	शहर के नाम	मृदुला गर्ग	तालीठ	1980

पत्र–पत्रिकाएँ

आजकल
कथादेश
नारी संवाद
मधुमती
हंस
समकालीन भारतीय साहित्य
वर्तमान साहित्य
वागर्थ
सारिका
संचेतना

प्रकाशित शोध पत्र

प्रकाशित शोध पत्र

Multi-disciplinary International Journal
Certificate of Paper Publication
Remarking
E-ISSN 2455-0817
P-ISSN 2394-0344
SJIF-5.879
GIF-0.543
IIJIF-6.134
RNI
UPBIL/2016/67980
Indexed
Google scholar
Remarking An Analisation
This is to certify that the paper titled...नैतिक मूल्य और नारी अस्मिता (हिन्दी कथा साहित्य के सन्दर्भ में)..
Author : अनीता मीना
Designation : सहायक आचार्य
Dept. : हिन्दी विभाग
College : रामेश्वरी देवी राजकीय कन्या महाविद्यालय, भरतपुर, राजस्थान
has been published in our Peer Reviewed UGC approved International Journal
Vol. ..3....... Issue ....9....... Month ...December.(Part-1)............. Year 2018.
The mentioned paper is measured upto the required.
Dr Rajeev Misra
(Editor/Secretary)
Dr. Asha Tripathi
(Vice-President)
Social Research Foundation
41/RM/12/Part-1/9314/Anita meena
Non Governmental Organisation
128/170, H-Block, Kidwai Nagar, Kanpur - 208011
(Con) 0512-2600745, 9335332333, 9839074762 (E-mail) socialresearchfoundation@gmail.com (Web) : www.socialresearchfoundation.com

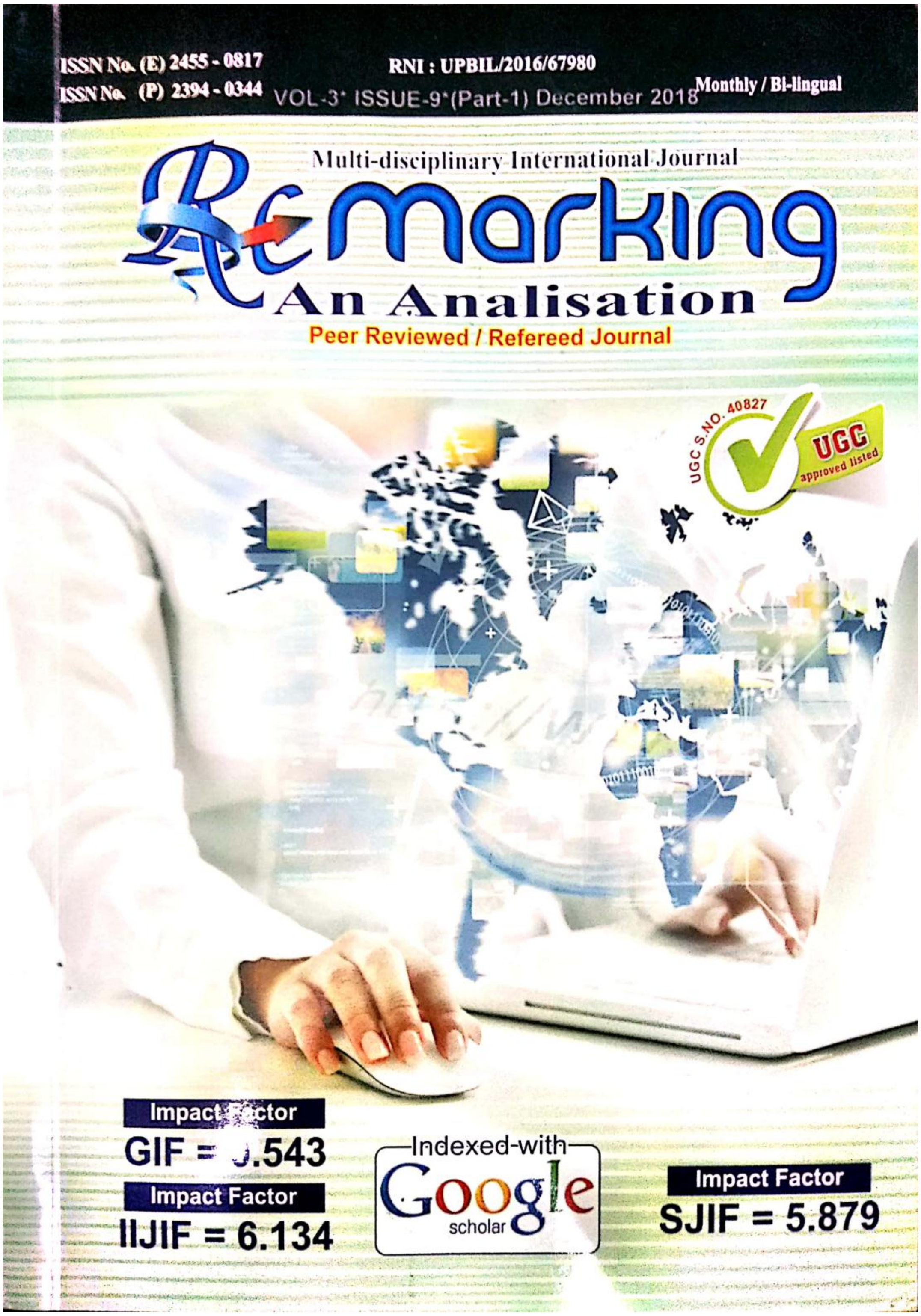
ISSN No. (E) 2455 - 0817
ISSN No. (P) 2394 - 0344
RNI : UPBIL/2016/67980
VOL-3* ISSUE-9*(Part-1) December 2018
Monthly / Bi-lingual
Multi-disciplinary International Journal
Remarking
An Analisation
Peer Reviewed / Refereed Journal
UGC S.NO. 40827
UGC approved listed
Impact Factor
IIJIF = 6.134
Indexed-with
Google scholar
Impact Factor
SJIF = 5.879

P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL.-3* ISSUE-9*(Part-1) December 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

Editorial Board for the Remarking An Analisation December (Part-1) -2018

Executive Board

PATRON
Dr. M.D. Pathak
Chairman, Centre for Research & Development of Waste & Marginal Land
Ex. Director General, U.P. Council of Agriculture Research, U.P.
Ex. Director, Research and Training, International Rice Research Institute, Manila, Philipines
pathakmd1@gmail.com

EDITOR-IN -CHIEF
Dr. Asha Tripathi
Senior Vice-President,
Social Research Foundation, Kanpur
asha23346@gmail.com

MANAGING EDITOR
Dr. Rajeev Misra
Secretary,
S. R. F.,Kanpur
indra.rajeev@gmail.com

EDITOR
Smt. Deepti Mishra
Treasurer,
S. R. F.,Kanpur
2014remarking@gmail.com

EDITORIAL-ADVISORY BOARD

Political Science and International Relation
Prof. Vandana Asthana
Eastern Washington University, Cheney, WA

Geography
Dr. Vijay Bahuguna
Assistant Professor, D. B. S. P. G. College, Dungar, Rajasthan

Commerce
Heena
Assistant Professor, S.D. College,
Prof. E. Vanajakshi
Assitant Professor, University College of Arts,

Zoology
Dr. Siddharth S. Sabale
Livestock Development Officer, Animal Husbandry Maharastra,
Dr. Deepti Srivastava
Associate Professor, Govt. Dungar College, Rajasthan

Sociology and Social Anthropology
Dr. K. Bharathi
Arba Minch University, Arba Minch, Ethiopia, North Africa

Physical Education & Sports
Dr. Hoshiyar Singh
Associate Professor J. S. P. G. College, Sikandrabad, Bulandshahar

Drawing & Painting
Dr. Anuradha Arya
Associate Professor, K.M.V. Bhorr, Bareilly

Psychology
Dr. Akbar Husain
Professor, Aligarh Muslim University, Aligarh

Library & Information Science
Dr. U. C. Shukla
Fiji National University, Lautoka, Fiji

Economics
Dr. Archana Sharma
Lecturer, Kamla P.G.College, Dholpur, Rajasthan
Dr. Mohd Tariq
Associate Professor, G. F. College, Shahjahanpur
Dr. Devkaran Genwa
Assistant Professor, Jainarayan Vyas University, Jodhpur, Rajasthan
Dr. Jasmine Gambhir
Assistant Professor, Shivaji College, (University of Delhi) Delhi
Dr. Neena Chhokra
Assistant Professor, V.V. P.G. College, Shamli
Dr. Sharad Kumar
Assitant Professor, N.R.E.C. College, Khurja

P: ISSN NO.: 2394-0344
E: ISSN NO.: 2455-0817
RNI No.UPBIL/2016/67980
VOL-3* ISSUE-9*(Part-1) December 2018
Remarking An Analisation

Physics
Satish Chand
Associate Professor,
Sri Sant Sundardas Govt.P.G.College,
Dausa, Rajasthan

English
Dr.Parul Mishra
Assistant Professor,
Amity University,
Jaipur
Dr. Mamta Singhal
Associate Professor & HOD
J.V. Jain College,
Saharanpur

History
Dr.Anjana Bareth
Assistant Professor
Govt. Girls College,
Ajmer, Rajasthan

Political Science
Dr. Pradeep Singh Rao
Professor,
Govt. P.G. College,
Betul, M.P.
Dr. Karamveer Singh
Associate Professor,
B.S.R Govt. Arts College,
Alwar, Rajasthan
Dr. Harish Kumar
Associate Professor,
S.K. Govt. Girls College,
Sikar, Rajasthan

Education
Dr. Amrita Maheshwari
Principal
BIT College,
Prof. Pramod Kumari
Principal
Higher Education,
L. K. C. Govt. P. G. College,
Gangoh, Saharanpur
Dr. Praveen Begam
Lecturer,
Govt. Senior Sec. School Rajpura,
Patiala
Dr. Sumitra Devi
Associate Professor & Dean
BPSITTR, BPSMV, Khanpur
Kalan, Sonepat
Dr. Pramod Joshi
Assistant Professor,
Central University of Haryana,
Dr. Meena Kumari
Assistant Professor,
C.D.L.U. Sirsa
Dr. Pradeep Dahel
Assistant Professor,
DIMJ College,

Music
Dr. Surekha Rani
GLDM Govt. Degree college,
Hiranagarkathua (J&K).
Dr. Mahesh Chandra Pandey
Assistant Professor,
M.B.Govt. P.G. College, Haldwani
Nainital

Law
Dr. D.N. Srivastava
Assistant Professor,
University of Lucknow,
Lucknow
Dr. Manoj Kumar Sharma
Assistant Professor,
Rajive Gandhi National University of
Law,

Chemtstry
Dr. K. D. Mishra
Associate Professor,
Agra College. Agra
Dr. S. Ravichandran
Associate Professor,
Lovely Professional University,
Jodhpur, Rajasthan

Sociology
Dr. Sushil Kumar
Assistant Professor,
Shivpati P.G. College, Siddharthnagar
Dr. Santosh Kumari
Associate Professor,
K.P.G. College, Muzaffarnagar

Hindi
Dr. Bijendra Kumar
Assistant Professor,
Asansol Girls College,
West Bengal
Dr. Rajesh Kumar Sharma
Associate Professor,
Govt. College, Untara, Tonk
Rajasthan
Dr. Manju Sharma
Associate Professor,
Lohia College, Churu
Rajasthan
Dr. Mithlesh
K.G.K.Mahavidyalya
Navin Kumar Das
Associate Professor,
Govt. Bangur College,
Didwana, Rajasthan
Dr. Kavita Acharya
Assistant Professor,
Govt. R. D. College,
Bharatpur

P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-9*(Part-1) December 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

CONTENTS

S. No.	Particulars	Page No.
1	**Jihad and Terrorism in the Light of Islam** Shabir Ahmad Dar, Ujjain, M.P.	01-08
2	**Impact of Globalisation on Tribal Communities in India** Mohd Ayub Mir, Ujjain, M.P.	09-12
3	**Role of Women in Agricultural Sector** Shripad Kulkarni, Tumkur, Karnataka	13-18
4	**Women Trafficking In India: A Case Study of Punjab and Haryana** Sukhchain Singh, Patiala, Punjab	19-23
5	**Role and Salient features of Military Law in India** Kishori Lal, Lucknow	24-27
6	**Rising Crime against Children in India: Urgent Need for Retrospection and Moral Evaluation** Sharanjit, Punjab	28-32
7	**Skewed Sex Ratio, Male Marriage Squeeze and Buying of Girls for Marriages** Aditya Parihar, Monica Munjial Singh, Chandigarh & Nirmala Devi, Amritsar	33-36
8	**Empowernment of Women in Gulf States** Vertika Dhillan, Gangoh, Saharanpur	37-40
9	**Reformation of Security Council And The Role of India As A Permanent Member** Divesh Singh, Dehradun	41-45
10	**Trafficking, Stress and Its Effects on the Quality of Life of Women: Rehabilitation through Relaxation Techniques** Zahra Sajed, Aligarh	46-49
11	**An Evaluation of Selected Physiological Fitness Variables of Kabaddi and Kho-Kho Players at University Level** Satyajeet Yadav, Rajasthan & Hoshiyar Singh, Uttar Pradesh	50-53
12	**Inclusive Education in India** Monika, Khanpur Kalan, Sonepat	54-57
13	**Empowering Women's Voices through Life Narratives A Study of Tehmina Durani's My Feudal Lord** Naila Neelofar & Sabeha Mufti, Srinagar	58-61
14	**Psychosocial and Environmental Problems among MSM Population** Saurabh Srivastava & Archana Shukla, Lucknow	62-67
15	**A Comparative Study of Stress-Related Symptoms among Diabetic and Coronary Artery Disease (CAD) Patients** Sabiha Baby, Aligarh	68-73
16	**Women's Rights in India: Problems and Prospects** Laxman Lal Salvi, Jodhpur, Rajasthan	74-78
17	**Infrastructural Growth: Backbone of Indian Economy** Amrisha Bhardwaj, Delhi	79-84
18	**A Study on Performance of Women Entrepreneurship in India** Bhupendra Kumar , Shamli	85-88
19	**Consumer Satisfaction towards LIC of India in District Shahjahanpur** Kamran H. Khan & Nishant Kumar Gupta, Shahjahanpur	89-93
20	**Osteopathic Diseases of Equine in Hills of Uttarakhand and Their Management** Amit Sharma & V.K. Sharma, Pantnagar	94-97

P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-9*(Part-1) December 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

21	**A Satisfied Customer In Banks Is The Best Ambassado** Seema Singhal, Ambala City, Haryana	98-105
22	**Performance of Foreign Direct Investment Inflows in Indian Economy: An Overview** William & Shekhar Sharma, Khurja	106-109
23	**Social Commerce in India: A Conceptual Framework** Devarajappa S, Tumakuru-Karnataka	110-114
24	**RTA as a Vedic God: An Analysis** Jitendra Singh Naulakha, Gyanpur, Bhadohi	115-118
25	**Environmental and Health Effects of Textile Dye** Vijay Kumar Meena, Dausa, Rajasthan	119-122
26	**Conductometric and Thermodynamic Studies of Ternary Complexes of Some Transition Metal Complexes with Imino Diacetic Acid and 2-Piconolic Acid** Bhoopendra Singh, Agra	123-126
27	**X- Ray Diffraction Studies on Chromium Soaps in Solid State** S.S. Khirwar, Agra	127-128
28	**A Study of The Use of Metacognitive Strategies in Learning Writing Skill of English Language by Senior Secondary School Students of Jaipur** Kalpana Choudhary n& Shubha Vyas, Jaipur, Rajasthan	129-135
29	**Psychological Capital and Teaching Competency of Senior Secondary School Teachers: A Sample Study** Meena Kumari & Kanwaljeet Kaur, Sirsa, Haryana	136-140
30	**Raji Narasimhan's Short Stories: A Study** Mohd. Tariq, Lucknow	141-143
31	**Temporal and Spiritual Issues in Tagore's Gitanjali** Reshma Devi, Saharanpur, U. P.	144-146
32	**George Bernard Shaw: Dramatist with a Purpose** Amit Singh, Shohratgarh, Siddharthnagar	147-149
33	**Guidance and Counselling About 'Music with Its Therapeutic Modalities'** Shivani Raina, Hiranagar, Jammu and Kashmir	150-151
34	**बंदिश का अर्थ, गुण तथा पंडित कुमार गन्धर्व की बंदिशों की प्रासंगिकता** रवि जोशी, नैनीताल, उत्तराखंड	152-155
35	**मेवाड़ शैली के चित्रों में अंकित नारी–आभूषण एक अध्ययन** अर्चना सक्सेना, आर्यसमाज भूड़, बरेली	156-158
36	**रामेश्वर शुक्ल अंचल का साहित्य सौंदर्य** अमित शुक्ल, रीवा (म.प्र.)	159-162
37	**हिंदू धर्म : समग्र स्वीकार का धर्म** भानु प्रकाश शर्मा, उनियारा, टोंक, राजस्थान	163-166
38	**स्त्री विमर्श और हिन्दी साहित्य/ स्त्री जीवन दोहरा अभिशाप/खंड–खंड विभाजित स्त्री विमर्श** सुमेर सिंह स्वामी, चूरू, राजस्थान	167-170
39	**राम गोपाल वर्मा के सृजन के विविध आयाम** नीलम, सहारनपुर	171-176
40	**राष्ट्रवाद की अवधारणा और प्रेमचन्द** हबीब खान, डीडवाना	177-183
41	**नैतिक मूल्य और नारी अस्मिता (हिन्दी कथा साहित्य के सन्दर्भ में)** अनीता मीना, भरतपुर, राजस्थान	184-186
42	**कथावार ह्रदयनारायण मेहरोत्रा "ह्रदयेश" का उपन्यास शिल्प** विनीता रानी, भूड़, बरेली	187-189

H

43	**भारत के नव–निर्माण में "पंचायती राज"** अर्चना शर्मा, धौलपुर, राजस्थान	190-193
44	**प्रौद्योगिकीय परिवर्तन का समकालीन भारतीय समाज पर प्रभाव – एक समाजशास्त्रीय अध्ययन** अमित मलिक, मुजफ्फरनगर	194-196
45	**गांधी एवं अम्बेडकर का सामाजिक न्याय : एक तुलनात्मक अध्ययन** सुरेन्द्र सिंह, अलवर, राजस्थान	197-201
46	**गांधीजी की अहिंसा की अवधारणा : वर्तमान में प्रासंगिकता** मन्जू लाडला, सीकर, राजस्थान	202-205
47	**नगर निगम बीकानेर : निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों की भूमिका** साधना भंडारी एंव अशोक कुमार, बीकानेर	206-208
48	**साक्षरता को मिशन बनाने की जरूरत** दिनेश प्रताप सिंह, गाजियाबाद	209-210
49	**जल पर संवेदनशील बने समाज** मंजय कुमार, मेरठ	211-212

P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-9*(Part-1) December 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

नैतिक मूल्य और नारी अस्मिता (हिन्दी कथा साहित्य के सन्दर्भ में)

अनीता मीना
सहायक आचार्य,
हिन्दी विभाग,
रामेश्वरी देवी राजकीय कन्या महाविद्यालय,
भरतपुर, राजस्थान

सारांश

मानव मूल्य जन्मजात होते हैं। उनका स्वरूप प्रकट करना दुर्लभ है, ये शाश्वत होते है, परिस्थितियाँ स्वीकारोक्ति के रूप में प्रकट किए जाते हैं। मानव जीवन से जुड़े विविध स्वरूपों की अभिव्यक्ति नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा कह सकते हैं। इसके दो प्रकार होते हैं– बाह्य एवं आंतरिक। दार्शनिक, सामाजिक, वैयक्तिक, राजनैतिक, पारिवारिक एवं वैज्ञानिक मूल्यों का ह्रास नित नये रूप में हो रहा है, जो कि मानवीय दैनिक जीवन पर बुरा प्रभाव डाले हुए है। हिंदी कथा साहित्य में यौन वृत्तियों, तलाक, दहेज प्रथा, बलात्कार, विवाह पूर्व संबंधों की तीव्रता ने नारी को अपनी गरिमा से नीचे के पायदान पर ला दिया है। स्वातंत्र्योत्तर कथा साहित्य में नारी की वैचारिक पृष्ठभूमि को लेकर महिला कथाकारों ने अपनी कथाओं के माध्यम से यथार्थ का वर्णन किया है। आज गिरते नैतिक मूल्यों के कारण समाज में जातिवाद, भाई–भतीजावाद, क्षेत्रवाद एवं विविध समस्याओं ने स्थान ग्रहण कर लिया है।

मुख्य शब्द : नैतिक मूल्य, नारी अस्मिता।

प्रस्तावना

मनुष्य जीवन जीने के लिए कुछ मूल्यों की स्थापना की गई, मूल्यों का विस्तार सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक तथा साहित्यिक स्तर पर इनका सीधा सम्बन्ध मानव जीवन से है। परिस्थितियों के कारण सन्दर्भों की स्वीकारोक्ति व नकारोक्ति में करता है, मूल्य शाश्वत होते है, कभी क्षीण नहीं होते क्योंकि ये दृश्यमान नहीं होते हैं, किसी वस्तु को देख सकते है, किन्तु मूल्यों को देखना असाध्य है। इन्हें चेतना के आधार पर व्यवहृत या अनुभूति हो सकती है। जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए मूल्यो का होना अनिवार्य है, नवीन मान्यताओं परिवर्तित युग–बोध और विज्ञान के प्रभाव के कारण यह कह दिया जाता है, नवीन मूल्यों की स्थापना हो रही है। मूल्य व्यक्ति के व्यक्तित्व में निखार लाने का कार्य करते हैं, क्योंकि मानव मूल्यों के सानिध्य में ही बंधकर जीवन जीता है।

परिभाषाएं

वैसे तो मूल्यों की परिभाषा देना असंभव है, किन्तु कुछ विद्वानों के सुझाव निम्नानुसार है–

डॉ. नगेन्द्र के अनुसार "मूल्य उस गुण–समवाय का नाम है, जो किसी पदार्थ की अपने लिए प्रमाता के लिए अथवा अपने परिवेश के लिए सार्थकता का निर्धारण करता है। पदार्थ का गुण होने के कारण मूल्य की सत्ता वस्तुपरक है किन्तु प्रमाता सापेक्ष होने के कारण व्यक्तिपरक है।"[1] डॉ. लक्ष्मीकांत वर्मा के अनुसार "अनुभूति और जीने का अधिकार वांछा को कलाकार किसी भी कर्म–श्रृंखला के माध्यम से व्यक्त करने की चेष्टा करता है तो वही वह मानव मूल्यों की स्थापना करता है।"[2]

मेस्लो के अनुसार "अवयव स्वयं मूल्यों की वरिष्ठता का निवारण करता है। वैज्ञानिक निरीक्षक उसको उत्पन्न करने की अपेक्षा उसकी सूचना देता है।"[3]

अध्ययन का उद्देश्य

किसी भी लेखन का कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। नैतिक मूल्य और नारी अस्मिता जैसे शोचनीय विषयों पर गंभीरता से विचार करना और नारी मुक्ति एवं रक्षार्थ उनके बहुआयामी व्यक्तित्व को निखारना प्रमुख उद्देश्य है। वर्तमान जीवन में नारी की बढ़ती अनैतिकता व विचारोन्मुखी सामाजिक परिवेश एवं परिवार में व समाज में होने वाले व्यवहार के प्रति नैतिक मूल्यों एवं उनसे जुड़े संदर्भों को तथाकथित पुरुषवादी सत्ता की चपेट से बचाने के लिए तथा सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक नैतिक मूल्यों की स्थापना करना व भावी पीढ़ी को प्रेरित करना।

P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-9*(Part-1) December 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

मूल्य और उनका वर्गीकरण

मूल्यों के सम्बन्ध में वर्गीकरण निम्नानुसार है, आर्थिक मूल्य, शारीरिक मूल्य, चारित्रिक मूल्य, कलात्मक मूल्य, बौद्धिक मूल्य तथा धार्मिक मूल्य आदि है।"[4] बाहय एवं आंतरिक प्रमुख है। मेरी सम्मति में मूल्यों का कोई वर्गीकरण का आधार नही होता है। जैसे वातावरण में परिवर्तन होता है, वैसे ही मूल्यों पर भी परिवर्तन हो जाता है। क्योंकि वैज्ञानिक और संस्कृति का प्रभाव व रहन–सहन में परिवर्तन होता है।

दार्शनिक मूल्य

सर्वप्रथम नीतिशास्त्र में दार्शनिक मूल्यों की चर्चा की है, क्यों कि इनका सम्बन्ध नैतिकता से है। शुभ–अशुभ की परख है, मूल्यों का सम्बन्ध मनुष्य के अस्तित्व से है। तत्व विज्ञान में मूल्यों की समस्याओं पर विचार किया जाता है। शुभ–अशुभ की परख की जाती है। सुखानुभूति पर सुखवादियों की धारणा रही है। आध्यात्मवादियों ने वस्तुगत आदर्शों के आधार पर मूल्यों की व्याख्या की गई है। मूल्यों के अभाव में जीवन जीवन नही है। मानव प्रवृति परिवर्तनशील है। अतः मूल्यों का परिवर्तनशील होना भी आवश्यक है। आज के भौतिकवादी जीवन में तथाकथित आदर्शो से जीवनयापन करना दुर्लभ हो गया है। मृदुला गर्ग के कथा साहित्य में दार्शनिक मूल्यों का हस्तक्षेप यत्र–तत्र स्पष्ट परिलक्षित है।

वैयक्तिक मूल्य

व्यक्ति का आत्मा के प्रति निष्ठा का भाव है। 'स्व' आत्म भाव के प्रति जागृति प्रतिभा से आती है। अतः सामाजिक बन्धन व्यक्ति के 'स्व' की रक्षा के लिए तथा दायित्वों के निर्वाह के लिए है। अतः सामाजिक बन्धन व्यक्ति के 'स्व' की रक्षा के लिए होते है। क्या होना चाहिए की धारणा व्यक्ति को समाजोन्मुख करती है, क्योंकि व्यक्ति समाज की ईकाई है। वैयक्तिक मूल्य व्यक्ति को व्यक्ति होने का बोध कराते हैं। किसी भी क्रिया का केन्द्र व्यक्ति स्वयं होता है। मनुष्य समाज में रहकर एक–दूसरे के सहयोग से ही अपने समस्त कार्य सिद्धि कर सकता है। वह अपनी इच्छा से बहुत से कार्य कर सकता है। इस प्रकार महिला कथाकारों ने नारी अस्मिता की रक्षार्थ इन सामाजिक नैतिक आदर्शों की व्याख्यात्मक टिप्पणी हिन्दी कथा साहित्य में मैत्रेयी पुष्पा कृष्णा सोबती, मालती शर्मा, प्रभा खेतान आदि प्रमुख लेखिकाओं के साहित्य में नारी मुक्ति की कल्पना की है। सम्पूर्ण सभ्यता जिन मूल्यों पर आधारित थी, वे झूठे पड़ गये है। परिणाम यह है कि एक भयानक विघटन उपस्थित है।"[5]

सांस्कृतिक मानवमूल्य

जैसे कि पहिए के आरे घूमते है उसी प्रकार अनुभवगम्य होने पर मूल्य निरन्तर चलते रहते है। मूल्यों का जन्म आस्था और विश्वास का परिणाम है। आस्था और विश्वास को ही संस्कृति का नाम दिया जाता है, संस्कार जनित संस्कृति होती है। संस्कृति मूल्यों को उपादानवत प्रस्तुत करती है, जिसका आधार प्राप्त कर व्यक्ति मूल्यों का निर्माण करता चलता है। परस्पर मूल्य और संस्कृति का सम्बन्ध है। संस्कृति मनुष्य को प्रभावित करती है, और वह अपनी विचारधारा बनाता है। सांस्कृतिक मूल्य भौगोलिक परिस्थितियों से प्रभावित होते है। परिणामतः मूल्यों का स्थानान्तरण भी होता है। बंगाल मे पुत्री को 'माँ' तथा दक्षिण भारत में लेडी को 'अम्मा', महाराष्ट्र में मामा की बेटी और बेटे का सम्बन्ध हो सकता है। एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में आवागम समाज में आचार व्यवहार एवं लोक जीवन से जुड़ी परम्पराओं व रीतिरिवाजों का सम्बन्ध मूल्यों से जुड़ा है। महिला लेखिकाओं के कथा साहित्य में स्त्री जीवन से जुड़ी परम्पराओं व नैतिक मूल्यों का पर्याप्त वर्णन दृष्टिगोचर है, जिसमें सांस्कृतिक परिवेश का प्रभाव, व्यक्ति के व्यक्तित्व को निखारने में अभूतपूर्व योगदान देता है।

राजनीतिक मूल्य

राजनीति नियामक होती है। परिणामस्वरूप दण्ड आदि की व्यवस्था नीति के अर्न्तगत आ जाती है। दण्ड न्याय के अधीन होता है, परिणामतः राजनीति में नीति के अर्न्तगत मूल्यों का समावेश हो जाता है। स्वतंत्रता व समानता के माध्यम से वैयक्तिक और सामाजिक हितों की रक्षा होती है। राजनीतिक सुदृढ़ता से ही राष्ट्र व राष्ट्रीयता का विकास संभव है। भ्रष्टाचार अनैतिकता राजनीति में पूर्णतया समावेशित हो जाती है। राजनीति का उद्देश्य तो मानव जन की हित साधना में होता है। सैद्धान्तिक दृष्टि से तो राजनीति में विश्व साहित्य व राजनीति में होने वाले उथल–पुथल ने मानव को काफी आहत किया है। समकालीन महिला कथा साहित्य में राजनीतिक जीवन समाज, अर्थ, संस्कृति आदि विचारधाराओं व मूल्यों में पर्याप्त अंतर हो गया है। आदर्श तो लुप्त प्रायः से हो गये है। परिणामस्वरूप अनास्था, अविश्वास, असत्य, हिंसा आदि विरोधी अवमूल्यन प्रतिफलित होकर नारी जीवन में पितृसत्ता द्वारा प्रताड़ित किया जा रहा है। पहले महायुद्ध में हिरोशिमा व नागासाकी की परमाणु बम्ब की घटना से यूरोपिय राजनीतिक अवमूल्यन ही हुआ है। हिटलर का तानाशाही रूप पौलेण्ड का बंटवारा, भारत–पाक विभाजन, आदि ने मानवीय मूल्यों का हनन किया है, जिससे अस्थिरता भय, अनास्था, आतंक भूख, अकाल का जन्म होता है। इसका प्रभाव जनसाधारण पर बनता है, कथा का जन्म भी यही से होता है।

वैज्ञानिक मूल्य

यह तथ्य सर्व विदित है, कि आज का युग विज्ञान का युग है, जिसका समाज के सभी वर्गों पर प्रभाव पड़ रहा है। धर्म, दर्शन, संस्कृति राजनीति शास्त्र सभी को विज्ञान की कसौटी पर कसा जाने लगा। विज्ञान व्यवहार और प्रमाण का दूसरा नाम है। अतः विज्ञान सत्य है, ईश्वर की खोज सत्य की खोज है, विज्ञान आनन्द की खोज है। सामाजिक आवश्यकताओं और परिवर्तनों के अनुरूप वैज्ञानिक उपकरण बनते है, तदानुसार ही मूल्यों में टकराहट होती है। कथा साहित्य में व्यावहारिक उपयोगिता को कसौटी पर तोला जाता है। जिसमें विवेक स्वतः समाहित है, और विवेक में मूल्य समाविष्ट है। वैज्ञानिक बोध ने व्यक्ति जीवन को आमूल परिवर्तित किया है। "जीवन को सम्यक् एवं संयमित ढंग से चलाने के लिए कुछ मापदण्ड रहने चाहिए। उन्ही के आधार पर मूल्यों की बात की जाने लगी और जीवन की आतंरिक

एवं बाह्य आवश्यकताओं पर खुद कसौटियाँ बन गई।"[6] इस प्रकार महिला कथाकारों ने समाज में निर्धारित मापदण्ड़ों के आधार पर जीवनचर्या का पालन किया। पुरुष की अंहकारी प्रवृत्ति ने उसका शारीरिक, मानसिक और आर्थिक रूप से शोषण किया है। समाज में स्त्रीशुचिता की बात करने वाला पुरुष ही उसी शुचिता भंग कर अस्मिता की लड़ाई में परास्त करने को उतारू हो जाता है। आज नारी मुक्ति कि कल्पना कर प्रभूति महिला लेखिकाओं ने स्त्री के दुःख का जिस रूप में पाठक के समक्ष प्रस्तुत किया उसमें सांस्कृतिक, दार्शनिक एवं सामाजिक मूल्यों के रूप मे स्त्रीवादी विचारधारा का समर्थन किया है, तथा पुरुष के समकक्ष बढ़ने की बात की है।

आज कहने को नारी स्वतंत्र है किन्तु 70 वर्षो वाली स्थिति को बढ़–चढ़ कर आगे आने की आवश्यकता तथा समाज में व्याप्त विषमताओं को मिटाकर स्त्री को जीने की नई राह मिले। महादेवी वर्मा, मैत्रेयी पुष्पा कृष्णा अग्निहोत्री, मृदुलागर्ग, मजुंल भगत, नासिरा शर्मा, प्रभा खेतान आदि प्रमुख चर्चित कथाकारों की कथाओं में मूल्यों का विशेष महत्व है। स्त्रीवादी अवधारणा की चर्चा करे तो स्त्री का महत्व नगण्य समझने वाले समाज के ठेकेदारों को यह सोचना चाहिए कि सृष्टि का मूल बिन्दू नारी है, उसके अभाव में समाज की कल्पना असंभव है। मूल्यों की अभिव्यक्ति का मूल आधार मानवजीवन है, आज सभी मानव मूल्यों में नैतिक मूल्यों की टकराहट सुनाई देती है, विशेषकर दाम्पत्य जीवन में। मूल्य मानव और समाज के आदर्श से सम्पृक्त होने के कारण मानव जीवन के मानदण्ड कहलाते है।

नैतिक मूल्यों का विघटन, सामाजिक मूल्य या आर्थिक व राजनीतिक के साथ नैतिक मूल्यों की टकराहट बन जाती है, मर्यादाओं की टक्कर है, आत्मविश्वास, आस्था, आशा और धर्म निरपेक्षता सब बारी–बारी चपेट में आ गए है, क्योंकि सभी बौद्धिक परख अपने–अपने ढंग से की जा रही है, और इस परख को विज्ञान ने जकड़ लिया है। आज के कथा साहित्य मे यौन–वृत्ति की तीव्रता, भोगे हुए जीवन के यथार्थ अनुभव की प्रामाणिकता तथा आर्थिक दबावों और विवशताओं के बीच व्यक्ति इस तरह पिस रहा है कि वैज्ञानिक तकनीकी तथा औद्योगिक प्रगति के जीवन में वस्तुओं की प्राप्ति में उसे कितना संघर्ष करना पड रहा है।

वैदिक कालीन सभ्यता वेद–वेदांगों में नारी को पूज्य माना है। स्वातन्त्रयोत्तर कथा साहित्य में नारी की वस्तुस्थिति शोचनीय होती जा रही है। पुरूष सत्ता के मद से पीड़ित नारी अस्मिता की रक्षा दुर्लभ हो रही है सामाजिक सरोकारों बंधन, मर्यादाओं में बंधकर पुरूष की संकुचित मानसिकता का शिकार होती जा रही है। महिला साहित्यकारों ने स्त्री पुरूष भेद को स्पष्ट रूप से कथा साहित्य में प्रस्तुत किया है जब स्त्री आत्मनिर्भर होना चाहती है किन्तु उसे परिवार पालन से आगे बढ़ने की स्वीकृति पुरूष देना ही नहीं चाहता है, जब स्त्री की चेतना विकसित होती है तो व्यवस्थाएं परम्पराएं चरमराती है। महत्त्वाकांक्षाओं से अस्वीकार होती है। प्रभा खेतान का "अन्या से अन्याय" कुछ इसी प्रकार की कृति है। जिसमें सामाजिकता के साथ नैतिक मूल्यों की चर्चा की है।

निष्कर्ष

अंत में निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि नारी पुरुष सत्ता से मुक्त होने का प्रयास कर रही है। आज नैतिक मूल्यों के अंतर्गत पुरुष व स्त्री दोनों ने मर्यादा त्याग कर पाश्चात्य सभ्यता में तिरोहित होने पर भी समाज, मर्यादा, कल्याण, परोपकार की भावना एवं परिवेशगत चुनौतियों का सामना करते हुए प्रतीत होती है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *डॉ. नगेन्द्र : भारतीय सौन्दर्यशास्त्र की परिभाषा पृ. 160*
2. *लक्ष्मीकांत वर्मा वही पृ. 4*
3. *ए.एच. मोस्लो दुबार्डर्स सॉइकिलोजी ऑफ वींग पृ. 163*
4. *संगम लाल पाण्ड़या : नीतिशास्त्र का सर्वेक्षण पृ 300*
5. *धर्मवीर भारती : मानवमूल्य और साहित्य पृ. 134–135*
6. *आधुनिक काव्य में जीवन मूल्य, डॉ. हुकुम चन्द पृ. 2*

Multi-disciplinary International Journal

Certificate of Paper Publication

Shrinkhala

E-ISSN 2349-980X
P-ISSN 2321-290X

SJIF- 5.689
GIF-0.543
IIJIF-6.038

RNI
UPBIL/2013/55327
Indexed
Google scholar

Shrinkhala Ek Sodhparak Vaicharik Patrika

This is to certify that the paper titled...मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों एवं कहानियों में स्त्री–विमर्शः नैतिक संदर्भ............

Author : अनीता मीना

Designation : सहायक आचार्य

Dept. : हिंदी विभाग

College : रामेश्वरी देवी राजकीय कन्या महाविद्यालय, भरतपुर, राजस्थान

has been published in our Peer Reviewed UGC approved International Journal

Vol. ...6...... Issue ....06..... Month ...February..(Part-1)..... Year .2019.

The mentioned paper is measured upto the required.

Dr Rajeev Misra
(Editor/Secretary)

Dr. Asha Tripathi
(Vice-President)

Social Research Foundation
Non Governmental Organisation
03/SR-02/P-1/9732/Anita Meena

128/170, H-Block, Kidwai Nagar, Kanpur - 208011

(Con) 0512-2600745, 9335332333, 9839074762 (E-mail) socialresearchfoundation@gmail.com (Web) : www.socialresearchfoundation.com

Peer Reviewed
Srinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
Peer Reviewed / Refereed Journal
Indexed with
Google
scholar
Impact Factor
SJIF = 5.689
GIF = 0.543
IIJIF = 6.038
The Research Series
Shrinkhala
शृंखला
A Multi-Disciplinary International Journal
UGC
approved listed

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X
Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

Editorial Board for the Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika, February(Part-1)- 2019

Executive Board

PATRON	EDITOR-IN -CHIEF	MANAGING EDITOR
Dr. M.D. Pathak **Chairman,** Centre for Research & Development of Waste & Marginal Land **Ex. Director General,** U.P. Council of Agriculture Research, U.P. **Ex. Director,** Research and Training, International Rice Research Institute, Manila, Philipines pathakmd1@gmail.com	**Dr. Asha Tripathi** **Senior Vice-President,** Social Research Foundation, Kanpur asha23346@gmail.com	**Dr. Rajeev Mishra** **Secretary,** S R F, Kanpur indra.rajeev@gmail.com shrinkhala2014@gmail.com 128/170 H' Block, Kidwai Nagar, Kanpur

EDITORIAL-ADVISORY BOARD

Political Science and International Relation	Sociology and Social Anthropology	Library & Information Science
Prof. Vandana Asthana Eastern Washington University, Cheney, WA	**Dr. K. Bharathi** Arba Minch University, Arba Minch, Ethiopia, North Africa,	**Dr. U. C. Shukla** Fiji National University, Lautoka, Fiji

Commerce		
Archana Uraon Assistant Professor, Guru Ghasidas Vishwavidyalaya, Bilaspur	**Amarjot kaur** Assistant Professor Bibi Sharan Kaur Khalsa college, Sri Chamkaur Sahib	**Dr. Neene Tandon** Associate Professor, P.P.N. Degree College, Kanpur

Drawing & Painting		
Dr. Ashvini K. Sharma Professor, D.E.L. (Deemed University) Dayalbagh, Agra	**Vijay Kumar** Assistant Professor, Dayalbagh Educational Institute, Dayalbagh, Agra	

Political Science		
Sadhana Yadav Geust lecturer, Dr.C.V.Raman University Kota Bilaspur, Chhattisgarh	**Dr. Neha Niranjan** Assistant Professor, Dr. H. S. Gaur V. V. Sagar M.P.	**Purnima Sahu** Mphil. Scholar, Dr. C. V. Raman University, Kota, Bikapur
Dr. Mahendra Prakash Head, Ramabai Govt. Mahila P. G. College, Akbarpur	**Dr. Lakshmina Bharti** Associate Professor, Govt. Girls P. G. College, Fatehpur	

Defence Studies	Chemistry	
Dr. Sanjay Kumar Associate Professor, Meerut College, Meerut	**Dr. S. M. Nafees** Associate Professor, Govt. College, Kota Rajasthan	**Dr, Manoj Kumar Singh** Associate Professor, Raja Singh College, Siwan

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

Sociology		
Dr. Santosh Kumari Associate Professor, D.A.V. College, Muzaffarnagar	**Dr. S. N. Verma** Assistant Professor, Mahamaya Government Degree College, Mahona, Lucknow	

Psychology	Physics	Mathematics
Dr. Manjoo Mishra Associate Professor, H. R. P. G. College, Khalilabad Santkabirnagar	**Dr. Irshad Ahmad Bhat** Professor, Barmulla College, Kashmir	**Dr. Praveen Kumar** Associate Professor, J. V. Jain College, Saharanpur

Hindi		
Dr. Rajesh Sharma Assistant Professor, Government College, Uniyara, Tonk	**Dr. Seetaram Lahari** Assistant Professor, Raj. R. D. Girls College, Bharatpur	**Dr. V. B. Tripathi** Assistant Professor, M. M. P. G. College, Modinagar
Dr. Shashi Vallab Sharma Assistant Professor, Ambah College, Ambah	**Alka rani Gupta** Assistant Professor, S.S Jain Subodh Girls College, Sanganer	

Geography		
Dr. Vijay Kumar Verma Assistant Professor, BSR Govt. Arts College, Alwar, Rajasthan	**Dr. Ram Niwas Pandey** Professor, T.M. Bhagalpur University, Bhagalpur	**Antar Singh** Rtd. Assistant Professor, Rajasthan University, Jaipur
Dr. Dharmendra Kumar Khatic Research Scholar, Rajasthan University, Jaipur Rajasthan		

Education		
Dr. G. M. Rather Assistant Professor university of Kashmir Kashmir	**Dr. Dinesh Pratap Singh** Assistant Professor, IMR College, Duhai Ghaziabad, UP	**Dr. D. P. Tomar** Director, B. M. College of Education, Jagdishpur, Sonipat
Dr. Farzana Irfan Lecturer, Vidya Bhawan G. S. Teachers College, Udaipur, Rajasthan		

Hisrory		
Mrs. Anu Munjal Lecturer, V. M. P. G. Girls College,	**Dr. Surendra D.Soni** Lecturer, Rajkiya Lohia Mahavidyalaya, Churu	

Economics		
Dr. Neena Batra Associate Professor, R.G. P. G. College, Meerut	**Dr. Akhilesh Kumar Dixit** Associate Professor, Armapur P. G. College,	**Dr. Akhilesh Mishra** Associate Professor, S. D. P. G. College , Ghaziabad

Law		
Dr. Sangita Upadhyay Associate Professor, Meerut College, Meerut	**Dr. Anil Kumar Thakur** Assistant Professor, Punjab University Chandigarh	

P: ISSN NO.: 2321-290X
E: ISSN NO.: 2349-980X
RNI : UPBIL/2013/55327
VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

Contents

S. No.	Particulars	Subject	Page Number
1	प्रसाद के नाटकों में भाषा का औदात्य साधना त्रिपाठी, बछरावां, रायबरेली	हिन्दी विभाग	01-03
2	धर्म और राजनीति में अंत संबंध भानु प्रकाश शर्मा, उनियारा, टोंक, राजस्थान	हिंदी विभाग	04-08
3	मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों एवं कहानियों में स्त्री–विमर्शः नैतिक संदर्भ अनीता मीना, भरतपुर, राजस्थान	हिन्दी विभाग	09-14
4	जन संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी में हिन्दी का अवदान मंझन कृत जय प्रकाश यादव, मोदीनगर, गाजियाबाद, उ0 प्र0	हिन्दी विभाग	15-17
5	नैतिकताः निर्मिति और स्वरूपः रस की दृष्टि से कविता त्यागी, मेरठ	हिन्दी विभाग	18-20
6	राजतंरगिणी परम्परा में महाकाव्यत्व ज्योति जोशी, सांगानेर, जयपुर	संस्कृत विभाग	21-23
7	ग्लोबल वार्मिंग और बढता पर्यावरण प्रदूषण महेश चन्द मीना, अलवर	भूगोल विभाग	24-28
8	संथाल परगना में धार्मिक पर्यटन – सम्भावनायें एवं समस्यायें पूजा कुमारी एंव आर० एन० पाण्डेय, भागलपुर	भूगोल विभाग	29-33
9	भारत में ठोस अपशिष्ट प्रदूषण : नगर एवं ग्रामीण परिदृश्य सुरभि सिंह पटेल, प्रयागराज	भूगोल विभाग	34-38
10	राजस्थान के सवाई माधोपुर जिले में जल संसाधन का उपयोग व प्रबन्धन का विश्लेषण अनिल कुमार धाकड़, जयपुर, राजस्थान	भूगोल विभाग	39-46
11	निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा :– एक समालोचनात्मक अध्ययन दिलीप कुमार झा, बहादुरगढ़, हरियाणा	शिक्षाशास्त्र विभाग	47-52
12	समान शिक्षा का अधूरा सपना संजय कुमार, मेरठ	शिक्षाशास्त्र विभाग	53-55
13	कार्य–कारण सिद्धान्त' के सन्दर्भ में भारतीय व पाश्चात्य दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन शान्तनु गौड, जगदीशपुर, सोनीपत, हरियाणा	शिक्षा शास्त्र विभाग	56-59
14	रूरल इन्स्टीट्यूट – संकल्पना शैक्षिक भूमिका सोनल आर्य, उदयपुर	शिक्षा शास्त्र विभाग	60-64
15	सरस्वती दृषद्वती नदी घाटी की भौगोलिक संरचना एवं पुरातत्वीय महत्व नीलम गौर, हनुमानगढ, राजस्थान	इतिहास विभाग	65-67
16	कश्मीर–समस्या के सन्दर्भ में भारत–पाकिस्तान के मध्य शान्तिपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने के प्रयासों की प्रमुख कड़ी के रूप में 'शिमला–समझौता' – एक विमर्श सीमा चौधरी, सहारनपुर	इतिहास विभाग	68-72

G

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X
Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

17	अनुदान –लेखन विधा में इतिहास लेखीय तत्व प्रताप विजय कुमार, खलीलाबाद, संत कबीर नगर	इतिहास विभाग	73-74
18	सांस्कृतिक पर्यटन के सन्दर्भ में "देवयानी तीर्थ" : एक ऐतिहासिक विश्लेषण महिपाल यादव, जयपुर	भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विभाग	75-77
19	बागड़ क्षेत्र के भित्ति चित्र : एक अध्ययन शिवकेश, जयपुर	भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विभाग	78-80
20	कृषि व्यवसाय से लोग के प्रवजन प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन अमित मलिक, मुजफ्फरनगर (उ0प्र0)	समाजशास्त्र विभाग	81-82
21	बौद्ध धर्म का समाजशास्त्र इन्दिरा श्रीवास्तव, इलाहाबाद	समाजशास्त्र विभाग	83-86
22	सूचना का अधिकार अधिनियम की प्रभावशीलता का अध्ययन (बिलासपुर नगर निगम के संदर्भ में) पूर्णिमा साहू एंव संध्या जायसवाल, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.)	राजनीति विज्ञान विभाग	87-89
23	भारतीय संघ की गतिशीलता : चुनौतियाँ एवं भविष्य दिग्विजय नाथ पाण्डेय,खलीलाबाद, संत कबीर नगर	राजनीति विज्ञान विभाग	90-95
24	विश्व में बढ़ती साम्प्रदायिकता के निदान का औजार सद्भावना (गाँधीवाद के संदर्भ में) रणवीर सिंह, सागर म.प्र.	राजनीति एवं लोकप्रशासन विभाग	96-99
25	महिला एवं बाल विकास विभाग, जिला–जशपुर (छ0ग0) साधना यादव एंव संध्या जयसवाल, कोटा बिलासपुर (छ.ग.)	राजनीति विज्ञान विभाग	100-103
26	महिला सशक्तीकरण हेतु भारतीय नीतिगत प्रावधानः एक मूल्यांकन उषा कुमारी, आजमगढ़, उ.प्र.	राजनीति विज्ञान विभाग	104-108
27	जम्मू के डोगरा कालीन भित्ति–चित्रों में नायिका चित्रण अपर्णा श्रीवास्तव, दयालबाग, आगरा	ड्राइंग एण्ड पेंटिंग	109-112
28	नवाब युगीन अवध में सूती वस्त्रा कुटीर उद्योग एवं हस्तशिल्प कला संगीता गुप्ता, मुरादाबाद	चित्रकला विभाग	113-119
29	प्राचीन एवं नवीन संगीत शिक्षा प्रणाली : एक मूल्यांकन प्रतिमा गुप्ता, फतेहपुर	संगीत गायन	120-122
30	मध्यप्रदेश में सूक्ष्म एवं लघु उद्योगों का सम्मिलित विकास महेन्द्र मेहता, बिलासपुर, छ.ग	वाणिज्य विभाग	123-127
31	Trade between India and West Asia during Reform Period Ajit Singh, Ghaziabad (U.P.)	Economics	128-133
32	Relevance of Small Scale Industries in the Economy of Uttar Pradesh Rahul Kumar Misra, Raibareli, UP	Economics	134-137
33	Study Onperformance of Indian Small Scale Industry Pitamber Singh Chauhan,Sahibabad	Economics	138-140
34	Indo Maldivian Conundrum and Suggested Road Map for Bilateral Growth Anurag Jaiswal & Sudhakar Tyagi, Meerut (U.P.)	Defence Studies	141-148
35	China Pakistan Economic Corridor (CPEC) and its Impact on India	Political Science and Public Administration	149-151

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

	Wasim Feroz Bhat & Promod Awasthi,Ujjain, M.P.		
36	**Environmental Pollution and Effect on Human, Animal and Plants** Raghu Raj Parihar & Dhanraj, Kota, Rajasthan	Chemistry -	**152-155**
37	**The Complexes of Ni(II) and Cu (II) with N- Phenyl - Glycineamide-p- Arsonic Acid** Dazy Kumari, Gopalganj, Bihar	Chemistry	**156-158**
38	**If investments can be attracted Through Concessions and Rebates (With Special Reference to Uttarakhand)** Chitranjan Singh, Raza Nagar, Swar, Rampur	Commerce	**159-162**
39	**Corporate Ethics and Social Responsibility in Current Scenario** Poonam Vij, Kanpur	Commerce	**163-166**
40	**Calculation of the Replacement Time for the Fuzzy Replacemen Problem using Fuzzy Ranking Method** Praveen Kumar, Vinay Gaur & Vinod Kumar, Saharanpur	Mathematics	**167-172**
41	**Electoral Reforms in India : Need of The Hour** Raj Kumar Upadhyay, Meerut	Law	**173-178**
42	**Cosmopolitan Indian Social Set Up and Definition of Minority under Indian Constitution: A Study of Judicial Approach** Rajwinder Kaur, Chandigarh	Law	**179-183**

I

P: ISSN NO.: 2321-290X
E: ISSN NO.: 2349-980X
RNI : UPBIL/2013/55327
VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों एवं कहानियों में स्त्री–विमर्श: नैतिक संदर्भ

अनीता मीना
सहायक आचार्य
हिन्दी विभाग,
रामेश्वरी देवी राजकीय कन्या महाविद्यालय,
भरतपुर, राजस्थान

सारांश

संस्कृत शब्द का 'नीति' प्रापणार्थक धातु नी (नीञ्) तथा भावार्थ प्रत्यय ति क्तिन् से निष्पन्न होता है। अतः 'पीति' तथा 'अधीति' के समान नीति का अर्थ नयन व प्रापण ही है।[1] किन्तु वर्तमान संदर्भ में प्रायः उचित व्यवहार के रूप में अर्थ प्रयुक्त होता है। संहिताओं, ब्राह्मणों, आरण्यकों तथा उपनिषदों में नीति शब्द स्वतंत्र रूप में नहीं अपितु समासांत में मिलता है। "ऋपुनीति नो वरूणो मित्रो नयतु विद्वान्"

श्रीराम के गुणों का उल्लेख 'रामायण' में महर्षि वाल्मीकि ने इस प्रकार किया है, "बुद्धिमान् नीतिर्मान् वाग्मी श्रीमान् निबर्हणः।" राम बुद्धिमान, नीति कुशल, सुवक्ता तथ शत्रुनाशक है। वाल्मीकि ने दशरथ के आमात्यों को 'नीतिशास्त्र विशेषज्ञाः' अर्थात नीतिशास्त्र के विशेष ज्ञाता कहा है। रामराज्याभिषेक के समय मंथरा केकैयी को कहती है। राजा के सभी सुत सिंहासन नहीं हुआ करते अर्थात् राजा नहीं होते हैं। 'स्थाप्यमानेषु सर्वेषु सुमहाननयो भवेत्।

वैदिक काव्यों में अभिजात संस्कृत साहित्य में नीति या नय् शब्द का प्रयोग कई स्थानों पर दृष्टिगोचर होता है। संस्कृत कवि–भास, कालिदास, भवभूति, भारवि, माघ, श्री हर्ष तथा अन्य कवियों ने प्रयोग किया है। कौटिल्य का नीति सिद्धांत, तुलसीदास के नीति परक दोहे, कबीर के नीतिवचन, बिहारी के नीति, सदाचार, व्यवहार परक दोहे, वृंद की सतसई परक दोहों में नीति की चर्चा की गई है। इन सब में नीति को राजनीति से जोड़ने का प्रयास कर समाज को प्रेरणा दी गई।

मुख्य शब्द : स्त्री विमर्श, नैतिक संदर्भ, नीतिवचन,।

प्रस्तावना

नीतिशास्त्र के स्वरूप समझने से पूर्व व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन तथा उससे जुड़े सवालों को गंभीरता से समझना अनिवार्य है। कुछ विशेष परिस्थितियों में कोई कर्म करना अथवा नहीं करना, उचित या अनुचित, शुभ–अशुभ, कर्तव्य–अकर्तव्य आदि शब्द वाक्यों में प्रयोग करते हैं तो इन वाक्यों द्वारा आप क्या कहना चाहते हैं? आप क्या अपने इस प्रकार के निर्णयों को सत्य प्रमाणित करने के लिए तर्क संगत कारण प्रस्तुत करते हैं, यदि हाँ तो वह कौन सा कारण है और उन कारणों को उचित अथवा तर्कसंगत क्यों माना जाना चाहिए। क्या मनुष्य को कुछ कर्म करने या न करने की स्वतंत्रता है? क्या उसे कुछ विशेष कर्मों के लिए उत्तरदायी माना जाता है या आवश्यक है? मानवता के नाते हमारे कर्म क्या हैं? उनका निर्धारण किस प्रकार तथा आधार क्या है? क्या समस्त कर्मों का उद्देश्य केवल सुख और हित होना चाहिए। जब व्यक्ति और समाज के हितों का संघर्ष होता है, उन्हें किसी विधि से हल करना चाहिए। क्या मानव जीवन का कोई परमलक्ष्य अथवा अंतिम साध्य है?

अध्ययन का उद्देश्य

'पंचतंत्र' और हितोपदेश को इस ग्रन्थों में भी 'नीतिशास्त्र' कहा है। यद्यपि इनकी रचना विवेकहीन और उन्मार्गगामी नृत कुमारों के शिक्षार्थ की गई थी तो भी प्रत्येक विद्वान जानता है कि ये सामान्य नीति से प्रपूर्ण है। यही कारण है कि राजाओं ने इन्हें जनता से भी प्रचारित किया। इससे इतना तो स्पष्ट है कि नीतिशास्त्रों में सामान्य व्यवहार राजनीति से मिश्रित रहता था। सोमदेव के सूत्रात्मक ग्रन्थ 'नीतिवाक्यमृत' के विषयम में भी ज्ञात होता है कि उनकी रचना राजाओं के सुख के लिए हुई थी, परन्तु यह निश्चित रूप से बताना असंभव है कि उनमें भी सामान्य नीति का मिश्रण था या नहीं।

P: ISSN NO.: 2321-290X
RNI : UPBIL/2013/55327
VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X
Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

विषय विस्तार

नीति शास्त्र के इतिहास पर ध्यान दें तो सामाजिक जीवन के साथ–साथ किसी न किसी रूप में भी इसका भी जन्म हुआ है। समस्याओ के समाधान में भी सहयोग लिया वहाँ नियमो की आवश्यकता पड़ी जो इच्छाओं, रूचियों व आकांशाओ उददेश्यों तथा स्वार्थों में होने वाले संघर्ष को कम या समाप्त कर सकें। वस्तुतः सामाजिक परम्पराओं, रूढ़ियों अथवा रीति रिवाजों से ही उस शास्त्र या विज्ञान का विकास हुआ, जिसे आज हम 'नीतिशास्त्र' के नाम से जानते हैं। यही कारण है कि अधिकांश व्यक्ति सामाजिक परम्पराओं तथा नैतिक नियमों में स्पष्ट अंतर नहीं कर पाते। इनका 'नीतिशास्त्र' के साथ अटूट संबंध है, किन्तु आज इसका अर्थ भिन्नरूप में प्रचलित है। अन्य विज्ञानों की भांति नीति को विज्ञान माना है। डॉ. वेदप्रकाश की परिभाषा इस प्रकार है, ''नीतिशास्त्र वह मानवीय आदर्शमूलक विज्ञान है जो सामाजिक जीवन व्यतीत करने वाले सामान्य मनुष्यों के आचरण या ऐच्छिक कर्मों पर निष्पक्ष एवं व्यवस्थित रूप से विचार करके उनके संबंध में उचित अनुचित अथवा शुभ अशुभ का निर्णय देने के लिए मापदण्ड प्रस्तुत करता है और निर्णय के आधार के लिए कुछ मूल सिद्धांतों अथवा मानकों या आदर्शों की स्थापना करता है।

नीतिशास्त्र को कुछ विद्वान विज्ञान मानते हैं तथा कुछ विद्वान् आदर्शमूलक विज्ञान मानते हैं। यह केवल मनुष्यों के आचरण पर विचार करता है। वह समाज में रहने वाले सामान्य मनुष्यों के आचरण के संबंध में निर्णय देता है। यह कुछ मूलभूत सिद्धांतों अथवा आधारभूत आदर्शों की स्थापना करता है। विज्ञान की मूलभूत विशेषताओं के कारण इसे विद्वानों ने विज्ञान माना है। विषयवस्तु, घटना यथासंभव पूर्ण क्रमबद्धता, निष्पक्षता, वस्तुनिष्ठता तथा सत्य की खोज करना ही विज्ञान की प्रमुख विशेषता है।

हिन्दी साहित्य में नीति का प्रयोग वैदिककाल से आधुनिक युग में भी प्रयुक्त हो रहा है। कबीर, सूर, वृन्द, तुलसी आदि प्रसिद्ध कवियों की वाणी अनके अंतःकरण से निकली जिसने समाज को प्रेरणा दी इसी कारण आज तक उनके दोहे, दृष्टांतों एवं वाणियों को उन्मुक्त भाव से पढ़ा और गाया जाता है। इनकी नीतिगत रचनाओं में सत्य का महत्त्व है, तुलसी दास ने नीति के संदर्भ में कहा है, सुनमुनीसु कह वचन सप्रीति। कब न राम तुम राखहु प्रीति।[2] सदाचार का उदारण देखिए –

''नीति निपुन जिन्ह कई जग लीका।
घर तुम्हार तिन्ह कर मन नीका ।''

सूरदास ने अपनी बंद आँखों से नीति की बातें कही है वे आज भी लोक में प्रचलित है। जिन्हें युगों–युगों तक गाया जायेगा।

''चरनसरोवर माहिं मीन मन, रहत एक रस रीति।
तुम निरगुन बारू पर डारत सूर कौन यह नीति।''

रीति सिद्ध कवि बिहारी के काव्य में भक्ति और नीति का विशेष महत्त्व देखा गया है–

''मीत न नीति गलीतु ह्वै जो धरिये धनु जोरि।
खाए खरचै जो जुरै तो जौरिये करोरि।।''

कोशों में नीति अर्थों को अलग अलग रूप में व्यक्त किया है शुक ने राजविद्या (राजनीति) शास्त्र, प्रापण, नय, साम, दाम एवं अर्थ प्रापक व्यवहार, औचित्य चतुराई भरी चाल, भेंट, संबंध सहारा आदि शब्दों के रूप में किया है। वैयक्तिक पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीति, इतर प्राणी संबंधी और मिश्रित संस्कृत आचार्यों के साथ नियमों में आबद्ध होकर बिहारी ने नीति परक दोहे लिखे–

''नहिं पराग नहिं मधुर–मधु नहिं बिकास इहि काल।
अली कली ही सौं बंध्यों आगे कौन हवाल।।''

मैथिली शरणगुप्त व पंत ने भी नीतिगत काव्य–सृजन किया है

''पाकर विशाल कचभार ऐड़ियाँ धसाती।
तब अरूण ऐड़ियों से सुहास सा डाल।।''

आगे– ''

आज बचपन का कोमल गात
जरा का पीला पात।
चार दिन सुखद चांदनी रात
और फिर अंधकार अज्ञात।।''

मैत्रेयी पुष्पा ने 'नीतिगत' व्यवहार को अपने साहित्य में प्रस्तुत कर मार्मिक अभिव्यक्ति प्रदान की है, 'खुली खिड़कियाँ' इसका ज्वलंत उदाहरण है जो स्त्री सशक्तिकरण हेतु किये प्रयासों को व्यक्त किया है। परिवारों में व्याप्त विषमता, स्त्री पुरूष संबंधों असंतोष, नीति, व्यवहार, सुख, दुख आदि का खुलासा किया है। गृहस्थी जीवन में अर्थ का महत्त्व है, "विवाह के घेरे और गृहस्थी के बंद मकानों में उसका बसर है भले आजीवन व्यर्थबोध से छटपटाती रहे।[3] मैत्रेयी विद्रोही साहित्यकार हैं अतः स्त्री होने के कारण माँ, बहिन व पत्नी तीनों रूपों को समझकर विद्रोह स्वरूप अपनाती है। नीति के आधार पर पितृसत्ता की चर्चा करती है 'फाइटर की डायरी' में मनोव्यथा को व्यक्त किया है।

मैत्रेयी का उपन्यास/कथा साहित्य में रूढ़ी व्यवस्था की दासता में पले हुए इन पुरूषों को अपने दासत्व का एहसास दिलाने एवं उनमें व्याप्त अन्याय–अत्याचारिता पर मानवोचित अपराधबोध जगाने की दिशा में महत्त्वपूर्ण पहल करती है। 'बेतवा बहती रही', 'चाक', 'झूलानट', 'इदनमम्' आदि में स्पष्ट दर्शित होती है। 'चाक' में न्याय अन्याय की लड़ाई, 'विजन' का डॉक्टर आर.पी. शरण। इनके उपन्यासों में संस्कारजन्य पुरातनपंथी और समय प्रदत्त आधुनिकता के बीच झूलते पुरूष जीवन की विडम्बना का यथार्थ अंकन हुआ है। 'गुड़िया भीतर गुड़िया' में विशेषकर स्त्री जीवन के अनेक पक्षों, सम्पर्कों और भावनात्मक संबंधों का खुलकर चित्रण किया है। वह मानती है कि शास्त्रीय भाषा में 'तिरिया चरित्र' कहा जाता है वह वस्तुतः पुरूषवादी हत्यारी दुनिया में स्त्री के जीवित रहने की राजनीति का दूसरा नाम है।

पारम्परिक नैतिक मूल्य

मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य में मूल्यों का अपना महत्त्व है। मूल्य शब्द संस्कृत मूल्यम् शब्द का हिन्दी रूपांतरण है। जो मूलतः अर्थशास्त्र या यों कहें कि राजनीति अर्थव्यवस्था का शब्द है, किन्तु आज इसका विस्तृत क्षेत्र है। अर्थ शास्त्र से इसका प्रवेश दर्शनशास्त्र में हुआ है फिर मनोविज्ञान में तथा मनोविज्ञान से साहित्य

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

में। 'मूल्य की सामान्य परिभाषा है मूल्य किसी वस्तु का वह धर्म (गुण) है, जिसमें कोई वस्तु हमें रुचिकर प्रतीत होती है या पसंद आती है तो हमारे लिए मूल्यवान है ऐसी रुचि या पसंदगी का संबंध प्रथमतः अनुभूति से होता है और अंततः इच्छा तथा प्रवृति से तात्पर्य की मूल्य और अनुभूति यथार्थ है। मानक हिन्दी कोशगत अर्थ है, मूल्य पु (सं मूल+यत) मुद्रा के रूप में उतना धन जो चीज क्रय करने के लिए उसके बदले में किसी को देना पड़ता है। दूसरा वह दर या जिस भाव पर चीज बिकती है तीसरा वह तत्व गुण जो आधार पर किसी भाव का महत्त्व या मान होता है। चतुर्थ वह जो कुछ किसी कारणवशात् झेलना पड़ता है, भुगतान या बलिदान करना पड़ता है जैसे अत्यधिक परिश्रम का मूल्य स्वास्थ्य हानि के रूप में चुकाना पड़ता है।[4]

अमरकोश के अनुसार, "वाणिज्यंतु वाणिज्यास्यात् मूल्यं वस्नो व्यक्रयः। जिस वस्तु को बेचा जाता है उससे प्राप्त धन को मूल्य और अविक्रय कहते हैं।" हिन्दी में मूल्य शब्द अंग्रेजी के (Value) के पर्यायवाची शब्द के रूप में प्रयुक्त होने लगा। लैटिन भाषा के (Volere) शब्द से (Value) शब्द का निर्माण हुआ। टवसमतम का अर्थ है सुन्दर या उत्तम जो उत्तम एवं अच्छा है, (Value) वही है।[5] मानविकी पारिभाषित कोश में यह की प्रत्येक मूल्य जीवन के किसी विशेष क्षेत्र या पहलू से संबंधित है। किसी कार्य तथ्य या सत्ता के विषय में हम यह कह सकते हैं कि उसका नैतिक मूल्य क्या है, लेकिन केवल यह कहना कि वस्तु में मूल्य है कोई अर्थ व्यक्त नहीं करता। इस संदर्भ में हुकमचंद राजपाल का कथन सर्वथा नवीन और उचित है।

जीवन को सम्यक एवं संयमित ढंग से चलाने के लिए विचारकों ने ऐसा अनुभव किया कि जीवन के लिए कुछ मापदण्ड होने चाहिए। उन्हीं के आधार पर जीवन मूल्यों की बात की जाने लगी और जीवन की आन्तरिक एवं बाह्य आवश्यकताओं के आधार पर कुछ कसौटियाँ बनाई गई हैं। ये कसौटियाँ ही मूल्य है। हेम चन्द्र पानेरी भी जीवन की इन कसौटियों को स्वीकार करते हैं तथा उन्हें धारणा मानते हैं। चिन्तन से विचार बनते हैं विचारों से धारणा का जन्म होता है तथा धारणा से मूल्यों का निर्माण। किसी एक युग के कुछ मूल्य दूसरे युग में भी उतने ही मूल्यवान रह सकते हैं या फिर एक युग के मूल्य दूसरे किसी युग में बिल्कुल मूल्यहीन समझे जाते हैं। मुल्यों की युगानुरूपता नेमीचन्द्र जैन ने भी स्वीकार की है। प्रत्येक नवीन युग अपने साहित्य, साहित्य ही नहीं जीवन की समस्त सृजनात्मक गतिविधि के नये मानदण्ड लाता है। अज्ञेय व मुक्तिबोध सर्वेश्वर दयाल सक्सेना जैसे प्रसिद्ध साहित्यकारों ने मूल्य शब्द की भावबोध प्रतिपुष्टि की है। रोहित मेहता ने मानवीय चिंतन धारा से जोड़ा। वे कहते हैं, "मूल्य न तो किसी मशीन द्वारा उत्पादित वस्तु है और नहीं यह किसी सरकार द्वारा निर्मित कानून है। मूल्य तो जीवन के प्रति एक गुण है, एक अंतर्दृष्टि है, एक अवधारक, एक दृष्टिकोण है।

डॉ. नगेन्द्र ने दो प्रकार के जीवन मूल्यों की बात कही है, "आंतरिक मूल्य और सहायक मूल्य। आंतरिक मूल्य के अन्तर्गत व्यक्तिगत मान मर्यादा, यश प्राप्ति की आकांक्षा आदि तत्वों की गणना होती है। सहायक मूल्य आंतरिक मूल्यों की परितुष्टि में सहायता देते हैं। डॉ. नगेन्द्र ने आनन्दवादी मूल्य। 1. आध्यात्मिको, 2. सौंदर्य मूलक, 3. बौद्धिक, 4. रागात्मक, 5. शारीरिक, 6. सांस्कृतिक, 7. नैतिक, 8. आर्थिक, 9. सामाजिक मूल्य। यहाँ मूल्यों के वर्गीकरण करने से पूर्व मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास/कहानी साहित्य का आलोचनात्मक विश्लेषण करना अनिवार्य है, क्योंकि साहित्यकार की साहित्यिक प्रतिभा और महत्ता रचना में प्रतिपादित मूल्यों पर ही निर्भर करती है। मैत्रेयी ने परिवेश में व्याप्त विसंगतियों एवं उनसे जुड़े मूल्यों का व्यवहारों पर अनुभव किया है आज के युग में बौद्धिकता के कारण वैज्ञानिकता का समाहार हो गया है बनी बनाई रूढ़ियाँ, अनैतिकता, जातिगत भेद, ग्रामीण परिवेश में व्याप्त असंगतियों पारिवारिक अनैतिक मेलजोल संबंधों व रिश्तों की टूटन भ्रष्टाचार अमानवीयता एवं व्यवस्था में व्याप्त सामंती परिवेश का लेखिका ने विरोध जताया है।

'कस्तुरी कुण्डल बसै' में पूरी तरह मानव मूल्य बोध व नैतिक मूल्यों का ह्रास हुआ है। 'चाक', 'अलमाकबूतरी', 'शीलो व सारंग' जैसे स्त्रियां नैतिक मूल्यों के ह्रास का ही जीवंत प्रमाण है। 'अगनपाखी' उपन्यास के मूल्य नैतिक एंव क्रांतिकारी है जिसमें धार्मिक मूल्यों की टकराहट सुनाई देती है। "कही ईसुरी फाग" उपन्यास में जीवन मूल्यों को लोक जीवन से जुड़े व्यवहारों, पर्वों तथा विसंगतियों का उल्टा गढ़ा है। स्त्री जीवन से जुड़े मानदण्डों को बयां करते 'खुली खिड़कियाँ', 'सुनो मालिक सुनो' फाइटर की डायरी में स्त्री स्वाधीनता का दस्तावेज है और अब छोटा–सा किस्सा किताब का में जीवन से जुड़े मूल्यों की प्रतिपुष्टि संकलित है।

जनजीवन की असंख्य अंतवर्ती धाराओं का जितना ज्ञान मैत्रेयी को है, उतना बहुत कम लेखकों को होता है। 'त्रिया हठ' सहजतापूर्वक उन समस्त मूल्यों व उससे जुड़े प्रश्नों या संदर्भों को प्रकट करता है। जैसे पंचायती चुनावों में महिला आरक्षण, स्त्री शिक्षा, स्त्रियों को जमीन में हिस्सा, बेरोजगारी, डाकू समस्या, ग्रामीण व्यवस्था पर पुरूषों की प्रेत छाया। डॉ. अशोक के अनुसार मैत्रेयी स्त्री अस्मिता का जो युद्ध लड़ रही है, उसकी नैतिकता सर्वाधिक मूल्यवान है। 'विजन' में पितृसत्तात्मकता स्त्री पुरूष के नैतिक मूल्यों का उदाहरण है विवाह,, "पुरूष को ऊँचाइयाँ देकर मार डालती है और स्त्री को अज्ञात निचाइयाँ।" मूल्यों का संक्रमण देखिए जिसमें स्त्री की कोख" बहू का मतलब है वंश बढ़ाने वाली माता। जो मानवीय मूल्यों पर स्त्रियोचित गुणों का लेवल चस्पा कर स्त्री से फ्लोरेंस नाइटिंगेल और मदर टेरेसा बनने की मांग करती है और पुरुष को अपने परिवार से नभि भी टूटने नहीं देती। यदि नेहा को अजय अपना पति न लगाकर "खालिस अपने पापा का बेटा शरण आई सेंटर का उत्तराधिकारी मानते हैं। मकरंद, मंदा जैसे पात्र है जिन्होनें सामाजिक, आर्थिक मूल्यों के साथ नैतिक मूल्यों का भी साथ नहीं छोड़ा है। मंदा कुँआरी है वह देह भूख की प्रतीति को स्वीकार करती है तथा मकरंद के प्रणय पर्यन्त अपनी नैतिकताओं की सीमाओं का उल्लंघन नहीं करती हैं अपने इस आचरण के बावजूद प्रेम व

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

कुसुमा भाभी की दैहिक भूख का विरोध नहीं करती है। कुसुमा भाभी का व्यक्तित्त्व परिवार व समाज की परिभाषा में सामान्य व गौण होते हुए भी साहित्यिक मूल्यवत्ता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। जयपुर की शिवानी व भंवरी देवी प्रकरण या भंवरी हत्या प्रकरण, दिल्ली की मोनिका, गोखले छात्रावास जयपुर में घटित घटनाएं समकालीन परिवेश में व्याप्त नैतिक मूल्यों की धज्जियाँ उड़ाते दिखाई दे रहे हैं। मैत्रेयी ने भी समाज में व्याप्त अनैतिक कृत्यों की शिकार मन्दा व सुगना (पात्र) का बलात्कार, न जाने कितनी स्त्रियों की दशा को तथा उनसे जुड़े नैतिक मूल्यों को उजागर करती हैं ये गाथाएँ।

स्त्री जीवन में हर स्तर पर बाधाओं का अम्बार मिलता है। लेखिका का दृष्टिकोण स्त्री को अपने अस्तित्व की पहचान करवाना ही प्रमुख ध्येय रहा है। ग्रामीण जीवन में व्याप्त विसंगतियों व शहरी जीवन में होने वाली विषमताओं, प्रेमविवाह, बहुविवाह, विधवा विवाह, परपुरूष संबंध आदि विषयों की प्रतिपुष्टि की है प्राकृतिक भिन्नता होने के बाद भी उसे वैचारिक स्वतंत्रता नहीं है, अतः संतुलित जीवन दृष्टि ही स्थायी होती है। अतः प्रबुद्ध समाज उन्हीं मूल्यों को स्वीकार करेगा जो सामाजिक संतुलन को प्रश्रय देंगे।

नारी जीवन व उससे जुड़े नैतिक मूल्यों को मैत्रेयी ने अम्मा, कुसुमा भाभी का युग्म तथा बहू व अम्मा का युग्म। विवाहेत्तर प्रेम संबंधों की वैधता जैसे ज्वलंत प्रश्नों को उठाकर अम्मा (प्रेमा) व कुसुमा दोनों की भिन्न दृष्टियों का परिचय दिया है। पति व ससुर की मांगों की पूर्ति में असमर्थ। पति, पिता की सहमति से दूसरा विवाह कर लेता है। यहाँ सौतन से आहत कुसुमा के नैतिक मूल्यों का ह्रास स्पष्ट है। यौन सम्बन्धों व उनसे जुड़े नैतिक जीवन मूल्यों की चर्चा असफलत पति जो कि सुहाग रात को ही रति सुख में असमर्थ है और उसकी यौन पिपासा को जाग्रत कर उसे राह में छोड़ता है। मैत्रेयी रूढ़िवादी विचारों की विरोध कर वास्तविक मूल्यों की चर्चा करती है। कस्तूरी के माध्यम से चारदीवारी से बाहर निकलने की जरूरत करती है, "ससुर उनके विरोधी नहीं सहयोगी हुए .... बहु विधवा थी तो ससुर बेटे की मौत से परेशान दोनों एक दुःख के खूंटे बन्धे हो जैसे। एक दूसरे से झगड़ते कैसे, एक दूसरे के दुःख को समझ रहे थे।

यहाँ लेखिका ने कस्तूरी को आधुनिक विचारों वाली जांबाज स्त्री के रूप में प्रस्तुत किया है। अकेलेपन में स्त्री होने का नुकसान स्वयं लेखिका ने भी भोगा है। वचपन में हवस का शिकार हुई। संरक्षिकाऐं भी संरक्षण न दे सकीं। प्राचार्य, मा का बी.डी.ओ. या अकाउण्टेंट, बस का ड्राइवर प्रत्येक ने नौचा दबोचा किन्तु उनसे बच निकली। यहाँ नैतिक जीवन मूल्यों का पतन स्वयं के साथ घटित घटनाओं की प्रतिपुष्टि है।

औरत की दुश्मन उसकी देह नहीं, बल्कि मर्द का वह अंग है जो औरत पर सोते जागते हमले की तैयारी में रहता है। "एदल्ला मित्र, साईकिल पर आगे बिठाकर फ्राक में होकर जांघो पर हाथ फेरता है। जदीश, संयोजिता का बेटा, अलीगढ़ में खुर्राट हरकत आगे चली, मैत्रेयी चिल्ला पड़ी पिटी पर भाग निकली। हैड क्लर्क सारस्वत से देर रात तक जूझती रही और सारस्वत गालियाँ देता हुआ कमरे से बाहर हो गया। प्राचार्य अतिरिक्त कक्षा का प्रलोभन देकर बाँहों के घेरे में कस रहे हैं, लड़की को चुम्बन और मनुहार। सिट–पिटा गई लड़की, पकड़ा–धकड़ी, जद्दोजहद मारपीट, नौंचा–खौरी, मुँह बकोट लिया, दांत गड़ा दिये।

मैत्रेयी ने मूल्यों का ह्रास, नैतिक आदर्शों के पतन का खुला प्रदर्शन किया है। लेखिका के रोमांचक अनुभवों की गाथा इंद्रियाँ कसते कसते कोमल किशोरी कहती है माताजी मेरी शादी कर दो। मन मारने से इच्छाऐं नहीं मरती, मन थमता नहीं पूरी काया नहा जाती है, इंद्रियों का अविराम युद्ध चलता है, और लड़की निर्भय होकर यौनानन्द लेती है। 'गुड़िया भीतर गुड़िया' में जरूरी मुद्दे उठाती है तथा अपना आदर्शमय जीवन ढूंढती है। यह स्त्री जीवन का महाख्यान है, जिसमें पति की कामवासना मन से ज्यादा तन का समर्पण और उसकी मौन आवृति, कम नहीं, ज्यादा से ज्यादा, जैसे विवाहित जीवन की यही कसौटी हो। ग्रामीण व शहरी संस्कृति से जुड़े मूल्यों की व्यथा–कथा दृष्टव्य है, शहरी स्त्रियों से पहले ग्रामीण स्त्रियों को अपनी गुलामी का एहसास हुआ है। .... गुलामी के प्रति एहसास ही प्रतिरोध का आरंभ है।

स्त्री मुक्ति व उससे जुड़े मूल्यों व आदर्शों को लेकर मैत्रेयी ने स्त्री पुरूष सम्बन्धों की चर्चा लगभग सभी कथासाहित्य में की है। पितृसत्ता विषय व उससे जुड़े नैतिक मूल्यों की चर्चा 'खुली खिड़कियाँ' उपन्यास की भूमिका में की है। पितृसत्ता रीति–रिवाज एवं कुरीतियों की तस्वीर है जिसमें स्त्री का तबाह जीवन दिखाई देता है। पुरानी रूढ़ियों का विरोध किया है। 'झूलानट' का बालकिशन का व्यक्तित्व रूढ़ी व्यवस्था की दासता में ही दब घुटकर विखण्डित हो चलता है। 'आल्मा कबूतरी' में मंसाराम व्यवस्था की दासता की धुन में ही कबूतरा बस्ती को अपने दो बीघा खेत में उखाड़ फेंकने पर आमादा रहे। 'इदन्नमम्' के विक्रम सिंह व बेटे मकरंद के बीच व्याप्त मूल्यों में नैतिकता का अभाव व्याप्त है। 'चाक' का रणजीत झूलावट का सुमेर 'अगन पाखी' का चंदर आदि नैतिक मूल्यों की प्रतिपुष्टि है।

मूल्य संक्रमण

मूल्य संक्रमण का अर्थ है, मूल्यों में परिवर्तन, पुरातन मूल्यों के स्थान पर नये मूल्यों का आगमन। मैत्रेयी पुष्पा ने कथा साहित्य में मूल्यों का संक्रमण उत्पत्ति के कारण एवं निदान की तस्वीरें अंकित की हैं। रामधारी सिंह 'दिनकर' ने मूल्य संक्रमण को "शुद्ध कविता की खोज" में तत्कालीन स्थिति को विस्तार से बताई है, "व्यावहारिक मनुष्य के लिए ईमानदारी कोई आवश्यक गुण नहीं हैं। प्रेम भावुक लोगों की बीमारी का नाम है। सच्चाई वीरता और बलिदान उतने अच्छे नहीं है, जितनी अच्छी चालाकी हो सकती है।........मूल्यों का पचड़ा बेकार है। सबसे बड़ा मूल्य वह है जिसके सहारे गाड़ी चलती रहती है।" मूल्यहीनता, वैचारिक मतभेद, मौलिक अधिकारों का हनन, जाति, धर्म, क्षेत्र वर्ग सम्प्रदाय आदि विषयों पर मूल्यों का हनन ही मूल्य संक्रमण का निश्चित आधार है।

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

संक्रमण मूल्य की बात कहें तो मैत्रेयी ने वैधव्य स्वयं का जिया हुआ सच है। अन्याय का खुला विरोध स्व घटित संक्रमित घटनाओं के आधार पर करती हैं। विधवा समस्या का हल पुनर्विवाह के रूप में ग्रामीण परिवेश में नारी चेतना को एक नवीन अर्थ प्रदान कर संक्रमित होती नारी को रोका गया है। जिस परिवेश में बेटी तो "मुख जोहती गइया है रे............काऊ खूंटा बांध दो। भोली बछिया–सी चल दे हैं, जितै चाहो उतै ही।" ऐसी स्थितियां नारी विद्रोह के 'विमेन लिव' जैसे तेवर की अपेक्षा नहीं की जा सकती है। फैशन, अधनंगापन, यौनशुचिता का निषेध, पुरानी पीढ़ी को नकार देना, विवाह विच्छेद आदि के लिए पहले सही के मुहावरे इस माहौल में अभी प्रासंगिक नहीं है।

'बेतवा बहती रही' में लेखिका ने व्याप्त विषमता से ग्रसित स्त्री आदर्श एवं नैतिकता का बोझ उठाये कब तक जियेगी आखिर उसका भी अपना वजूद है सत्य तो यह कि उसकी जीवन पद्धति में व्याप्त संक्रमणता जन्म से लेकर मृत्य पर्यंत उसे पीड़ित करती है बहन, माँ व पत्नी तीनों रूपों में नैतिकता, आदर्श, दिखावा, दुलार, प्यार, स्नेह तथा त्याग के कारण संक्रमण के दौर से गुजरने के बाद भी अपनी छाप अविरल गति से छोड़ती है। उर्वशी का पुनर्विवाह के बाद मिलन का क्षण सहसा चेजन देह में संवेदना का तीव्र संचार, रोम–रोम उससे लिपट जाने को आतुर। अपमान उर्वशी का या इस धरती पर जन्मी हर औरत का, पता नहीं भीतर कोई शिला भारी होती जा रही है, घोंटने की। 'चाक' उपन्यास के माध्यम से मूल्य संक्रमण पुरूष की स्त्री के प्रति ओछी सोच का परिणाम है जिससे वे निश्चित और शाश्वत मूल्यों पर प्रहार कर खुद के लिए ही नही वरन् पूरे समाज को संक्रमित कर देता है। सारंग पर पति शक करता है। मैत्रेयी का अनुभव इस विषय में सटीक ही नहीं सुस्पष्ट है कि स्त्री कुछ करे तो कलंकित होती है पुरूष चाहे जो करे। सारंग का पति उसकी जांघों पर लात मारता है, यह मूल्य हीनता नहीं तो क्या है?

समाज में व्याप्त मूल्यों का संक्रमण रिश्तों की टूटन, अमानवीयता परपुरूष गमन, परस्त्रीरत पुरूषों व महिलाओं की आपसी रिश्ते, बर्बर कटुता भरा विधवा जीवन, गरीबी, शोषण एवं व्यवस्था में व्याप्त विसंगतियाँ अंचलवासियों की मानसिकता का प्रभाव भी मूल्यों को प्रभावित करता है। मूल्य संक्रमण का उदाहरण दृष्टव्य है, 'माँ ने कभी कुनबा नहीं बनाया पर मैत्रेयी की साध किसी निजी कुनबे की माँ बनने की थी। जिस संक्रमण के दौर से मैत्रेयी गुजरी उसमें विसंगतियाँ थी। औरत का दुश्मन उसकी देह नहीं बल्कि मर्द की कुत्सित भावना प्रबल रही है जो नैतिकता से परे भोगवाद की प्रवृति कह सकते हैं' मैत्रेयी ने बचपन से ठोंकरे खा–खाकर मर्दों की दुसप्रवृतियाँ का शिकार हुई कम उम्र में ही इन विसंगतियों की शिकार मैत्रेयी के मन मूल्यों की नैतिकता का पतन सामने आ गया। छोटे–बड़े स्त्री पुरूष की मर्यादाओं को भूलकर हर व्यक्ति ने अपनी हवस का शिकार बनाना चाहा, किन्तु वह कही दबोची गयी तो ही निकल भागी। ऐसी देव भूमि भारत में जाने कितनी मैत्रेयी इस संक्रमण से ग्रसित है।

मानवीय मूल्यों में एक तथ्य तो पूर्णतः स्पष्ट है कि यह विवेक एवं आस्था का विषय है। इसके अभाव में मूल्यों की स्थापना सुगम नहीं कहा जा सकता है कि आज हम मूल्यहीनता या संक्रमण के युग में जी रहे हैं। जिसमें कुंठा, घुटन, निराशा, अनास्था, असंतोष, दिग्भ्रम, विध्वंस और निषेधादि की प्रधानता है। इस सम्बन्ध में हम इतना ही कह सकते हं कि यदि हम जी रहे है तो जीवन के कुछ न कुछ मूल्य होंगे ही, इसमें मूल्यहीनता, रिक्तता या संक्रमण स्वीकार नहीं है। मूल्यों का एक चक्र सदैव गतिशील है। इसमें अनेक बार संक्रमण की स्थिति भी दृष्टव्य है, पर इन्हें समग्र रूप से शाश्वत अथवा देशकाल सापेक्ष स्वीकार करना उचित नहीं है। शाश्वत एवं सामयिक दृष्टि से मानव मूल्यों की सीमा निर्धारण भी कठिन कार्य है। स्थूल विभाजन उत्तम है, चतुवर्ग के रूप में भौतिक, मानसिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों की तुलनात्मक ढंग से व्याख्यायित किया है। धर्म, अर्थ, काम को त्रिवर्ग साधन मूल्यों तथा मोक्ष को साध्य मूल्य के अन्तर्गत स्वीकार किया है। मोक्ष प्राप्ति फ्रायड के मूल्यों से कुछ हद तक भिन्नता लिये हुए हैं।

मूल्य ह्रास

पारम्परिक नैतिक मूल्यों में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्रमुखता दी है। अधिकांश मूल्य युग सापेक्ष होते हैं। प्रस्तुति करते समय वर्ग भेद करें मूल्यों का कार्मिक विकास परिवर्तनशील हैं। इतना ही नहीं, प्रत्येक देशकाल परिस्थितियों में कुछ ऐसी घटनाऐं हो जाया करती है, जिनका प्रभाव मूल्यों पर भी पड़ता है। स्वतंत्रता पूर्व प्रत्येक भारतीय का मूल्य स्वतंत्रता प्राप्ति था। समकालीन परिवेश तथा उसमें आए परिवर्तन में नैतिकता के अभाव का संक्रमण या मूल्यहीनता ने नैतिक, शाश्वत एवं आधुनिक से जुड़े मूल्यों की हीनता का प्रभाव दर्शाया है, जिससे प्रतीत होता है। समकालीन हिन्दी गद्य में मूल्यों का ह्रास कहानियों/उपन्यासों एवं नाटकों में दिनों–दिन बढ़ता पतन होता दिखाई देता है। राष्ट्रीय चेतना, संस्कृति व उससे जुड़े मूल्यों का पतन परिवेश में व्याप्त असमानता, वर्ग–भेद, राजनीतिक दुष्कृत्य का होने वाला प्रभाव वर्तमान साहित्य यथार्थ मूल्यों का होने वाला ह्रास स्पष्ट दर्शाती है।

निष्कर्ष

राजनीतिक बदलाव में मैने कुछ सामाजिक समस्याओं की ओर संकेत किया है। वस्तुतः राजनीतिक व्यवस्था, शासन तंत्र की मूल्यों के परिवर्तन में अहं भूमिका रही है। जनसंख्या वृद्धि महंगाई, बेरोजगारी, बेकारी के कारण भी शाश्वत मूल्यों का ह्रास होता दिखाई दे रहा है। सामाजिक स्तर पर स्त्रियों को मिलने वाले अधिकरों पर प्रहार हो रहा है। बलात्कार, भ्रूणहत्या, शोषण, दहेज, पीड़ा, अनैतिक संबंधों की समस्या तलाक, परपुरूष सम्बन्ध आदि समाज व परम्पराओं से जुड़े अनमेल विवाह, जातिवाद साम्प्रदायिकता से जुड़े मूल्यों का पतन हो रहा है। "वर्तमान जीवन में पुनः पुनः प्राप्त दुखात्मक जीवन स्थितियों में आलोचना के जो सूत्र चलते हैं उनमें भावना के रंग में भोगे हुए जीवन मूल्य होते हैं।

देखने की बात यह है कि मैत्रेयी ने बचपन से जवानी तक धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का प्राप्ति के मार्ग गुरू

P: ISSN NO.: 2321-290X
RNI : UPBIL/2013/55327
VOL-6 * ISSUE-6 * (Part-1) February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X
Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

जैसे भगवान मानने वाले की नियति इतनी गिरी होगी, यह सत्य नैतिकता का ही पतन है। सारस्वत हैड क्लर्क ''मैं उससे बड़ी रात तक जूझी थी, और सारस्वत गालियां देता हुआ कमरे से बाहर हो गया था। बस का ड्राइवर हॉस्टल, अलीगढ़ में बुड्ढा, माँ की मित्र का लड़का आदि ऐसी घटनाऐं घटित हुई जो स्वयं नैतिकता, का ह्रास है। जिसे स्वयं लेखिका ने भोगा है। 'गुडियाँ भीतर गुडियाँ' में मसलन स्त्री वंश समाज की अतार्किक एवं हेय दृष्टि है। पुत्र हीन नारी का नारीत्व सुरक्षित नहीं है। 'एक स्त्री में गुथी तीन पीढ़ियाँ जिन्हें औरत ही आगे ले जा रही है। यह कैसा वंश है। माताजी तुम्हारी बेटी की तीन बेटियाँ तुम्हारे रंग रेशे से बनी हुई। बेटी की भी एक बेटी वासवदत्ता। आज की स्त्री भी स्वयं के नैतिक मूल्यों व आदर्शों का दिखावा करती है। किन्तु वास्तविकता से परे, "मुझे पाउडर की जरूरत नहीं है। वे ही बताते थे कि स्त्री के शरीर की गंध अपने आप में खास है। वेसे भी मेरा रंग गौरा है।

मैत्रेयी का समूचा लेखन सबसे पहले इसी घुटन से दो–चार होता है। फिर उस बुनियादी सामाजिक ईकाई को तरह–तरह से घेरता है जिसे परिवार कहते हैं। स्त्री के आदर्शवादी मूल्यों की आलोचना न करके उनमें परिवर्तन व स्वयं के विचारों में परिवर्तन करने की चर्चा करती है तथा नैतिकता के हो रहे ह्मस को रोकने की कवायद करती है। संक्रमित गतिविधियों से परे समाज में व्याप्त भेद भावों से ऊपर उठकर मानवेत्तर सम्बन्धों को जोड़ने वाले आर्थिक, सामाजिक, धर्मिक एवं राजनीतिक मूल्यों के सराकोरों की भी चर्चा करती है। जो मूल्य संक्रमित वासनाओं के तले रौंदे जा रहे हैं, जिनका स्वरूप कुत्सित वासनाजनिक पुरूष वर्ग की घटिया, दकियानूसी विचारधारा का जीता जागता नमूना है। 'आल्मा कबूतरी' के मंसाराम व आत्मा, 'विजन' की नेहा के जरिये अभावों में पली मध्यम वर्गीय चेतना की नब्ज को बखूबी पकड़ कर ह्मस की नवीन चित्रावली प्रदर्शित की है। भौतिकवादी मूल्यों ने अपनापन भी बिसार दिया, नेहा पीहर की बातें भूल कर ससुराल की संपन्नता का आनन्द ले रही है। गृहस्थी के कामों से लेकर सेंटर के दिन भर के प्रोग्रामों में पसीना पसीना होती रहती और रात को नहा धोकर, सुन्दर साइट गाउन में महकती हुई लहराते बाल खोलकर अजय के साथ सुख सेज कर रही होती है, किन्तु व सभी सुखों का भोग करने के बाद भी नैतिकता से परे नहीं होती है। यद्यपि संक्रमण तो आता है, किन्तु मूल्यहीनता होने पर भी कर्तव्य निष्ठा बर्बस कार्य के प्रति उत्तरदायी बनाये रखती है।

मैत्रेयी ने मूल्यों का ह्मस को कारणों की चर्चा की है, किन्तु कहीं कहीं व्यक्ति की विवशता भी होती है, ''पुरूष को ऊँचाईयाँ देकर मार डालती है और स्त्री को अंधेरी अज्ञात निचाईयाँ। लेखिका ने नैतिकता का ह्मास रोकने के लिए स्त्री को अपने मूल्यों की पहचान कराई है जो भरी पूरी स्त्री शख्सियत को महज एक एक कोख में रिड्यूज कर देती है। ''बहू का मतलब है वंश बढ़ाने वाली माता।'' जो मानवीय मूल्यों पर स्त्रियोचित गुणों का लेवल चस्पा कर स्त्री से फ्लोरेंस नेहा को अजय पति न लगकर ''खालिस अपने पापा का बेटा शरण आई सेंटर का उत्तराधिकारी है।'' 'कहीं ईसुरी फाग' स्त्री मूल्य आत्मप्रबोधन की गाथा से ओत–प्रोत है। परिवेश में असंगति ने संस्कार विहीन सत्ता के राजनीतिक पाखण्डों का भण्डा फोड़ कर राजनीतिक मूल्यों के ह्मस को उद्घाटित करने का साहसिक प्रयास किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *स्त्रियां क्तिन्। अष्टाध्यायी 3, 3, 94*
2. *रामचरित मानस : इंडियन प्रेस प्रयाग सं., श्यामसुन्दर दास, पृ. 1066*
3. *खुली खिड़कियाँ : मैत्रेयी पुष्पा, पृ. 65*
4. *पाश्चात्य काव्यशास्त्र: डॉ. देवेन्द्र शर्मा, पृ. 227*
5. *अमरकोश का 90वां संस्करण 1969 पृ. 159 उद्द्त डॉ उमाकांत गुप्त*